

Peer reviewed Journal

Impact Factor: 7.265

ISSN-2230-9578

Journal of Research and Development

A Multidisciplinary International Level Referred Journal

June 2021 Volume-11 Issue-16

*Sustainable Development Goals: Initiatives,
Execution and Challenges*

Chief Editor

Dr. R. V. Bhole

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot
No-23, Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.)

Guest Editor

Dr. Prof. H. B. Rathod

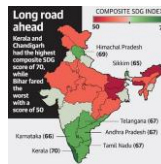
Principal
Gramin (ACS) Mahavidyalaya,
Vasantnagar (Kotgyal), Tal.
Mukhed

Executive Editors

Dr. V. T. Naik
Mr. B. C. Rathod

Co- Editors

Dr. D. K. Kendre
Mr. S. A. Jewale
Dr. U. D. Padamwar



Address

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23,
Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

Journal of Research and Development

A Multidisciplinary International Level Referred and Peer Reviewed Journal

1 June-2021 Volume-11 Issue-16

On

Sustainable Development Goals: Initiatives, Execution and Challenges

Chief Editor

Dr. R. V. Bhole

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23,
Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

Guest Editor

Dr. Prof. H. B. Rathod
Principal

Gramin (ACS) Mahavidyalaya, Vasantnagar (Kotgyal), Tal. Mukhed

Executive Editors

Dr. V. T. Naik **Mr. B. C. Rathod**

Co- Editors

Dr. D. K. Kendre
Mr. S. A. Jewale
Dr. U. D. Padamwar

Editorial Board

Mr. Thorve A. B.	Prof. Zamapalwad S. S.	Prof. Kalyan G. S.	Dr. Kshirsagar S. G.
Shri. Dethé S. K.	Shri. Kalimath S. K.	Shri. Babarao S.	Mr. Kankute S R.
Prof. Shinde P. A.	Prof. Pawar S. K.	Sow. Itkapalle A. P.	Dr. Gore S. Y.
Shri. Mathpati G. H.	Shri. Patil S. S.	Mr. Naik N. U	

Published by- Principal, Dr. Prof. H. B. Rathod, Gramin (ACS) Mahavidyalaya, Vasantnagar (Kotgyal), Tal. Mukhed

The Editors shall not be responsible for originality and thought expressed in the papers. The author shall be solely held responsible for the originality and thoughts expressed in their papers.

© All rights reserved with the Editors

CONTENTS

Sr. No.	Paper Title	Page No.
1	भारत में लिंग असमानता प्रो.डॉ.कल्याण गुरुनाथ	1-2
2	वर्तमान समाज विकास में संत साहित्य की भूमिका प्रा. रामकृष्ण बदने	3-9
3	सर्वसमावेशक वृद्धीसाठी दारिद्र्य निर्मूलनाची गरज कैलास सत्यवान शेलार	10-15
4	महाराष्ट्रातून भारतातील इतर प्रमुख भागात जाणारे लोहामार्गांचा एक भौगोलिक अभ्यास Dr.Achole.P.B, Swami.B.M	16-18
5	शाश्वत विकासात रा.से.यो.चे योगदान निलेश दे. हलामी	19-22
6	नांदेड जिल्ह्यातील लघू प्रकल्पामुळे सिंचन क्षमतेतील झालेला बदल (सन १९९१-९२ व २०१०-११ हे वर्ष तुलनात्मक पद्धतीने अभ्यास) डॉ.डी.एस.चव्हाण	23-25
7	शाश्वत विकास काळाची गरज प्रा. डॉ. जे. के. वाघमारे प्रा. डॉ. आर. एन. कस्पटे	26-29
8	भारतातील गरीबी निर्मूलनासाठी शाश्वत समजाकल्याणकारी विचार प्रा. मठपती जी. एच.	30-34
9	बढता नगरीकरण और इसके प्रभाव गिरीश टी. पंचभाई	35-39
10	प्राथमिक शिक्षा में बच्चों के मूलभूत सेवाओं का अध्ययन सीमा यादव डॉ. मृत्युन्जय मिश्रा	40-41
11	स्त्री - पुरुष तुलना व स्त्रियांची शैक्षणिक स्थिती डॉ. गजानन बापुराव ठाकरे	42-46
12	शाश्वत विकास - एक अभ्यास प्रा. सौ. रुपाली गोवर्धन दिकोंडा	47-49
13	हिन्दी - मराठी दलित आत्मकथाओं में सामाजिक जीवन डॉ. व्ही. पी. चव्हाण.	50-52
14	गडचिरोली जिल्ह्यातील कामगारांचे प्रमाण: निरंतर विकास प्रा. डॉ. गणेश एल. धोटे, डॉ. जे. व्ही. दडवे, प्रा. डॉ. के. वाय. ठाकरे	53-57
15	स्त्रियांची सामाजिक व राजकीय स्थिती प्रा. डॉ. प्रदीप शा. ढोले	58-62
16	परळी तालुक्यातील पोषण घनता : एक भौगोलिक अभ्यास श्री. कैलास भास्कर लव्हाळे, डॉ. व्ही. एस. चिमनगुंडे	63-65
17	भारूड भक्तीनाट्याचे स्वरूप व तत्वज्ञान. प्रा. डॉ. शिवाजी सटवाजी वाघमारे	66-69
18	ठाणे - पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा भौगोलिक अभ्यास प्रा. मानकरे ज्ञानेश्वर रघुनाथ डॉ. के. बी. कणकुरे	70-76
19	नांदेड जिल्ह्यातील करडाई पीकाचा भौगोलिक अभ्यास प्रा. डॉ. यु. एस. कानवटे	77-80
20	गरीबी निर्मूलन वेध व अभ्यास प्रा. सौ. अरुणा ईटकापल्ले, प्रा. सारीका बकवाड	81-82
21	कोरोना व्हायरसचा पर्यटनावरील प्रभाव प्रा. डॉ. कळसकर सूर्यकांत नागनाथ	83-85
22	शाश्वत विकास ध्येये निर्देशांक आणि भारत प्रा. डी. बी. कोनाळे	86-88

23	शाश्वत कृषी विकास : एक भौगोलिक अभ्यास	प्रा.डॉ. विनकर विजय नागोजी	89-90
24	NPS एक संस्था – एक चिकित्सक अभ्यास	प्रा. गोवर्धन कृष्णाहरी दिकोंडा	91-93
25	कोकणातील लाल सोनं - जांभा दगड (Laterite stone)	Tendolkar Dipa Dattaram	94-96
26	हदगाव भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण	बोधले कविता केरबा	97-100
27	लिंगभाव व लिंगभेद असमानता सामाजिक समस्या: एक अभ्यास	प्रा.कदम करुणा लक्ष्मणराव	101-102
28	शाश्वत उपाय जलपुनर्भरण एक भौगोलिक अभ्यास	प्रो. डॉ. नाईक व्ही.टी., प्रा. देठे एस. के.	103-105
29	लिंगभाव समानता आणि साहित्य : स्त्री संतांचे समाज विकासातील योगदान	प्रा.डॉ.कविता चंद्रकांत लोहाळे	106-109
30	राजर्षी शाहू महाराजांचे शैक्षणिक विचार व सद्यस्थिती	प्रा.डॉ.सखाराम यशवंतराव गोरे	110-112
31	शाश्वत विकास आणि भारतातील ग्लोबल हंगर इंडेक्स	प्रा.रोहिणी निवृत्ती अंकुश	113-116
32	लिंग समभाव : काळाची गरज	प्रा. कांबळे शिवाजी ईरबा	117-121
33	अनुसूचित जातीच्या संकल्पनेचा विश्लेषणात्मक अभ्यास	प्रा.डॉ.वसंत तुकाराम नाईक नारायण हणमंतराव पांचाळ	122-125
34	चिरंतन विकास - एक भौगोलिक आढावा	प्रा.डॉ.अनिल निवृत्ती शिंदे	126-130
35	लातूर जिल्ह्यातील प्राण्यांच्या बाजारकेंद्राचे व्यापारक्षेत्र एक भौगोलिक विश्लेषण	प्रा. डॉ. गोंड नामदेव संपतशत	131-133
36	समाजाच्या जडणघडणीत साहित्याची भूमिका एक अभ्यास	प्रा.डॉ.बालाजी परबतराव खराबे	134-138
37	लिंगभाव विरहित समाज रचना एक अभ्यास	पांचाळ नारायण हनमंतराव	139-144
38	दर्जेदार शिक्षण आणि वास्तव परिस्थिती	स.प्रा. भारतभूषण वामनराव बाळबुधे	145-149
39	नैसर्गिक व मानवी संसाधने एक अभ्यास	प्रा.डॉ.भरत माधवराव मुस्कावाड	150-154
40	शाश्वत विकासात जलसंवर्धनामध्ये 'आभासी पाणी' संकल्पनेचे महत्त्व	डॉ. नागनाथ माधवराव फड	155-158
41	प्राथमिक व माध्यमिक विद्यार्थ्यांचा भाषाविकास	कदम गणेश पुंडलिकराव, प्रा.डॉ.वैजयंता ना.पाटील	159-163
42	दुर्बल घटकांचे सबलीकरण ग्रामीण विकासाचा मार्ग (ग्रामीण विकास विभाग)	डॉ. संजय भास्कर तायडे	164-166
43	भारत : शाश्वत वाढ आणि विकास	डॉ. हरी साधू बाघमारे	167-171
44	पर्यावरण संवर्धन काळाची गरज - एक चिकित्सक भौगोलिक अभ्यास	प्रा.डॉ. भाऊसाहेब सोनाजी देवकर	172-176

45	मोहोळ तालुका पर्जन्य विचलता- एक भौगोलिक अभ्यास श्री. हनुमंत शंकर हेळकर, प्रा. डॉ. डी. जी. शिंदे	177-180
46	भारत मे सतत विकास लक्ष्य-चुनोतीया एवं सम्भावनाये प्रो. विकास वर्मा	181-184
47	अहमदपुर तालुक्यातील पाझर तलाव जलसिंचन स्रोताचा भौगोलिक अभ्यास प्रा डॉ.राठोड बी.एस.	185-187
48	कंधार तालुक्यातील ग्रामीण वस्तीतील सेवा केंद्राचा चिकित्सक अभ्यास केंद्रे गणपत गंगाधर, प्रा. डॉ. मानकरी एम. पी.	188-191
49	भारतीय शेती व्यवसायात प्रधानमंत्री पिक विमा योजनेचे योगदान प्रा. डॉ. एम. डी. कच्छवे	192-195
50	जागतिक लोकशाही निर्देशांक आणि भारत प्रा. डॉ. आंधळे बी. व्ही.	196-199
51	सशस्त्र बलों में लैंगिक समानता : एक अध्ययन श्री. मंगेश भगवंतराव कुलकर्णी, प्रा. डॉ. सौ संपदा सुधाकरराव कुलकर्णी	200-202
52	शाश्वत विकासाची ध्येये: संकल्पना आणि स्वरूप श्रद्धा मोहन पवार	203-207
53	शाश्वत शेती संकल्पना: आव्हाने आणि संभावना प्रा. सुकुमार दत्ता पाटील प्रा. डॉ. एल. एच. पाटील	208-211
54	उस्मानाबाद जिल्ह्यातील उमरगा व तुळजापूर तालुक्यातील ग्रामीण वस्त्यांमधील अंतरण एक अभ्यास प्रा. सतिश डी. गावित प्रा. डॉ. मदन व्ही. सूर्यवंशी	212-214
55	कोरोना परिप्रेक्षात भारतीय समाज व अर्थव्यवस्थेवर झालेला परिणाम प्रा. डॉ. झाकीरहुसेन हाकीम संदे	215-217
56	भारतीय लोकसंख्या आणि शाश्वत विकास प्रा. शत्रुघ्न नामदेव लोहकरे	218-221
57	लातूर जिल्ह्यातील यात्रा केंद्राच्या अभिक्षेत्रीय वितरणावर परिणाम करणाऱ्या घटकांचा भौगोलिक अभ्यास डॉ. केरबा कांबळे	222-225

भारत में लिंग असमानता

प्रो.डॉ.कल्याण गुरुनाथ

ग्रामीण(ACS) महाविद्यालय, वसंतनगर, मुखेड.

हम भारतवासी 21 वी शताब्दी के होने पर गर्व करते हैं। भारत जहाँ एक ओर आर्थिक, राजनिति प्रगति की ओर अग्रसर है तो इसी देश में आज लैगिंग असमानता की स्थिति गंभीर बनी हुई है। अगर हमारे यहाँ एक बेटा हो तो जश्न मनाते हैं और अगर बेटी हो तो शांत हो जाते हैं। यहाँ तक की कोई जश्न न मनाने का नियम हो गया हो। लडके के लिए ईतना प्यार और लडकी को जन्म के समय पर या जन्म से पहले मारते आ रहे हैं। यदी सौभाग्य से ओ नही मारी जाती है, तो हम जीवन भर उसके साथ अनेकों भेदभाव अनेक तरीके ढूँढ लेते हैं।

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति प्राचीन या वैदिक काल में सुदृढ़ थी। उस समय महिलाओं को सभा और समिति जैसे सामाजिक संस्थाओं में समाज का प्रतिनिधित्व मिलता था। महिलाओं ने वेद जैसे ग्रंथों में योगदान भी दिया है।

लेकिन परवर्तित काल में महिलाओं की स्थिति लगातार कमजोर होती गयी। प्राचीन काल के पश्चात मध्यकाल में महिलाओं की स्थिति लगातार कम होती गयी। ऐसी स्थिति में आधुनिक काल के कुछ बुद्धिजीवियों द्वारा भारत स्वातंत्र्य संघर्ष के दौरान लैगिंग समानता हेतु किये गये प्रयास अत्यधिक प्रशंसनीय रहे हैं, तथा इन प्रयासों से महिला समानता की नवीन अवधारणा का उद्भव हुआ एवं स्वतंत्रता के पश्चात निर्मित भारतीय संविधान में भी महिलाओं को सशक्तिकरण से संबंधित विभिन्न प्रावधान किये गये।

अ) लैगिंग असमानता की परिभाषा और संकल्पना :-

'लिंग' सामाजिक और सांस्कृतिक शब्द है, सामाजिक परिभाषा से संबोधित करते हुए समाज में पुरुषों और महिलाओं के कार्य व्यवहारों को परिभाषित करता है, ज्यो जैविक और शाररिक घटना है। अपने सामाजिक और ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पहलुओं में लिंग पुरुष को महिलाओं से श्रेष्ठ माना जाता है। इस तरह लिंग को मानव निर्मित सिद्धांत समजना चाहिए जब की 'सेक्स' मानव की प्रकृतिक या जैविक विशेषता है।

'लिंग' असमानता को समान्य शब्दों में इस तरह परिभाषित किया जा सकता है की, लैगिंग आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव। समाज में परम्परागत रूप से महिलाओं को कमजोर जाती-वर्ग के रूप में माना गया है।

लैगिंग असमानता का तात्पर्य :-

लैगिंग असमानता का तात्पर्य लैगिंग आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव से है। परंपरागत रूप से समाज में महिलाओं को कमजोर रूप में देखा जा रहा है।

वे घर और समाज दोनों जगह पर शोषण अपमान और भेदभाव से पीडित हैं। महिलाओं के खिलाफ भेदभाव दुनिया के हर जगह प्रचलित है।

लैगिंग असमानता के विभिन्न क्षेत्र:

सामाजिक क्षेत्र में :- भारतीय समाज में प्रायः महिलाओं को घरेलू कार्य के ही अनुकूल माना गया है। घर में महिलाओं का मुख्य कार्य भोजन की व्यवस्था करना और बच्चों के लालन-पालन है। अक्सर देखा जाये तो घर में लिए जाने वाले निर्णय में भी महिलाओं की कोई भी भूमिका नहीं रहती है। इसी कारण सामाजिक संघटनों में महिलाओं की न्यूनतम संख्या इसी का कारण है।

आर्थिक क्षेत्र में :- आर्थिक क्षेत्र में कार्यरत महिला और पुरुष के परिश्रम में अंतर है। औद्योगिक क्षेत्र में प्रायः महिलाओं के पुरुषों के अपेक्षा कम वेतन दिया जाता है। इतना नहीं रोजगार के अवसर में भी पुरुषों की प्राथमिकता ही जाती है।

राजनीतिक क्षेत्र में :- सभी राजनीतिक दल लोकतांत्रिक होते हुए समानता का दावा करते हैं, परंतु वेंतो चुनाव में महिलाओं को प्रत्याशी के रूप में तिखट देते हैं और नहीं दल के प्रमुख पद पर उनकी नियुक्ति करते हैं।

मनोरंजन क्षेत्र में :- मनोरंजन के क्षेत्र में भी महिलाओं को भी इस भेदभाव का शिकार हो ना पडता है। अक्सर फिल्म में अभिनेत्रियों मुख्य किरदार नहीं समजा जाता है। उन्हें परिश्रमिक भी अभिनेताओं के तुलना में कम वेतन मिलता है।

खेल के क्षेत्र में :- खेलों में भी मिलने वाली पुरस्कार की राशि पुरुष खिलाडी के तुलना में महिलाओं को कम मिलती है। चाहे कुस्ती हो क्रिकेट हर खेल में भेदभाव हो रहा है। साथ ही पुरुष के खेलों के प्रसारण महिलाओं के खेलों के प्रसारण से ज्यादा होते हैं।

लैंगिक असमानता के कारण :-

- सामाजिक, आर्थिक और राजनिति प्रगती के बावजूद वर्तमान भारतीय समाज में सत्ता मानसिकता जटील रूप में व्याप्त है। इसके कारण महिलाओं को आज भी एक जिम्मेदार समजा जाता है। महिलाओं को सामाजिक और पारिवारिक रुढ़ियों के कारण विकास के कम हो अवसर मिलते हैं। जिससे उनके व्यक्तित्व कम पूर्ण विकास नहीं पाता है। सबरीमाला और तीन तलाख जैसे मुद्दे पर सामाजिक मतभेद पितृसत्तात्मक मानसिकता को प्रतिबिंबित करता है।
- भारत में आज भी व्यवहारीक स्तर पर पारिवारिक संपत्ति पर महिलाओं का अधिकार प्रचलन में नहीं है। इसलिये उनके साथ विभेदकारी व्यवहार किया जाता है।
- शैक्षिक कारक जैसे मानको पर महिलाओं की स्थिति पुरुषों की अपेक्षा कमजोर है। हालांकि लड़कियों के शैक्षिक नामांकन में पिछले दो दशकों में वृद्धि हुई है। माध्यमिक शिक्षा तक लैंगिक समानता की स्थिति प्राप्त हो रही है। लेकिन अभी भी उच्चशिक्षण तथा व्यवसायिक शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं का नामांकन पुरुषों की तुलना में काफी है।

लिंग असमानता दूर करने के लिए भारतीय संविधान अनेक कदम उठाये संविधान का अनुच्छेद 15 भी लिंग, धर्म, जाति और जन्म के स्थान पर अलग अलग होने के आधार हे जाने वाले सभी भेदभाव का निषेध करता है। अनुच्छेद 15(3) किसी भी राज्य बच्चों और महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान बनाने के लिए अधिकारीत है। महिलाओं की सुरक्षा और भेदभाव से रक्षा करने की मदद करता है।

सारांश

भारत में महिलाओं के लिए बहुत से संवैधानिक सुरक्षात्मक उपाय बनाये गये हैं, पर जमिनी हकीकत इस से बहुत अलग है। इन सभी प्रावधानों के बावजूद देश में महिलाओं के साथ आज भी द्वितीय श्रेणी के नागरिक के रूप में व्यवहार किया जाता है। पुरुष उन्हें अपनी कामुक इच्छाओं की पूर्ति करने का माध्यम मानते हैं। महिलाओं के साथ अत्याचार अपने खतरनाक स्तर पर है। दहेज प्रथा आज भी प्रचलन में है, कन्या भ्रूणहत्या हमारे घर में एक आदर्श है। भले ही संवैधानिक सुची में महिलाओं की समानता के लिए प्रावधान दिये गये हैं। वास्तविक बदलाव तभी संभव है, जब पुरुष की सोच बदली जाये। ये सोच जब बदलेगी तब मानवता का एक प्रकार पुरुष महिला के साथ समानता का व्यवहार करना शुरू कर दे। महिलाओं की अपनी पुरानी रूढ़ीवादी सोच बदलनी होगी और जानना होगा वो भी इस शोषणकारी पितृसत्ताक व्यवस्था अंग बन गयी है, और पुरुष को खुद पर हवी होने में सहाय्यता कर रही है।

संदर्भ:

<http://hi.m.wikipedia-org>

www.drishtias.com.

<https://www.drishtils.com,daily-news-edditirils>

वर्तमान समाज विकास मे संत साहित्य की भूमिका

प्रा. रामकृष्ण बदन

ग्रामीण महाविद्यालय, वसंतनगर, ता. मुखेड जि. नांदेड

समाज का विकास दो तरीकों से होता है। एक नैतिक विकास और दूसरा भौतिक विकास। समाज विकास में दोनों समान रूप से विकसित होते हैं तो वह समाज का संपूर्ण विकास होगा। अन्यथा एक अंग का विकास समाज को अपाहिज बना देता है। आज समाज का विकास संपूर्ण रूप से होता हुआ नहीं दिखाई दे रहा है। भौतिकता नैतिकता पर हावी होती नजर आ रही है। मनुष्य मूल्यों के बजाए पैसों से अधिक लगाव लगा रहा है। 'पैसा बोलता है' यही स्थिति सर्वत्र नजर आ रही है। वैश्वीकरण, भूमंडलीकरण या आर्थिक उदारीकरण के कारण एक मनुष्य दूसरे मनुष्य की ओर वस्तु की दृष्टि से देख रहा है। मनुष्य की कीमत मूल्यों के आचरण से नहीं तो वस्तुओं से कि जा रही है। मनुष्य समाज विकास के बजाये 'स्व' विकास को अधिक महत्व देता नजर आ रहा है। 'मेरा तो मेरा ही' लेकिन 'तेरा भी मेरा ही' ऐसी वृत्ति बन चुकी है। सत्य को लकवा मार गया है और झूठ विमान में बैठकर सफर कर रहा है। अनाचार बढ चुका है। हिंसा की घटनाएं बढती ही जा रही हैं। दया कही नजर नहीं आ रही है। त्याग, परोपकार के बजाए भोग को महत्व दिया जा रहा है। 'मातृ देवो भव' 'पितृ देवो भव' यह विचार पीछे छूट गये हैं। समाज में 'वृद्धाश्रम' तथा 'हम दो हमारे दो' वाली संस्कृति नजर आ रही है। मकान रेस्टहाऊस में तब्दील हो गये हैं। घरों में संवाद नहीं हो रहा है। जातीय एवम धार्मिक विद्वेष बढ रहा है। अहंकार सर्वत्र दिखाई दे रहा है। प्रेम के बजाए विद्वेष जादा मात्रा में बढ गया है। पाखंड हर जगह दिखाई दे रहा है। ऐसे कई प्रश्नों का बोझ ढोते हुए वर्तमान समाज विकास कर रहा है, ऐसा तो हमें लग रहा है। लेकिन यह पुर्ण सत्य नहीं है। अंदरूनी तरीके से देखा जाए तो वह नैतिकता से खोकला बनता चला जा रहा है। इसी कारण ऐसा विकास मनुष्य के लिए आनंद देनेवाला साबित नहीं हो सकता। ऐसे विकास को संपूर्ण विकास में परिवर्तित करने का कार्य संत साहित्य के माध्यम से किया जा सकता है।

सबसे पहले हम संत शब्द की परिभाषा देखेंगे। "संत शब्द की उत्पत्ति को लेकर दो तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं। या तो इसे पालि भाषा के उस 'शांत' शब्द से निकला हुआ मान सकते हैं, जिसका अर्थ निवृत्ति मार्गी या विरागी होता है अथवा यह 'सत' शब्द का बहुवचन हो सकता है। जिसका अभिप्राय एकमात्र सत्य में विश्वास करनेवाला अथवा उसका पूर्णतः अनुभव कर लेनेवाला व्यक्ति समझा जाता है।" 01

संत की व्याख्या करते हुए गोस्वामी तुलसीदास कहते हैं-

'षट विकार जित अनघ अकामा ।

अचल अकिंचन सुचि सुखधामा ।

अमित बोध अनीह मित भोगी

सत्यसार कवि कोविद जोगी ॥ '02

गोस्वामी जी के मतानुसार संत उन्हें कहते हैं जो कामक्रोधादी षडविकारों को जीतते हैं, पापरहित, कामनारहित, निश्चल, सर्वत्यागी, पवित्र, असिम ज्ञानवान, इच्छारहीत, मिताहारी, सत्य के पुजारी, कवी विद्वान और योगी होते हैं।

संत तुकारामने संत की व्याख्या करते हुए लिखा है-

संत तोचि जाणा जगी ।

दया क्षमा ज्याचे अंगी ॥ अथवा

तोची संत तोचि संत ।

सोसी जगाचे आघात ॥

संत नरसी मेहता कहते हैं -

वैष्णव जन तो तेणे कहियों ।

जो पीर पराई जाने रे ॥

और भी कई संतों ने संतो के बारे में लिखा है। लेकिन विस्तार भय के कारण इतना ही।

संत इस दुनिया में क्यों आते हैं, यह देखना भी जरूरी है। मूलतः संतों का जन्म ही जीव कल्याण के लिए हुआ है। इसके बारे में मराठी के अनेक संत कहते हैं। संत तुकाराम का कहना है 'बुडत हे जन न देखवे डोळा।

येतो कळवळा म्हणोनिये ॥

मुल में हम बैकुंठ में रहने वाले हैं लेकिन यहां किसलिए आते हैं इसके बारे में एक जगह पर तुकाराम लिखते हैं -

आम्ही बैकुंठवासी।

आलो याचि कारणासी।

बोलिले जे ऋषी।

साच भावे वर्तया ॥

या संत कबीर ने भी एक जगह पर संतों का महत्व विशद करते हुए कहा था-

आग लगी आकाश में, झरपर परे अंगार।

संत न होते जगत में, जल जाता संसार।

अब हमें आज के वर्तमान समाज में समस्याओं का बोझ ढोते हुए विकास की ओर चलते समाज को समस्या रहित बनाने में संत साहित्य की क्या भूमिका हो सकती है इसके बारे में देखना है।

आज समाज में जातीय और धार्मिक विद्वेष बढ़ता नजर आ रहा है। संतों ने कई शतकों पूर्व जातीयता का पुरी तरह से विरोध किया था। तथा धर्म धर्म में भेदभाव को भी नकारा था। क्योंकि इसकी चपेट में स्वयं संत भी आये थे। जैसे संत नामदेव कहते हैं- "दिन हीन जात मोरी पंढरी के राया। ऐसा तुमने नामा दर्जी कायकु बनाया। पुजा करने ब्राह्मण उनौने बाहर ढकाया।" 03 लेकिन संत नामदेव ने आगे यह भी कहा कि मनुष्य की जाति नहीं देखनी चाहिए। वे कहते हैं-

"का करों जाती का करों पाती। राजा राम सेउं दिन राती ॥"

मुझे जातीपाती से लेन देन नहीं हैं, मैं तो दिन रात राजाराम के नाम का सेवन करता हूँ। उन्होंने यह बात कहकर जातीयता का विरोध किया। नामदेव अन्य एक जगह पर कहते हैं -

हिंदू-पूजे देहरा। मुसलमान मसिता। नामे सोह सेविया। जह देहरा न मसित ॥

मतलब संत नामदेव कहते हैं की मंदिर-मज्जित से उपर उठकर गोविंद का नाम सुमिरन करने, गोविंद की बनाई सृष्टी की सेवा करना ही सच्चा धार्मिक होना, सच्चा परमात्मा का सेवक, भक्त होना है।

संत तुकाराम भी कहते हैं

विष्णुमय जग वैष्णवांचा धर्म। भेदाभेद भ्रम अमंगळ ॥

यह जगत विष्णु ने बनाया है और विष्णु से भरा पडा है, इसमें जातीय धर्म के आधार पर भेदभाव नहीं करना चाहिए। ऐसा करनेवाला अमंगल है। संतों ने यह भी कहा कि ईश्वर कभी उच्च नीच का भेदभाव नहीं करता। इस बारे में संत तुकाराम कहते हैं -

उच्च नीच काही नेणे भगवंत।

तिष्ठे भाव भक्त देखोनिया।

दासीपुत्र कन्या विदुराच्या भक्षी।

दैत्या घरी रक्षी प्रल्हादासी।

इस पुरे अभंग रचना में विविध जातीय के भक्तों का किस प्रकार से ईश्वर ने काम किया। ईश्वर ने किसी भी भक्त की जाति को नहीं देखा यह बताकर हमें भी हमारे जीवन में जातीयता को नहीं देखना चाहिए। यह संदेश इस रचना से हमें मिल सकता है।

कबीर कहते हैं -

जाति न पूछो साधु की,
पुछ लिजियो ज्ञान ।
मोल करो तलवार का ।
पडी रहने दो म्यान ॥
या अन्य एक जगहपर कहते है कि - 'हरी को भजे सो हरी का होई ।'
"एकै नजर निरंजना सबही घट देखै।
उंच नीच अंतर नहीं,सब एकै पेखे ॥"04
गोस्वामी तुलसीदासने भी लिखा है -
"स्वपच सबर खस जमन जड पावंर कोल किरात ।
रामु कहत पावन परम होत भुवन विख्यात ॥ "05
रामचरितमानस में निषादराज के प्रसंग में गोस्वामीजी कहते हैं कि यहां रामनाम प्रमुख है वह लेनेपर चांडाल,शबर,खस,यवन,कोल,किरात मूर्ख एवम शूद्र भी पवित्र हो जाते हैं।मतलब राम जाति को नहीं देखते ।
संत रविदास कहते है
सभ मंहि एक रामह ज्योती ।
सभ कह एक सिरजनहारा ।
रविदास रामहि सभन
मांहि ब्राह्मण हुई के चमारा ॥
वे कहते है यहां कोई ब्राह्मण,कोई चमार नहीं है । सब एक समान है ।
चरणदास कहते हैं -
"चारि बरन सूं हरिजन उंचे ।
भये पबित्तर हरि के सुमिरे,
तन के उज्वल मन के सूचे ॥
जो न पतीजै साखि बताउं,
सबरी के जूठे फल खायं ।
बहुत ऋषीसर राही रहते,
तिन के घर रघुपति नहीं आए ॥"
जाति बरन कुल सोई नीको
जाके होम भक्ति परकास ।
गुरु सुकदेव कहत हैं तो
को हरिजन सेव चरन ही दास ॥
उक्त कथन के साक्ष्य रूप में चरण दास कहते है की यदी मेरी बात पर आपको विश्वास न हो तो शबरी (भीलनी)का साक्ष्य सामने रख कर देख लें। जब रामचंद्र वन मे गये तो वहां बहुत ऋषियों के घर थे । रघुपती रामचंद्र उनमे से किसी के घर नही गये और शबरी के घर जाकर उसके जूठे फल खाये। अतः जाती पाती,उंचा कुल, श्रेष्ठ वर्ण (ब्राह्मण क्षत्रिय इत्यादी) सब व्यर्थ है । केवल एक गुण भक्ती का आत्मा मे प्रकाश हो जाना ही पर्याप्त है।
इस प्रकार संतो ने जातीयता का विरोध किया।जो आज के समाज में होना चाहिए ।
आज के समाज मे धर्म धर्म के नाम पर विद्वेष फैलाया जा रहा है, समाज की शक्ती का उपयोग विकास के बजाय विनाश की ओर किया जा रहा है । समाज में धार्मिक अडंबर फैल चुका है , ऐसे धार्मिक आडंबर तथा अंधविश्वास का विरोध संतों के साहित्य में दिखाई देता है ।

संत कबीर कहते हैं -

"तीरथ करी करी जग मुवा,

डूँपे पाणी न्हाइ।

रामहि रणम जपंतडा,

काल घसीटयां जाइ ॥

काजी मुलां भ्रमियां, चल्या दुनी के साथि ।

दिल थें दीन बिसारिया,

करत लई जब हाथि ॥"

हिंदू मुस्लिम धर्म की परस्पर मूर्खता पूर्ण शत्रुत्व पर प्रहारों के साथ ही दोनों धर्मों के अंधविश्वासों और अमानवी कृत्यों को भी कबीरने उघाडने मे कमी नही छोडी ।

अन्य एक जगह कहते है-

मो को कहां ढुंढे बंदे मैं तो तेरे पास में ।

ना मैं मंदिर ना मैं मस्जिद काबे कैलास में ।

ढुंढे तो पल में मिलें ।

और एक जगह पर कहते हैं

"कांकर पाथर जोरि के,मस्जिद लियो बनाए ।

ता चढि मुल्ला बाग दे,क्या बहरा होत खुदाय ॥

फिर एक जगह कहते हैं -

माला फेरी,तिलक लगाया,लंबी जटा बढाता है ।

अंदर तेरे कुफर कटारी,यो नहीं साहिब मिलता है ।

मराठी भाषा की संत मुक्ताबाई ने कहा था -

वरी भगवा झाला नामे ।

अंतरी वश केला कामे ।

त्याला म्हणो नये साधु ।

जगी विटंबना बाधु ॥

संत तुकारामने कहा -

टिळे टोपी माळा देवाचे गबाळ ।

वागवी बोंगळ पोटासाठी ॥ किंवा

शेंदरी हेंदरी दैवते ।

कोण पुजी भुतेखेते ।

आपल्या पोटाशी रडती ।

दादू दयाल महत्वपूर्ण बात करते हुए कहते है -

दोनों भाई हाथ -पग,दोनो भाई कान । दोनों भाई नैन है,हिंदू-मुसलमान ॥

हिंदू मुसलमान दोनों को भारत देश के हाथ पैर, दो कान और दो आँखे ही नहीं बताया ।भाई कहा है । सारा जगत एक ही परमपिताने बनाया है । इसलिये धार्मिक भेद नही होना चाहिए।

मलूकदासने दया का महत्व विशद करते हुए कहा है कि अगर आपके पास दया नही है तो किसी भी तीर्थक्षेत्र को जाने से कोई फायदा नही है । 'मक्का मदीना द्वारका, बदरी और केदार ।

बिना दया सब झूठ है, कहे मलूक विचार ॥

संत तुकाराम भी कहते है कि संत या साधू वही है जो
दया करने जे पुत्रासी ।

तेची दासा आणि दासी ॥

अपने पुत्र के जैसी दया हम अपने दास और दासी के साथ करते चले ॥

पैसे कमाने का विरोध संत नहीं करते पर उसका उपयोग अच्छे काम में हो जाये ऐसा उनका कहना है । जोडोनिया धन उत्तम
व्यवहारे ।

उदास विचारे वेंच करी॥

आज मां बाप को घर से बाहर निकाला जा रहा है । लेकिन संतोंने मां बाप की सेवा का महत्व बताया ।

संत ज्ञानेश्वर कहते हैं -

सकळ तीर्थांचिये धुरे ।

जिये का माता पितरे ।

तये सेवेसी शरीरे । लोण किजे ॥

संत तुकाराम कहते हैं -

मायबाप केवळ काशी ।

तेणे नव जावे तीर्थासी ॥ इस अभंग के अंत में वे कहते हैं

तुका म्हणे मायबापे ।

अवधी देवाचीच रुपे ॥

राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज मां का महत्व बताते हुए कहते हैं -

विद्या गुरुहुनी थोर ।

आदर्श मातेचे उपकार ।

गर्भापासोनी संस्कार बालकांवरी ॥

जो अपने मां बाप की और परिवार की अच्छी तरह से सेवा नहीं कर सकते लेकिन बाहर विश्व का आदर करते हैं, ऐसे लोगों को
संतोंने मुख कहा है । संत ज्ञानेश्वर कहते है -

घरी धड बोली नाही माता-पितरा ।

येरू विश्वभरी आदरा मुखू जैसा ।

अनेक समस्याओं का कारण संतोंने मन का शूद्ध न होना माना है । संत तुकाराम मन (चित्त) की अशूद्धता के बारे में कहते हैं -

नाही निर्मळ जीवन ।

काय करील साबन ।

तैसे चित्त शुद्ध नाही ॥

कबीर मन की शूद्धता का महत्व बताते हुए कहते हैं की -

कबीरा मन निर्मल भया ।

जैसे गंगा निर ।

पीछे पीछे हरि फिरे ।

कहत कबीर कबीर ॥

संतोंने मन शूद्धता को महत्व दिया ।

मन में समाधान रखिए और अहंकार को छोडिए यह बताते हुए संत एकनाथ कहते है -

"अल्ला रखेगा वैसा भी रहना ।

मौला रखेगा वैसा भी रहना ।
कोई दिन सिर पर छतर उडावे ।
कोई दिन सिर पर घडा चढावे ।
कोई दिन तुरंग उपर चढावे ।
कोई दिन पाव से खासा चलावे ।
कोई दिन शक्कर दूध मलिदा ।
कोई दिन अल्ला मागत गदा ।
कोई दिन सेवक हात जोडे खडे ।
कोई दिन नजिक न आवे घेडे ।
कोई दिन राजा बडा अधिकारी।
एक दिन होय कंगाल भिकारी ।
एका जनार्दनी करत करतारी ।

गाफल क्यों करता मगरुरी ॥ "06

सच्चाई का महत्त्व बताकर सच्चे काम की सहाय्यता करनी चाहिए यह कहकर झुठे रास्तेपर चलनेवाला नरक में जाने की बात भी कही है ।

संत तुकाराम कहते है -

तुका म्हणे सत्य कर्मा व्हावे सहाय्य। घातलीया भय नरका जाणे ॥

ईश्वर की पुजा भी सत्य बोलना और सत्याचरण करना ही माना है । संत तुकाराम कहते है -

सत्य बोले मुखे ।दुखवे आणिकांचे दुःखे ।

हिच विष्णूची महापूजा ।अनुभव नाही दुजा ।

संत ज्ञानेश्वर कहते है -

साच आणि मवाळ ।

मितुले आणि रसाळ ।

शब्द जैसे कल्लोळ । अमृताचे ॥

मत्सर करने वालों की नींदा कर संतोंने किसी भी जीव का मत्सर न करना ही मनुष्य का धर्माचरण माना है । जैसे तुकाराम कहते हैं -

कोण्याही जीवाचा न घडो मत्सर ।

वर्म सर्वेश्वर पुजनाचे ॥

संतोंने सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह कही कि हमें एक न एक दिन यह सब छोड़ जाना है, तो हम ऐसा काम करें जिससे मरने के बाद भी हम किर्ती के द्वारा जीवित रह सकें ।

संत तुकाराम कहते है -

'मरावे परी कीर्तिरूपे उरावे ।

संत रामदास अपने मन को समझाते हुए कहते हैं -

देह त्यागिता कीर्ती मागे उरावी । मना सज्जना हेचि क्रिया धरावी ।

मना चंदनाचे परि त्वा झीजावे ।

परी अंतरी सज्जनां नीववावे ॥

तो संत कबीरने कहा -

मूरत से किरत भली । बिन पंख उड जाए ।

मुरत तो जाती रहे । किरत कभी न जायं ॥

संतोने उपरी वर्णित समस्याओं से बचने के अनेक मार्ग दिखाये उन मार्गों में से कुछ मार्गों की चर्चा हम यहांपर कर पाएं । अगर इन्ही मार्गोंपर हम वर्तमान में चलते रहेंगे तो वह मार्ग मानवता का मार्ग होगा । जिसमे भौतिक विकास से ज्यादा नैतिक विकास को बल मिलेगा । संतों के विचारों से ही समाज का सही अर्थ मे पूर्ण रूप से विकास होता नजर आयेगा । इस प्रकार समाज के विकास मे संतों की भूमिका को हम देख सकते है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- ०1.हिंदी काव्य की निर्गुण धारा - डॉ.पीतांबर दत्त बडथवाल पृ.क्र.11
- 02.रामचरितमानस -गोस्वामी तुलसीदास, टीकाकार हनुमान प्रसाद पोद्दार -अरण्यकांड पृ.क्र.657
- 03.भारतीय साहित्य कोश - डॉ.सुरेश गौतम, डॉ.वीणा गौतम खंड -04 पृ.क्र.98
- 04.संतवाणी-वियोगी हरी -पृ.क्र.74
- 05.रामचरितमानस -गोस्वामी तुलसीदास, हनुमान प्रसाद पोद्दार पृ.क्र.491
- 06.संत एकनाथ - डॉ.कृष्ण दिवाकर पृ.क्र.168-69

सर्वसमावेशक वृद्धीसाठी दारिद्र्य निर्मूलनाची गरज कैलास सत्यवान शेलार

सहाय्यक प्राध्यापक व अर्थशास्त्र विभाग प्रमुख श्रीमती कस्तुरबाई वालचंद महाविद्यालय (कला, विज्ञान),
सांगली (महाराष्ट्र)

सारांश -

सध्या जगातील अनेक देशांनी सर्वसमावेशक वृद्धीचे तत्त्व स्वीकारले आहे. अर्थव्यवस्थेच्या शाश्वत विकासाचा (Sustainable Development) एक निकष म्हणून हे तत्त्व मान्य केले गेले आहे. सप्टेंबर २०१५ मध्ये संयुक्त राष्ट्रांच्या ऐतिहासिक महासभेत १९३ देशांनी शाश्वत विकासासाठी जी ध्येये (Goals) निश्चित केली त्यामधील एक महत्वाचे ध्येय म्हणजे दारिद्र्य निर्मूलन आणि समावेशक वृद्धी हे आहे. संबध मानवजातीच्या कल्याणासाठी ही ध्येये निश्चित करण्यात आली आहेत. भारतात गेल्या ७० वर्षात आर्थिक नियोजनाच्या माध्यमातून सर्वसमावेशक वृद्धी वाढविण्याचा प्रयत्न झाला. परंतु हे ध्येय पूर्णपणे यशस्वी झालेले नाही. सामाजिक आर्थिक समानताही प्रस्थापित झालेली नाही. दारिद्र्य निर्मूलनासाठीच्या विविध योजनांचा लाभ तळागाळातील वंचित घटकांना झालेला नाही. आज देखील भारतात ३० टक्केपेक्षा अधिक लोक दारिद्र्यरेषेखाली जीवन जगत आहेत. म्हणूनच सर्वसमावेशक वृद्धी साध्य करण्यासाठीचा एक जो निकष आहे तो म्हणजे देशातील लोकांचे दारिद्र्य कमी झाले पाहिजे. देशातील वंचित घटकाना आहार, शिक्षण, आरोग्य, निवारा, शुध्द पाणी, इ. त्यांच्या मुलभूत गरजा पूर्ण झाल्या पाहिजेत. परंतु देशातील सर्व लोकांच्या या गरजा पूर्ण होताना दिसून येत नाहीत. गेल्या सत्तर वर्षांमध्ये भारताने सर्वच क्षेत्रांमध्ये लक्षणीय प्रगती साध्य केली साध्य केली आहे. परंतु अद्यापही समाजातील एक मोठा समुह या विकासापासून दूर आहे. त्यामुळेच सर्वसमावेशक वृद्धी साध्य झालेली नाही.

नोबेल पारितोषिक विजेते भारतीय अर्थशास्त्रज्ञ डॉ. अमर्त्य सेन यांच्या मते, दारिद्र्याचा प्रत्यक्ष निकटचा संबंध मानवातील मुलभूत क्षमतापासून दूर गेलेल्या गरिबांशी अधिक जवळचा असतो. गरीबांजवळ असणारे अल्प उत्पन्न ही गौण बाब असते. गरीबांच्या सुप्त शक्तीत व त्यांच्या कौशल्यात जशी वाढ होत जाईल तशी त्या गरीबांना दारिद्र्यापासून मुक्त होण्याची प्रेरणा मिळते. म्हणूनच सर्वसमावेशक वृद्धी साठी विकासापासून वंचित असलेल्या वंचित घटकांच्या जीवनात परिवर्तन झाले पाहिजे. दारिद्र्य निर्मूलनासाठी सरकारने गेल्या ७० वर्षात अनेक योजना सुरु केल्या आहेत. योजनांच्या अंमलबजावणीशी सगळ्याच योजनांची उत्पदकता निगडीत असते. म्हणून जोपर्यंत योजनांची अंमलबजावणी प्रभावी होत नाही. तोपर्यंत खऱ्या अर्थाने दारिद्र्य निर्मूलन होणार नाही आणि सर्वसमावेशक विकास ही साध्य होणार नाही. म्हणूनच सर्वसमावेशक वृद्धीसाठी दारिद्र्य निर्मूलनाची गरज निर्माण होते.

सर्वसमावेशक वृद्धीसाठी दारिद्र्य निर्मूलनाची गरज

प्रास्ताविक – (Introduction)

आज जगातील बहुसंख्य देशांनी विकासासाठी आणि मानवी कल्याणासाठी सर्वसमावेशक वृद्धी हे तत्त्व मान्य केले आहे. संयुक्त राष्ट्रांच्या ऐतिहासिक महासभेत १३३ देशांनी शाश्वत विकासासाठी जी ध्येये निश्चित केली त्यामध्ये दारिद्र्य निर्मूलन आणि समावेशक वृद्धी हे महत्वाचे ध्येये आहेत. स्वातंत्र्य मिळाल्यानंतर १९५० पासून भारत आपला आर्थिक विकास नियोजनाच्या माध्यमातून साध्य करत आहे. गेल्या ७० वर्षांमध्ये भारताने सर्वच क्षेत्रांमध्ये लक्षणीय प्रगती साध्य केली आहे. परंतु अद्यापही समाजातील एक मोठा समुह या सर्वापासून खूप दूर आहे. संपत्ती आणि उत्पन्नातील विषमता, अज्ञान, निरक्षरता, स्त्री-पुरुष भेदभाव, दारिद्र्य, कुपोषण, उपासमारी, अनारोग्य, भ्रष्टाचार इ. मुळे आर्थिक विकासापासूनचे प्राप्त लाभ समाजातील वंचित वर्गापर्यंत पोहोचू शकले नाहीत. आर्थिक विकासाचा लाभ देशातील एका मोठ्या गरीब वर्गाला झाला नाही. समाजातील एक वर्ग आर्थिक विकासाच्या लाभापासून वंचित राहिला. त्यामुळे

देशाने जी आर्थिक वृद्धी साध्य केली ती सर्वसमावेशक नव्हती. याचाच अर्थ भारताचा आर्थिक विकास, प्रगती सर्वसमावेशक नाही. आज देखील भारतात सरासरी ३५ टक्के पेक्षा अधिक लोक गरीब व वंचित आहे. या लोकांना आपल्या किमान जीवनावश्यक गरजाही पूर्ण करता येत नाहीत. जो पर्यंत आर्थिक विकास आणि त्यापासून निर्मित लाभांमध्ये समाजातील सर्व घटकांचा समावेश होत नाही तो पर्यंत असा विकास निरर्थक ठरतो. अशा विकासाला काही अर्थ राहात नाही. त्यामुळे भारताने आकरव्या पंचवार्षिक योजनेत अतिजलद आणि अधिकार समावेशक वृद्धी या उद्दिष्टाला प्राधान्य दिले आहे. आर्थिक विकासाचे लाभ समाजातील गरीब, वंचित घटकांना झाले पाहिजेत आणि त्यातून सर्वांना विकासाची समान संधी प्राप्त झाली पाहिजे तरच सर्वसमावेशक वृद्धी साध्य हाईल त्यासाठी आर्थिक विकासाच्या माध्यातून गरीब, वंचित घटकांच्या जीवनात परिवर्तन झाले पाहिजे.

अभ्यासाची उद्दिष्ट – (Objectives of the study)

१. सर्व समावेशक वृद्धीच्या कार्यप्रणालीचा अभ्यास करणे.
२. भारतातील दारिद्र्याच्या स्थितीचा अभ्यास करणे
३. दारिद्र्य निर्मुलनासाठी उपाय सुचविणे

संशोधन पध्दती – (Research Methodology)

प्रस्तुत शोध निबंध दुय्यम साधान सामग्रीवर आधारित असून विविध मासिके, संदर्भग्रंथ यांचा आधार घेतलेला आहे.

सर्वसमावेशक वृद्धी – (Inclusive Growth)

सर्वसमावेशक वृद्धी ही दिर्घकालीन प्रक्रीया आहे. सर्वसमावेशक विकास प्रक्रियेचा आधार हा समानता आहे. देशातील कृषी, उद्योग, व्यापार, सेवा इ. क्षेत्राचा आर्थिक विकास साध्य करताना त्या विकासातून सर्वांचा मानवी (सामाजिक) विकास साध्य झाला पाहिजे. जेव्हा समाजातील सर्व व्यक्तींचा आर्थिक विकासातील सहभाग किंवा योगदान निश्चित होईल, सर्वांना समान संधी उपलब्ध होईल तेव्हा त्यास सर्वसमावेशक वृद्धी संबोधले जाते सर्वसमावेशक वृद्धीच्या संकल्पनेत अनेक घटकांचा समावेश होतो.

१. देशातील दारिद्र्य कमी झाले पाहिजे.
२. देशातील रोजगाराच्या अधिक संधी निर्माण झाल्या पाहिजेत.
३. समाजातील सर्व घटकांना शिक्षण आणि आरोग्याच्या सुविधा उपलब्ध झाल्या पाहिजेत.
४. समाजाच्या मुलभूत गरजा (अन्न, वस्त्र, निवारा) पूर्ण झाल्या पाहिजेत.
५. लोकांना पिण्याचे शुध्द पाणी मिळाले पाहिजे.
६. उत्पन्नातील विषमता कमी झाली पाहिजे.
७. सर्वांना विकासाची समान संधी उपलब्ध झाली पाहिजे.
८. शिक्षण आणि कौशल्य विकासातून समाजाचे सशक्तीकरण झाले पाहिजे.
९. स्त्री-पुरुष समानता निर्माण झाली पाहिजे.
१०. पर्यावरण समतोल राखला गेला पाहिजे.

थोडक्यात विकासाचा लाभ सर्व घटकांना झाला पाहिजे. विकासाच्या लाभापासून कोणताही घटक वंचित राहता कामा नये, यालाच सर्वसमावेशक वृद्धी म्हणतात.

सर्व समावेशक वृद्धीच्या संकल्पनेत पुढील दोन महत्वाच्या घटकांचा समावेशक होतो.

- A) **भौतिक विकास** – यामध्ये देशातील दरडोई उत्पन्न वाढीला महत्त्व
- B) **मानवी (सामाजिक) विकास** – यामध्ये मानवाला दिले जाणारे १) शिक्षण २) आरोग्याच्या सोई ३) पर्यावरणीय समतोल ४) मुलभूत सेवा-सुविधा पुरविणे. या सर्वांच्या विकासातून समावेशक वृद्धीला चालना

मिळते. डॉ अमर्त्य सेन यांनी आर्थिक वृद्धीला चालना मिळते. डॉ अमर्त्य सेन यांनी आर्थिक वृद्धीच्या प्रक्रियेत साध्य मानून समावेशक वृद्धीचे विश्लेषण केले आहे. डॉ अमर्त्य सेन यांच्या मते कृषी क्षेत्र व बिगर कृषिक्षेत्रात काम करणाऱ्या श्रमीकांच्या उत्पन्नातील विषमता कमी करणे हे समावेशक वृद्धीचे उद्दिष्ट असेले पाहिजे. सन २००६ मध्ये जागतीक बँकेने जात, धर्म, पंथ, लिंग, गरीब, श्रीमंत असा विचार न करता मनुष्य हा घटक विचारात घेऊन आर्थिक वृद्धीची प्रादेशीक व्याप्ती वाढविणे, भविष्यकालीन पिढीसाठी साधनसंपत्ती, बाजारपेठा, संधीतील समानता यांचा विस्तार करणे सर्वसमावेशक विकासासाठी गरजेचे असे प्रतिपादन केले आहे. जागतिक बँकेने समावेशक वृद्धीची संकल्पना अधिक व्यापक केली आहे. देशात उत्पादक रोजगार अधिक प्रमाणात निर्माण झाल्यास विकासापासून वंचित असणाऱ्या लोकांच्या उत्पन्नात वाढ होते. श्रमशक्तीचा विकास प्रक्रियेतील सहभाग हा समावेशक वृद्धीचा कार्यक्षम मार्ग असतो.

भारतीय अर्थव्यवस्थेत सर्वसमावेशक वृद्धीची सधःस्थिती :

भारतात गेल्या ७० वर्षात नियोजनाने सर्व समावेशक वृद्धी वाढविण्याचा प्रयत्न झाला. परंतु हे ध्येय पूर्णपणे यशस्वी झालेले नाही. देशातील दारिद्र्य आणि बेरोजगारी कामी करण्यासाठी अनेक योजना राबविण्यात आल्या. शाश्वत सामाजिक विकासासाठी त्या अत्यंत महत्वाच्या होत्या परंतु या योजनांची प्रभावी अंमलबजावणी देशात होऊ शकली नाही. सुरेश तेंडूलकर समितीच्या दारिद्र्य विषयक अकडेवारीनुसार भारतात १९९३-९४ मध्ये एकूण ४५.३% लोक दारिद्र्य रेषेखाली होते तर २००४-०५ मध्ये हेच प्रमाण ३७.२% होते २०११-१२ मध्ये भारतामध्ये दारिद्र्यरेषेखालील लोकांचे प्रमाण २१.५% इतके होते. भारतात ग्रामिण भागातील दारिद्र्याचे प्रमाण जास्त आहे. रंगराजन समिती दारिद्र्य विषयक आकडेवारीनुसार २०११-१२ मध्ये भारतात २९.५% लोक दारिद्र्य रेषेखाली होते. याचा अर्थ देशातील ३०% लोकांना अपल्या किमान जीवनावश्यक गरजा (अन्न, वस्त्र, निवारा) पूर्ण करता येत नाहीत. Human Development Report २०१६ नुसार जगातील १८८ देशांचा मानवी विकास निदेशांक (Humand Development Index) काढला असता भारताचा क्रमांक १३१ वा आहे याचा अर्थ मानव विकासाच्या बाबतीत भारत मागसलेला आहे. आर्थिक विषमतेच्या बाबतीतही भारत जगात दुसऱ्या क्रमांकाचा देश आहे. Swiss Multinational Financial Services Company ने प्रसिध्द केलेल्या आकडेवारीनुसार भारतातील वरचा ५% श्रीमंत लोकांकडे देशाच्या एकूण संपत्तीतील ६८.६% संपत्ती आहे तर वरच्या १०% लोकांकडे ७६.३% संपत्ती आहे. याचा अर्थ देशातील ९०% लोकांकडे देशाच्या एकूण संपत्तीच्या २३.७% संपत्ती आहे. सामाजिक प्रगती निर्देशांकात २०१३ मध्ये १३३ देशांमध्ये भारताचा ९६ वा क्रमांक लागतो. याचा अर्थ भारत सामाजिक प्रगतीच्या बाबतीत मागसलेला देश आहे. भारतामध्ये अनेक कल्याणकारी योजनांची प्रभावी अंमलबजावणी होऊ शकली नसल्याने आज देखील देशातील दारिद्र्याचा प्रश्न बेरोजगारीचा प्रश्न, आर्थिक विषमतेचा प्रश्न, शिक्षण आणि आरोग्याचा प्रश्न सुटू शकलेले नाहीत. पहिल्या पंचवार्षिक योजनेत भारताने जी उद्दिष्टे ठेवली तीच उद्दिष्टे १२ व्या पंचवार्षिक योजनेत ठेवावी लगतात याचा अर्थ देश नियोजनाच्या ७० वर्षात सर्व समावेशक विकास साध्य करू शकलेला नाही.

दारिद्र्य - (Poverty)

भारतीय अर्थव्यवस्थेतील बेकारी, अतिरिक्त लोकसंख्या, निरक्षरता, आर्थिक सामाजिक विषमता, प्रादेशिक असमतोल अशा अनेक समस्यापैकी दारिद्र्य ही एक महत्वाची गंभीर समस्या आहे. ज्या व्यक्तीला किंवा कुटुंबाला जीवन जगण्यासाठी आवश्यक असणाऱ्या अन्न, वस्त्र, निवारा या किमान प्राथमिक गरजा आपल्या उत्पन्नातून पूर्ण करता येत नाहीत. तेव्हा तो व्यक्ती, कुटुंब, समाज दारिद्र्यात आहे असे मानले जाते. दारिद्र्य ही एक सापेक्ष संकल्पना आहे भारतीय दारिद्र्याची संकल्पना सर्वप्रथम दादाभाई नौरोजी यांनी १८७६ मध्ये मांडली Poverty and Unbritish Rule in India या ग्रंथात त्यांनी दारिद्र्याची

भयावह चित्र मांडले असून त्यांची कारणे आणि परिणाम स्पष्ट केले आहेत. दरडोई उत्पन्न व उपयोग खर्च हे दारिद्र्याचे निर्देशक असल्यामुळे वेगवेगळ्या देशात दारिद्र्याची पातळी वेगवेगळी आहे.

दारिद्र्याच्या व्याख्या -

जागतिक विकास अहवाल — दारिद्र्य म्हणजे योग्य पध्दतीचे अन्न व निवारा यांचा अभाव, ही अशी स्थिती आहे की, त्या व्यक्तीस सुयोग्य पध्दतीचे राहणीमान सुव्यवस्थित राहण्याची घरे, आरोग्य, शिक्षण, सुविधा व पिण्याच्या पाण्याची सुविधा मिळत नाही. थोडक्यात सर्व प्रकारच्या सुस्थितीपासून संपूर्णपणे वंचित असणे म्हणजे दारिद्र्य होय.

जागतिक बँक — दारिद्र्य म्हणजे उपासमार, दारिद्र्य म्हणजे निवारा नसणे, आजारी असणे आणि उपचार घेऊ न शकणे, निरक्षर असणे आणि शाळेत जाऊ न शकणे, बेरोजगारी असणे भविष्याचे भय असणे, प्यायला शुध्द पाणी नसणे दारिद्र्य म्हणजे स्वातंत्र्याचा अभाव.

डॉ. अमर्त्य सेन — एखाद्या व्यक्तीला त्याने जोपासलेल्या मुल्यांप्रमाणे जगता न येणे म्हणजे दारिद्र्य होय.

थोडक्यात समाजातील एक वर्ग किंवा कुटुंब आपल्या उत्पन्नातून अन्न, वस्त्र, निवारा, शिक्षण, आरोग्य, पाणी या किमान आवश्यक गरजा पूर्ण करू शकत नसेल तर तो वर्ग किंवा कुटुंब दारिद्र्यात आहे असे मानले जाते.

दारिद्र्य रेषेच्या खालच्या लोकांचे राहणीमान निकृष्ट असते. त्यामुळे निकृष्ट राहणीमानामध्ये राहणाऱ्या लोकांना गरीब मानले जाते. निरक्षरता, कमी उत्पन्न, बेकारी, उपासमार, कुपोषण, आजारपण, कमी आयुष्यमान हे दारिद्र्याचे दर्शक मानले जातात. बकाल वस्त्यांमध्ये राहणे, रोज योग्य पोटभर अन्न न मिळणे, पिण्याच्या शुध्द पाण्याचा अभाव, अर्धनग्नता अवस्थेत जगणे, वैद्यकीय सुविधा, शिक्षण, करमणूक यांचा अभाव असणारे दुःखी जीवनाचे चित्र म्हणजे दारिद्र्य होय. जागतिक बँकेच्या सन २०११ च्या अहवालानुसार भारतात ३२.७० टक्के लोकसंख्या दारिद्र्यरेषेखाली आहे.

दारिद्र्याचे प्रमाण —

सन १९७३ मध्ये भारतात दारिद्र्य रेषेखालील लोकांचे प्रमाण ५४.९ टक्के इतके होते. त्यापैकी ग्रामिण भागातील दारिद्र्य रेषेखालील लोकांचे प्रमाण ५६.४ टक्के होते. तर शहरी भागातील दारिद्र्य रेषेखालील लोकांचे प्रमाण ४९.०० टक्के इतके होत सन १९७७ मध्ये भारतातील दारिद्र्य रेषेखालील लोकांचे प्रमाण ५१.३ टक्के, १९८३ मध्ये ४४.५० टक्के, सन १९८७ मध्ये ३८.९० टक्के, सन १९९३ मध्ये ३६.०० टक्के, सन २००० मध्ये २६.१० टक्के, २००४ मध्ये २७.५० टक्के इतके होते. रंगराजन समितीच्या अंदाजानुसार सन २०११-१२ मध्ये दारिद्र्यरेषेखालील असणारी ग्रामीण लोकसंख्या ३०.९ टक्के तर शहरी लोकसंख्या २६.४ टक्के इतकी होती. तर एकूण दारिद्र्य रेषेखालील लोकांचे प्रमाण २९.५ टक्के इतके होते तर तेंडुलकर समितीच्या मते सन २०११-१२ मध्ये भारतात २६.९ टक्के लोक दारिद्र्यरेषेखाली होते. या वरून भारतात दारिद्र्याच्या समस्येची भयानकता लक्षात येते. दारिद्र्यामुळे देशाच्या विकासमध्ये अडथळा निर्माण होतो आहे.

दारिद्र्य निर्मूलनासाठी उपाययोजना -

दारिद्र्य निर्मूलन कार्यक्रमाचे दोन प्रकार आहेत ते म्हणजे वैश्विक (Universal) आणि लक्ष्याधारित (Targeted) वैश्विक कार्यक्रममध्ये दारिद्र्यरेषे खालील लोकसंख्या मोजमापाची गरज नसते कारण या अंतर्गत योजना सर्वासाठी असतात. जसे की, महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार हमी कायदा या योजने अंतर्गत ग्रामिण भागातील प्रत्येक एका प्रौढ व्यक्तीस एका वर्षामध्ये शंभर दिवसाचा रोजगार पुरविण्यात येतो. दारिद्र्य निर्मूलन योजनांच्या दुसऱ्या प्रकाराचा विचार केल्यास यामध्ये दारिद्र्य रेषेखालील कुटुंबांची गणना करून त्यानुसार निधी निर्धारित करणे आणि तो निधी राज्यनिहाय वितरीत करणे आवश्यक ठरते.

दारिद्र्यविरोधी व्यूहरचनाचा आधार अर्थव्यवस्थेची जलद वृद्धी असला पाहिजी त्यामुळे दारिद्र्य दोन मार्गाने कमी होईल. एक म्हणजे रोजगार निर्माण करणे आणि प्रत्यक्ष मजुरीमध्ये वाढ करणे यामुळे कुटुंबांच्या आर्थिक उत्पन्नात भर पडून आरोग्य शिक्षण आदी सुविधांचा लाभ घेणे शक्य होईल.

दारिद्र्य निर्मूलनामध्ये कृषी क्षेत्राची भूमिगा महत्वाची आहे. सन २०११-१२ च्या NSSO च्या अहवालानुसार कृषी आणि संलग्न क्षेत्राद्वारे ४९ टक्के रोजगार पुरवला जातो. परंतु कृषी क्षेत्राचा वाटा GDP मध्ये १४.४ टक्के इतकाच आहे. याचा अर्थ कृषीक्षेत्रामध्ये काम करणाऱ्या लोकांना कमी उत्पन् मिळते. त्यामुळे कृषी क्षेत्रामध्ये गुणात्मक बदल होणे आवश्यक आहे. एका बाजूला कृषीची उत्पादकता वाढली पाहिजे तर दुसऱ्या बाजूला कृषी उत्पादनाला चांगला भाव मिळाला पाहिजे.

दारिद्र्य निर्मूलनासाठी रोजगाराधारित उत्पादन आणि सेवा क्षेत्राची वृद्धी झाली पाहिजे. पायाभूत सुविधा क्षेत्रामध्ये मोठ्या प्रमाणात गुंतवणूक करून उत्पादन आणि सेवाक्षेत्रामध्ये रोजगार निर्माण झाले पाहिजेत.

राष्ट्रीय अन्न सुरक्षा कायदा २०१३ नुसार देशातील ग्रामिण भागातील ७५ टक्के आणि शहरी भागातील ५० टक्के लोकांना प्रतिव्यक्ती प्रति महिना सार्वजनिक वितरण व्यवस्थेच्या माध्यमातून अतिशय स्वस्त दराने अन्नधान्य उपलब्ध करून दिले जाते. सरकारची ही योजना गरीब लोकांसाठी खूप महत्वाची आहे. ही योजना गरीब लोकांसाठी अतिशय प्रभावीपणे राबविणे आवश्यक आहे. योग्य लाभार्थीनाच या योजनेचा लाभ होणे आवश्यक आहे.

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामिण रोजगार हमी कायदा यानुसार ग्रामिण भागातील प्रत्येक घरातील एका अकुशल प्रौढ व्यक्तीला एका वर्षात १०० दिवस रोजगार पुरविणे आवश्यक आहे. या योजनेची प्रभावी अंमलबजावणी होणे आवश्यक आहे. या योजनेतील गैरव्यवहार कमी होणे आवश्यक आहे. अनेक वर्षांपासून देशामध्ये या योजनेअंतर्गत ५० दिवसापेक्षा कमी रोजगार पुरविण्यात आला आहे. हे लक्ष्य १०० दिवसापर्यंत जाऊन खऱ्या गरीब लोकांना फायदा झाला पाहिजे.

प्रधानमंत्री आवास योजनेतर्गत सन २०२२ पर्यंत सर्वांना घरे देण्याचे उद्दिष्ट ठरविण्यात आले आहे या योजनेची अधिक परिणामकारकपणे अंमलबजावणी करणे आवश्यक आहे. गरीब, गरजू व्यक्तीनांच या योजनेचा लाभ झाला पाहिजे.

या व्यतीरिक्त लोसंख्यावाढीवर नियंत्रण, कृषी आधारीत उद्योगांचा विकास, पायाभूत संरचनेचा विकास, औद्योगिकीकरणाला प्रोत्साहन, लघु व कुटीरउद्योगांचा विकास, स्वतंत्र व्यवसायास प्रोत्साहन, रोजगाराभिमूक शिक्षणाचा प्रसार इ. उपायांच्या माध्यमातून दारिद्र्य निर्मूलन होऊ शकते. दारिद्र्य निर्मूलनासाठी सरकारने गेल्या ७० वर्षात अनेक योजना सुरु केलेल्या आहेत. योजनांच्या अंमलबजावणीशी सर्वच योजनांची उत्पादकता निगडीत असते म्हणून जापर्यंत योजनांची अंमलबजावणी प्रभावी होत नाही तोपर्यंत खऱ्या अर्थाने दारिद्र्य निर्मूलन होणार नाही.

निष्कर्ष/सारांश : (Conclusion)

दारिद्र्य निर्मूलन हा सर्व समावेशक वृद्धीचा एक महत्वाचा निकष आहे. भारतात गेल्या ७० वर्षात नियोजनाच्या माध्यमातून सर्वसमावेशक वृद्धी वाढविण्याचा प्रयत्न झाला. परंतु हे ध्येय पूर्णपणे यशस्वी झालेले नाही. विविध शासकीय योजनांचा लाभ तळागाळातील वंचित घटकांना पूर्णपणे झालेला नाही. विकास हा अधिक मानवी कल्याणाकडे वाटचाल करणारा असला पाहिजे. अमर्त्य सेन यांच्या मते, आर्थिक विकासाबरोबरच गरीबांची क्रयशक्ती वाढल्यास सामाजिक कल्याण साधले जाऊन आपोआप समावेशक वृद्धी घडून येईल. या वृद्धी प्रक्रियेत समाजातील सर्व वर्गांसाठी मूलभूत सेवा-सुविधा जसे की, आहार, शिक्षण, आरोग्य, निवारा, पिण्याचे पाणी, कौशल्य विकास इ. उपलब्ध करून देण्याबरोबरच सन्मानाने जीवन जगण्यासाठी उपजिविका साधनांची उपलब्धता करून देणे अभिप्रेत आहे. उत्पादक रोजगार निर्माण

झाल्यास विकासापासून वंचित असणाऱ्या लोकांच्या उत्पन्नात वाढ होते. उपलब्ध श्रमशक्तीचा विकास प्रक्रियेतील सहभाग हा सर्व समावेशक वृद्धीचा कार्यक्षम मार्ग असतो. दारिद्र्य निर्मूलन हे मानवी विकासाची घनता वाढविते. मनुष्याचा सर्वांगीण विकास हाच अर्थ विकासात अभिप्रेत असतो.

संदर्भ सुची :

१. दत्त एवं सुन्दरम भारतीय अर्थव्यवस्था (२०१५) गौरव दत्त आणि अश्विनी महाजन.
२. बुलेटिन ऑफ युनिक अॅकॅडमी, मे २०१६
३. योजना मासिक, ऑगस्ट २०१५
४. भारतीय अर्थव्यवस्था : प्रा. के. एम. भोसले, डॉ. एस. एम. भोसले, डॉ पी. एच. कदम.
५. अर्थसंवाद विविध अंक
६. भारतीय अर्थव्यवस्था – डॉ सुखदेव खंदारे

महाराष्ट्रातून भारतातील इतर प्रमुख भागात जाणारे लोहमार्गांचा एक भौगोलिक अभ्यास

Dr.Achole.P.B¹ Swami.B.M²

¹Head Department And Associate Professor,Azad Mahavidyalaya,Ausa,Dist- Latur.

²Assistant Professor,Geography Department Walchand College Arts And Science,Solapur.

सारांश –

राष्ट्राच्या आर्थिक विकासाच्या दृष्टीने आवश्यक मूलभूत घटकापेकी राष्ट्रीय लोहमार्ग हा प्रमुख आधार आहे.लोहमार्गाच्या एकूण लांबीबाबत महाराष्ट्राचा भारतात प्रथम क्रमांक लागतो. रेल्वे वाहतुकीचे जाळे हे महाराष्ट्रातून भारताच्या कानाकोपर्यात पसरलेले आहेत. यामध्ये रेल्वे वाहतूक सर्वात आघाडीवर आहे.गेल्या सुमारे २५ वर्षांच्या काळातील उपनगरांचा विकास हा वाहतुकीच्या जलद व स्वस्त सोयीनी शक्य झाले आहे.विकासाच्या इतर सोयीप्रमाणे वाहतुकीची साधने ही पश्चिम महाराष्ट्रातील तुलनेने अधिक मिळाली आहेत. महाराष्ट्रातील वन आणि खनिज उत्पादने सर्वाना रस्ते लोहमार्ग यांच्या विकासाने हातभार लावलेला आहे

बीजसंज्ञा- लोहमार्ग, वाहतूक, विनिमय.

प्रस्तावना –

मनुष्य जीवनात विनिमय काळापासून वाहतुकीला उच्च स्थान प्राप्त झाले आहे. एका ठिकाणापासून दुसऱ्या ठिकाणी झालेले वस्तूचे, व्यक्तीचे प्राण्याचे स्थलांतर म्हणजे वाहतूक होय. वाहतूक हे प्रत्येक गाव, खेडे, शहर, राज्य, जिल्हे आणि देश, जग इत्यादीच्या विकासासाठी आवश्यक आहे. वाहतूकीमुळे विशिष्टीकरणास मदत होते. उद्योगधंद्यांचे विकेंदीकरण सहज शक्य होते. या साधनामुळे देशाची किंवा कोणत्याही भूभागाची औद्योगिक प्रगती घडून येते.रेल्वे वाहतूक किंवा लोहमार्गामुळे मानवी संस्कृतीतील उच्चतेची कड प्राप्त होते. मानवी जीवनस्तर, राहणीमान उंचावते. देशाच्या आर्थिक विकासामध्ये वाहतूक सेवा महत्वाची असते. लोहमार्गाचे विविध जाळे जगभर पसरले आहे. लोहमार्गामुळे देशाच्या आर्थिक व सामाजिक विकासाला चालना मिळते.

नैसर्गिक साधनसंपत्ती, वस्तू निर्माण उद्योग आणि वस्तूच्या बाजारपेठ काही विशिष्ट ठिकाणीच स्थान झालेले पहावयास मिळते. लोहमार्ग संदेशवहन आणि व्यापार यामुळे वस्तू व सेवांची उत्पादक क्षेत्र उपभोगाच्या क्षेत्राशी जोडली जातात. आधुनिक काळात लोहमार्ग व संदेशवहन आणि व्यापार त्यामुळे वस्तू व सेवांची उत्पादक क्षेत्रे उपभोगाच्या क्षेत्राशी जोडली जातात. आधुनिक काळात लोहमार्ग व संदेशवहन सुविधामधील प्रगतीमुळे अंतर हा घटक कमी होऊ लागला आहे. विज्ञान आणि तंत्रज्ञान प्रगतीमुळे यामध्ये काही विशिष्ट बाबतीत विशेषीकरण घडून आलेला आहे.

अभ्यास क्षेत्र –

प्रस्तुत निबंधामध्ये महाराष्ट्राच्या उत्तरेस महाराष्ट्राचे क्षेत्रफळ ३,०७,६९० चौ.कि.मी व अक्षांश १५.८ अंश उत्तर ते २२.१ अंश उत्तर रेखांश, ७२.६ पूर्व ते ८०.९ अंश पूर्व महाराष्ट्राच्या उत्तरेस मध्यप्रदेश हे राज्य आहे. नंदुरबार, धुळे, जळगाव, बुलढाणा, अमरावती, नागपूर, भंडारा व गोंदिया या उत्तरेकडील जिल्ह्यांना लागून मध्यप्रदेशची हद्द आहे. तसेच गोंदिया व गडचिरोली या जिल्ह्याला लागून पूर्वेकडे छत्तीसगड राज्याची हद्द आहे. वेंगुर्ला या राज्यातील दक्षिणेकडील टोकापासून राज्याची सीमा सर्वसाधारणपणे ईशान्येस जाते. मात्र चंद्रपूर जिल्ह्याची दक्षिण सीमा आग्नेय झुकून गडचिरोली जिल्यातील सिरोंच्यापर्यंत जाते. राज्याच्या दक्षिणेस सिंधूदुर्ग जिल्ह्याला स्पर्श करून गोवा हे राज्य आहे.

उद्दिष्टे –

- १) भारतातील इतर प्रमुख लोहमार्गांचा वेध घेणे.
- २) महाराष्ट्रातील लोहमार्गांच्या विकासातील गोष्टींचा अभ्यास करणे.
- ३) महाराष्ट्रातून इतर राज्यात गेलेले लोहमार्गांचा वेध घेणे.
- ४) कोकण रेल्वेचा सधय स्थितीची आढावा घेणे.

१) मुंबई – दिल्ली – पश्चिम रेल्वेचा ब्रॉडगेज मार्ग पश्चिम किनार्याने हा मार्ग गुजरात मधील सुरात- बडोद्यापासून पुढे रतलाल कोटा, मथुरामार्गे दिल्लीला जोडलेला आहे.

अ) मुंबई – कोलकत्ता – मध्यरेल्वेचा ब्रोडगेज मार्ग मुंबई – कल्याण –भुसावळ– वर्धा – नागपूर – गोंदिया येथून पुढे पूर्वेकडे मध्यप्रदेश – बिहार – झारखंड – पश्चिम बंगाल आशा राज्यामधून कोल्कात्याला जोडला आहे.

ब) मुंबई – चेन्नई – मध्यरेल्वेचं ब्रॉडगेज मार्ग मुंबई – कल्याण- पुणे – दौड – सोलापूर मार्गे पुढे कर्नाटक –आंध्रप्रदेश तमिळनाडू या राज्यामधून चेन्नई जोडला आहे.

क) मुंबई – मंगलोर – या कोकण रेल्वेचा दिवा ते सावंतवाडी व पुढे गोवा – मंगलोर असा ब्रॉडगेज किनारा मार्ग आहे
ड) चेन्नई-दिल्ली – हा ग्रॅंड ट्रंक दक्षिण – उत्तर ब्रोडगेज मार्ग विदर्भातून जातो. महाराष्ट्रातील या मार्गावरती प्रमुख स्टेशने म्हणजे बाल्लाराशह ,चंद्रपूर, वर्धा व नागपूर हा मार्ग दक्षिण व उत्तर भारत यांना जोडणारा आहे .

2) राज्यात बहुतेक महत्वाची व्यापारी केंद्रे लोहमार्गाने जोडली गेली आहेत. मात्र विदर्भा, मराठवाडा , कोकण या विभागांना लोहमार्ग सेवा तुलनेने कमी मिळाली आहे.

अ) सिंधुदुर्ग नगरी, गडचिरोली, अलिबाग, बीड व बुलढाणा ही जिल्हा प्रमुख ठिकाणे कोणत्याही लोहमार्गावर नाहीत .

ब) राज्यातील एकूण लोहमार्गापैकी सुमारे ४० % मार्गांचे विद्युतीकरण पूर्ण झाले आहे .

क) राज्यात ३२.५% लोहमार्गांचे दुपदरीकरण पूर्ण झाले आहे .

3) मध्य रेल्वे नवीन लोहमार्ग – अमरावती ते नरखेड

२) लोणद- फलटण, बारामती, अहमदनगर- परळी – वैज्यानाथ पुणे ते शिर्डी.

३) कुरुंदवाडी – लातूर , न्यारोगेज ते ब्रॉडगेज, कुरुडवाडी ते लातूर, नाॅररोगेज ते कुरुदवाडी ते लातूर , पंढरपूर ते मिरज कोकण रेल्वे , पश्चिम रेल्वे

राज्यातील लोहमार्ग (कि.मी)

अनु. क.	रेल्वे विभाग	ब्रॉडगेज अंदा मापी	मीटर गेज मापी	नरोगेज अंदा मापी	एकूण
१.	पश्चिम रेल्वे	३६६	३६६
२.	मध्य रेल्वे	२४९१	४८२	२,९७३
३.	दक्षिण मध्य रेल्वे	९३९	४५३	१,३९२
४.	दक्षिण पूर्व रेल्वे	४९४	...	२७२	७६६
एकूण टक्केवारी		४,२९० (७८.०)	४५३ (८.२)	७५४ (१३.८)	५४९७ (१००.०)

(SOURCE :INDIAN RAILWAY MINISTRY GOV.OF INDIA -2018)

राज्यातील लोहमार्गाच्या माहिती मध्ये रेल्वे विभाग दिलेले असून त्यामध्ये लोहमार्गांचे ब्रॉडगेज, मिटरगेज, मारोगेज, असे तीन प्रकार आहेत . त्यामध्ये सर्वात जास्त टक्के ब्रॉडगेज लोहमार्गांचे आहे. सर्वात कमी अंदा मापी लोहमार्ग प्रकारचे आहे .

1 कोकण रेल्वे

मुंबई मंगलोर पर्यंत ही रेल्वे एकूण ८४३ कि मी लांबीची एकूण महाराष्ट्रातील या रेल्वेची लांबी ३८२ कि मी आहे . त्यावर ३७ बोगदे व ८० पूल आहेत रत्नागिरीजवळ करबुडे येथील या रेल्वेवरील सर्वात मोठा म्हणजे ६.५ कि मी लांबीचा बोगदा आहे या रेल्वेवरील ६८ स्टेशन पैकी ३४ महाराष्ट्रात आहेत. कोकणातील मत्स्य व्यवसाय फळ लागवड पेट्रोल रसायने उद्योग, खनिजावर आधारित उद्योग वनउद्योग, उर्जा इंधन, वाहतूक सामग्री यांना यामुळे चालना मिळेल . कोकण रेल्वेच्या बांधकामात सुरक्षितता व प्रचंड क्षमता याचा संगम साधण्यात आला आहे . या मार्गावर गाडीची गती ताशी १६० कि मी पर्यंत नेता येणार आहे. रत्नागिरी जवळ पानवाल येथे सर्वात उंच म्हणजे ६५ मी उंचीचा पूल आहे.

कोकण रेल्वेमुळे होणारे फायदे

मार्ग	बचत	
	अंतराची	वेळेची
मुंबई – कोचीन	५१३ कि.मी	१२ तास
मुंबई – मंगलोर	११२७ कि.मी	२६ तास
मुंबई – गोवा	१८५ कि.मी	१० तास

(SOURCE :INDIAN RAILWAY MINISTRY GOV.OF INDIA -2018)

कर्जत पनवेल लोहमार्ग टाकून पुणे- मुंबई अंतर ३१ कि.मी.ने कमी करण्याची योजनाहि कार्यान्वित झाली आहे . मुंबई शहरात कुलाबा –मोहीम –कुर्ला अशा भुयारी रेल्वे मार्गाची पाहणी सुरु झाली आहे. यासाठी रुपये ६५०० कोटी खर्च अपेक्षित आहे. मुंबई विकास महामंडळाची स्थापना १९९८ साली झाली आहे.

निष्कर्ष :

1. देशाच्या अर्थव्यवस्थेत हातभार लागतो.
2. पर्यटन व्यवसायात चालना मिळते
3. औद्योगिक करणावर प्रभाव पडतो
4. राज्याचे विकासात्मक स्वरूप लक्षात येते.

संदर्भ ग्रंथ :

1. प्रा. संतोष दास्ताने – महाराष्ट्राचा भूगोल
2. प्रा. सवदी व प्रा.कोळेकर – महाराष्ट्राचा भूगोल व निराली प्रकाशन.
3. प्रा.खतीब- भारताचा पर्यटन भूगोल
4. <https w.w.w. solapur> विकिपीडिया

शाश्वत विकासात रा.से.यो.चे योगदान

निलेश दे. हलामी

सहा. प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, आदर्श महाविद्यालय, देसाईगंज जि. गडचिरोली

Email- nileshhalami750@gmail.com

सारांश:

राष्ट्रीय सेवा योजना हे व्यक्तिमत्त्व विकासाचे खुले व्यासपीठ आहे. राष्ट्रीय सेवा योजना हे समाजातील युवकांना सामाजिकतेबद्दल माहिती देवून समाजाला उन्नत करण्याचे काम करत आहे. युवकांच्या व्यक्तिमत्त्व विकासाकरिता राष्ट्रीय सेवा योजना सातत्याने कार्यरत आहे. विद्यार्थींच्या विकासापासून ते राष्ट्रविकासपर्यंत या व्यापक स्तरावर राष्ट्रीय सेवा योजना कार्य करते. या विभागाच्या माध्यमातून ग्राम ते राष्ट्रस्तरावर अनेक युवक सहभागी होऊन देश विकासास स्वतःचा हातभार लावत आहेत. महात्मा गांधीजींच्या जन्मशताब्दी वर्षात सुरु झालेली ही योजना सुवर्णमहोत्सवी वर्षाकडे वाटचाल करीत आहे. ही वाटचाल अधिक परिणामकारक, उपयुक्त व गरजेवर आधारित व्हावी असे वाटत असल्यास जगातील या सर्वांत मोठ्या सामाजिक सेवा संघटनाला शाश्वत विकासाशी जोडणे अनिवार्य आहे. अनेक विद्यापीठातील व महाविद्यालयातील राष्ट्रीय सेवा योजना विभाग या दृष्टीने काम करीत आहेत. त्यांचे उपक्रम उदा. पाणी आडवा पाणी जिरवा, आपत्ती व्यवस्थापन, पर्यावरण जागृती हे उपक्रम निश्चित शाश्वत विकासाशी संबंधित आहेत. मात्र यापुढे "शाश्वत विकासासाठी राष्ट्रिय सेवा योजना" अशा एकात्मिक स्वरूपाच्या योजनेची आखणी करावी लागेल. त्यातूनच गरजेवर आधारित शिक्षण, कौशल्यांचा विकासासाठी उपयोग, तंत्रज्ञानाचे शाश्वत विकासातील योगदान याबाबी साध्य होतील. "विकासासाठी शिक्षण व विकासातून शिक्षण" ही प्रक्रिया शाश्वत विकासाची प्रक्रिया आहे.

बिजसंज्ञा:- राष्ट्रीय सेवा योजना, शिक्षण आणि विकास शाश्वत विकास

राष्ट्रीय सेवा योजना

पहिले पंतप्रधान पंडित जवाहरलाल नेहरू यांच्या सूचनेनुसार डॉ.सी.डी.देशमुख यांच्या अध्यक्षतेखाली एक समिती नेमण्यात आली. या समिती नेमण्यामागचा प्रमुख उद्देश उच्च शिक्षण घेत असताना विद्यार्थी व युवकांचा राष्ट्राच्या उभारणीमध्ये योगदान असावे, यासंबंधी योजना तयार करणे हा होता. या समितीने अनेक देशातील युवकांशी संबंधित धोरणाचा अभ्यास करून राष्ट्रीय सेवा योजनेची सूचना केली होती. अशाच पध्दतीची शिफारस कोठारी आयोगाने १९६४ ते १९६५ मध्ये सूचविली होती. त्यानुसार स्वयंसेवी स्वरूपामध्ये एक कार्यक्रम दिला होता. ज्यामध्ये नॅशनल कॅरेंट कोर (एनसीसी) याच आधारावर समाजसेवेसाठी राष्ट्रीय सेवा योजना सुरु करण्याची सूचना केली गेली. सप्टेंबर १९६७ मध्ये कुलगुरूंच्या परिषदेमध्ये अशा प्रकारच्या सूचनेचे स्वागत करण्यात आले आणि त्यामध्ये एक समिती गठित करण्याचे ठरविण्यात आले. त्यानुसार समाजसेवा ही शिक्षणाचा एक भाग असेल अशा पध्दतीची शिफारस पुढे आली. या कुलगुरूंच्या समितीने सुचवल्याप्रमाणे चैथ्या पंचवार्षिक योजनेमध्ये योजना आयोगाने पाच कोटी अनुदान मंजूर केले. ज्या माध्यमातून निवडक महाविद्यालये व इतर संस्थांमध्ये प्रायोगिक तत्त्वावर राष्ट्रीय सेवा योजना हा प्रकल्प सुरु करण्यात आला. या प्रकल्पाची सुरुवात राष्ट्रपिता महात्मा गांधी यांचे जन्मशताब्दी वर्ष १९६९मध्ये होते. त्यावर्षी ही योजना सुरु करण्यात यावी असा विचार झाला. यानुसार २४ सप्टेंबर १९६९ रोजी 'राष्ट्रीय सेवा योजना' सुरु करण्यात आली.

सुरुवातीला ३७ विद्यापीठांमधून अवघ्या ४०,००० विद्यार्थी स्वयंसेवकांच्या सहभागातून सुरु झालेली योजना, आज भारतातील २९८ विद्यापीठातील आणि ४२ माध्यमिक पातळीवरील बोर्डातून ३२ लाख स्वयंसेवकांपर्यंत पोहचली आहे. स्थापनेपासून आजपर्यंत या योजनेचा लाभ ३.७५ कोटी विद्यार्थ्यांनी घेतला आहे. या विस्ताराबरोबरच जगातील सर्वांत मोठी सामाजिक सेवा संघटना म्हणून या सेवा संघटनेकडे पाहिले जात आहे. 'Not me but you' या ब्रीदवाक्यातून समाजासाठी त्यागवृत्तीतून, 'माझ्यासाठी नाही तर तुमच्यासाठी' हा भाव दिसून येत आहे. या त्यागमय भावनेतून राष्ट्रीय सेवा योजनेच्या विद्यार्थी स्वयंसेवकाने काम करावे अशी अपेक्षा असून या कामातून पुढील उद्दिष्टे साध्य व्हावीत यासाठी प्रयत्न केला जातो.

1. ज्या समाजात काम करावयाचे आहे तो समाज समजावून घेणे. 2. आपल्या समाजाच्या पार्श्वभूमीवर स्वतःला समजावून घेणे. 3. समाजाच्या गरजा व समस्या समजावून घेणे व त्या सोडविण्यासाठी त्यामध्ये सहभागी

होणे. 4. स्वतःमध्ये नागरिकत्वाची व सामाजिक जबाबदारी निर्माण करणे. 5. स्वतःच्या ज्ञानाचा वैयक्तिक व सामाजिक समस्या निराकरणासाठी उपयोग करून वास्तववादी उत्तरे शोधणे. 6. आपल्यामध्ये समूहात राहण्यासाठी व जबाबदारी घेण्यासाठीची क्षमता वृद्धिंगत करणे. 7. लोकसहभाग वाढविण्यासाठीच्या कौशल्यांना आत्मसात करणे. 8. नेतृत्व गुण आणि लोकशाही दृष्टीकोन आत्मसात करणे. 9. तातडीच्या गरजा आणि आपत्ती व्यवस्थापनासाठीची क्षमता विकसित करणे. 10. राष्ट्रीय एकात्मता आणि सामाजिक सौहार्दतेचा वापर करणे. 11. सांस्कृतिक व सामाजिक मूल्यांना जनसामान्यांपर्यंत पोहचविणे. 12. तरूणांमध्ये व्यक्तिमत्व विकास, नेतृत्वगुण विकसित करणे.

शिक्षण आणि विकास

कोणत्याही प्रकारच्या शिक्षण प्रशिक्षणाचा विकासाशी संबंध असतोच. विकास ही संकल्पना विकसित होत होत भौतिक विकासापासून कल्याणकारी विकासापर्यंत आणि आता पर्यावरणासह विकास किंवा 'शाश्वत विकास' या संकल्पनेवर सर्वाधिक भर दिला जात आहे. उच्च शिक्षणव्यवस्थेत सुरु झालेली राष्ट्रीय सेवा योजना व तिची उद्दिष्टे यांचा अभ्यास केल्यास असे दिसून येते की या योजनेमुळे शिक्षणाला विकासाशी जोडून शिक्षण हे अधिकाधिक वास्तववादी व गरजेवर आधारित करण्याची संधी शिक्षणव्यवस्थेला प्राप्त झाली आहे.

"पुढच्या पिढ्यांच्या गरजा भागविण्यात कोणत्याही प्रकारची तडजोड न करता आजच्या पिढ्यांचा विकास म्हणजे शाश्वत विकास' होय. या प्रकारचा विकास साध्य करण्यासाठी शिक्षण आणि विकास यांचा सांधा जोडण्यासाठी शिक्षणाच्या वेगवेगळ्या पातळ्यांवर, शिक्षण आणि शाश्वत विकास याची जुळवणूक करावी लागेल. राष्ट्रीय सेवा योजना ही योजना त्या त्या विद्यापीठातील वा महाविद्यालयातील केवळ काही विद्यार्थी व शिक्षकांपर्यंत मर्यादित न ठेवता या योजनेला अत्यंत व्यवस्थितरित्या उच्च शिक्षणाच्या विस्तारसेवा' या घटकाशी नियमबद्ध जाडणे आवश्यक आहे. शिक्षण, संशोधन आणि विस्तारसेवा या तीन महत्त्वाच्या उद्दिष्टपूर्तीसाठी राष्ट्रीय सेवा योजनेचा कुशलतेने उपयोग करता येणे शक्य आहे. त्यातून शाश्वत विकासासाठी उपक्रम घेता येणे शक्य आहे.

१२० तास नियमित काम आणि एका आठवड्याचे विशेष शिबीर या दोन प्रकारच्या उपक्रमांना महाविद्यालयाच्या विविध विभाग आणि उपक्रमातून गावांच्या आणि शहरी भागांच्या शाश्वत विकासाशी जोडून पुढील वाटचाल करावी लागणार आहे. राष्ट्रीय सेवा योजनेच्या माध्यमात राबविण्यात येणारे उपक्रम आणि प्रकल्प हे श्रमप्रतिष्ठा वाढविणारे असावेत हा आग्रह बरोबर आहे, मात्र म. गांधीजींनी सांगितल्याप्रमाणे बौद्धिक श्रम हे शारीरिक श्रमाला पर्याय नाहीत. तसेच शारीरिक श्रम हे बौद्धिक श्रमालाही पर्याय नाहीत. म्हणूनच राष्ट्रीय सेवा योजनेतील उद्दिष्टपूर्तीसाठी या उपक्रमांमध्ये शारीरिक व बौद्धिक अशा दोन्ही श्रमांचा, ज्ञानाचा व विविध कौशल्यांचा एकत्रित उपयोग होणे गरजेचे आहे.

आज राष्ट्रीय सेवा योजनेत सहभागी महाविद्यालयांमध्ये बहुतांशी महाविद्यालये ही कला, वाणिज्य, विज्ञान ही आहेत. वैद्यकीय, अभियांत्रिकी, व्यवस्थापन, तंत्रविज्ञान, संगणकशास्त्र, माहिती तंत्रज्ञान इ. विद्याशाखांच्या महाविद्यालयांचे प्रमाण त्यामानाने खूपच कमी आहे. देशातील खेड्यांच्या आणि विविध भागांच्या शाश्वत विकासासाठी जगातील या सर्वांत मोठ्या सामाजिक सेवा संघटन शक्तीचा वापर करून घेण्यासाठी पुढील काळात राष्ट्रीय सेवा योजना कार्याची व्याप्ती वाढवावी लागेल. ही व्याप्ती दोन पातळ्यांवर विस्तारित करणे आवश्यक आहे.

१. नवनवीन विद्याशाखांच्या उदा. माहिती तंत्रज्ञान, संगणक शास्त्र व्यवस्थापन, अभियांत्रिकी महाविद्यालयांचा क्रियाशील सहभाग वाढविण्यासाठी विस्तार.

२. महाविद्यालयीन पातळीवर विविध विद्याशाखा व विषय यांचा सहभाग वाढविण्यासाठीचा विस्तार.

शिक्षणाला शाश्वत विकासाशी जोडतांना राष्ट्रीय सेवा योजना या विभागाचा व योजनेचा खूपच उपयोग होणार आहे. **शाश्वत विकास आणि राष्ट्रीय सेवा योजना**

शिक्षण हा कोणत्याही विकासाचा पाया आहे हे कालातीत सत्य आहे, कोणत्याही देशात प्रगतीची दारे उघडण्याचा मार्ग शिक्षणाच्या माध्यमातून जात असतो, म्हणूनच राष्ट्रसंघाने २००५ साली जगाची शाश्वत विकासाची वाट सुलभ व वेगवान करण्याच्या हेतूने २००५ ते २०१४ हे शाश्वत विकासासाठी शिक्षण दशक जाहीर केले. सदस्य राष्ट्रांनी शाश्वत विकास घडवून आणण्यासाठी आपल्या देशातील सर्व पातळ्यांवरील शिक्षणाला शाश्वत

विकासाशी जोडण्याचे धोरण व कृती आराखडे तयार करावेत हा त्यामागील उद्देश होता. या दशकपूर्तीनंतर सप्टेंबर २०१५ मध्ये जागतिक अर्थव्यवस्थेला शाश्वत विकासाला सर्वसमावेशक दिशा देण्याच्या उद्देशाने युनोने २०३० शाश्वत विकास ध्येये जाहीर केली आणि पुढील पंधरा वर्षात सर्व सदस्य राष्ट्रांनी शाश्वत विकासाची एकूण सतरा ध्येये साध्य करावीत अशी भूमिका स्पष्ट केली.

- सर्व प्रकारच्या गरिबीचे निर्मूलन करणे.
- भूक संपवणे, अन्न सुरक्षा व सुधारित पोषणआहार उपलब्ध करून देणे आणि शाश्वत शेतीला प्राधान्य देणे.
- आरोग्यपूर्ण आयुष्य सुनिश्चित करणे व सर्व वयोगटातील नागरिकांचे कल्याण साधणे.
- सर्वसमावेशक व गुणवत्तापूर्ण शिक्षण उपलब्ध करणे.
- लिंगभावाधिष्ठित समानता व महिला आणि मुलींचे सक्षमीकरण साधणे.
- पाण्याची व स्वच्छतेच्या संसाधनाची उपलब्धता सुनिश्चित करणे. सर्वांना अल्पखर्चीक विश्वासाह, शाश्वत आणि आधुनिक ऊर्जा साधने उपलब्ध करून देणे.
- शाश्वत, सर्वसमावेशक आर्थिक वाढ आणि उत्पादक रोजगार उपलब्ध करणे.
- पायाभूत सोयीसुविधांची निर्मिती करणे, सर्वसमावेशक आणि शाश्वत औद्योगिकीकरण करणे आणि कल्पकतेला वाव देणे.
- विविध देशांमधील असमानता दूर करणे.
- शहरे आणि मानवी वस्त्या, अधिक समावेशक, सुरक्षित, संवेदनशील आणि शाश्वत करणे.
- उत्पादन आणि उपभोगाच्या पद्धती शाश्वत रूपात आणणे.
- हवामान बदल आणि त्याच्या दुष्परिणामांना रोखण्यासाठी त्वरित उपाययोजना करणे.
- महासागर व समूहांचे संवर्धन करणे तसेच त्यांच्याशी संबंधित संसाधनांचा शाश्वतपणे वापर करणे
- परिस्थितिकीय व्यवस्थांचा शाश्वत पद्धतीने वापर करणे. वनाचे शाश्वत व्यवस्थापन, वाळवंटीकरणाशी मुकाबला करणे, जमिनीचा कस कमी होण्याची प्रक्रिया आणि जैवविविधतेची हानी रोखणे.
- शांततापूर्ण आणि सर्वसमावेशक समाजव्यवस्थांना प्रोत्साहन देणे. त्यांची शाश्वत विकासाच्या दिशेने वाटचाल निश्चित करणे, सर्वांची न्यायापर्यंत पोहोच स्थापित करण्यासाठी विविध पातळ्यांवर परिणामकारक, उत्तरदायी आणि सर्वसमावेशक संस्था उभ्या करणे.
- चिरस्थायी विकासासाठी वैश्विक भागीदारी निर्माण व्हावी यासाठी अंमलबजावणीची साधने विकसित करणे. ही ध्येये प्रत्येक राष्ट्रांनी २०३० पर्यंत पूर्ण करावीत असा हा पुढील पंधरा वर्षांसाठीचा महत्वाकांक्षी शाश्वत विकासाचा उपक्रम आखण्यात आला आहे.

शाश्वत विकास या संकल्पनेमध्ये आर्थिक शाश्वतता, सामाजिक शाश्वतता व पर्यावरणीय शाश्वतता या तीन संकल्पनांचा समावेश होतो. महाविद्यालयातील विविध ज्ञानशाखा, विभाग व मंडळे या सर्वांच्या माध्यमातूनच परिसराच्या शाश्वत विकासाचा आराखडा करता येवू शकेल व त्या सर्व विभागांना, ज्ञानशाखांना एकत्रित आणण्याचे काम राष्ट्रीय सेवा योजना विभागाच्या माध्यमातून प्रभावीपणे करता येणे शक्य आहे.

शाश्वत विकासाच्या तत्वांचा अभ्यास केल्यास प्रत्येक खेड्याचा शाश्वत विकास करण्यासाठी स्वेच्छा दातृत्व व स्थानिक पातळीवरील लोकशाही सहभाग या दोन तत्वांच्या प्रभावी वापरातून आपल्या देशातील व राज्यातील गावांनी आपला कायापालट केला आहे व शाश्वत विकासाची वाट चोखाळली आहे.

राष्ट्रीय सेवा योजनेचे ब्रीदवाक्य आणि सर्वच्या सर्व उद्दिष्टांचा या शाश्वत विकास संकल्पना, तत्वे आणि कृतिकार्यक्रम यांचेशी घनिष्ठ संबंध आहे. तो ओळखून भविष्यातील राष्ट्रीय सेवा योजना विभागाची वाटचाल याच दिशेने करणे आवश्यक आहे. महात्मा गांधीजींच्या जन्मशताब्दी वर्षात सुरू झालेली ही योजना सुवर्णमहोत्सवी वर्षाकडे वाटचाल करित आहे. ही वाटचाल अधिक परिणामकारक, उपयुक्त व गरजेवर आधारित व्हावी असे वाटत असल्यास जगातील या सर्वांत मोठ्या सामाजिक सेवा संघटनाला शाश्वत विकासाशी जोडणे अनिवार्य आहे. अनेक विद्यापीठातील व महाविद्यालयातील राष्ट्रीय सेवा योजना विभाग या दृष्टीने काम करित आहेत. त्यांचे उपक्रम उदा. पाणी आडवा पाणी जिरवा, आपत्ती व्यवस्थापन, पर्यावरण जागृती हे उपक्रम निश्चित शाश्वत विकासाशी संबंधित आहेत. मात्र यापुढे "शाश्वत विकासासाठी राष्ट्रीय सेवा योजना" अशा एकात्मिक स्वरूपाच्या योजनेची आखणी करावी लागेल. त्यातूनच

गरजेवर आधारित शिक्षण, कौशल्यांचा विकासासाठी उपयोग, तंत्रज्ञानाचे शाश्वत विकासातील योगदान याबाबी साध्य होतील. "विकासासाठी शिक्षण व विकासातून शिक्षण" ही प्रक्रिया शाश्वत विकासाची प्रक्रिया आहे.

निष्कर्ष:-

निसर्गाकडे सर्वांच्या गरजा भागविण्याची क्षमता आहे, मात्र सर्वांची हाव भागविण्याची क्षमता नाही. हे राष्ट्रपिता महात्मा गांधीजींचे प्रसिद्ध वाक्य शाश्वत विकासाचा मूलाधार आहे. हाव आणि गरज या दोन्हीतील फरक लक्षात घेवून 'Greed based Economy' कडून 'Need based Economy' कडे वाटचाल करण्यासाठीच राष्ट्रीय सेवा योजनेचा पाया विस्तारून, उच्च शिक्षणाला शाश्वत विकासाशी जोडण्याचे महत्त्वाचे काम आता राष्ट्रीय सेवा योजनेला करावयाचे आहे. हे कार्य जेवढे परिणामकारक आणि वेगाने होईल तितक्या लवकर "शाश्वत विकासासाठी शिक्षण" (Education for Sustainable Development) हे युनोचे शिक्षणाचे उद्दिष्ट साध्य होईल.

संदर्भसूची:-

- 1) <https://www.mpscmantra.com/2018/08/06/शाश्वत-विकास-लक्ष्ये-sustainable-development-goals/>
- 2) <https://marathi.pratilipi.com/read/शाश्वत-विकास-लक्ष्ये-sustainable-development-goals-n0en9vtruszi-7q275386p0r8310>
- 3) <https://nss.gov.in/hi/संगठन>
- 4) राष्ट्रीय सेवा योजना मैनुअल, 2006 भारत सरकार युवा कार्यक्रम और खेल मंत्रालय, नई दिल्ली
- 5) शाश्वत विकास-दत्ता वानखेडे
<https://www.bookganga.com/Preview/BookPreview.aspx?BookId=5417355910550107400&PreviewType=books>
- 6) https://in.one.un.org/wpcontent/uploads/2018/10/Marathi_SDG_Booklet_25Jan17.pdf
- 7) शाश्वत विकासाचे पंचघटक- डॉ. कैलास नरहरी बवले
- 8) https://mr.wikipedia.org/wiki/शाश्वत_विकास
- 9) <https://maharashtratimes.com/editorial/column/time-to-time/national-service-scheme/articleshow/71268029.cms>

नांदेड जिल्हयातील लघू प्रकल्पामुळे सिंचन क्षमतेतील झालेला बदल (सन १९९१-९२ व २०१०-११ हे वर्ष तुलनात्मक पद्धतीने अभ्यास)

डॉ.डी.एस.चव्हाण

एम. ए.,बी.एड., एम.फिल., पीएच.डी.,सेट (भूगोल)

सारांश:-

नांदेड जिल्हयात लघूप्रकल्पाची १९९१-९२ मध्ये एकूण संख्या १९९ व सिंचन क्षमता ३५११५ हेक्टर एवढी होती ती २०१०-११ पर्यंत एकूण लघू प्रकल्पाची संख्या ४६८होवून सिंचन क्षमता ४८५४० हेक्टर एवढी झाली. सन २०१०-११ पर्यंत जिल्हयात २६९ लघू प्रकल्प व १३४२० एवढी सिंचन क्षमता वाढली आहे. सर्वात जास्त वाढ मखेड तालुक्यात झाली आहे. सिंचन क्षेत्रात वाढ झाल्याने जिल्हयात रबीच्या पिकाचे प्रमाण वाढण्यास मदत झाली आहे.

प्रास्तावना :

मानवी विकासात शेतीला अनन्यसाधारण महत्व आहे. शेतीतील उत्पादन आणि उत्पादनातील वाढ ही निसर्गातील घटकाबरोबर मानवी घटकाबरोबर अवलंबून आहे. जलसिंचन हा प्राचीन काळापासून शेतीचे उत्पादन वाढविण्यासाठी वापरले जाते. नांदेड जिल्हयातील जलसिंचन अभ्यास करताना जिल्हयात एकूण मोठे प्रकल्प ४ असून यांची सिंचन क्षमता ६३२७१ हेक्टर व मध्यम प्रकल्प ८ असून यांची सिंचन क्षमता ११९१५ हेक्टर आहे. जिल्हयात लघू प्रकल्पाची एकूण संख्या ४६८ असून यांची सिंचन क्षमता १७५५१ हेक्टर एवढी आहे. जिल्हयात या शिवाय विहरी व कूपनलिकद्वारे जलसिंचन केले जाते.

अभ्यास क्षेत्र:-

नांदेड जिल्हा महाराष्ट्राच्या दक्षिण-पूर्व सीमेला दक्षिण उत्तर पसरलेला आहे. या जिल्हयाच्या पूर्वेस तेलंगाणा राज्य व दक्षिणेस कर्नाटक राज्याची सिमा लागलेल्या आहेत. या जिल्हयात एकूण १६ तालुके असून एकूण लोकसंख्या ३३६१२९२ एवढी आहे

नांदेड जिल्हयाचे अक्षवृत्तीय विस्तार १८° १५' ते १९° ५५' उत्तर आणि रेखावृत्तीय विस्तार ७६° ५६' ते ७८° १९' पूर्व एवढा आहे.

अभ्यासाची उद्दिष्ट्ये :-

१. नांदेड जिल्हयातील लघू प्रकल्पाचा सिंचन क्षमतेवर झालेला परिणाम अभ्यास करणे.
२. जलसिंचनामुळे पिकातील झालेले बदल यांचा अभ्यास करणे.

अभ्यास पद्धती व माहिती संकलन :-

नांदेड जिल्हयातील जलसिंचन स्रोताचा माहिती ही जिल्हा आर्थिक व सामाजिक समालोचन १९९० ते २०१०, जिल्हा गॅझेट्स, जिल्हा जनगणना पुस्तिका, गोदावरी सिंचन विभाग नांदेड, जिल्हा परिषद नांदेड, कृषी व जलसिंचन विभागातील वार्षिक अहवाल मिळालेल्या माहितीचे विश्लेषण करून तक्ते, नकाशा व आलेख तयार केले आहे.

विषय विवेचन:-

नांदेड जिल्हयातील लघूप्रकल्प यांचा अभ्यास करताना ज्या प्रकल्पाची सिंचन क्षमता १००० हेक्टर पेक्षा कमी आहे अशा प्रकल्पांना लघू प्रकल्प असे म्हणतात. लघूप्रकल्प हे तीन गटात विभागणी करण्यात आले आहे. ज्या बंधाऱ्याची सिंचन क्षमता ० ते १०० हेक्टर आहे ते स्थानीक स्वरूपाचे लघू प्रकल्प आहेत. राज्यस्तरीय कल्पाची सिंचन क्षमता १०१ ते २५० हेक्टर एवढी आहे. तर राष्ट्रीय स्तरीय लघू प्रकल्प याची क्षमता २५० हेक्टर पेक्षा जास्त आहे. नांदेड जिल्हयाचा लघू प्रकल्पाचा अभ्यास करताना या तीन्ही स्वरूपाची संख्या व यांची सिंचन क्षमतेचा अभ्यास एकत्रीतपणे करण्यात आला आहे. सन १९९१-९२ व २०१०-११ हे वर्ष तुलनात्मक पद्धतीने अभ्यास करण्यासाठी वापरण्यात आला आहे. हे अभ्यास करताना जी तालुके निर्माण झाली नव्हती त्यांचा अभ्यास ती मूळ ज्या तालुक्यात समावेश होते त्या तालुक्यात करण्यात आला आहे. भोकर तालुक्यात १९९१-९२ मध्ये एकूण लघू प्रकल्पाची संख्या ३५ होती. तर २०१०-११ पर्यंत यात बदल होवून प्रकल्पाची एकूण संख्या ४८ व सिंचन क्षमता ५६० हेक्टर एवढी आहे. या तालुक्याचे सिंचन क्षमता घटण्याचे कारण तालुका विभागणी आहे. देगलूर तालुक्यात १९९१-९२ मध्ये एकूण लघू प्रकल्पाची संख्या १५ होती व सिंचन क्षमता २३१८ हेक्टर एवढी होती. सन २०१०-११ पर्यंत बदल होवून एकूण संख्या ३६ व सिंचन क्षमता ३७५५ हेक्टर एवढी झाली. किनवट तालुक्यात १९९१-९२ मध्ये एकूण प्रकल्पाची संख्या २५ होती यांची सिंचन क्षमता ५७८२ हेक्टर एवढी होती. सन २०१०-११ पर्यंत यांची संख्या ५० व सिंचन क्षमता ८२४७ हेक्टर एवढी झाली आहे. मुखेड तालुक्यात १९९१-९२ मध्ये एकूण लघू प्रकल्पाची संख्या ३६ व सिंचन क्षमता ४२१३ हेक्टर एवढी होती. सन २०१०-११ पर्यंत बदल होवून एकूण संख्या ८५ व सिंचन क्षमता ६९१६ हेक्टर एवढी झाली आहे. हदगाव तालुक्यात १९९१-९२ मध्ये एकूण लघू प्रकल्पाची संख्या ३४ होती व सिंचन क्षमता ७८२३ हेक्टर एवढी होती. त्यात बदल होवून सन २०१०-११ पर्यंत एकूण संख्या ४६ व सिंचन क्षमता ८१५३ हेक्टर एवढी झाली आहे. नांदेड तालुक्यात १९९१-९२ मध्ये एकूण लघू प्रकल्प ६ होते. यांची सिंचन क्षमता ६१० हेक्टर होती. सन २०१०-११ पर्यंत यांची संख्या ६ होती. व सिंचन क्षमता ३८७ हेक्टर घटून २२३ हेक्टर एवढी झाली आहे. सिंचन क्षमता घटण्याचे कारण तालुका विभागणी आहे. लोहा तालुका पूर्वी कंधार तालुक्यात समावेश होता. म्हणून यांची १९९१-९२ ची माहिती कंधार तालुक्यात समावेश आहे. सन २०१०-११ पर्यंत

तक्ता क्र.३.३
नांदेड जिल्हा लघु प्रकल्प (सिं.क्ष.हेक्टर मध्ये)

अ.क्र.	तालुका	२५० हेक्टर पेक्षा कमी				२५० हेक्टर पेक्षा जास्त				एकूण संख्या			एकूण सिंचन क्षमता		
		१९९१-९२		२०१०-११		१९९१-९२		२०१०-११		वर्ष १९९१- ९२	वर्ष २०० -११	बदल	वर्ष १९९१-९ २	वर्ष २०१०-१ १	बदल
		संख्या	सिंचन क्षमता	संख्या	सिंचन क्षमता	संख्या	सिंचन क्षमता	संख्या	सिंचन क्षमता						
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	भोकर	३५	८३४७	४१	२१९३	०	०	७	३४९७	३५	४८	१३	८३४७	५६९०	-२६५७
२	देगलूर	१५	२३१८	३२	१६६०	०	०	४	२०९५	१५	३६	२१	२३१८	३७५५	१४३७
३	किनवट	२५	५७८२	३६	१८६३	०	०	१४	६३८४	२५	५०	२५	५७८२	८२४७	२४६५
४	मुखेड	३६	४२१३	७८	३९०७	०	०	७	३००९	३६	८५	४९	४२१३	६९१६	२७०३
५	हदगाव	३४	७८२३	३४	१८१३	०	०	१२	६३४०	३४	४६	१२	७८२३	८१५३	३३०
६	नांदेड	६	६१०	६	२२३	०	०	०	०	६	६	०	६१०	२२३	-३८७
७	लोहा	०	०	३२	१६३४	०	०	५	२५७३	०	३७	३७	०	४२०७	४२०७
८	कंधार	३१	४६१८	४६	२२८५	०	०	५	१५५१	३१	५१	२०	४६१८	३८५६	-७६२
९	बिलोली	१७	११०४	२४	१०८४	०	०	०	०	१७	२४	७	११०४	१०८४	-३२०
१०	मूदखेड	०	०	९	६१३	०	०	१	२८७	०	१०	१०	०	९००	९००
११	उमरी	०	०	१८	७१७	०	०	३	१४८५	०	२१	२१	०	२२०२	२२०२
१२	माहूर	०	०	११	४७३	०	०	२	७१६	०	१३	१३	०	११८९	११८९
१३	हि.नगर	०	०	८	३३३	०	०	१	५०६	०	९	९	०	८३९	८३९
१४	अर्धापूर	०	०	४	१९२	०	०	०	०	०	४	४	०	१९२	१९२
१५	नायगाव	०	०	२४	९४५	०	०	०	०	०	२४	२४	०	९४५	९४५
१६	धर्माबाद	०	०	४	१४२	०	०	०	०	०	४	४	०	१४२	१४२
	एकूण	१९९	३४८१५	४०७	२००७७	०	०	६१	२८४४३	१९९	४६८	२६९	३५११५	४८५४०	१७५५१

स्रोत : गोदावरी पाटबंधारे विभाग नांदेड व जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालाचन नांदेड जिल्हा २०१२

विभागणी पासून या तालुक्यात एकूण ३७ लहू प्रकल्प होते. तर यांची सिंचन क्षमता ४२०७ हेक्टर एवढी होती. कंधार तालुक्यात सन आहे. नांदेड तालुक्यात १९९१-९२ मध्ये एकूण लहू प्रकल्प ६ होते. यांची सिंचन क्षमता ६१० हेक्टर होती. सन २०१०-११ पर्यंत यांची संख्या ६ होती. व सिंचन क्षमता ३८७ हेक्टर घटून २२३ हेक्टर एवढी झाली आहे. सिंचन क्षमता घटण्याचे कारण तालुका विभागणी आहे. लोहा तालुका पूर्वी कंधार तालुक्यात समावेश होता. म्हणून यांची १९९१-९२ ची माहिती कंधार तालुक्यात समावेश आहे. सन २०१०-११ पर्यंत विभागणी पासून या तालुक्यात एकूण ३७ लहू प्रकल्प होते. तर यांची सिंचन क्षमता ४२०७ हेक्टर एवढी होती. कंधार तालुक्यात सन १९९१-९२ मध्ये ३१ लहू प्रकल्प होते. यांची सिंचन क्षमता ४६१८ हेक्टर एवढी होती. सन २०१०-११ मध्ये एकूण लहू प्रकल्प ५१ झाले व सिंचन क्षमता ७६२ हेक्टर घट होवून ३८५६ हेक्टर झाली. बिलोली तालुक्यात १९९१-९२ मध्ये १७ लहू प्रकल्प होते. यांची सिंचन क्षमता १४०४ हेक्टर होती. सन २०१०-११ मध्ये एकूण लहू प्रकल्पाची संख्या २४ एवढी झाली व सिंचन क्षमता घट होवून १०८४ एवढी झाली. नायगाव व धर्माबाद ही दोन तालुके बिलोली तालुक्यातून १९९९ ला नविन निर्माण झाले आहेत म्हणून या दोन्ही तालुक्याची सन १९९१-९२ ची माहिती बिलोली तालुक्यात समावेश आहे. या दोन्ही तालुक्याची सन २०१०-११ मध्ये लहू प्रकल्पाची एकूण संख्या अनुक्रमे २४ व ४ होती व सिंचन क्षमता अनुक्रमे ९४५ व १९२ हेक्टर आहे. उमरी तालुका भोकर मधून निर्माण झालेला आहे म्हणून या तालुक्याची सन १९९१-९२ ची माहिती भोकर तालुक्यात समावेश आहे. सन २०१०-११ पर्यंत या तालुक्यात २१ लहू प्रकल्प व २२०२ हेक्टर सिंचन क्षमता होती. उमरी प्रमाणे माहूर तालुका किनवट तालुक्यातून निर्माण झालेला आहे. म्हणून माहूरची १९९१-९२ ची माहिती किनवट तालुक्यात समावेश आहे. सन २०१०-११ पर्यंत माहूर तालुक्यात एकूण लहू प्रकल्पाची १३ व सिंचन क्षमता ११८९ हेक्टर एवढी होती. हिमायतनगर तालुका हदगाव तालुक्यातून निर्माण झाल्यामुळे यांची १९९१-९२ ची माहिती हदगाव तालुक्यात समावेश आहे. आणि सन २०१०-११ पर्यंत या तालुक्यात एकूण लहू प्रकल्पाची संख्या ९ व सिंचन क्षमता ८३९ हेक्टर एवढी आहे. मुदखेड व अर्धापूर ही दोन्ही तालुके नांदेड तालुक्यातून निर्माण झाली असल्यामुळे या दोन्ही तालुक्याची १९९१-९२ ची माहिती नांदेड तालुक्यात समावेश आहे. तर सन २०१०-११ मध्ये मुदखेड व अर्धापूर तालुक्यात एकूण लहू प्रकल्पाची संख्या अनुक्रमे १० व ४ होती व यांची सिंचन क्षमता अनुक्रमे ९०० व १९२ हेक्टर आहे.

निष्कर्ष:-

जिल्ह्यात लहू प्रकल्पाची १९९१-९२ मध्ये संख्या १९९ व सिंचन क्षमता ३५११५ हेक्टर एवढी होती ती २०१०-११ पर्यंत एकूण लहू प्रकल्पाची संख्या ४६८ होवून सिंचन क्षमता ४८५४० हेक्टर एवढी झाली. सन २०१०-११ पर्यंत जिल्ह्यात २६९ लहू प्रकल्प व १३४२० एवढी सिंचन क्षमता वाढली आहे. सर्वात जास्त वाढ मखेड तालुक्यात झाली आहे.

संदर्भ :

- १ नांदेड जिल्हा गॅझेटिअर (भाग १) २०११ : दर्शनिका विभाग, महाराष्ट्र शासन, मुंबई.
- २ गोदावरी पाटबंधारे विभाग नांदेड २०१२
- ३ जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालाचन नांदेड जिल्हा २०१२

शाश्वत विकास काळाची गरज

प्रा. डॉ. जे. के. वाघमारे प्रा. डॉ. आर. एन. कस्पटे

भूगोल विभाग, भाई किशनराव देशमुख महाविद्यालय, चाकूर जि. लातूर.

भूगोल विभाग प्रमुख, अण्णासाहेब वाघिरे कला, विज्ञान व कॉमर्स महाविद्यालय, ओतूर ता. जुन्नर जि. पूणे.

सारांश:

शाश्वत विकासाच्या संकल्पनेत विश्वातील अखंड मानव जातीचं कल्याण दडलेलं आहे. तरी शाश्वत विकासाच्या संदर्भात मानव उदासीन असल्याचे चित्र दिसते. भौतिक विकासासाठी निसर्गाला हानी पोहचवून किंवा निसर्गाला गिळंकृत करून केलेला विकास हा कधीही शाश्वत विकास असू शकत नाही. तर निसर्गाला कमीत कमी हानी पोहोचवून किंवा निसर्गाची हानी अजिबात न करता केलेला विकास म्हणजेच शाश्वत विकास असतो. शाश्वत विकासाकडे दुर्लक्ष करून केलेला विकास हा तात्पुरता आनंददायी वाटत असला तरी तो कधीच चिरंतन किंवा शाश्वत असू शकत नाही व तो कुणालाही परवडणारा नाही. कारण शाश्वत विकासाकडे दुर्लक्ष करून केलेल्या विकासाचे परीणाम नैसर्गिक आपत्तींच्या रूपाने संपूर्ण जग अनुभवत आहे व त्याची मोठी किंमतही चुकवावी लागत असल्याचे आपण पाहत आहोत. सदर संशोधन निबंधामध्ये नैसर्गिक साधनसंपत्तीची मानवाकडून होणारी लूट थांबवणे, शाश्वत विकासाची कास धरणे किती गरजेचे आहे व संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या शाश्वत विकास उद्दिष्टांसंदर्भात चर्चा करण्यात आलेली आहे.

प्रस्तावना:

निसर्ग ही अशी गोष्ट आहे की, ज्यामध्ये हस्तक्षेप करण्यापूर्वी माणसाने अनेक वेळा आणि अनेक पद्धतीने विचार केला पाहिजे. माणसाने विज्ञानाची काडी हातात धरून आपण निसर्गाचे 'मास्टर' आहोत या अविर्भावात जे अविवेकी वर्तन केले त्याचे परिणाम हळू-हळू समोर यायला लागली आहेत. निसर्गाला एक यंत्र समजून त्यात हव्या त्या दुरुत्या, बदल करू शकतो या महत्वाकांक्षेला नैसर्गिक आपत्ती सारखे अनेक धक्के बसू लागले आहेत. माणूस हा पर्यावरणाचा एक जैविक भाग आहे. माणसाचा विकास हा त्याच्या सभोवतालच्या पर्यावरणाच्या विकासासोबतच शक्य आहे. असे विकास साध्य करावयाचे असल्यास पहिल्यांदा माणसाने नम्रपणे निसर्ग आणि त्यातील वेगवेगळ्या परिसंस्था समजून घेतेले पाहिजे.

एकेकाळी भटके जीवन जगणा-या मानवाने आपल्या विविध प्रयत्नांतून गेल्या हजारो वर्षांत जीवनाच्या विविध क्षेत्रात नेत्रदीपक प्रगती केली आहे. वैज्ञानिक प्रगतीबरोबरच जगावर आपलं वर्चस्व गाजवण्याचाही प्रयत्न काही देश करत आहेत. मानवाने वैज्ञानिक प्रगती बरोबर नैसर्गिक साधनसंपत्तीची बेसूमार लूटही केली. नैसर्गिक साधनसंपत्तीची बेसूमार लूट झाल्यामुळे पर्यावरणाची प्रचंड हानी झाली व पर्यावरणाचा समतोल बिघडत चाललेला आहे. यातूनच पर्यावरण विषयक अनेक गंभीर समस्या निर्माण झालेल्या आहेत. या गंभीर समस्यांचा सामना संपूर्ण जगाला करावा लागत आहे. याचे परीणाम नैसर्गिक आपत्तींच्या रूपाने संपूर्ण जग अनुभवत आहे व त्याची मोठी किंमतही चुकवावी लागत असल्याचे आपण पाहत आहोत. पर्यावरणीय गंभीर समस्यांमुळे संपूर्ण मानव जात धोक्यात आली आहे. हे लक्षात घेवून या गंभीर पर्यावरणीय समस्या सोडवण्याच्या संदर्भाने जागतिक पातळीवर २० व्या शतकाच्या उत्तरार्धापासून अनेक प्रयत्न केले जात आहेत.

उद्दिष्टे:

- १) शाश्वत विकासाची गरज स्पष्ट करणे.
- २) संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या शाश्वत विकास उद्दिष्टांसंदर्भात माहिती घेणे.

विषय विवेचन:

विकास जर अनियंत्रित व अविचारी असेल तर विकासाच्या फायद्यांऐवजी समाजाला मोठे नुकसान होऊन हा विकास कदाचित संपूर्ण मानवजात नष्ट करण्यासाठी कारणीभूत ठरेल की काय, अशी भीती व्यक्त होत आहे. या

भीतीपोटी १९९२ साली ब्राझिलमधील रिओ शहरात जागतिक पातळीवर संयुक्त राष्ट्रांच्या वतीने एक परिषद घेतली व त्यानुसार यापुढे होणारा विकास हा नुसता विकास न राहता तो शाश्वत विकास व्हावा हा विचार मांडण्यात आला. या परिषदेनंतर अनेक विषयांसंबंधी जागतिक पातळीवर एकमत तयार करण्यासाठी प्रयत्न करण्यात आले. यामुळे अनेक प्रश्न सोडवण्याच्या संदर्भाने जगभरात एकत्रित प्रयत्न सुरू झाले व यातूनच जागतिक पातळीवर पर्यावरणाचे रक्षण करणारी जागतिक व्यवस्था तयार झाली. २०१५ अगोदर पर्यावरणाच्या रक्षणासंदर्भाने करण्यात आलेले प्रयत्न विशिष्ट पर्यावरणविषयक प्रश्नासंदर्भात होते. त्यामुळे या विशिष्ट पर्यावरणविषयक प्रश्नाकडे पोट भरलेल्या विकसित देशांचे चोचले पुरवणारे प्रश्न या नजरेतूनच पाहीले गेले. कारण यामध्ये विकसनशील आणि अविकसित देशातील महत्त्वाचे प्रश्नही समाविष्ट नव्हते.

एकविसाव्या शतकाच्या सुरुवातीस संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या माध्यमातून एक विशेष प्रयत्न करण्यात आला. या प्रयत्नात जगातील सर्व लोकांचे जीवनमान सुधारावे, सगळ्या मानव जातीला किमान सोयी मिळाव्यात व आरोग्याचे प्रश्न कमी करण्याच्या उद्देशाने संपूर्ण देशांची मिळून 'सहस्रक विकास उद्दिष्टे' ठरवण्यात आली. सप्टेंबर २००० मधील संयुक्त राष्ट्रांच्या आमसभेत ही उद्दिष्टे सगळ्या जगाने स्वीकारून सन २०१५ पर्यंत जगातील गरिबी व भूक संपवणे, सर्वाना प्राथमिक शिक्षण उपलब्ध करून देणे, महिला सक्षमीकरण, बालमृत्यू कमी करणे, माता आरोग्य सुधारणे, एड्स, मलेरिया, टी.बी. यासारख्या रोगांवर नियंत्रण आणणे आणि पर्यावरण रक्षण करण्यासाठी जागतिक सहकार्य व्यवस्था उभारण्याचे ठरले. जागतिक पातळीवर मानवी विकासासंबंधीचा हा पहिलाच सामूहिक प्रयत्न होता. यातूनच विकसनशील व अविकसित देशांतील मूलभूत प्रश्नांच्या सोडवणुकीसाठीची व्यवस्था तयार झाली. याचाच परिणाम म्हणून १९९० च्या तूलनेत जागतिक गरिबी निम्मध्येने कमी झाली, कुपोषित मुलांचे प्रमाण १२ % पर्यंत कमी झाले. प्राथमिक शिक्षणाच्या सुविधामध्ये मोठ्या प्रमाणात वाढ झाली. महिलांचा शेतीबाह्य कामामध्ये आणि विविध देशांतील संसदेत महिलांचे प्रतिनिधित्व वाढले. ५ वर्षांखालील मुलांचा मृत्युदर ५०% नी कमी झाला आहे. तसेच मलेरियासारख्या रोगाने होणारे लाखो मृत्यू रोखण्यात यश मिळाले. नव्याने एड्स रोग होण्याचे प्रमाण कमी झाले. जगभरातील अशा विविध कामातून मिळालेले यश व अपयश लक्षात घेण्यात आले.

२०१० पासूनच सहस्रक उद्दिष्टे पूर्ण करण्यासाठी आलेल्या अडचणींची चर्चा सुरू झाली. २०११ पासून कोलंबिया देशाने शाश्वत उद्दिष्टांची कल्पना मांडायला सुरुवात केली. हळूहळू या कल्पनेला अनेक देशांनी पाठिंबा दिला त्यात भारताचाही समावेश होता. २०१२ सालच्या रिओ येथील संयुक्त राष्ट्र शाश्वत विकास परिषदेत '२०१५ नंतर काय?' याची चर्चा सुरू झाली. यानंतर संयुक्त राष्ट्रांनी या उद्दिष्टांची चर्चा सुरू केली. संयुक्त राष्ट्र परिषदेच्या (यूएन) न्यूयॉर्क येथे सप्टेंबर २०१५ मध्ये झालेल्या शिखर परिषदेमध्ये शाश्वत विकासासाठी अजेंडा स्वीकारण्यात आला. त्यादृष्टीने, जागतिक लक्ष्ये (ग्लोबल गोल्स) निश्चित केले गेले. यासाठी डिसेंबर २०३० पर्यंत 'शाश्वत विकासा'च्या उद्दिष्टपूर्तीकडे वाटचाल करण्याचे धोरण स्वीकारण्यात आले. सर्व देशातील सरकारे, स्वयंसेवी संस्था, जागतिक पातळीवरील विविध संस्था, संघटना, उद्योग विश्व आदी विविध गटांची मते ऐकून घेण्यात आली. या प्रयत्नांतून २०३० पर्यंत काय साध्य केले पाहिजे, यासाठी कोणती तत्त्वे स्वीकारली पाहिजेत या संदर्भातील एक कार्यक्रम तयार करण्यात आला. या कार्यक्रमाला 'शाश्वत विकास उद्दिष्टे' म्हणून सगळ्या जगासमोर मांडण्यात आले. संयुक्त राष्ट्रांच्या आमसभेत याला सर्व देशांच्या प्रमुखांनी मान्यता दिली. संयुक्त राष्ट्र संघटनेच्या सर्व १९३ सदस्य देशांनी सप्टेंबर २०१५ मध्ये एकमताने स्वीकारलेल्या या जाहिरनाम्यानुसार २०१५ ते २०३० या पंधरा वर्षांच्या काळात हा संकल्पित विकास घडवून आणणे अपेक्षित आहे. संयुक्त राष्ट्रांच्या आजपर्यंतच्या कार्यकाळात सर्वात जास्त देशांनी मान्यता दिलेला हा कार्यक्रम आहे. ही उद्दिष्टे स्वीकारताना मानवी जीवनाच्या सर्व अंगांचा विचार करून, तसेच पृथ्वीवरील विविध प्राणिमात्र आणि निसर्ग यांच्या संरक्षणासाठीचे महत्त्व लक्षात घेऊन या उद्दिष्टांची रचना करण्यात आली आहे.

सप्टेंबर २०१५ मध्ये संयुक्त राष्ट्रांच्या आमसभेने एकूण १७ उद्दिष्टे असणारा २०३० साठीचा शाश्वत विकास अजेंडा स्वीकारला. ही १७ उद्दिष्टे व त्यांतर्गत असणारी १६९ छोटी ध्येये सदस्य राष्ट्रांनी २०१५ ते २०३० या कालावधीत साध्य करायची आहेत. या उद्दिष्टांमध्ये दारिद्र्य निर्मुलन, भूक निर्मुलन, चांगले आरोग्य, दर्जेदार शिक्षण, लैंगिक समानता, शुद्ध पाणी आणि आरोग्यदायक स्वच्छता, नूतनीकरण करण्याजोगी आणि स्वस्त ऊर्जा, नोकऱ्यांची सुरक्षितता, नवीन उपक्रम आणि पायाभूत सुविधा, असमानता कमी करणे, शाश्वत शहरे आणि समाज, उपलब्ध साधनांचा जबाबदारीपूर्वक वापर, हवामानाचा परिणाम, शाश्वत महासागर, जमिनीचा शाश्वत उपयोग, शांतता आणि न्याय, शाश्वत विकासासाठी भागिदारी यांचा समावेश आहे.

“विकासापासून कोणीही वंचित रहाता कामा नये” हे शाश्वत विकास ध्येयांचे मुख्य उद्दिष्ट असून २०१५ नंतरच्या आंतरराष्ट्रीय पातळीवर निश्चित करण्यात आलेल्या वेगवेगळ्या उद्दिष्टांमध्ये आणि कार्यक्रमांमध्ये त्याचा प्रामुख्याने उल्लेख केला जात आहे. भारतासारख्या देशातला मानव समाज आर्थिक सुबत्ता, लिंग, वय, वर्ण आणि जात इतकेच नव्हे तर लोकांचे होणारे विस्थापन, शारीरिक विकलांगता आणि भौगोलिक अंतर अशा अनेक गोष्टींमध्ये विभागला गेला आहे. अशा समाजात कोणालाही विकासापासून वंचित राहू द्यायचे नसेल तर त्यासाठी समाजातल्या अगदी शेवटच्या टोकापर्यंत पोहोचण्याची गरज आहे. भारत आर्थिक विकासाच्या ज्या टप्प्यावर आहे तेथे या शाश्वत विकासाची चर्चा म्हणूनच सयुक्तिक व महत्त्वाची वाटते. ‘सब का विकास सब के साथ’ ही घोषणा केवळ घोषणाच ठरली आहे. शासन कोणाला साथ देत आहे व कोणाचा विकास करत आहे हे आपण पाहतच आहोत. ‘गरिबी हटाव’च्या घोषणा आपण कित्येक वर्षांपासून ऐकत आहोत व प्रत्यक्षात कोणाची गरिबी हटली हेही पाहत आहोत. स्वातंत्र्यपूर्व काळापासून भारतात आदिवासी, पारधी अशा समाजांकडे झालेले दुर्लक्ष, विकासासाठी त्यांची घेतलेली जमीन यामुळे अर्थव्यवस्थेचा विकास झाला असला तरी समाजातील विषमता मोठ्या प्रमाणात वाढत गेली व त्यातूनच अनेक प्रश्न निर्माण झाले आहेत. अशा पध्दतीने होणारा विषम विकास शाश्वत ठरत नाही.

निष्कर्ष:

शाश्वत विकासाकडे आतापर्यंत दुर्लक्ष केल्यानेच पर्यावरण विषयक अनेक गंभीर समस्यांचा सामना संपूर्ण जगाला करावा लागत आहे. निसर्गाने मानवासाठी अनेक साधनसंपत्तीचे वरदान दिलेले आहे. ही नैसर्गिक साधनसंपत्ती नष्ट करून त्यावर मानवाने उभारलेला विकासाचा डोलारा काही क्षणात कोसळविण्याची ताकद निसर्गातच आहे. त्यामुळे निसर्गाविषयी आदर राखून नैसर्गिक साधनसंपत्तीचं रक्षण, संवर्धन करणं आणि योग्य व्यवस्थापन करून अपव्यय टाळणे यातच मानवाचं कल्याण आहे. शाश्वत विकासामध्ये नैसर्गिक साधनसंपत्तीची बेसुमार होणारी लूट थांबवून नैसर्गिक साधनसंपत्तीचे रक्षण व संवर्धन करून विकास करणे अपेक्षित आहे. नैसर्गिक साधनसंपत्तीचा जास्तीत जास्त पुनर्वापर करण्याच्या पद्धती अमलात आणल्या तरच शाश्वत विकास शक्य आहे. अविचाराने किंवा नियोजनाशिवाय झालेला अनियंत्रित विकास हा शाश्वत असत नाही, अशा पध्दतीने झालेला विकास हा काही काळाने फायद्यापेक्षा जास्त धोकादायक ठरतो. संयुक्त राष्ट्रसंघाने शाश्वत विकासासाठी जी उद्दिष्टे मांडली आहेत, त्यानुसार आर्थिक विकासाचा वेग कायम ठेवून व पर्यावरणाचे संवर्धन होईल, अशी विकास प्रक्रिया आजपर्यंत निर्माण होऊ शकली नाही. अशा परिस्थितीत, शाश्वत विकास हे एक मृगजळ ठरते आहे.

सध्या चालू असलेल्या माणसाच्या अविचारी वर्तणामुळे संपूर्ण सजीवसृष्टी धोक्यात आली आहे. सजीवसृष्टी जगणं हे माणसाच्या जगण्या इतकेच महत्त्वाचे आहे कारण सजीवसृष्टी जगली तरच माणूस जगणार आहे. मानवाची जीवनशैली नैसर्गिक चक्राच्या विरुद्ध चालू आहे. मानव सतत जास्तीचा विचार करतो आहे. अधिक उत्पादन, अधिक विक्री व अधिक नफा या पध्दतीने होणारी वाढ ही निसर्गाच्या विरुद्ध आहे. आपले भविष्य हे जगाचे भविष्य आहे आणि ते आपल्याच हातात आहे. हे माणवाने लक्षात घेणे गरजेचे आहे. सध्या आपण आपल्या पुढच्या पिढ्यांसाठी असलेली नैसर्गिक साधनसंपत्ती वापरून विकास करत आहोत. म्हणजे आपली सध्या चालू असलेली मौजमजा भावी पिढ्यांच्या साधनसंपत्तीवर चालू आहे. भावी पिढ्यांच्या साधनसंपत्तीवर चालू असलेली मौजमजा लवकर थांबली

नाही तर संपूर्ण सजीवसृष्टीचा विनाश अटळ आहे. सद्यस्थितीत पर्यावरण रक्षणासाठी व शाश्वत विकासासाठी वृक्षारोपण व संवर्धनाची अत्यंत गरज आहे.

निसर्गामध्ये अनेक परिसंस्था आहेत. या परिसंस्थामध्ये कोट्यवधी प्रकारचे सजीव (वनस्पती, प्राणी, पक्षी व सूक्ष्म जीव) आहेत. यामध्ये मानव वगळता इतर कोणताही सजीव परिसंस्थेस धक्का न लावता जीवन जगतो. परंतु अति हुशार मानवाने विकासाच्या नावाखाली बेसुमार वृक्षतोड, नैसर्गिक साधनसंपत्तीची लूट केली आहे. तसेच औद्योगिकरणामुळे हवा, जल व भूमी प्रदूषित केली व त्या प्रदुषणाचा परिणाम म्हणून हजारो जीव नष्ट होण्याच्या मार्गावर आहेत. काही नष्ट झालेत ते कायमचेच. जे काही शिल्लक आहे ते टिकविण्यासाठी व त्यात भर टाकण्यासाठी सर्वांनी शाश्वत विकासाची कास धरणे काळाची गरज आहे. अति हुशार मानवास शेवटी एवढेच सांगावेसे वाटते की, अरे हुशार मानवा तू पृथ्वीवर येण्या अगोदरही पृथ्वी होती व तुझ्या विनाशानंतरही पृथ्वी राहणारच आहे. तू पृथ्वीच्या विनाशाची काळजी करण्यापेक्षा तुझ्या विनाशाची काळजी कर. काळजी केली नाही तर तूझा विनाश अटळ आहे, हे सदैव लक्षात ठेव.

संदर्भ:

- १) शाश्वत विकास उद्दिष्टे-२०१५ <https://mr.wikipedia.org/s/3uli>.
- २) दीपक घैसास (ऑगस्ट २०१५): शाश्वत विकासाची सामाजिक किंमत.
- ३) महाराष्ट्र टाईम्स (५ जून २०१८): शाश्वत विकासासाठी उद्दिष्टे.
- ४) बसवंत विठाबाई बाबाराव (ऑक्टोबर २०१८) गरज सहभागी शाश्वत विकासाची.
- ५) बसवंत विठाबाई बाबाराव (ऑक्टोबर २०१८) गरज सहभागी शाश्वत विकासाची.
- ६) मितू सेनगुप्ता (जानेवारी २०१९): शाश्वत विकास ध्येये सत्यात उतरणार का?
- ७) स्वामीनाथन रामनाथन (मे २०१९): शहरांतूनही शाश्वत विकास शक्य.
- ८) कपिल सहस्रबुद्धे (ऑगस्ट २०१९): शाश्वत विकास उद्दिष्टे आपल्या उद्यासाठी -
- ९) शाश्वत विकासासाठी सामाजिक अंतर्भाव महत्वाचा (एप्रिल २०२०)
- १०) कैलाश बवले (एप्रिल २०२०): शाश्वत विकास आराखडा
- ११) शाश्वत विकास म्हणजे काय? -भाग-१ (<https://www.maayboli.com/node/75247>)
- १२) शाश्वत विकास म्हणजे काय? -भाग-२ (<https://www.maayboli.com/node/75247>)
- १३) कैलाश बवले (एप्रिल २०२०): शाश्वत विकास आराखडा

भारतातील गरीबी निर्मूलनासाठी शाश्वत समजाकल्याणकारी विचार

प्रा.मठपती जी.एच.

समाजशास्त्र विभाग प्रमुख

ग्रामिण महाविद्यालय, वसंत नगर, (कोटग्याळ), ता.मुखेड जि.नांदेड (महाराष्ट्र राज्य)

प्रस्तावना :-

गरीबी विश्वव्यापी स्वरूपाची आहे. गरीबी, दारिद्र्य, निर्धनता हे शब्द सामान्यतः एकाच अर्थाने वापरले जातात. गरीब कोणास म्हणावे ? तर ज्या व्यक्तीची अन्न, वस्त्र, निवारा, आरोग्य, शिक्षण ह्या मुलभूत गरजाची पूर्तता करण्याची क्षमता नसते तो गरीब, गरीबीत व्यक्ती आवश्यक वस्तूपासून वंचित रहातो. अपुरे उत्पन्न हा गरीबीची आधार आहे. गरीबीत व्यक्तिचा जीवनस्तर खालच्या पातळीवर असतो. गरीबीत मुलभूत गरजाची पूर्तता होत नाही. गरीबीत किमान साधने असतात. परिणाम जीवनस्तर उंचावू शकत नाही. शेतीत राबण्यासाठी गडी हवेत, श्राध्दकर्म करण्यासाठी पुत्र हवा म्हणुन पुत्र होईतो पर्यंत मुले होऊ द्यावीत. या गरज आणि श्रध्देपोटी लोकसंख्या बेसुमार वाढत राहिली. गरीबीचे कारण एकीकडे अतिरिक्त लोकसंख्या वाढ आणि दुसरीकडे त्यामानाने उद्योगधंदे वाढले नाहीत. लोकसंख्या वाढीने विकासाचा वेग वाढत नाही. लोकसंख्या वाढीबरोबर दरडोई कृषीभूमिचे प्रमाण घटत आहे. अन्न उत्पादकतेपेक्षा लोकसंख्या वाढीचा वेग अधिक आहे.

भारताला स्वातंत्र्य 15 ऑगस्ट 1947 ला मिळाले पहाता पहाता 15 ऑगस्ट 1920 पर्यंत 70 वर्षे उलटून गेली तरीही या देशातील गरीबी, आर्थिक विषमता आर्थिक शोषणमुक्त भारत निर्माण झाला नाही. आजही आपला देश गरीब देशाच्या क्रमवारीत मोडतो. गरीबी निर्मूलनासाठी पंचवार्षिक योजनांच्या माध्यामातून विशेष अशा तरतुदी ही करण्यात आल्या तरी पण गरीबीचे समुळ उच्चटन करता आले नाही. सगळे सरकारने करावे अशी जी परावलंबी मानसिकता आजवर वाढीला लागली त्यात बदल घडवून आणणे गरजेचे झाले आहे.

भारतात आजही जवळपास एकूण लोकसंख्याच्या 29% लोक गरीबीत जीवन जगत आहेत. 1990 ते 200 या कालखंडात भारतातील गरीबीचे प्रमाण सरासरी 50 % होते. असे सक्सेना समितीच्या अहवालावरून दिसून येते. इ.स.2000 मध्ये भारतीय नियोजन आयोगाच्या अहवालानुसार ते प्रमाण 39% इतके आहे. तसेच तेंडूलकर समितीच्या अहवालानुसार सन 2009- 2010 मध्ये हे प्रमाण 29.6% तर 2011 -2012 मध्ये गरीबीचे प्रमाण 29.9 होते त्याच बरोबर रंगराजन समितीच्या अभ्यसासानुसार गरीबीचे प्रमाण 2009 ते 2010 मध्ये 38.2 तर 2011-2012 मध्ये 29.5% इतके होते.

संशोधनाची उद्दिष्ट्ये :

- 1) भारतात सद्यास्थितीत गरीबी वाढीच्या कारणाचा शोध घेणे.
- 2) शाश्वत कल्याणकारी विचाराचा आढावा घेऊन उपाय सुचविणे.

संशोधन पध्दती :-

प्रस्तुत शोध निबंधासाठी दुय्यम स्रोचा आधार घेण्यात आलेला आहे. यासाठी विविध संदर्भ ग्रंथ, मासिके, नियतकालिके त्याच बरोबर भारतीय नियोजन आयोगाचा अहवाल, विविध समित्यांचे अहवाल व संकेत स्थळ इ.चा आधार घेण्यात आलेला आहे.

गरीबीचे प्रकार :-

1) निरपेक्ष गरीबी :

व्यक्तीची किमान जीवनावश्यक गरज भागविण्याची क्षमता नसले तेंव्हा त्यास निरपेक्ष गरीबी म्हणतात. ज्या अवस्थेत समाजातील कांही गटाना अन्न, वस्त्र निवारा या किमान गरजा पूर्ण करता येत नाहीत. किमान आवश्यक गरजांच्या परिमानाचे चालू किमतीनुसार मुल्य काढले जाते एवढा किमान आवश्यक उपभोग खर्च करण्या एवढे उत्पन्न ज्यांच्याकडे नाही ते दारिद्र्य रेषेखली आहेत असे मानले जाते.

2) सापेक्ष गरीबी :

उच्च उत्पन्न गटातील लोक संख्येशी तुलना करता तळाच्या उत्पन्न गटातील लोकसंख्या गरीबीत आहे. असे समजले जाते. तेंव्हा त्यास सापेक्ष गरीबी म्हणतात. सापेक्ष गरीबी आर्थिक विषमतेवर आधारित आहे. सापेक्ष गरीबी कमी अधिक प्रमाणात संपूर्ण देशात आढळून येते.

सद्यस्थितीत भारतात गरीबी वाढण्याची कारणे:

- 1) वाढती लोकसंख्या
- 2) अपुऱ्या आरोग्य विषयक सुविधा
- 3) अन्न सुरक्षा विषयक समस्या
- 4) ग्रामीण शहरी असंतूलन
- 5) शासकीय योजना व्यवस्थित न राबविणे.
- 6) भ्रष्टाचार
- 7) कृषी विकासाकडे दुर्लक्ष
- 8) शिक्षण व प्रशिक्षणाचा अभाव
- 9) तरुणाना अपुऱ्या रोजगाराच्या संधी
- 10) औद्योगिकरणाचा वेग कमी
- 11) जातीभेद
- 12) स्त्री पुरुष असमानता

भारतातील गरीबी निर्मुलनासाठी शाश्वत समाजकल्याणकारी विचार

1) महात्मा ज्योतीबा फुले :

शेतकऱ्यांचा असुड या ग्रंथामध्ये म.फुले यांनी दिन दलिताना गरीबी व गुलामगिरीतुन वर काढण्यासाठी शिक्षणाचा आग्रह धरला होता. हंटर आयोगाला दिलेल्या विनेदनात समाजाच्या शाश्वत कल्याणाची बाजू मांडली होती. दिन दलिताच्या मुलांना प्रथमिक शिक्षण सक्तीचे करावे असे अंतर

आयोगापुढे मत म.फुलेनी मांडले होते. दिन दलित गरीब समाजाला न्याय मिळवून देण्यासाठी त्यांना अज्ञानाच्या अंधारातून मुक्त करण्यासाठी वरिष्ठांच्या आर्थिक शोषणापासून मुक्त करण्यासाठी म.फुलेनी प्रथमिक शिक्षण सक्तीचे करण्याचा आग्रह धरला होता. शिक्षणामुळे माणूस ज्ञानी होतो.संघर्ष करण्याची व सत्य निवडण्याची प्रेरणा मिळते. शिक्षणामुळेच स्वतःचे व देशचे हित साधता येते. शिक्षणाचे महत्त्व पटवून देताना म.फुले म्हणतात.

विदेविना मती गेली । मतीविना नीती गेली ।

नीतीविना गती गेली । गतीविना वित्त गेले ।

वित्तविना शुद्ध खचले । एवढे अनर्थ एका अविद्येने केले.

हे सांगण्यामागे म.फुलेचा आसा दृष्टीकोन होता की, भारतीय समाजामध्ये गरीब लोकांची झालेली अक्वेलना केवळ शिक्षण न घेतल्याने झाली म्हणून शिक्षणच गरीबाना तारु शकते. असा भारतातील गरीबी निर्मुलनाबाबदचा शाश्वत समाज कल्याणकारी विचार म.फुल्यांनी मांडला.

2) छत्रपती शाहू महाराज

छत्रपती शाहू महाराजांनी शिक्षण हीच सर्व सामाजिक सुधारणाची जननी मानली. समाजातील मागासलेल्या वर्गाची बौद्धिक गुलमगिरी नष्ट करण्यासाठी सक्तीच्या व मोफत शिक्षणाच्या सोयी उपलब्ध करून देण्याचा जोरदार त्यांनी पुरस्कार केला. ते आपल्या संस्थानातील सर्व मागास वर्गास सर्व प्रकारचे शिक्षण मोफत देण्यात यावे असे 24 नोव्हेंबर 1911 रोजीच्या आदेशात म्हणतात. समाज समृद्ध व बलवान होण्यासाठी बहुजन समाजातून उत्तम शिक्षक, व्यापारी, शेतकरी, उद्योगपती निर्माण होण्यासाठी शिक्षण गंगेचे पाट खेडयापाडयातील गोरगरीब जनतेच्या दारापर्यंत नेले पाहिजे असे त्याचे मत होते. त्यांनी 21 सप्टेंबर 1917 सक्तीच्या शिक्षणाचा कायदा खास जाहिरनामा काढून प्रसिद्ध केला. 30 सप्टेंबर गणेश चतुर्थीच्या शुभमुहूर्तावर प्रत्यक्ष अमंलात आणला.

3) डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर :

गरीबी हटविणे विषमता निर्मुलन आणि शोषणमुक्ता या तत्वाचा आग्रह डॉ. बाबासाहेबा आंबेडकरानी धरला होता. भारताला स्वातंत्र मिळाल्या नंतर देशाच्या आर्थिक विकासाची नीती काय असावी ? याचा अभ्यास करून “स्टेट्स अँड मायनॉरिटीज” या ग्रंथामध्ये डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचे असे मत होते की, खाजगी उद्यमशीलतेला धक्का न लावता जनतेची उत्पाकर्ता जातीत जास्त राहिल आणि संपत्तीचे वाटप समाजशील होईल अशा पध्दतीने आर्थिक व्यवहाराचे नियोजन करणे. ही राज्य संस्थेची जबाबदारी आहे. गरीबी, आर्थिक विषमता, शोषणमुक्त भारत, राष्ट्रीय उत्पादनाचे समान वाटप अशी भारताची आर्थिक नीती असावी असे मत मांडले. दिन दलित गरीब उपेक्षिताबद्दल डॉ. आंबेडकरांनी शिक्षणाचा मुलमंत्र दिला. “शिका, संघटीत व्हा आणि संघर्ष करा,” असे तीन तत्व त्यांनी जगाला दिले. दिन दलित गरीबांना दारिद्रयाच्या दुष्टचक्रातून बाहेर काढून त्यांना क्रियाशील बनविण्यासाठी आंबेडकरानी शिक्षणाला फार महत्त्व दिले.

4) डॉ. अर्मत्यकुमार सेन :

देशाची प्रगती म्हणजे देशातील तळागाळातील प्रत्येक माणसाचे जिवन, राहणीमान उच्च दर्जाचे बनविणे होय. यासाठी लागणाऱ्या सर्व सुविधांची निर्मिती व योग्य प्रकारे सुविधा पुरविणे अंत्यत गरजेचे आहे. भारतात गरीब माणसापर्यंत पुर्णपणे कोणतीच योजना पोहचत नाही. सरकारच्या अनेक योजनेच्या लाभापासून अनेकांना वंचित राहावे लागते. गरीबांना अनेक सुविधा व साधने स्वतःकडे उपलब्ध करण्यासाठी चांगले उत्पन्न नसते. म्हणून डॉ. अर्मत्यकुमार सेन यांनी देशाची आर्थिक प्रगती मोठ्या प्रमाणावर करावयाचे झाल्यास गरीबांच्या मुलभुत प्रश्नाची सोडवणुक वेळीच केली पाहिजे या बाबतचे अमुल्य असे लिखान त्यांनी जगा समोर मांडुन एक नविन सामाज कल्याणकारी आर्थिक विचाराची देण जगाला दिली. गरीब देशात अनेक मुलभुत प्रश्नामध्ये साम्य आहे. याकडे जर या दशानी लक्ष घातले तर प्रगत देशाच्या बरोबरीने जाता येईल. देशामध्ये अनेक मुलभुत समस्या आहेत. त्या सोडविल्या तर देशाची प्रगती फार वेगाने करता येईल. डॉ.अर्मत्यकुमार सेन यांच्या समाज कल्याणकारी विचारातील उपयोजन झाले पाहिजे त्यांच्या विचाराची कास धरुन देशाचा विकास जलद गतीने करता येईल.

उपाययोजना :

- 1) लोकसंख्योला आळा
- 2) आरोग्य विषयक सुविधा दर्जेदार करणे.
- 3) कुपोषण निर्मुलन करणे.
- 4) राज्या राज्या मधील असंमतूलन दुर करणे.
- 5) तरुणांना रोजगाराच्या संधी उपलब्ध करुन देणे.
- 6) भ्रष्टाचाराचे समुळ निर्मुलन कराणे.
- 7) शेतीचा विकास करणे
- 8) औद्यागिकी करणाचा वेग वाढविणे.
- 9) योजनेचे विक्रेंद्रीकरण करणे.
- 10) दर्जेदार शैक्षणिक सुविधा निर्माण करणे.
- 11) दळनवळणाच्या सोई वाढविणे.
- 12) दरडोई उत्पन्न वाढविणे.

जागतिक महासत्ता बनण्याची स्वप्ने पाहणाऱ्या भारताला शाश्वत कल्याणकारी राज्य निर्मितीचे स्वप्न साकार करायचे असेल तर लोकांच्या मुलभुत समस्याचे निराकरण करणे अत्यंत महत्वाचे आहे. न्याय, समता, स्वातंत्र्य, नैतिकता या मुल्यांचा वापर करुन तळागाळातील गरीब लोकांना वर काढणे हे प्रत्येकाचे कर्तव्य आहे.

संदर्भ सुची :

- 1) दया पवार (सपा) डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर, गौरव ग्रंथ, महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृती मंडळ मुंबई, मराठी ग्रंथालय मार्ग, दादर -40014 प्रथमावृत्ती डिसेंबर 1993 पृ.374, 421.

- 2) प्रा.के.एस.ठक्कर, अमर्त्यसेन आणि आर्थिक विकासाची वाचा गेलेली पन्नास वर्षे प्रगती प्रकाशन 385 सधारा, हौसिंग सोसायटी, गिरगाव, मुंबई पृ.56
- 3) श्री.य.दि.फडके म.फुले समग्र वाड.मय (सपा), महाराष्ट्र राज्य साहित्य संस्कृती मंडळ, मुंबई-400032 पृ.231, 243
- 4) प्रा.न.र.फाटक 1972 श्री शाहु स्मारक पुष्प 3 रे, शिवाजी विद्यापिठ कोल्हापुर पृ.2
- 5) आ.पी.बी. साळुंके (संपा) 1988, राजश्री शाहु गौरव ग्रंथ, शिक्षण व सेवायोजना विभाग महाराष्ट्र राज्य, मंत्रालय, मुंबई पृ.93
- 6) भारतीय समाज प्रश्न आणि समस्या प्रा.डॉ.डी.एस मनवर अरुणा प्रकाशन साई कुंज सद्भावना नगर औसा रोड, लातूर पृ.52, 62

बढ़ता नगरीकरण और इसके प्रभाव

गिरीश टी. पंचभाई

सहाय्यक प्राध्यापक, डॉ. आंबेडकर महाविद्यालय, चंद्रपुर

Email Id girishpanchabhai@gmail.com

सारांश

भारत में पिछले कुछ दशकों से जनसंख्या में वृद्धि हो रही है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों की जनसंख्या का पलायन भी शहरों और बड़े-बड़े महानगरों की ओर हो रहा है। परिणामस्वरूप आज शहर बढ़ती आबादी के अनेक समस्याओं को जन्म दे रही है। जिनका समाधान किया जाना अति आवश्यक है। बढ़ते हुए शहरीकरण के फलस्वरूप शहरों में आज अनेक भयंकर समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, जैसे जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी, गरीबी, अपराध, बाल अपराध, महिलाओं की समस्याएं, भीड़ भाड़, गंदी बस्ती या आवास की कमी, बिजली आपूर्ति, प्रदूषण की समस्या, मदिरापान तथा अन्य मादक वस्तुओं का सेवन, यातायात संबंधित समस्याएं आदि। इन सब कारण से आज शहरों में निरंतर तनाव और दबाव बढ़ता जा रहा है। आज इन समस्याओं का समाधान किया जाना अति आवश्यक है। कुछ उपाय हैं जिनके द्वारा इन समस्याओं को समाप्त किया जा सकता है अथवा कुछ हद कम किया जा सकता है, जैसे रोजगार के अवसरों में वृद्धि, नगरों का विकास, उद्योगों को बढ़ावा देना साथ ही सरकार द्वारा वित्तीय साधन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराना इत्यादि।

प्रस्तावना

जनसंख्या का ग्रामीण क्षेत्रों से नगरीय क्षेत्रों में जाना नगरीकरण अथवा शहरीकरण कहलाता है। इसके परिणामस्वरूप जनसंख्या का बढ़ता हुआ भाग ग्रामीण स्थानों में रहने के बजाय शहरी स्थानों में रहता है जो एक ग्रामीण से शहरी समाज में परिवर्तन है जिसमें किसी विशेष वर्ग के दौरान शहरी क्षेत्रों में लोगों की संख्या में वृद्धि शामिल है। अध्ययनों से देखा जाये तो यह पता चलता है कि, शहरीकरण सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास का नतीजा है जो शहरी एकाग्रता और बड़े शहरों के विस्तार, भूमि उपयोग में परिवर्तन और ग्रामीण से शहरी संगठन और उनके क्रांति में बदलाव का कारण है। इसी तरह सुलेन ने ग्रामीण से शहरी इलाकों में बड़ी संख्या में लोगों के आत्रजन के रूप में शहरीकरण का अनुमान दिया और यह प्रक्रिया शहरों और शहरों में संसाधनों और सुविधाओं की एकाग्रता के कारण हुई। आमतौर पर शहरीकरण सीधे नवाचार, औद्योगिकीकरण और अच्छे कारणों की सामाजिक प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है। हालांकि शहरों में एक तिहाई से ज्यादा लोग यभी भी बेघर हैं। शहरों में लगभग 40% लोगों के पास पीने के लिए पानी नहीं है। सफाई व्यवस्था भी ठीक नहीं है। और स्वास्थ्य सुविधाएं भी कम आय वाले व्यक्तियों के लिए बहुत कम हैं, फिर भी शहरी की आबादी इतने तीव्र गति से बढ़ रही है कि, एक अनुमान के अनुसार सन 2025 तक दुनिया की आधी आबादी शहरों में निवास होगी। शहरों की आबादी में वृद्धि का दौर 1950 के बाद देखने में आया है। आंकड़ों के अनुसार 1960 में न्यूयार्क विश्व में सर्वाधिक आबादी वाला शहर था। उस समय उसकी जनसंख्या 1 करोड़ 40 लाख थी। उसके बाद 90 लाख से 30 लाख आबादी वाले शहरों का स्थान था जिसमें लंदन, टोक्यो, पेरिस, शांघाई, शिकागो, कोलकत्ता, ओसाका लॉस एंजिल्स आदि शहर आते थे। सन 1990 के आते-आते न्यूयार्क की जगह सर्वाधिक आबादी वाला शहर टोक्यो हो गया उसकी आबादी 2 करोड़ 50 लाख थी। इसके बाद में मुंबई का नंबर था जिसकी आबादी 1 करोड़ से ऊपर थी। भारत के 2011 के आंकड़ों के ऊपर ध्यान दें तो देश की 121 करोड़ की आबादी में से 83.3 करोड़ लोग गांव में तथा 37.7 करोड़ शहरों में निवास करते हैं। नगरों की बढ़ती आबादी का पूर्वानुमान पिछले दो दशकों में वैश्वीकरण की प्रक्रिया की शूरवत के समय से ही लगाय जा रहा था।

शहरीकरण की समस्याएं

विद्वानों और कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि, शहरीकरण की प्रक्रिया मौद्रिक विकास, व्यापार गतिविधियों के विस्तार, सामाजिक और सांस्कृतिक सम्मेलन, संसाधन सेवाओं और उपयोग के संसाधनों के लिए कई लाभ लायेगी हालांकि शहरीकरण के कारण कुछ समस्याएं आती हैं इसमें शामिल है।

पर्यावरणीय गुणवत्ता का क्षरण

आज शहरीकरण के कारण विशेष रूप से हवा, पानी और शोर की गुणवत्ता में पर्यावरणका बड़े पैमाने पर क्षरण हो रहा है। शहरों में अधिक लोगों के आने से आवास जैसी सुविधाओं की बहुत मांग है। कुछ गैरकानूनी कारखानों और यहां तक की, जिन घरों की संरचना खराब है। इमारतों से कचरे को सीधे नजदीकी नदी या जल संसाधनों तक पहुंचाया जाता है। जो सीधे पानी को बड़े मात्रा में प्रदूषित करता है। घरेलू अपशिष्ट पदार्थ, औद्योगिक अपशिष्ट और अन्य अपशिष्ट सीधे नदी में छोड़ दिये जाते थे जो पानी की गुणवत्ता को नीचा करते हैं। तेजी से शहरीकरण का एक और प्रभाव वायु प्रदूषण है,

जो मोटर वाहन, उद्योगिक विकास में इस्तेमाल के कारण भी बढ़ गया है। और अंत में ये सब घटक मानव स्वास्थ्य को भी प्रभावित करते हैं।

असफल शहरी प्रशासन

शहरी प्राधिकरण एक शहर का प्रबंधन करने के लिए बहुमुखी चुनौतियों से गुजर रहा है। जिनके लिए हर पार्टी को शहरी विकास में प्रत्येक और जिम्मेदारी के लिए अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। हालांकि शहरी प्रबंधन में कई एजेंसीयों और विभागों की भागीदारी ने कई कार्यों और परिणामों को सिकरनाईज करने के लिए जटिल बना दिया है। उन कार्यों की दक्षता को प्रभावित करता है, इसके अलावा और भी काम करता है जिन्हें पूरा करने की आवश्यकता होती है। आज स्थानीय प्राधिकरण को भी विभिन्न सामाजिक मुद्दों के समाधान खोजने की जरूरत है।

कृषि समस्या

यहां इस सच्चाई से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि, देश के 58.4 फिसद से भी अधिक लोगों की आजीविका का मुख्य साधन आज भी खेती है। सकल घरेलू उत्पाद में आज भी खेती का योगदान पांचवें हिस्से के बराबर है। साथ ही खेती कुल निर्यात 10 फिसद हिस्सा होने के साथ-साथ अनेक उद्योगों के लिए बड़ी मात्रा में कच्चा माल भी उपलब्ध कराती है। पिछले दिनों फेडरेशन ऑफ इंडियन फार्मा ऑर्गेनाइजेशन (FIFO) की रिपोर्ट में साफ कहा गया है कि, विभिन्न प्रकार के भूमि अधिग्रहणों के कारण देश में अब तक 12 लाख हेक्टर कृषि योग्य भूमि कम हो चुकी है। यह सच है कि, आबादी के लिहाज से भारत आज भी गांव का ही देश है। पिछले कुछ दशकों में गांव की आबादी कम जरूर हुई है, परंतु आबादी के ताजा आंकड़ों में देश के नीति निर्माताओं के लिए एक सबक छुपा है। इससे तो इनकार नहीं किया जा सकता कि, पिछले दशकों में गांव में जीवन यापन मुश्किल हुआ है। बहुत सारे योजनाओं का केंद्र बिंदु शहर ही रहे हैं। कृषि में मुनाफा न देने से गांव में रोजगार के साधन भी कमजोर पड़ रहे हैं। यही कारण है ही, आज लोग गांव से पलायन होकर मजबूर शहरों में आ रहे हैं। 12 वीं पंचवर्षीय योजना के प्रारूप में भी 2017 तक लगभग 1 करोड़ से भी अधिक लोगों को खेती-किसानी से अलग करके उन्हें दूसरे अन्य कामों की ओर उन्मुख करना होता है। भविष्य में खेती से जुड़े जो लक्षण दिखाई पड़ रहे हैं उनसे लगता है कि, बढ़ती आबादी में लोगों की बुनियादी जरूरत पूरी करने के लिए खेती की उत्पादकता बढ़ाना मजबूरी होगी इसलिए खेती में हाइब्रिड बीज एवं तीव्र यंत्रिकीकरण करने से कृषि कार्य और मजदूरी करने के अवसर ही कम हो जाएंगे।

शहरी निवासियों के लिए रहने की गुणवत्ता में गिरावट

शहरीकरण प्रबंधन शोधकर्ताओं के लिए एक बड़ी चिंता है क्योंकि, यह शहरी निवासियों के लिए रहने की गुणवत्ता में कमी आई है। जैसा कि, महानगर एक विकसित शहर बन जाता है, जमीन का मूल्य भी बढ़ेगा। आवास प्रावधान उच्च आय वर्ग की जरूरतों को पूरा करने के लिए अधिक ध्यान दिया जाएगा। जैसे, आवास के प्रावधान में विशेष रूप से मध्य और निम्न वर्ग के लोगों के लिए एक समस्या होगी। शहरी गरीबों के लिए आवास की आपूर्ति अभी भी अपर्याप्त है क्योंकि इन घरों की लागत बहुत कम है, जिसके लिए कम और मध्यम आय वर्ग सहन नहीं कर सकता। कम आय वाले समूह के लिए आवास प्रावधान की कमी के कारण शहर में गैर कानूनी निवासी बस्तियों को जारी रखने के लिए प्रेरित किया है। कम आय वाले समूह के लिए आवास की समस्या के अलावा, शहरीकरण की प्रक्रिया ने है जो मौजूदा सुविधाओं और उपयोगिता की मांग को बढ़ाया जो मौजूदा सुविधाओं से पूरा नहीं किया जा सकता।

अक्षम परिवहन प्रणाली

शहरीकरण ने संक्रमण की गंभीर समस्या का निर्माण किया। महानगरीय शहरों में लोगों की आवाजाही के कारण सड़क पर वाहनों की संख्या हर साल बढ़ रही है। आज विभिन्न प्रकार के सार्वजनिक परिवहन शहरों में उपलब्ध कराए जाते हैं लेकिन शहरों में लोग अभी भी निजी वाहनों को चलाने के लिए पसंद करते हैं। यह अप्रभावी सार्वजनिक परिवहन के कारण है। परिवहन के विभिन्न तरीकों को एकीकृत करने की आवश्यकता के संदर्भ के बिना सार्वजनिक परिवहन सुविधा प्रदान की जाती है, नतीजतन यह उपयोगकर्ता के लिए परिवहन के मोड को बदलने के लिए मुश्किल है। क्योंकि सार्वजनिक परिवहन भरोसेमंद नहीं है इसलिए लोग आमतौर पर निजी वाहनों से यात्रा करते हैं। जिसके कारण शहरों में रुकावट की गंभीर समस्या हो गई है। अगर कोई ट्रैफिक जाम होता है तो सार्वजनिक परिवहन विशेष रूप से बस और टैक्सी और निजी वाहन एक साथ फस जाते हैं। और आगे बढ़ नहीं सकते हैं यह लोगों के लिए एक बहुत गंभीर समस्या पैदा करता है।

भारतीय संदर्भ में शहरीकरण

भारत अपनी ग्रामीण आबादी के लिए दुनिया भर में जाना जाता है। जिसके साथ ग्रामीण गांव में रहने वाली लगभग 73% जनसंख्या है अन्य एशियाई देशों के मुकाबले शहरी आबादी के साथ-साथ शहरीकरण की गति धीमी रही है। भारतीय परिपेक्ष में शहरीकरण की प्रक्रिया का मूल्यांकन करते समय यह देखा गया है कि, इस देश में शहरीकरण की

प्रमुख समस्या है। आवास, बेरोजगारी और जल प्रदूषण, जबकी शहरीकरण आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक तंत्र के माध्यम से तेजी से वृद्धि ने सार्वजनिक उपयोगितावो जैसे स्वास्थ्य और शिक्षा पर भारी दबाव डाल दिया है। 2001 में सांख्यिकी रिपोर्ट के अनुसार भारत के शहरी निवासियों की संख्या 285 मिलियन से अधिक थी। अनुमान है कि 2030 तक भारत की 50% से अधिक आबादी शहरी क्षेत्रों में रहने की उम्मीद है। तेजी से बढ़ते शहरों की आबादी और भौगोलिक क्षेत्र दोनों में शहरों का शहरी फैलाव या वास्तविक विकास शहरी परेशानियों का मुख्य कारण है। अधिकतर शहरों में वित्तीय सहायता उनके विस्तार से उत्पन्न समस्याओं से निपटने में असमर्थ है। ऐतिहासिक रिकॉर्ड यह दर्शाते हैं कि ग्रामीण से शहरी इलाकों में प्रवास के शुरुआती बड़े प्रवाह को 1930 के दशक के अंत में के दौरान कम था जब लोग रोजगार की तलाश में चले गए। बाद में 1941 से 51 के दशक के दौरान 1947 में युद्ध, औद्योगिकरण और देश के विभाजन के जवाब में एक लाख और लोग शहरी इलाकों में चले गए। यह आमतौर पर देखा जाता है कि ऐसे बड़े शहरों में रोजगार के अवसर प्राप्त करने और आधुनिक शैली में रहने के लिए अधिकांश लोगों को आकर्षित किया गया था। ऐसे हाइपर शहरीकरण ने शहर के आकार में वृद्धि की है जो कल्पना को चुनौती देते हैं। दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, चेन्नई, बेंगलुरु पास के स्थानों से लोगों के विशाल प्रवास के कारण शहरी गिरावट के उदाहरण है।

कचरा निपटान

शहरीकरण ने भारतीय शहरों को संख्या और आकार में बढ़ने के लिए धक्का दे दिया और इसके परिणामस्वरूप लोगों को कचरा निपटान की समस्या का सामना करना पड़ा जो खतरनाक चरण में है। भारतीय शहरों द्वारा प्रदत्त कचरा की भारी मात्रा में एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या का कारण है। अधिकांश कचरों में कचरा निपटान के लिए उचित व्यवस्था नहीं है और मौजूदा लैंडफिल किनारे से भरे हुए हैं। यह लैंडफिल रोग के आधार प्रजनन कर रहे हैं और अनगिनत जहर उनके परिदृश्य में लीक हो रहे हैं। मक्खियां और चूहा और एक गंदे जहरीला तरल जिसे लिचेट कहा जाता है वह खुले हुए आमंत्रित रोग में बर्बाद किया जाता है, जो नीचे से निकलता है और भूजल को प्रदर्शित करता है। जो लोग विघटनकारी कचरा और कच्चे मल जल के पास रहते हैं वह मलेरिया, प्लेग, पीलिया और टाइफाइड जिसे कई बीमारियों के शिकार होते हैं।

शहरीकरण के कारण स्वास्थ्य समस्या

दुग्गी बस्तियों में स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों में प्रमुख है आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्थिति, दूषित पर्यावरण सामान्य रूप से खराब पर्यावरणीय गुणवत्ता में 25 से 33% बीमार स्वास्थ्य का योगदान होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भविष्यवाणी की है कि 2025 तक विकसित देशों में सभी मौतों की वजह से हृदय रोग की तरह गैर संचारी रोगों का 69% हिस्सा होगा। शारीरिक मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य रहने की स्थिति से प्रभावित है ऐसे कई उदाहरण है जो मानव जीवन पर प्रभाव डालते हैं, जैसे की श्वसन रोग और संक्रामक रोगों दुर्घटनाओं और मानसिक बीमारी का फैलाव। एक अन्य संबंधी खतरे संक्रामक रोग है। हवाई यात्रा में एक देश से अगले जीवाणु और वायरस होते हैं। इसके अलावा ग्रामीण इलाकों से स्थानांतरित लंबे समय तक शहर के निवासी बीमारी से प्रतिरक्षित नहीं हैं जिसमें जिससे उन्हें बीमारी के होने का अधिक खतरा होता है। एक अशुद्ध पानी की आपूर्ति से पानी की आपूर्ति के माध्यम से संक्रामक बीमारी का खतरा अधिक होता है। जलवायु परिवर्तन गंभीर गरमी या थंड से होणे वाली मौतों का कारण बन सकता है। अपर्याप्त आवास परिस्थितियों के स्वास्थ्य प्रभाव एक जटिल मुद्दा है जिसमें विभिन्न प्रकार के जोखिम शामिल है और अस्थमा, एलर्जी, श्वसन रोग हृदय संबंधित प्रभाव चोट, मानसिक बीमारियों जैसे विभिन्न स्वास्थ्य परिणाम शामिल है।

शहरी अपराध

भारत के विकसित शहरों में लोग विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों से जुड़ा हुआ है जिनके पास एक दूसरे के साथ समानता नहीं है शहरीकरण में वृद्धि के साथ अपराध की समस्या बढ़ जाती है शहरी अपराधों में बढ़ती हुई प्रवृत्ति शहरों की शांति और शांति को परेशान करती है साथ ही महिलाओं के लिए मुख्य रूप से रहने के लिए उन्हें असुरक्षित करती है शहरी अपराध की समस्या वर्तमान स्थिति में और अधिक जटिल हो रही है क्योंकि अपराधियों को अक्सर राजनेताओं नौकरशाहों और शहरी समाज के नेताओं से आश्रय मिलता है दत्ता और वेणुगोपाल ने कहा कि राष्ट्र के उत्तर मध्य भागों में बलात्कार, हत्या, अपहरण जैसे हिंसक अपराध अधिक प्रमुख है। पटना, दरभंगा, गया और मुंगेर के शहरों में गरीबी से संबंधित अपराध प्रचलित है यह इस क्षेत्र में मौजूद गरीबी के कारण हो सकता है।

शहरी प्रदूषण की समस्या

वर्तमान परिस्थिति में बढ़ते शहरीकरण में उद्योगों और परिवहन प्रणालियों का अनुपात बढ़ने के लिए विकसित किया। इन घटनाओं का मुख्य रूप से पर्यावरण प्रदूषण विशेष रूप से शहरी परिवेश के लिए जिम्मेदार है। शहरी प्रदूषण मुख्य रूप से शहरों द्वारा बनाई गई अशुद्धियों का संग्रह है जो निश्चित रूप से शहर में रहने वालों को झटका देगा। इसमें हवा,

पानी और पूरे वातावरण का मैदान शामिल है। वायु प्रदूषण का खतरनाक परिणाम है वह शहरीकरण के कारण उभरता है। शहरों में कई खतरनाक गैसों का स्रोत है विशेषकर यात्री कारो, बसों जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, ओजोन, डीजल, मोटर द्वारा जारी ठीक जो मानव स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करते हैं। हालांकि कई शहरी समूह में वायु की गुणवत्ता बिगड़ती का मुख्य स्रोत औद्योगिक सुविधाओं से होता है जो वायु में जहरीले का उत्सर्जन करता है, शहरी इलाकों में जल प्रदूषण का स्रोत भी है। पहले के समय से शहरों में लाखों ग्रामीण निवासियों को उनके पहुंचाने वाले किनारों पर आकर्षित कर रहे हैं। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति को जीवन जीने की आवश्यकता है और अन्य बुनियादी जरूरतों के लिए उपभोग की आवश्यकता है। शहरीकरण से संबंधित मुद्दों को हल करने के लिए भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी भी आगे आए। विशेषज्ञों ने कहा है कि सरकार को दो महत्वपूर्ण कारकों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए जो ठोस अपशिष्ट प्रबंधन और अपशिष्ट जल उपचार है। शहरीकरण के मुद्दों को हल करने का सबसे प्रभावशाली तरीका है कि, गांव की अर्थव्यवस्था और छोटे पैमाने पर पूरी तरह व्यवहार बनाने के लिए। साथ ही शहरी नियोजन, शहरी बुनियादी ढांचे, शहरी विकास, युवा लोगों की सहायता के लिए विश्वविद्यालयों को खोलने पर ध्यान देना चाहिए।

डब्ल्यूएचओ की रिपोर्ट में कहा गया है कि, शहरी केंद्रों में रहने और काम करने वाले लोगों की शारीरिक, मानसिक, पर्यावरण या और सामाजिक कल्याण को विकसित करने के उद्देश्य से स्वास्थ्य शहरो का प्रस्ताव है। शहरो से सरकारी प्रतिनिधियों के लिए समुदाय के सदस्यों सहित अलग-अलग पृष्ठभूमि वाले लोग संगठित और प्रोत्साहित किए गए थे ताकि शहरी परिवेश में आने वाली समस्याओं से निपटने के लिए मिलकर काम किया जा सके। डब्ल्यूएचओ की रिपोर्ट बताती है कि, एक स्वस्थ एक है जो लगातार भौतिक और सामाजिक परिवेश का निर्माण और सुधार कर रहा है और सामुदायिक संसाधनों का विस्तार करता है जिससे लोगों को जीवन के सभी कार्यों को पूरा करने और उनकी अधिकतम क्षमता के विकास में एक दूसरे का परस्पर सहयोग करने में सक्षम बनाता है।

आवास

भारत में शहरीकरण की वजह से यह एक गहन समस्या है। शहरी इलाकों में घरों की कमी लगातार समस्या का कारण बढ़ती जा रही है। यह समस्या उन शहरी इलाकों में विशेष रूप से अधिक गंभीर होती जा रही है जहां बेरोजगार या अपरिवर्तनीय आपवासियों के बड़े आक्रमण होते हैं जो आसपास के इलाकों से शहरों और कस्बों में रहने के लिए जगह नहीं मिल पा रहे थे। आवास की समस्याओं के लिए प्रमुख कारक निर्माण सामग्री और वित्तीय संसाधनों की कमी व शहरी क्षेत्रों में सार्वजनिक उपयोगिताओं का अपर्याप्त विस्तार, शहरी प्रवासीयों की गरीबी और बेरोजगारी, मजबूत जाति और परिवार के संबंध और ऊपर शहरी क्षेत्रों में पर्याप्त परिवहन की कमी है, जहां अधिकतर नए निर्माण के लिए उपलब्ध भूमि का मिलना है।

बेरोजगार

बेरोजगार की समस्या भी आवास की समस्या के रूप में गंभीर है भारत में शहरी बेरोजगारी का अनुमान है कि श्रम शक्ति का 15 से 25% हिस्सा है। यह प्रतिशत शिक्षित लोगों में भी अधिक है यह अनुमानित है कि सभी जानकारियों के शहरी बेरोजगार युवाओं में से लगभग आधी दिल्ली, मुंबई, कोलकाता और चेन्नई जैसे महानगरों में रह रहे हैं। इसके अतिरिक्त हाला की सारी आए ग्रामीणों से अधिक है, इलाकों में रहने की उच्च लागत के कारण वे बेहद कम है। शहरी बेरोजगारी के मुख्य कारण ग्रामीण शहरी इलाकों में लोगों के विशाल स्थानांतरण से है। औद्योगिकरण के साथ संयोजन में तेजी से शहरीकरण का परिणाम मलिन बस्तियों के विस्तार में हुआ है। मलिन बस्तियों का विस्फोट कई कारकों के कारण होता है। जैसे कि आवास के लिए विकसित भूमि की कमी, शहरी गरीबों की पहुच से परे भूमि की ऊंची किमत, नौकरी की तलाश में शहरो मे ग्रामीण प्रवासियों का एक बड़ा प्रवाह।

संक्षेप में, शहरीकरण ग्रामीण प्रवास के कारण शहरी क्षेत्रों का पर्याप्त विस्तार है और यह आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण और तर्कसंगतता की सामाजिक प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है। शहरीकरण सामान्यतः विकासशील देशों में हुआ क्योंकि सरकार एक विकसित शहर का दर्जा हासिल करने की इच्छुक है। नतीजतन शहर में लगभग सभी क्षेत्र विकसित किए गए हैं। और सबसे खराब स्थिति में, हरे क्षेत्रों को भी औद्योगिक या व्यापार क्षेत्र में बदल दिया गया है। यह यह दिखाता है की, तेजी से शहरीकरण में विशेष रूप से सामाजिक और पर्यावरणीय पहलूओ के लिए कई अवैधानिक निहितार्थ है। सामाजिक और पर्यावरणीय पहलूओ के प्रभाव पर विचार किए बिना सरकार को एक शहर विकसित करने के लिए उत्सुक नहीं होना चाहिए। इसके बजाय, सरकार को एक विकसित शहर को पूरा करने के लिए शहरी विकास प्रक्रिया को संशोधित करना चाहिए और ऐसी समस्याओं की संभावना को कम करने का प्रयास करना चाहिए जो उत्पन्न हो सकती है, और समस्याओं की संभावना को काम करने के प्रयास करना चाहिये। खोश ने (1995) शिफारस की है की, शहरी क्षेत्र में जीवन को आधुनिक बनाने में सहायता के लिए समाज को अधिकारियों के साथ मिलकर काम करना चाहिए। वर्तमान में भारत में पहले से ही कई मेगा शहर है शोधकर्ता मानते हैं की शहरीकरण देश के विकास के लिए अच्छा है,

लेकिन शहरों को विकसित करने और स्वास्थ्य जीवन के लिए बुनियादी सुविधाएं प्रदान करने के लिए सावधानीपूर्वक योजना की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथसूची

- 1) डॉ. एस. एस. बंसल, अधिवास भूगोल, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ
- 2) लोकसत्ता न्यूज़ पेपर 6 में 2015
- 3) तरुण भारत न्यूज पेपर 13 सप्टेंबर 2014
- 4) डॉ. एन. एस. गर्ग, नगरीय भूगोल
- 5) शैलेंद्र चव्हाण डेली न्यूज ऑक्टिविस्ट 26 अप्रिल 2014
- 6) शहरीकरण की चुनौतियां (Political Express) 2 फरवरी 2013
- 7) लोकसत्ता न्यूज़ पेपर 6 जुलै 2013
- 8) पंकज चतुर्वेदी अनियोजित शहरीकरण के खतरे नेशनल दुनिया 14 दिसंबर 2012
- 9) L. N. Verma, Urban Geography, 2008, Ravat Publication
- 10) www.wikipedia.com 14 jun, 2017

प्राथमिक शिक्षा में बच्चों के मूलभूत सेवाओं का अध्ययन

सीमा यादव¹ डॉ. मृत्युञ्जय मिश्रा²

¹शोध छात्रा, शिक्षाशास्त्र विभाग, भगवंत यूनिवर्सिटी, अजमेर, राजस्थान

²शिक्षाशास्त्र विभाग, भगवंत यूनिवर्सिटी, अजमेर, राजस्थान

शोध सारांश :-

प्राथमिक शिक्षा में नई शिक्षा नीति (NEP) 2019 बाल्यावस्था अधिगम व विकास को वृहत संवेग प्रदान कर भारत के क्षेत्र में सुधार का उद्देश्य रखती है। इन नीति के अनुसार छोटे बच्चों के लिए व्यापक कार्यक्रम आरम्भ करने का सुझाव दिया गया है। जिसे "(Early childhood care and education)" ECCE कहा गया है, वर्ष 2025 तक 3 से 6 वर्ष की आयु के प्रत्येक बच्चों के लिए मुफ्त, सुरक्षित, उच्च गुणवत्तापूर्ण, विकासात्मक स्तर के अनुरूप देखभाल और शिक्षा की पहुँच को सुनिश्चित करे कि बच्चों को यह सुरक्षा प्राप्त हो सामाजिक, आर्थिक यहाँ तक कि भौगोलिक परिस्थितियों के कारण सभी बच्चों को अनिवार्य और निःशुल्क प्रारंभिक शिक्षा का अधिकार (अनु० 21) में हैं 114 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को किसी भी जोखिम वाले कार्य से सुरक्षा का अधिकार (अनु० 24) में है संविधान के 86 वे संशोधन के द्वारा शिक्षा के अधिकार को प्रभावी बनाया गया है। प्रारंभिक शिक्षा के सभी पहलुओं पर ध्यान रखने के लिए प्रारंभिक शिक्षा के लिए राष्ट्रीय आयोग बनाया जायेगा।

कुंजी : संविधान, बच्चों, प्राथमिक शिक्षा, अधिकार, सेवाएँ, बाल्यावस्था, भारत।

भूमिका :-

राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने यह माना है कि प्रारम्भिक बाल्यावस्था की देखभाल तथा शिक्षा न केवल शिक्षा की प्रथम पायदान है, बल्कि प्राथमिक शिक्षा का आधार भी है ई.सी.सी.ई (अर्ली चाइल्ड केयर एंड एजुकेशन) के अंतर्गत बच्चों को शिक्षा, देखभाल, स्वास्थ्य पोषण, सभी के प्रावधान शामिल है। ई.सी.सी.ई की अवधि के भीतर तीन उप चरणों को चिन्हित किया गया है। (अ) तीन साल या उससे कम उम्र के बच्चों के लिए (जिन्हें घर पर आधारित प्रेरक वातावरण तथा देखभाल की आवश्यकता होती है) प्रारंभिक प्रेरक चरण, (ब) 3 से 6 वर्ष की आयु वाले बच्चों के लिए (जिन्हें) समग्र दृष्टिकोण वाले केन्द्र आधारित प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा कार्यक्रम की जरूरत होती है) प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा चरण, और (स) 6 से 8 वर्ष के बीच की आयु वाले बच्चों (जो कक्षा 1 और 2 में है) उनके लिए प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा के लिए विशेष निहितार्थ हैं।

प्राथमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति :-

ई.सी.सी.ई पर राष्ट्रीय नीति को मिला वह अनुमोदन है। जिसे भारत सरकार के महिला एवं बाल शिक्षा विकास मंत्रालय द्वारा सितम्बर 2013 में संसूचित किया गया। इस नीति के साथ ई.सी.सी.ई के लिए एक पाठ्यचर्या की रूपरेखा तथा गुणवत्ता के मानदंडों को भी जोड़ा गया है।

बाल अधिकारों को चार भागों में बांटा जा सकता है :-

- जीवन जीने का अधिकार।
- संरक्षण का अधिकार।
- सहभागिता का अधिकार।
- विकास का अधिकार।

भारतीय संविधान ने सभी बच्चों को निश्चित अधिकार दिए हैं जो इस प्रकार हैं :-

- 6 - 14 साल के आयु समूह के सभी बच्चों को अनिवार्य और निःशुल्क प्रारंभिक शिक्षा का अधिकार (अनु० 21 ए)।
- 14 वर्ष की उम्र तक के बच्चों को किसी भी जोखिम वाले कार्य से सुरक्षा का अधिकार (अनु० 24)।
- बच्चों को आर्थिक जरूरतों को पूरा करने के लिए जबरन ऐसे कार्यों में सम्मिलित करना जो उनके आयु या क्षमता के उपयुक्त नहीं है, उससे सुरक्षा का अधिकार (अनु० 39 ई)।

अध्ययन के उद्देश्य :-

- भारत में प्राथमिक शिक्षा में बच्चों के मूलभूत सेवाओं का अध्ययन।
- प्राथमिक शिक्षा बच्चों के लिए निःशुल्क व अनिवार्य हो इसका अध्ययन।
- भारत में समय समय पर प्राथमिक शिक्षा के विकास काल का अध्ययन।

अध्ययन का परिसीमन :-

- प्रस्तुत अध्ययन में शिक्षा के क्षेत्र में केवल गाजीपुर उत्तरप्रदेश जिले के प्राथमिक विद्यालय को संदर्भित किया गया है।

- प्राथमिक शिक्षा अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण अध्ययन है , इसलिय इसमें मौलिक अधिकार को सम्मिलित किया गया है , तथा बच्चों को सेवाएँ दी गयी हैं ।

निष्कर्ष :-

प्राथमिक शिक्षा में बच्चों के प्रारंभिक बल्यावास्था को देखते हुए शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसमे बच्चों की सुरक्षा , भोजन तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओ को पूरा किया जा सके , साथ ही उन्हें रक्षा , प्रेरणा और सीखने के मौके दिए जाये । अगर हम प्रारम्भिक शिक्षा को उच्च कोटि की प्रारंभिक बल्यावास्था, देखभाल एवं शिक्षा अगर यह सुनिश्चित करती है कि बच्चे अपनी पूर्ण क्षमता विकसित कर सकें और बड़े होकर उत्पादन शील मानव बन सकें । नाभिकीय परिवार में बदलता पारिवारिक ढांचा , प्रवास और बढ़ती हुई संख्या में महिलाओं का घर से बहार जाना काम के लिए आदि कारकों के कारण प्रारंभिक बाल्यवस्था देखभाल और शिक्षा कार्यक्रम एक प्रासंगिक मुद्दा बन गया है । यह आवश्यकता है कि भारत अपने बच्चों की आरंभिक आयु की समय उचित देखभाल करे । प्राथमिक शिक्षा में बच्चों के विकास के लिए मूलभूत सेवाएँ समग्र रूप से होने चाहिए ।

सन्दर्भ ग्रंथो की सूची :-

- I. शिक्षा अनुसंधान, आर लाल बुक डिपो , मेरठ आर० ए० शर्मा ।
- II. आधुनिक भारतीय शिक्षा अप्रैल 2001 NCERT ।
- III. दी राईट ऑफ़ चिल्ड्रन एंड कंपल्सरी सरकार एजुकेशन एक्ट 2009 भारत सरकार , सचिव भारत ।
- IV. अग्रवाल , जे० सी० (2010) राईट टू एजुकेशन एंड रिवाइटलाइजिंग एजुकेशन , नई दिल्ली शिक्षा पब्लिकेशन्स ।
- V. दास, ए० (2010), राईट टू एजुकेशन , नई दिल्ली , ऐकिसस पब्लिकेशन ।
- VI. नायक , के० पी० (1968) "चौथी पंचवर्षीय योजना में शिक्षा बाम्बे निकेतन पढील केशन , बाम्बे , पृ 30- 33 ।

स्त्री - पुरुष तुलना व स्त्रियांची शैक्षणिक स्थिती

डॉ. गजानन बापुराव ठाकरे

पदवीधर शिक्षक, जि. प. व. प्राथ. शाळा काळी कारंजा, पं. स. कारंजा जि. प. वाशिम

E Mail – gajananthakare2012@gmail.com

ABSTRACT

प्राचीन काळापासून स्त्रियांपेक्षा पुरुषांना आपल्या समाजात वरच्या दर्जाचे स्थान प्राप्त झाले आहे. समाजाला समाजाने पितृसत्ताक कुटुंबपद्धतीचा स्वीकारल्याने कुटुंबप्रमुख म्हणून पुरुषांचाच वरचष्मा राहायला आहे. 'चूल आणि मूल' हीच मर्यादा कित्येक वर्षांपासून स्त्रिया पाळत आहेत. शारिरिकदृष्ट्या देखील पुरुष हा स्त्रिया पेक्षा वरचढ असतो. पुरुष स्त्रियांपेक्षा श्रेष्ठ असतो हा पगडा पिढ्यानपिढ्या भारतीय समाजमनावर बिंबविल्या गेला आहे. याला काही प्रमाणात भारतीय स्त्रियांची मानसिकता देखील कारणीभूत ठरली आहे. 'पती हाच परमेश्वर' हा संस्कार जवळ-जवळ प्रत्येक आई तिच्या मुलीला देत असल्याने पती मध्ये कितीही अवगुण असले तथा पती आपल्या पत्नीशी कितीही पशुवत वर्तन जरी करीत असेल तरी पत्नीने पतीची सेवा करणे हे कर्तव्यच आहे अशी भारतीय स्त्रीची मानसिकता झाली आहे. प्राचीन काळापासून आधुनिक काळापर्यंत जर आपण भारतीय समाजाचा अभ्यास केला तर आपल्या निदर्शनास येते की, क्वचितच स्त्रियांना पुरुषांच्या बरोबरीचे स्थान मिळाले आहे. आपल्या संस्कृतीमधील काही अनुचित चालीरीती, प्रथांमुळे स्त्रियांना पुरुषांच्या तुलनेत दुय्यम स्थान मिळाले आहे. स्त्रियांना हिन व तुच्छतेची वागणूक देण्यात पुरुषवर्गाने नेहमीच धन्यता मानली आहे. मात्र स्वातंत्र्योत्तर काळात स्त्रियांनी शैक्षणिक क्षेत्रात गरुडझेप घेऊन तमाम जगास अचंबित केले आहे. अनेक स्त्रीया उच्च प्रतीचे शिक्षण घेऊन जीवनाच्या प्रत्येक क्षेत्रातील उच्च पदे हस्तगत करताना दिसत आहे. या सावित्रीच्या लेकी आज शिक्षणाच्या माध्यमाचा वापर करून पुरुष वर्गावर वरचढ होताना दिसत आहेत. स्त्रियांनी केलेल्या शैक्षणिक प्रगतीने त्या प्रशंसेस पात्र आहेत.

मागील काही दशकापर्यंत आपल्या समाजात स्त्रिया दुर्लक्षित राहिल्याचे दिसून येते. कुटुंबात देखील मुलींच्या तुलनेत मुलांच्या शिक्षणाकडे लक्ष दिले जात होते. समाजाने स्त्रियाभोवती मुलांना जन्म देणे, त्यांचे संगोपन करणे, घरातील सर्व जबाबदाऱ्या सांभाळणे, घर सांभाळणे, घरातील व्यक्तींची सेवा करणे, ही लक्ष्मणरेषा आखून दिली होती. ही लक्ष्मणरेषा ओलांडणे म्हणजे पाप आहे ही भावना तिच्या मनावर बिंबवली गेली होती. तत्कालीन स्त्री पाप-पुण्याच्या सामाजिक चालीरीतीच्या कडक नियमात बंदिस्त झाली होती. स्त्रीयासाठी पती हाच परमेश्वर आहे ही शिकवण तिला कायम दिली जात होती. पण महात्मा फुले, सावित्रीबाई फुले, राजाराम मोहन रॉय, शाहू महाराज, महर्षी कर्वे, आगरकर, डॉ. आंबेडकर आदी अनेक समाज सुधारकांनी स्त्रीसमस्यांकडे लक्ष देऊन स्त्रियांसाठी अनेक सुधारणा केल्या. स्त्री शिक्षणासाठी त्यांनी भगीरथ प्रयत्न केले. त्यामुळे स्त्रीवर्ग जागृत होऊन उच्च शिक्षण घेऊन त्या स्वावलंबी झाल्या आहेत. स्त्रियांनी आपल्या असामान्य कर्तृत्वाने सामाजिक, राजकीय, शैक्षणिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, अंतराळ ही सर्वच क्षेत्रे व्यापून टाकली आहेत. शिक्षणामुळे आज स्त्रियांची सर्वांगीण प्रगती झाली आहे.

स्त्री पुरुष विषमतेची कारणे :-

प्राचीन काळापासून काही अंशी अपवाद वगळता आपल्या समाजात नेहमीच स्त्रियांना दुय्यम स्थान प्राप्त झाले आहे. घरातील महत्त्वाचे निर्णय घेण्याचा अधिकार कुटुंबप्रमुख म्हणून पुरुषालाच प्राप्त झाले आहेत. अर्थातच स्वातंत्र्यपूर्व काळापेक्षा स्वातंत्र्योत्तर काळात स्त्रियांच्या स्थितीत कमालीची सुधारणा झाली आहे. तद्वतच भारतीय राज्यघटनेने भारतातील सर्व धर्मांच्या स्त्री-पुरुषांना सर्व क्षेत्रात समान हक्क आणि समान संधी प्रदान केलेल्या आहेत. तसेच जागतिक स्तरावरूनही महिला सबली - करण्यासाठी विशेष प्रयत्न केले जात आहेत. राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरणात 'स्त्री पुरुष समानता' या घटकाचा दहा प्रमुख घटकात समावेश केलेला आहे. शासकीय पातळीवरून तसेच प्रसार - माध्यमातून, सेवाभावी संस्था, विचारवंत, संघटना यांच्याकडूनही स्त्री - पुरुष समानता विषयक विचारांना चालना दिली जात आहे. पण आजही समाजात स्त्री-पुरुष समानतेचे अपेक्षित चित्र पाहावयास मिळत नाही. याची कारणे पुढीलप्रमाणे आहेत.

१) आपली संस्कृती पुरुषप्रधान आहे. त्यामुळे संस्कृतीमधील चालीरीती, रिवाज यामध्ये पुरुषांना उजवे व स्त्रियांना दुय्यम स्थान आहे.

२) भारतीय समाजमनावर संस्कृतीचा घट्ट पगडा बसला आहे. कारण आपल्या संस्कृतीला अनेक वर्षांची परंपरा आहे.

३) सर्वसाधारणपणे समाजमनाची, संस्कृतीच्या काळाच्या संदर्भात, वैज्ञानिक दृष्टिकोनातून अर्थ लावणे, इष्ट ते घेणे, नको ते त्यागणे आणि चांगल्या गोष्टींची भर घालणे अशी प्रवृत्ती दिसून येत नाही.

४) पिढ्यान् पिढ्या चालत असलेल्या रुढी परंपरांमुळे स्त्रियांची मानसिकता पुरुषांना श्रेष्ठत्व देण्याची आणि स्वतःकडे कठीणत्व घेण्याची झाली आहे.

अशा कारणामुळे आजही भारतीय स्त्री आत्मविश्वास, अत्माभिमान व आत्मनिर्भरतेच्या अभावी पुरुषांच्या बरोबरीने जीवन जगू शकत नाही.१

स्त्री पुरुष तुलना व विचारवंतांची मते :-

ताराबाई शिंदे स्त्री - पुरुष तुलना करताना म्हणतात, 'स्त्रीधर्म म्हणजे काय? निरंतर पतीची आज्ञा पाळणे, त्याच्या मर्जीप्रमाणे वागणे, त्यांनी लाथा मारल्या, शिवा दिल्या, नवरोजी दारू पिऊन, जुगार खेळून, कफल्लक होऊन, शंख करीत, चोरी करीत, कुणाचा प्राण घेऊन, फितूर, चहाडी, खजिना लुटून, लाच खाऊन जरी घरी आले, तरी स्त्रियांनी मोठ्या हसतमुखाने देवासारखी त्यांची पूजा करावी आणि सेवेत हजर राहावे, हा स्त्रीधर्म ! जर बायकोला नवराच देव, तर नवऱ्याची वागणूकही देवाप्रमाणेच पाहिजे. पुरुषाकडून स्त्रियांना पुष्कळ दोष दिले जातात. पण जे दोष स्त्रियांच्या अंगी असतात तेच पुरुषांच्या अंगात असतात. पुरुष कपट करण्यातही पटाईत आहेत.२

जर एखाद्या स्त्रीच्या पतीचा मृत्यू झाला तर समाज व तिचे नातेवाईक प्रथम तिच्या आर्थिक परिस्थितीचा विचार करतात. तिच्या मानसिक व भावनिक स्थितीकडे पूर्णपणे दुर्लक्ष केले जाते. जर एखाद्या विधुराची अवस्था पाहिली तर पत्नी मृत झाल्यानंतर काही दिवस उलटत नाही तोच त्यांच्या दुसऱ्या विवाहासाठी तातडीने प्रयत्न केले जातात. स्त्री विना पुरुष ही कल्पनाच समाजाला कल्पित वाटते. परंतु वास्तविक स्त्री व पुरुष यांच्या प्रतिमा परमेश्वराने एकाच मातीच्या घडविल्या आहेत. स्त्री-पुरुष देहाचे रासायनिक घटक पृथक नसून त्यांच्या देहातील अणु - रेणू सजातीय आहेत. न्यायसंमत अथवा अन्य स्वरूपात पुरुषांची बहुपत्नीक वृत्ती सर्व पुरुष मान्य करतात. स्त्रिया मात्र पुरुष तसे नसतात म्हणून आग्रह धरतात. कदाचित स्त्रियांना त्यांच्या जवळच्या व्यक्तीबद्दल वाटणाऱ्या अतीव प्रेमाचे व श्रद्धेचे प्रतीक असावे.३

विवाहाचा विचार केला तरी त्यात सुद्धा साम्यता नसल्याने स्त्रियांच्या तुलनेत पुरुषांना अधिक अधिकार प्राप्त झाल्याचे दिसून येते. भारतीय स्त्री ही पतीकडे पुरुष म्हणून, शक्ती म्हणून पाहत नाही, तर पतिभावाचे साकार रूप म्हणून त्याच्याकडे पाहते. ती पतीपुढे नम्र होते. स्त्री पुरुषाच्या पाशवी शक्तीपुढे झुकत नसून संस्काराच्या पगडयामुळे तथा धर्माच्या बळाने एका संकल्पनेला शरण जाते. अर्थातच निसर्गाने स्त्री-पुरुषांमध्ये भेद केला आहे. त्या भेदात स्त्री ही एक प्रबळ शक्ती असून ही शक्ती सृष्टीही निर्माण करते तसेच संहारही करते. ह्या सृष्टीचा अभाव झाल्यास समाजात, सृष्टीक्रियेत निष्क्रियता निर्माण होईल. सर्जनशीलतेत स्त्री-पुरुष असा दोघांचाही सहभाग असतो. पुरुषांच्या सर्जन कार्यात स्त्रीने आपल्या माधुर्याची साथ दिली आहे. स्त्रीची मातृरूप व प्रेयसीचे अशी दोन रूपे आहेत. प्रेयसीच्या रूपात ती पुरुषाच्या सर्व कार्यात अंतःप्रेरणेने मदत करते तर मातृरूपाने ती सुपुत्रांना जन्म देते. पण पुरुष प्रधान संस्कृतीत स्त्री शक्तीचा अपव्यय झाला हे स्पष्ट निदर्शनास येते.४

फ्रॉईड या विचारवंताच्या पुरुष लिंग मत्सराच्या संकल्पनेचे निरीक्षण करताना सिमॉन द बुव्हा ह्या स्त्रीवादी विचारवंताच्या मते स्त्रीमध्ये न्यूनगंड येतो तेव्हा ती आपल्या स्त्रीत्वाची लाज बाळगते. म्हणजे हा न्यूनगंड आपण पुरुष नसल्याच्या भावनेतून निर्माण होत नाही तर स्त्री भोवती असलेल्या परिस्थितीतून निर्माण होते. द बुव्हाच्या मते फ्रॉईड स्वतःसुद्धा पुरुषलिंगाची प्रतिष्ठा वडील अथवा पिता यांच्या सार्वभौमत्वाशी जोडलेली असते आणि तरी तो अशी कबुली देतो की त्याला पुरुषांचे वर्चस्व मुळात कोटून आले त्याबद्दल अज्ञान आहे.५ वास्तविक पाहता मुलाला किंवा मुलीला त्याच्या मूळ स्वभावप्रमाणे वाढू देणे व त्यासाठी अनुकूल वातावरण निर्माण करून देणे हेच पालकांचे कर्तव्य असले पाहिजे. मुलींना मुलांच्या बरोबरीने विकासाची संधी मिळायला हवी. स्त्रियांना पुरुषापेक्षा वरचढपणानको पण दुय्यम स्थान अजिबात घेऊ नये.६ महर्षी अरविंद यांच्या मते स्त्री व पुरुष ही दोघे परस्पर संबंदात काही अंशी मालक व काही अंशी गुलाम असतात. पुरुषांच्या शक्तीबद्दल आणि त्यांच्या बद्दल आकर्षण वाटल्यामुळे, आपल्या घराची इच्छा, सुरक्षितता आणि मातृत्वाची ओढ यामुळे स्त्री ही पुरुषांची गुलाम होते. प्रत्यक्षात स्त्री आणि पुरुष दोघांनाही पूर्ण समानता, दोघांनाही समान शिक्षण आणि प्रशिक्षण दिले पाहिजे आणि दोघांमधील लैंगिक विषमता दूर करून, सर्व सुसंगती चा उगम असणाऱ्या अंतिम तत्त्वाचे ज्ञान प्राप्त करण्यासाठी त्यांनी प्रयत्न केले पाहिजे.७

स्त्रियांची शैक्षणिक स्थिती :-

स्त्री व पुरुष या दोघांमधली दरी बुजवायची असेल तर शिक्षण या अस्त्राचा प्रभावी वापर स्त्रियांनी करणे अत्यंत आवश्यक आहे. जर स्त्रियांना स्वावलंबी, आत्मनिर्भर करावयाचे असेल तर त्यांना उच्च शिक्षणाच्या संधी उपलब्ध करून देणे अत्यंत आवश्यक आहे. स्त्रिया जर शिक्षित होऊन स्वतःच्या पायावर उभ्या राहिल्या तर त्यांचा भविष्यकाळ उज्वल असेल.

शिक्षण क्षेत्रातील मुली व शिक्षकाचे तुलनात्मक प्रमाण :-

१९९० हे वर्ष बालिकावर्ष म्हणून जाहीर केल्या गेले. पण प्राप्त माहितीनुसार फक्त महाराष्ट्रातच ६ ते १४ वर्षे वयोगटातील १८ लाख मुली शिक्षणापासून वंचित होत्या. शाळेत शिकणाऱ्या मुलींचे प्रमाण १०० मुलांच्या तुलनेत ६५ मुली एवढे होते. ६३ टक्के मुली ४ था वर्ग पास होण्यापूर्वी शाळा सोडतात. तर माध्यमिक शाळेत मुलींचे शाळा सोडण्याचे प्रमाण ७७ टक्के आहे. १९९० मध्ये ३३ टक्के मुली तर तांत्रिक शिक्षणसंस्थेत १६ टक्के मुली शिक्षण घेतात. १९८६ मध्ये महाराष्ट्रात प्राथमिक शिक्षकांची संख्या १७,६६० व शिक्षकांची ५५,४९५ म्हणजे अनुक्रमे २४ ते १४ टक्के व ७५.८६ टक्के होती. उच्च प्राथमिक शाळेत शिक्षकांचे प्रमाण २७.१६ आणि शिक्षकांचे प्रमाण ७२.८४ टक्के इतके होते. माध्यमिक शाळेतील शिक्षकांची संख्या १६.५२ टक्के व शिक्षकांचे प्रमाण ८३.४८ टक्के इतके होते. जर भारताचा विचार केला तर १९५१ मध्ये १८ टक्के असणारे साक्षरतेचे प्रमाण २०११ मध्ये ७४ टक्क्या पर्यंत वाढले. स्त्रियांच्या बाबतीत १९५१ मध्ये ९ टक्के असणारे साक्षरतेचे प्रमाण ६५ टक्क्यांपर्यंत वाढलेले असले तरी स्त्री साक्षरतेस अजून बराच वाव असल्याचे निदर्शनास येते. राजकीय दृष्ट्या जर विचार केला तर महाराष्ट्रात १९६२ च्या निवडणुकीत पुरुष आमदारांची टक्केवारी ९५.७८ टक्के तर महिला आमदारांची टक्केवारी ४.९२ टक्के होती. तर २००९ मध्ये इतकी वर्ष उलटूनही २००९ च्या निवडणुकीत महिला आमदारांचे प्रमाण ४.१६ टक्के एवढे कमी होऊन पुरुष आमदारांचे प्रमाण ९५.८३ टक्के एवढे होते. तसेच १९५२ च्या निवडणुकीत ४.४० टक्के महिला खासदार निवडून आल्या. तर १९९६ च्या निवडणुकीत ७.१८ टक्के महिला खासदार झाल्या.११

स्त्री शिक्षणा बद्दल विचारवंतांची मते :-

आजच्या पितृसत्ताक कुटुंब पद्धतीमध्ये स्त्रियांना जर आपली विशेष ओळख निर्माण करावयाचे असेल तर निश्चितपणे त्यांना शिक्षणाची कास धरल्याशिवाय गत्यंतर नाही. महर्षी दयानंद सरस्वती यांच्या मते मुलगी पाच वर्षाची होताच तिला देवनागरी अक्षरे शिकवावीत. अन्य देशातील भाषांचे अक्षरेही शिकवावीत. त्यांच्या मते स्त्रियांना वेदश्रवण व वेदाध्ययनाच्या अधिकरांपासून वंचित ठेवले गेले होते. स्वामी दयानंदांनी स्त्रियांना वेदशास्त्र शिकण्याचा, यज्ञोपवीत धारण करण्याचा, यज्ञयाग करण्याचा अधिकार पुरुषांप्रमाणेच दिला. ते म्हणतात, 'जे लोक स्त्रियांना वेळेत शिकू नये म्हणतात, तो त्यांचा मूर्खपणा, स्वार्थीपणा व निर्बुद्धपणा आहे'. वेदांमध्ये मुलींना शिक्षण दिले जात असल्याचा पुरावा अथर्ववेदात आहे. भारतात स्त्रियांना भूषणास्पद ठरलेल्या गार्गी, मैत्रेयी आदी महिला वेदादी शास्त्राचे अध्ययन करून पूर्ण विदुषी बनल्या होत्या, असे शतपथ ब्राम्हणात स्पष्ट सांगितले आहे. महात्मा फुले यांनी तर इ.स. १८४८ मध्ये पुण्यात बुधवार पेठेतील भिडे वाड्यात मुलींसाठी पहिली शाळा सुरू केली. मुलींची शाळा काढताना त्यांनी म्हटले होते, 'पूर्ण विचारान्ती माझे असे मत झाले आहे की, पुरुषांच्या शाळेपेक्षा स्त्रियांच्या शाळेची अधिक आवश्यकता आहे. स्त्रिया आपल्या मुलांना त्यांच्या बालपणी जे वळण लावतात. त्यातच त्यांच्या शिक्षणाची बीजे असतात.१२ महात्मा फुले यांनी स्त्रियांना खऱ्या अर्थाने बंधनमुक्त करून स्त्रीजीवनाला खऱ्या अर्थाने प्रतिष्ठा, मान सन्मान मिळवून देण्याचे कार्य केले. त्यांना या कार्यात त्यांच्या पत्नी सावित्रीबाई यांनी सहकार्य केले.१३

स्त्रियांना शिक्षित करण्यासाठी स्वातंत्र्यपूर्व काळातच शैक्षणिक चळवळी सुरू झाल्या होत्या. १८१८ मध्ये कंपनी सरकारने पेशवाईचा अंत झाल्यावर आपले धोरण बदलून शिक्षणासाठी काही रक्कम खर्च करण्याचे ठरविले. कलकत्ता फिमेल ज्युवेनाईल सोसायटीने कलकत्त्याला हिंदी मुलींची पहिली शाळा काढली. १८२४ साली लेडी अँमस्ट ह्यांनी कलकत्ता व त्यांचा परिसर ह्यात मुलींची शाळा काढण्याच्या हेतूने 'सोसायटी फॉर नेटिव्ह फीमेल एज्युकेशन' नावाची संस्था काढली. त्याचवेळी मुंबई शहरात अमेरिकन मिशनरी सोसायटीने मुलींची शाळा उघडली. ती इतकी लोकप्रिय ठरली की, सन १८२९ पर्यंत निरनिराळ्या भागात अशा नऊ शाळा निघून त्यात ४०० मुली शिकू लागल्या. मद्रास, मुंबई, कलकत्ता येथे मिशनरी संस्थांनी शाळा काढल्या. १८५४ च्या खलित्यानुसार सरकारने उघडपणे स्त्रियांच्या शिक्षणाची जबाबदारी स्वीकारली. १८७१ पर्यंत २१८ मुलींच्या शाळा सुरू होऊन त्यात ९१९० मुली शिक्षण घेत होत्या. हंटर कमिशनच्या शिफारशीनुसार पुण्यात १८८४ मध्ये मुलींची पहिली माध्यमिक शाळा 'हायस्कूल फॉर इंडियन गर्ल्स' या नावाने सुरू झाली. १९१६ मध्ये भारतवर्षीय महिला विद्यापीठ अस्तित्वात आले. १९०७ मध्ये स्त्री डॉक्टरांची संघटना अस्तित्वात आली. १९१६ मध्ये स्त्रियांकरिता दिल्ली येथे मेडिकल कॉलेज निघाले. सन १९२३ पासून स्त्रियांना न्याय मंदिरात वकिलाचा पेशा करण्याची परवानगी मिळाली. त्यानंतर तर स्त्रिया राजकारणात भाग घेऊ लागल्या. १९ व्या शतकाच्या उत्तरार्धात स्त्री शिक्षणाचे महत्त्व सर्वांना कळून आले.

२० शतकात तर स्त्री शिक्षणाच्या प्रगतीचा आलेख सतत उंचावल्या गेला. १४ १९८६ च्या राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरणाच्या कृतीकार्यक्रमात मुली व स्त्रियांच्या सबलीकरणासाठी आखलेल्या विविध कार्यक्रमांचे नियोजन, समन्वय, नियंत्रण करण्यासाठी सर्व राज्यातील एस. सी. ई. आर. टी. मध्ये स्त्रीशिक्षण कक्षाची स्थापना करण्यात आली आहे. तसेच महाराष्ट्र राज्यातील स्त्री शिक्षण विभागामार्फत मुलींच्या शिक्षणाला उत्तेजन देण्यासाठी अनेक कार्यक्रम सुरू करण्यात आले आहेत. राष्ट्रीय शैक्षणिक धोरणातील शिफारशी अंमलात आणण्यासाठी १९९२ मध्ये कृतीकार्यक्रम तयार करण्यात येऊन त्यात स्त्रियांच्या सबलीकरणासाठी ७ निर्देशक ठरविण्यात येऊन त्यांची अंमलबजावणी करण्यात आली. १५

निष्कर्ष :-

एकंदरीत वर्षानुवर्षे प्राचीन काळापासून पुरुषवर्गाने समाजाने दिलेल्या अधिकारांचा वापर करून स्त्रियांना गुलामगिरीच्या अंधकारात ढकलण्याचे कार्य सातत्याने केले. स्त्रियांवर सतत वर्चस्व गाजवून त्यांचे अधिकार हनन करण्याचा प्रयत्न केला. घरातील प्रत्येक महत्त्वाचा निर्णय घेण्याचा पूर्ण अधिकार पुरुषांनी ठेवला. समाज व संस्कृतीने सुद्धा पुरुष वर्गाला श्रेष्ठ स्थान देऊन स्त्रियांना दुय्यम स्थान दिले. संस्कृतीतील परंपरागत चालत आलेल्या अनिष्ट चालीरितींनी, रूढी परंपरांनी स्त्रियांच्या गुलामगिरीच्या बेड्या आणखी मजबूत करण्याचे कार्य केले. पुरुष कितीही व्यसनी असेल तसेच त्यात किती दोष असतील तरी त्या पतीला परमेश्वर मानण्याची शिकवण देण्याचे कार्य मुलीला तिच्या घरच्यांनी केले. पिढ्यानपिढ्या पुरुष वर्गाचे श्रेष्ठत्व मान्य करण्याचे संस्कार स्त्रियांना दिले गेल्याने स्त्रियांनी मानसिक गुलामगिरी स्वीकारली. जेव्हा आपण 'जिच्या हाती पाळण्याची दोरी, तीच देशाला उद्धारी' अशी सुवचने ऐकतो तेव्हा स्त्रियांचा दर्जा पुरुषांपेक्षाही उच्च दर्जाचा आहे हे आपणास मान्य करावे लागेल. पण प्रत्यक्ष व्यवहारात मात्र स्त्रियांना हिन दर्जाची, तुच्छ वागणूक देण्यात पुरुषवर्ग धन्यता मानत आलेला आहे. हेच सत्य आहे. अर्थातच आधुनिक काळात स्त्रियांच्या सामाजिक दर्जात कमालीची सुधारणा होत असल्याचे आपल्या निदर्शनास येत आहे.

स्त्रियांची मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, गुलामगिरी झुगारून देण्याचे कार्य स्त्रीशिक्षणाने केले आहे. स्वातंत्र्यपूर्व तथा स्वातंत्र्योत्तर काळात महात्मा फुले, सावित्रीबाई फुले, शाहू महाराज, महर्षी कर्वे आदी अनेक समाजसुधारकांनी केलेल्या स्त्रीशिक्षणाच्या कार्यामुळे स्त्रियांनी जीवनाच्या प्रत्येक क्षेत्रात क्रांतिकारक प्रगती केली. राजकीय क्षेत्रातील पंतप्रधान, राष्ट्रपती, राज्यपाल आदी सर्वच महत्त्वाच्या पदावर भारतीय स्त्रिया विराजमान झाल्या आहेत. इतकेच नव्हे तर अंतराळ कार्यात सुद्धा भारतीय महिलांनी आपल्या कार्याने भारताचा नावलौकिक वाढविला आहे. शिक्षणामुळे स्त्रियांना माणूस म्हणून जगण्याची तथा स्वतःचे संरक्षण करण्याची संधी प्राप्त झाली आहे. कुटुंबात स्त्री हा घटक अत्यंत महत्त्वाचा असतो. जर स्त्री सुशिक्षित असेल तर सर्व घराला आत्मनिर्भरतेचे स्वावलंबनाचे संस्कार ती आपल्या कुटुंबाला देऊ शकते. शिक्षणामुळे स्त्रियांमध्ये धैर्य आणि सामर्थ्य निर्माण झाले. सुशिक्षित स्त्रिया आज स्वाभिमानाची, स्वावलंबी, एक समर्थ स्त्री म्हणून जीवन जगत आहेत. अर्थातच शिक्षणामुळेच आज स्त्रियांनी पिढ्यानपिढ्याची मानसिक गुलामगिरी झुगारून सामाजिक, राजकीय, आर्थिक, शैक्षणिक अशा जीवनातील सर्व क्षेत्रात नेत्रदीपक यश मिळविले आहे.

संदर्भ सूची :-

1. बेडगे, अ.मु., संपादक - 'स्त्री - पुरुष समभाव विकसन मार्गदर्शिका', महाराष्ट्र राज्य शैक्षणिक संशोधन व प्रशिक्षण परिषद, पुणे ३०, २००६ पृ. क्र. १
2. प्रा. कवि. माधवी - 'स्त्री - विचारधन', अन्मेष प्रकाशन, पुणे, २००० पृ. क्र. ३५ - ३७
3. डॉ. कर्वे, स्वाती संपादक - 'स्त्री विकासाच्या पाऊलखुणा', प्रतिमा प्रकाशन सदाशिव पेठ, पुणे, २००३ पृ. क्र. १४६ - १४७
4. उपरोक्त २००० पृ. क्र. ८१ - ९२
5. भागवत विद्युत - 'स्त्रीवादी सामाजिक विचार' डायमंड पब्लिकेशन, पुणे, २००८ पृ. क्र. ९३
6. पाटील डॉ. लीला - 'मुलींचे शिक्षण' साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद, १९९२, पृ. क्र. १५
7. प्रा. कवि. माधवी - 'स्त्री - विचारधन', अन्मेष प्रकाशन, पुणे, २००० पृ. क्र. १२८
8. उपरोक्त पृ. क्र. १९ - २१
9. डॉ.पवार वैशाली - 'महिलांच्या सत्तासंघर्षाचा आलेख', डायमंड पब्लिकेशन, पुणे २०१२ पृ. क्र. ९६

10. डॉ. कडू मोहिनी – 'भारतीय राजकारणातील स्त्रिया', विजय प्रकाशन, नागपूर, २००८ पृ. क्रं ३८
11. प्रा. कवि. माधवी – 'स्त्री – विचारधन', अन्मेष प्रकाशन, पुणे, २००० पृ. क्र. १०, ११, २९
12. महाले, शिवश्री अशोक सदाशिवराव – 'क्रांतीसुर्य महात्मा ज्योतिबा फुले स्मृती विशेषांक', मराठा सेवा संघ जिल्हा शाखा वाशिम प्रकाशन, २००४ पृ. क्रं. १५

शाश्वत विकास - एक अभ्यास

प्रा. सौ. रुपाली गोवर्धन दिकोंडा

सहाय्यक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, कला व वाणिज्य महाविद्यालय, माढा

ईमेल – dikonda.rupali2904@gmail.com

घोषवारा:-

कोरोना महामारीच्या पार्श्वभूमीवर पर्यावरण विषयक काही चांगल्या घडामोडी घडून येत आहेत. या जागतिक साथीनंतर भविष्यातले जग बदलेल असा तज्ञाचा अंदाज आहे. पृथ्वीची सद्यस्थिती फार भयावह आहे. कारण प्रदूषण, तपमानवाढ, अविघटनशील कचरा, नैसर्गिक स्रोतांची होणारी हानी, पृथ्वीच्या क्षमतांवर येणारा ताण, माणसाने या सर्व चक्रांमध्ये ढवळाढवळ सुरू केली आहे. याचा परिणाम जैवविविधता नष्ट होणे, प्रदूषण अशा गोष्टींमधून दिसून येतो. आज पर्यायी अर्थव्यवस्थेचा सर्वांनाच विचार करावा लागत आहे. कारण कोळसा व तेल यांचे साठे केव्हा ना केव्हा संपणार आहेत. निसर्गसमृद्ध भारताला अनेक प्रकारची साधनसंपत्ती आणि ती वापरण्याचे अनेक पर्याय उपलब्ध आहेत. गरिबी पैशावर ठरत नाही तर असे अनेक पर्याय नष्ट झाले तर बहुसंख्यांना जीवनच अशक्य होते आणि ते गरिबीच्या खाईत लोटले जातात. हे पर्याय जोपासले म्हणजेच निसर्ग समृद्ध केला तर चंगळवाद, गरिबी आणि कमालीची सामाजिक विषमता यांपासून आपली सुटका होईल.

The Sustainable Development Goals (SDGs) म्हणजे शाश्वत विकास ध्येये हा आंतरराष्ट्रीय स्तरावरचा एक महत्वाकांक्षी जाहीरनामा आहे. संयुक्त राष्ट्र संघटनेच्या सर्व १९३ सदस्य देशांनी सप्टेंबर २०१५ मध्ये एकमताने स्वीकारलेल्या या जाहीरनामानुसार २०१५ ते २०२० या पंधरा वर्षांच्या काळात हा संकल्पित विकास घडवून आणणे अपेक्षित आहे. या जाहीरनाम्यामध्ये गरीबी, भूक आणि महिलांच्या बाबतीत होणार्या हिंसेला पूर्णविराम देण्याचे महत्वाचे उद्दिष्ट समोर ठेवण्यात आले आहे. त्याचप्रमाणे जगात त्या प्रत्येक मानवाला कायदेशीररीत्या स्वतःची ओळख मिळावी आणि प्रत्येकाला समान न्याय मिळावा. या उद्दिष्टांचा यामध्ये समावेश आहे.

प्रस्तावना:-

कोरोना महामारीच्या पार्श्वभूमीवर पर्यावरण विषयक काही चांगल्या घडामोडी घडून येत आहेत. या जागतिक साथीनंतर भविष्यातले जग बदलेल असा तज्ञाचा अंदाज आहे. पृथ्वीची सद्यस्थिती फार भयावह आहे. कारण प्रदूषण, तपमानवाढ, अविघटनशील कचरा, नैसर्गिक स्रोतांची होणारी हानी, पृथ्वीच्या क्षमतांवर येणारा ताण, माणसाने या सर्व चक्रांमध्ये ढवळाढवळ सुरू केली आहे. याचा परिणाम जैवविविधता नष्ट होणे, प्रदूषण अशा गोष्टींमधून दिसून येतो. निसर्गाच्या सर्व गोष्टी चक्राकार पद्धतीने चालतात. परंतु अर्थव्यवस्था चक्राकार नाही. या नैसर्गिक चक्राच्या विरुद्ध आपली सर्व जीवनशैली आहे. मानव नेहमी फायद्याचाच विचार करतो. भरमसाठ हव्यासामुळे जीवसृष्टी धोक्यात आली आहे. जीवसृष्टी जगणं हे माणसाच्या जगण्या इतकेच महत्वाचे आहे कारण जीवसृष्टी जगली नाही तर माणूस जगणार नाही.

महत्वाचे शब्द:- शाश्वत विकास, The Sustainable Development Goals (SDGs)

उद्दिष्टे:-

- १) शाश्वत विकासाची व्याख्या समजून घेणे.
- २) शाश्वत विकासाची गरज समजून घेणे.
- ३) शाश्वत विकासासाठीचे धोरण समजून घेणे.

व्याख्या:-

“शाश्वत विकास म्हणजे असा विकास की, जो मानवी गरजांचे समाधान चिरकाल टिकविणे आणि मानवी जीवनाचा दर्जा सुधारणे हे साध्य करणे होय. रॉबर्ट अॅलन शाश्वत विकासामध्ये आपण मनुष्याच्या विकासासाठी निसर्गाचा आशा प्रकारे वापर केला पाहिजे की, निसर्गाने पर्यावरणाला हानी पोहचू नये. आणि निसर्ग आणि विकासामध्ये संतुलन राखले जाऊ शकेल.

ध्येये:-

2015 च्या ऑगस्ट मध्ये 193 देशांनी खालील 17 ध्येयांना मान्यता दिली आहे

1. दारिद्र्य निर्मूलन
2. भूक निर्मूलन

3. चांगले आरोग्य
4. दर्जेदार शिक्षण
5. लैंगिक समानता
6. शुद्ध पाणी आणि आरोग्यदायक स्वच्छता
7. नूतनीकरण करण्याजोगी आणि स्वस्त ऊर्जा
8. चांगल्या नोकऱ्या आणि अर्थशास्त्र
9. नवीन उपक्रम आणि पायाभूत सुविधा
10. असमानता कमी करणे
11. शाश्वत शहरे आणि समाज
12. उपलब्ध साधनांचा जबाबदारीपूर्वक वापर
13. हवामानाचा परिणाम
14. शाश्वत महासागर
15. जमिनीचा शाश्वत उपयोग
16. शांतता आणि न्याय
17. शाश्वत विकासासाठी भागिदारी

शाश्वत विकासाची गरज:-

शाश्वत विकासामध्ये अखंड मानव जातीचे कल्याण आहे.शाश्वत विकासाचा विचार नाही केला तर नैसर्गिक आपत्तींचा सामना करावा लागेल. शाश्वत विकासासाठी बहुतांशी औद्योगिक शेती केली जाते ती बहुतांशी रासायनिक असते. या शेतीच्या ऐवजी नैसर्गिक पद्धतीने शेती करणे महत्वाचे आहे. यात एका पिकाऐवजी अनेक पिके एकाच वेळी घेणे रासायनिक खते न वापरणे, या गोष्टी येतात. यामुळे शेतीवरील अनावश्यक भार कमी होईल.निसर्ग म्हणजे 'मुबलक संसाधनाचे एक स्रोत' मात्र निसर्गाचे शोषण करून मानवाने आपले जीवन धोक्यात टाकले आहे.ही संसाधने मानवासाठी अपुरी आहेत.उपलब्ध संसाधने कधी ना कधी संपणारी आहेत. या अपुरेपणाच्या भावनेतून संसाधनांचा काळजीपूर्वक आणि अधिक काळ पुरतील असा वापर करावा.

निसर्गामध्ये हस्तक्षेप केल्यास नैसर्गिक आपत्तीला सामोरे जावे लागेल. माणूस हा पर्यावरणाचा एक भाग आहे.माणसाचा विकास हा त्याच्या सभोवतालच्या पर्यावरणाच्या विकासासोबत शक्य आहे. आपल्या अवती-भोवती अनेक परिसंस्था असतात.माणूस निसर्ग या परिसंस्थेचा एक भाग आहे. म्हणून मानवाने निसर्ग केंद्रित विकासाच्या दृष्टीने वाटचाल करावी. अर्थव्यवस्थेचा गाभा निसर्ग आणि निसर्गसंपत्तीचा योग्य वापर व तिचे पुरुज्जीवन असा हवा. निसर्गाची विभागणी करून (उदा. शेती व वने) त्यांपैकी काहीना प्राधान्य आणि इतरांकडे दुर्लक्ष ही परिस्थिती बदलली पाहिजे. सेंद्रिय शेती, ऊर्जेसाठी हायड्रोजनसारख्या नवीन स्रोतांचा उपयोग यांवर संशोधन केंद्रित केले पाहिजे. सूर्यऊर्जेचा उपयोग ,पवनऊर्जेचा उपयोग विधायकरीत्या केला पाहिजे.मात्र त्यासाठी प्रचंड आकाराच्या पवनचक्क्या उभारून केंद्रीभूत ऊर्जा निर्माण करणे टाळले पाहिजे कारण अशा सर्व गोष्टी कोळसा व खनिज तेल यांच्या वापराविना शक्य होत नाहीत. पाश्चात्य देशांमध्ये अनेक लहानसहान जनसमूहांनी अशी साधी, कमी गुंतागुंतीची पण अर्थपूर्ण आणि समाधान देणारी जीवनशैली आचरण्यास सुरुवात केली आहे. त्यांनी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थेपासून फारकत घेऊन स्वतःचे चलन (Currency) ही वापरात आणले आहे. एकमेकांना सेवा-सुविधा पुरविण्यावर त्यांची अर्थव्यवस्था आधारलेली आहे.

आज पर्यायी अर्थव्यवस्थेचा सर्वांनाच विचार करावा लागत आहे. कारण कोळसा व तेल यांचे साठे केव्हा ना केव्हा संपणार आहेत. निसर्गसमृद्ध भारताला अनेक प्रकारची साधनसंपत्ती आणि ती वापरण्याचे अनेक पर्याय उपलब्ध आहेत. गरिबी पैशावर ठरत नाही तर असे अनेक पर्याय नष्ट झाले तर बहुसंख्यांना जीवनच अशक्य होते आणि ते गरिबीच्या खाईत लोटले जातात. हे पर्याय जोपासले म्हणजेच निसर्ग समृद्ध केला तर चंगळवाद, गरिबी आणि कमालीची सामाजिक विषमता यांपासून आपली सुटका होईल.

शाश्वत विकासासाठीचे धोरण

सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक इत्यादिचा दर्जा घसरल्यामुळे लोकांच्या आरोग्यावर प्रतिकूल परिणाम होत आहे. आर्थिक उत्पादकता घटते आणि सुखसोयी कमी होतात. त्यासाठी योग्य धोरण स्वीकारणे ही कळाची गरज आहे.

- १) दारिद्र्य घटविण्यासाठी, नवीन रोजगार संधी देण्यासाठी मोठमोठे प्रकल्प राबविले पाहिजे.
- २) अनुदान घटविल्यास किंवा काढून टाकल्यास देशाला फायदा होतो.
- ३) बाजारावर आधारित दृष्टीकोन स्वीकारावा.
- ४) संपत्तीच्या हक्कांची विभागणी करावी.
- ५) विक्री वाढीसाठी किंमत घट. संस्थावाढ इत्यादींना उत्तेजन द्यावे.
- ६) दर्जाघट रोखण्यासाठी नियंत्रण असावे.
- ७) देशांतर्गत व परदेशी व्यापार वाढीसाठी योग्य धोरण आखावे.
- ८) समाज जागृती व समाजाचा सहभाग मोठा असावा.
- ९) जागतिक, आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरणात्मक प्रयत्नांमध्ये आवश्यक सहभाग असावा.

निष्कर्ष :-

The Sustainable Development Goals (SDGs) म्हणजे शाश्वत विकास ध्येये हा आंतरराष्ट्रीय स्तरावरचा एक महत्वाकांक्षी जाहीरनामा आहे. संयुक्त राष्ट्र संघटनेच्या सर्व १९३ सदस्य देशांनी सप्टेंबर २०१५ मध्ये एकमताने स्वीकारलेल्या या जाहीरनामानुसार २०१५ ते २०२० या पंधरा वर्षांच्या काळात हा संकल्पित विकास घडवून आणणे अपेक्षित आहे. या जाहीरनाम्यामध्ये गरीबी, भूक आणि महिलांच्या बाबतीत होणार्या हिंसेला पूर्णविराम देण्याचे महत्वाचे उद्दिष्ट समोर ठेवण्यात आले आहे. त्याचप्रमाणे जगात त्या प्रत्येक मानवाला कायदेशीररीत्या स्वतःची ओळख मिळावी आणि प्रत्येकाला समान न्याय मिळावा. या उद्दिष्टांचा यामध्ये समावेश आहे.

संदर्भ:-

- १) 'शाश्वत विकास' विकिपीडिया https://en.wikipedia.org/wiki/Sustainable_development
- २) 'समतामूलक शाश्वत विकास हवा' अग्रलेख महाराष्ट्र टाईम्स ११ जून २०१९
- ३) 'Environment and Sustainable Development' M.H. Fulker, Bhawane Pathak, R.K.Kale.
- ४) 'Environment and Sustainable Development' Dr.R.K.Sinha.

हिन्दी – मराठी दलित आत्मकथाओं में सामाजिक जीवन

डॉ. व्ही. पी. चव्हाण.

सहयोगी प्राध्यापक, ग्रामीण (कला, वाणिज्य एवं विज्ञान, महाविद्यालय, वसंतनगर ता. मुखेड जि. नांदेड

drvankatchavan@gmail.com

दलित आत्मकथाओं ने हिंदी मराठी साहित्य में अपनी एक अलग पहचान बनाई है। अपनी एक भिन्न और अनोखी छाप दलित आत्मकथाओं ने निर्माण की है। इसमें संदेह नहीं कि सबसे पहले सन 1960 के बाद ही दलित साहित्य कि गतविधियों का आरंभ मराठी साहित्य में हो चुका था। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के विचारों और तत्वज्ञान से प्रेरणा लेकर मराठी साहित्य में सन 1976 के “अस्मितादर्श” विशेषांक से कुछ दलित आत्मकथन “मै और मेरा जीवन” शीर्षक से प्रकाशित हुए, तभी से मराठी साहित्य में दलित आत्मकथन लेखन का आरंभ माना जाता है। यह आत्मकथन रा. शेंडे, केशव मेश्राम, राजा ढाले, नामदेव ढसाळ, योगीराज वाघमारे, बाबुराव बागुल आदि ने किया था। स्वतंत्र रूप से दलित आत्मकथा लेखन का आरंभ मराठी में सन 1978 से माना जाता है। दया पवार की प्रथम दलित आत्मकथा ‘बलूतं’ प्रकाशित हुई। यहीं से दलित आत्मकथाओं कि यात्रा आरंभ हुई जो आज भी मराठी साहित्य में सबसे अधिक समृद्ध मानी जाती है।

हिन्दी में दलित आत्मकथा लेखन के विषय में डॉ. तेजसिंह का मत है कि, “इसी तरह हिन्दी के दलित साहित्य में आत्मवृत्त लेखन शुरुवात दलित लेखकों के विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित आत्मलेखन के बाद हुए। डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर अपना कोई आत्मवृत्त नहीं लिखा लेकिन एक आत्मकथ्य जरूर लिखा था जो “मेराजीवन” शीर्षक से ‘जनता’ नामक पत्र में 6 नवंबर 1954 के अंक में प्रकाशित हुआ था। निश्चित तौर पर कहा जा सकता है कि, यह किसी दलित चिंतक विद्वान लेखक का पहला आत्मकथा है। “दलित लेखन की प्रेरणा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का आत्मकथ्य और उनके विचार, चिंतन और तत्वज्ञान ही है। दलित आत्मकथा का मूल्य ही डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर कि तत्व मीमांसा है। इससे यही सिद्ध होता है कि, हिन्दी मराठी में दलित लेखन कि शुरुवात दलित आत्मकथाओं से ही हुई है। मराठी आत्मकथाओं ने साहित्य कि दिशा और दशा को एक नया मोड़ दिया, इस संदर्भ में जयप्रकाश कर्दम का मत है। “चेतना मुलक सहित्य सदैव समाज को प्रेरित करता है। यदि आत्मकथा में लेखक द्वारा भोगी गई सामाजिक अनुभूतिया और संघर्ष दर्ज हो तो दलित आत्मकथाए निश्चित रूपसे दलित समाज को शिक्षित होने तथा अपने मानवीय अधिकारों को प्राप्त करने के लिये संघर्ष हेतु प्रेरणा और मार्गदर्शन का कार्य करेगी। “इसमें संदेह नहीं की हिन्दी मराठी दलित आत्मकथा और कथाकारों ने दलित आत्मकथा में किया है। भारतीय

समाज व्यवस्था में आज भी जातिवाद और जागतिक भेदभाव वर्तमान है। जहां दालितों के साथ अत्याधिक अपमानजनक और उपेक्षात्मक व्यवहार किया जाता है। तथा कथित हिन्दु समाज व्यवस्था और वर्ण व्यवस्था में प्राणियों, पशुओं से स्नेह किया जाता है। परंतु दलित समाज से घृणीत व्यवहार किया जाता है। खैरलांजी कि घटना इसका जीता जगता उदाहरण है।

हिन्दी – मराठी दलित आत्मकथा एक समृद्ध और संपन्न साहित्य विधा है। दलित आत्मकथाओं के माध्यम से दलित जीवन और मानसिकता का चित्र उभरकर आया है। पीढियों से किसी कारण से मन के भीतर दबी हुई है। शोषित और पिडीत समाज कि भावनाओं कि मुक्त अभिव्यक्ति आत्मकथा साहित्य में हुई है। दलित समाज में दैन्य, दुःख और दारिद्र्य अपना डेरा डाले हुए है। यद्यपि आज सामाजिक और शैक्षिक क्रांती के कारण दलित समाज में शिक्षा के प्रती आकर्षण पैदा हुआ और दलित समाज में युवा पीढी उच्च शिक्षा प्राप्तकर नित नवीन क्षितज कि ओर बढ़ रहे हैं। शिक्षित दलित लेखकों कि आत्मकथाए अत्याधिक संवेदनशिल और भावपूर्ण सिद्ध हो रही है। दलित जीवन का यथार्थ चित्रण केवल उन तक सीमित न रहकर विश्वस्तर तक पहुंचा है। आत्मकथाओं का यही सबसे प्रभावपूर्व सूत्र है इसके साथ ही हिन्दी-मराठी दलित आत्मकथाओं की सीमा मात्र निवेदन तक न रहकर सीधे-हृद् से भीड जाती है। जीवन के गहन अनुभावों के कारण ही ये आत्मकथन हर पाठक को सोचने के लिय बाध्य करती है। विशेष रूप से मराठी दलित आत्मकथा सीधे पाठकोंके मन मास्तिष्क पर द्या जाति है। इस संदर्भ में ज्योति लांजेवार का कथन है कि, “दलितों के आत्मचरित्र का अर्थ है समाज, संस्कृति, विषमताने उनपर किए गए अन्यायों का तथा दुर्व्यवहारों आलेख पर इस विचार को नजर अंदाज कर उसके भीतर के व्यक्ती और उसके अनुभव इन दोन्हों के बीच हे यह विचार घूमकर रह गया। दलितों के आत्मचरित्र इसलिये व्यक्ती पाते कि उसमें सामाजिक विचारों की जडे जिवंत रूप में जमी हुई है।”

हिन्दी मराठी दलित आत्मकथाओं में आज तक कहीं पर भी चित्रित न किया गया गांव की सीमा के बाहर रहनेवाले दलित जाति का सजीव रेखांकन हुआ है, जो की इसके पूर्व कहीं पर भी साहित्य का विषय नहीं बना। दलित आत्मकथाकारों ने अपने जीवन को ही इसमें प्रस्तुत करते हुए अपनी आत्मा का शोधही किया है। यहां नायक का व्यक्ति जाति जमात के सजीव जीवन अनुभव है। समाज में प्रचलित परंपराएँ, रूढीयां जीवन शैली, आर्थिक व्यवस्था आदि का प्रतिबिंब ही इन आत्मकथाओं में दिखाई देता है।

दलित आत्मकथा के संदर्भ में डॉ. आरती कुलकर्णी का कथन है कि, “खुद समाज की कुदरती समाज व्यवस्था के संदर्भों के साथ बीते युग की परम्पराओं रहस्य ढूढने का प्रयास और वर्जनाओं के पुनर्विचार का भविष्य के विषय में सोचना और स्वसमाज के आत्माभिमान को जागृत करना, उसके साथ ही अन्य समाज की मानसिकता परिवर्ती कर, उन्हें विचार प्रवृत्त करना यही कुल मिलाकर दलित स्वकथन का स्वरूप सामाजिक और साहित्यिक दस्तावेज के समान है।” दलित आत्मकथा जिस समाज का चित्र रेखांकित करती है वह खंडित और विभिन्न अवस्था में हैं।

हिन्दी में दलित आत्मकथाओं का आरंभ मराठी दलित आत्मकथा कि तुलना में कुछ विलंब से हुआ, पर वह हुआ संपूर्ण विद्रोही स्वर में हिन्दी दलित आत्मकथा लेखक विद्रोह और क्रांती का संदेश तो देते हैं, पर वे विद्रोह और क्रांती सामाजिक परिवर्तनद्वारा ही लाना चाहते हैं।

हिन्दी साहित्य में प्रथम दलित आत्मकथा मोहनदास नैमिशराय की ‘अनपे अनपे पिंजरे’ मानी जाती है। इस आत्मकथा के मुल में सामाजिक समस्याएँ वर्ण व्यवस्था की ही उपज है और इसी कारण उसमें वर्ण व्यवस्था की जातिगत विषमता का चित्रण किया गया है। ‘अपने अपने पिंजरे’ में नैमिशराय लिखते हैं कि, “हमारा बोझ भी दोहरा था / एक गरिबी का बोझ और दुसरा जात पात का।” दुःख सिर्फ इतना ही नहीं था बल्की वह कई अलग अलग रूपों में आता है। देशी जागतिक भेदभाव के कारण जो यातनाएँ लेखक ने सही हैं, उसे भोगे हुए सत्य को व्यक्त करते हुए रचनाकार कहते हैं कि, “जाति जैसे आदमी के कंधों पर चढकर यात्रा करती है। हम जहां भी जाते, हमारी जात भी जाती, जात कभी हमसे पीछे नहीं रहती। हमारी बस्तिका नाम भी चमार दरवाजा था।” अनपे जीवन में लेखक को ऐसे अनेक अनुभव आए हैं।

तुलनात्मक दृष्टी से जब हम मराठी की प्रथम दलित आत्मकथा दया पवार द्वार लिखित बलूत जिसका हिन्दी में ‘अछूत’ नाम से अनुवादित हुआ है। इस का अध्ययन जब करते हैं, तो स्पष्ट होता है कि, दया पवार की आत्मकथा अपने परिणाम और प्रभाव में बहुत अधिक शक्तिशाली लगती है। सामाजिक समस्या की दृष्टी से यह रचना बड़ी चर्चित हुई इसमें भी लेखक ने जातिभेद और वर्ण व्यवस्था के कारण दलित समाज पर जो अन्याय और अनाचार किए उसका जीवंत चित्रण किया। नर्क के समान जीवन जीने के लिये अभिशप्त, मृत पशुओं का मांस खाणे के लिये विवश, नंगे, भुखे और तिरस्कृत दलित समाज की यातनाओं का अत्यंत सजीव निरूपण लेखन ने इस रचना में किया है। ‘अछूत’ में जागतिक भेदभाव के प्रसंग अपनी पाठशाला के जीवन अनुभवों को सुनाते हुए दया पवार कहते हैं कि, “गांव के मराठे लडके के साथ हमें बैठने नहीं दिया जाता था। अलग से बैठना पडता था। प्यास लगने पर स्कुल में पाणी नहीं मिलता। सीधे महारवाडा जाना पडता था। पास के चमारवाडे में भी पानी नहीं मिलता। सप्ताह में एकदिन दलित लडकों को ही सारा स्कुल गोबर से पोतना पडता था। लडकों की बारी तय रहती थी। “इस तरह से जातियता के दंश अनेकों, झेलने पडे हैं।

शंकरराव खरात ने अपनी ‘तराल अंतराल’ रचना में धर्म पर आधारित जाति व्यवस्था की निंदा की है। यह रचना सिद्ध करती है, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर के विचरों क्रांतिकारी परिवर्तन समाज व्यवस्था में हुए। एक स्थान पर वे लिखते हैं कि, जिने सवर्णों के यहां कुएँ खोदने का काम, उससे किचड निकालनेका काम महार युवक करते थे, उन्हें काम होने के बाद कुएँ के पानी को छुना भी गुणाह माना जाता था। ऐसी अमानवीय धर्मपर आधारित समाज व्यवस्था का हर तरफ से विरोध आत्मकथाकार करते हैं। सभी आत्मकथाकारों ने धर्मधिष्ठता समाज व्यवस्था का विरोध किया है।

इस तरह हम देखते हैं की हिन्दी और मराठी दोनों भाषाओं की आत्मकथाओं में जिन सामाजिक समस्याओं और प्रश्नों को उठाया है, वो लगभग एक जैसी ही है। क्योंकि अनुभूतियां सभी एक जैसी हैं। पर यह भी हमें स्वीकार करना पडेगा कि स्त्री शिक्षा, धार्मिक आन्दोलन और क्रांतीकारी दृष्टी से मराठी आत्मकथा अधिक समृद्ध और सामर्थ्यशाली है। क्योंकि महाराष्ट्र में दलित आंदोलन की शुरुवात बहुत पहले हुई। साथ ही महाराष्ट्र को महात्मा फुलें, शाहू महाराज और डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जैसे प्रगतिशिल समाज सुधारको और नेतृत्व प्राप्त हुआ। यही अपने आप में बहुत बड़ी उपलब्धि है जिसके सकारात्मक प्रभाव आज भी हमें देखने को मिलते हैं। इसलिये मराठी दलित आत्मकथाएँ अत्याधिक प्रभावपूर्ण और जीवीत लगती हैं

संदर्भ सूची :-

- 1) डॉ. लक्ष्मी सागर वाष्नेय : आधुनिक हिन्दी साहित्य पृष्ठ क्र. 15 डॉ. संजय नवले की पुस्तक हिन्दी दलित आत्मकथासे
- 2) जय कर्दम – हिन्दी दलित आत्मकथा के दो शब्द से उदभूत
- 3) ज्योति लांजेवार : समकालीन साहित्य प्रवृत्ति और प्रवाह पृ. 286
- 4) डॉ. आरती कुलकर्णी : दलित स्वकथन – साहित्य रूप पृ. 32
- 5) मोहनदास नैमिशराय : अपने अपने पिंजरे पृ. 25
- 6) मोहनदास नैमिशराय : अपने अपने पिंजरे पृ. 12
- 7) दया पवार : अद्भूत पृ.

गडचिरोली जिल्ह्यातील कामगारांचे प्रमाण: निरंतर विकास

प्रा. डॉ. गणेश एल. धोटे^१ डॉ. जे. व्ही. दडवे^२ प्रा. डॉ. के. वाय. ठाकरे^३

^१सहा. प्राध्यापक, य. च. कला, वाणिज्य व विज्ञान, महा. लाखांदूर

^२प्राचार्य, य. च. कला, वाणिज्य व विज्ञान, महा. लाखांदूर

^३भूगोल विभाग प्रमुख, य. च. कला, वाणिज्य व विज्ञान, महा. लाखांदूर

सारांश : लोकसंख्येची लोकांची गुणवत्ता ही लोकसंख्येवरून नाही तर त्यांच्या व्यावसायिक संरचनेवरून ठरते. एकूण लोकसंख्येत कामगारांचे प्रमाण यावरून लोकसंख्येची गुणवत्ता, आर्थिक स्थिती व राहणीमानाचा दर्जा लक्षात येतो. एकूण लोकसंख्येत काम करणाऱ्यांचे प्रमाण कमी असते म्हणजे अशी लोकसंख्या अविकसीत व मागासलेली समजली जाते. तर कामगारांचे प्रमाण अधिक असल्यास, लोकसंख्या आर्थिक दृष्ट्या सक्षम समजली जाते. अशा वेळी प्रदेशाचा विकास अधिक झपाट्याने होत असतो विकास होत असतांना निरंतर विकास महत्वाचा ठरतो.

महाराष्ट्राच्या पूर्व सिमेवर गडचिरोली हा जंगलव्याप्त व दुर्गम जिल्हा असून बहुतांश लोक शेती या व्यवसायात गुंतलेली आहे. जिल्ह्यात कृषी योग्य क्षेत्र 17.93 टक्के असून, जिल्ह्यात शेतीकरीता जलसिंचनाच्या फारशा सुविधा उपलब्ध नाही. जिल्ह्यात विपूल प्रमाणात वने जल व खनिज संपत्ती असून मोठा उद्योग नाही. त्यामुळे कामगारांचे प्रमाण तुलनेने कमी आढळून येते. याचा परिणाम विकासावर होऊन, बरीच लोकसंख्या दारिद्र्य रेषेखाली जिवन जगत आहे. त्यांचे आर्थिक उत्पन्न वाढवितांना निरंतर विकासाची संकल्पना कायम ठेवणे आवश्यक आहे.

बीजसंज्ञा : लोकसंख्या, लोकसंख्येची व्यावसायिक संरचना, गतिशिलता, आर्थिक विकास, व निरंतर विकास.

प्रस्तावना : सर्वसाधारणपणे लोकसंख्येचा अभ्यास, लोकसंख्येचे वर्गीकरण, वितरणानुसार अंतर, त्यांचे गुणधर्म, लोकसंख्या वाढत व्यावसायिक संरचना, लिंगगुणोत्तर व लोकसंख्येची घनता यानुसार केले जाते. यावर भौगोलिक व ऐतिहासिक घटकांचा परिणाम पडत असतो. (Premi K. & P. Tyagi) आधुनिक काळात लोकसंख्येच्या संरचनेत झपाट्याने बदल होत आहे. तो बदल म्हणजे लोकसंख्येतील व्यावसायिक संरचना होय. लोक वेगवेगळ्या व्यवसायात गुंतलेली असतात. त्यांची नोंद जणगणना पुस्तिकेत कामगार अशी आहे. विविध व्यवसायात असणाऱ्या कामगारांच्या संख्येवरून लोकांची आर्थिक स्थिती समजू शकते. जेथे कामगारांचे प्रमाण जास्त अशी लोकसंख्या आर्थिक दृष्ट्या प्रबळ समजली जाते. व अशी लोकसंख्या विकासाचे सूचक मानले जाते. गडचिरोली जिल्ह्यातील एकूण लोकसंख्येत कामगारांचे प्रमाण याचा अभ्यास करतांना हाच दृष्टीकोण येथे ठेवण्यात आलेला आहे. लोकसंख्येतील कामगारांच्या प्रमाणावरच आर्थिक विकास अवलंबून असतो.

परिकल्पना : गडचिरोली जिल्ह्यांचा बहुतांश भाग जंगलमव्याप्त असून शेती करीता अल्प क्षेत्र उपलब्ध आहे. याशिवाय मोठी लोकसंख्या ग्रामीण भागात वास्तव्याला आहे. येथे व्यावसायिक दृष्ट्या कामगारांचे प्रमाण कमी आहे. त्यामुळे येथिल लोकसंख्या आर्थिक दृष्ट्या मागासलेली आढळून येते. यांचा परिणाम जिल्ह्याच्या विकासावर झालेला दिसून येतो.

अभ्यासाची उद्दिष्ट्ये : गडचिरोली हा वनव्याप्त आदिवाशी बहुल जिल्हा आहे. येथिल एकूण लोकसंख्येत कामगारांचे प्रमाण, व यांचा विकासावर व लोकांच्या आर्थिक बाबींवर तसेच निर्भरतेवर परिणाम झालेला आहे. याचा अभ्यास करून निरंतर विकास हा उद्दिष्टे समोर ठेऊन हा अभ्यास करण्यात आलेला आहे.

संशोधनाची पध्दती : प्रस्तूत अभ्यास हा पूर्णतः द्वितीयक माहितीवर आधारित आहे. जणगणना माहिती पुस्तिका, आर्थिक व सामाजिक समालोचन, विविध शासकिय कार्यालयामधून आवश्यक माहिती मिळवून, वर्गीकरण आणि विश्लेषण करून विश्लेषण केलेले आहे.

अभ्यास प्रदेश : महाराष्ट्र राज्याच्या पूर्व सिमेवर गडचिरोली जिल्हा असून 26 ऑगस्ट 1982 ला चंद्रपूर जिल्ह्याचे विभाजन होऊन गडचिरोली हा नविन जिल्हा अस्तित्वात आला. महाराष्ट्रातील लोकसंख्येच्या दृष्टीने हा सर्वात लहान जिल्हा असून आदिवासी जिल्हा म्हणून ओळखला जातो.

या जिल्ह्याचे भौगोलिक स्थान 18°41'उत्तर ते 20°50' उत्तर अक्षवृत्ताच्या दरम्यान आहे. आणि 79°46' पूर्व ते 80°55' पूर्व रेखावृत्ताच्या दरम्यान आहे. 2011 च्या जनगणनेनुसार या जिल्ह्याची लोकसंख्या 10,72,942 इतकी आहे. यापैकी 92% ग्रामीण लोकसंख्या आहे. सध्या या जिल्ह्यात 12 तालूके आहेत. या जिल्ह्याचे भौगोलिक क्षेत्रफळ 14,915 चौ. कि. मी. इतके आहे.

जिल्ह्यात भूपृष्ठाच्या बाबतीत बरीच विविधता आहे. जिल्ह्याचा उत्तर व पूर्व भाग डोंगराळ स्वरूपाचा असून घनदाट जंगलाने व्याप्त आहे. येथे समुद्र सपाटी पासून उंची 300 मीटर पेक्षा कमी आहे. जिल्ह्यात वैनगंगा, प्राणहिता, व इंद्रावती बारमाही नद्या आहेत. जिल्ह्यात उष्णकटिबंधीय मान्सून हवामान असून उन्हाळा, पावसाळा, व हिवाळा हे तीन ऋतू स्पष्ट जाणवतात.

जिल्ह्यात भरपूर प्रमाणात वने, जल व खनिज संपत्ती असून जिल्ह्यात मोठा उद्योग स्थापन झालेला दिसून येत नाही. सन 2011 नुसार जिल्ह्यात कामगारांची संख्या 6,15,432 इतकी असून हे प्रमाण 57.35 टक्के एवढे आहे. यात अल्पकालीन कामगार वगळता मुख्य कामगारांची संख्या 3,92,886 एवढी असून हे प्रमाण 36.60 टक्के एवढे आहे.

जिल्ह्यातील कामगारांचे अभिक्षेत्रिय वितरण : (2001-2011)

जनगणना निर्देश ग्रंथ 2001 व 2011 नुसार लोकसंख्येतील एकूण कामगारांचे मुख्यकामगार, अल्पकालीन कामगार, व कामगार नसलेले असे लोकसंख्येचे वर्गिकरण केलेले आहे. (सारणी क्र.1)

जनगणना पुस्तिकेनुसार मुख्य कामगार म्हणजे त्यांना वर्षातून सहा महिने ते 183 दिवस काम मिळतो त्याचा समावेश यात होतो. तर अल्पकालीन कामगार हे काही दिवसच (अल्पकाळ) शेती व इतर ठिकाणी काम करतात. तर कामगार नसलेले यामध्ये घरगुती काम, विद्यार्थी, वयोवृद्ध (60 वर्षावरील), सेवानिवृत्त व्यक्ती, शिक्षा मागणारे यांचा समावेश होतो.

एकूण कामगार लोकसंख्येचे वितरण : (2001-2011)

जिल्ह्यातील लोकसंख्येत एकूण कामगारांचे प्रमाण 2001 नुसार 51.2 टक्के इतके होते. ते 1991 च्या तूलनेत 3.8 टक्केने जास्त आढळते. यावर्षी अभिक्षेत्रिय भिन्नता मोठ्या प्रमाणात आढळते. एटापल्ली (58.4 टक्के), व भामरागड (58.6 टक्के) या तालुक्यात कामगारांचे प्रमाण सर्वाधिक व आश्चर्यकारक दिसून येते. तर सर्वात कमी कामगारांचे प्रमाण अहेरी (48.6 टक्के) तालुक्यात आढळते.

2011 नुसार जिल्ह्यात एकूण कामगारांचे प्रमाण 57.38 टक्के एवढे होते. यात 2011 च्या तूलनेत 6.1 टक्केने वाढ झाली. यावर्षी बहुतांश तालुक्यात एकूण कामगारांचे प्रमाण वाढलेले दिसून येते. सिरोंचा तालुक्यात (59.4 टक्के) कामगारांचे प्रमाण सर्वाधिक होते. तर सर्वात कमी कामगारांचे प्रमाण अहेरी तालुक्यात (48.3 टक्के) होते. जिल्ह्याच्या पूर्व भागात कामगारांचे प्रमाण बरेच जास्त दिसून येते.

मुख्य कामगारांचे वितरण (2001-2011) : 2001 या वर्षी जिल्ह्यात मुख्य कामगारांचे प्रमाण 35.3 टक्के इतके होते. तर 2011 या वर्षात यात 1.3 टक्केने वाढ झालेली दिसून येते. मुख्य कामगारांच्या प्रमाणात झालेली वाढ नगण्य स्वरूपाची असून यांचे मुख्य कारण म्हणजे जिल्ह्यात नविन उद्योगांची निर्मिती नाही. त्यामुळे लोकांना रोजगाराच्या संधी उपलब्ध नाही, मिळेल तो व्यवसाय करणे, त्यामुळे कामगारांच्या संख्येत नगण्य स्वरूपाची वाढ

आढळते. यावर्षी भामरागड तालुक्यात (47.3 टक्के) इतके होते तर सर्वात कमी प्रमाण मूलचेरा तालुक्यात (28.5 टक्के) इतके होते.

2011 या वर्षात जिल्ह्यात मुख्य कामगारांचे प्रमाण 36.6 टक्के इतके होते. यावर्षात सर्वाधिक प्रमाण भामरागड (47.9 टक्के) तालुक्यात होते. तर सर्वात कमी प्रमाण मुलचेरा (26.0 टक्के) तालुक्यात होते. सन 2011 च्या तूलनेत सर्वच तालुक्यात कामगारांच्या प्रमाणात वाढ झालेली असली तरी मुलचेरा तालुक्यात कामगारांच्या संख्येत - 2.4 टक्के ने घट झालेली दिसून येते.

सारणी क्र. 1, गडचिरोली जिल्ह्यातील कामगार व कामगार नसलेल्या लोकसंख्येचे प्रमाण 2001-2011

अ.क्र.	तहसील	एकूण कामगार प्रमाण (टक्केवारीत)		मुख्य कामगार प्रमाण (टक्केवारीत)		कामगार नसलेली लोकसंख्येचे प्रमाण (टक्केवारीत)	
		2001	2011	2001	2011	2001	2011
1	देसाईगंज	50.0	52.1	39.4	34.5	50.0	47.9
2	आरमोरी	52.1	58.6	34.3	36.2	47.9	41.4
3	कुरखेडा	44.5	57.2	33.7	33.8	55.5	42.8
4	कोरची	50.7	57.8	32.0	33.8	49.3	42.2
5	धानोरा	52.1	58.5	32.5	39.9	47.9	41.5
6	गडचिरोली	46.5	50.5	32.7	35.44	53.5	49.5
7	चामोर्शी	50.7	54.7	36.1	38.0	49.3	45.3
8	मूलचेरा	49.8	49.5	28.5	26.1	50.2	50.5
9	एटापल्ली	58.4	54.7	43.1	39.6	41.6	45.3
10	भामरागड	58.6	58.3	47.3	47.9	41.4	41.7
11	अहेंरी	48.6	48.3	31.8	33.9	51.4	51.7
12	सिरोंचा	52.0	59.4	37.6	41.5	48.0	40.6
एकूण जिल्हा		51.2	57.3	35.3	36.6	47.6	42.7

स्त्रोत : गडचिरोली जिल्हा, जणगणना पुस्तिका (C.D.) 2001 व 2011.

कामगार नसलेले लोकसंख्येचे वितरण : (2011-2011)

कामगार नसलेली लोकसंख्या कोणत्याही व्यवसायात असते. यात साधारणपणे 18 ते 60, व 60 पेक्षा जास्त वयोगटातील लोकांचा समावेश असतो. त्यामूळे यांचा प्रत्यक्ष कामात सहभाग नसतो. अशा लोकसंख्येला अवलंबित/निर्भरता लोकसंख्या असे म्हणतात.

जिल्ह्यातील अवलंबितेचा गुणांक किती आहे. हे पाहण्याकरीता पुढील सूत्राचा वापर केलेला आहे. मिळालेले गुणांक सारणी क्र. २ मध्ये दिलेले आहे.

सुत्र :

$$\begin{aligned}
 \text{अवलंबितेचा गुणांक} &= \frac{\text{प्रत्यक्ष कामगार नसलेली लोकसंख्या}}{\text{एकूण कामगारांचे प्रमाण}} \times 100 \\
 &= \frac{4,05772}{615432} \times 100 \\
 &= 0.65 \times 100 \quad (= 65.93\%)
 \end{aligned}$$

वरिल सुत्राच्या आधारे संपूर्ण जिल्हयाकरीता अवलंबितेचा गुणांक 65.93 टक्के इतका आहे. यावरून असे लक्षात येते की, अवलंबितेचा गुणांक जेवढा जास्त तेवढी निर्भरांची संख्या अधिक समजली जाते. व अवलंबितेचा गुणांक जेवढा कमी तेवढी निर्भरांची संख्या कमी समजली जाते. कमी निर्भरता गुणांक असणे म्हणजे प्रगतीचे लक्षण समजले जाते. जिल्हयाचा हा गुणांक 65.93 टक्के असून निर्भरांचे प्रमाण जास्त आहे. त्यामूळे अवलंबिताचे प्रमाण अधिक आहे. 2011 या वर्षात अहेरी तालुक्यात हा गुणांक (106.92 टक्के) सर्वाधिक, तर गडचिरोली तालुक्यात लोकसंख्या गुणांक (51.33 टक्के) सर्वात कमी आढळते. यावरून असा निष्कर्ष निघतो की जिल्हयाच्या पूर्वे कडील आदिवाशी तालुक्यात हा गुणांक जास्त असून अवलंबिताचे प्रमाण अधिक, तर पश्चिमेकडील तालुक्यात हा गुणांक कमी असून अवलंबिताचे प्रमाण कमी आढळते. यांचा परिणाम आर्थिक विकासावर झालेला दिसून येतो.

सारणी क्र.2, गडचिरोली जिल्हयातील अवलंबितेचा गुणांक, सन 2001 व 2011

अ.क्र.	तालूके	एकूण कामगार		कामगार नसलेली लोकसंख्या		अवलंबितेचा गुणांक (टक्केवारीत)	
		2001	2011	2001	2011	2001	2011
1	देसाईगंज	36,619	43,559	23,151	22,363	63.22	51.33
2	आरमोरी	31,188	56,937	43,482	40,160	139.41	70.53
3	कुरखेडा	26,261	49,291	36,052	36,782	137.28	74.62
4	कोरची	13,027	24,737	20,077	18,074	154.11	73.06
5	धानोरा	25,113	48,371	37,069	34,327	147.60	70.96
6	गडचिरोली	42,478	73,804	39,579	38,106	93.17	51.63
7	चामोर्शी	59,793	97,969	81,592	81,151	136.45	82.83
8	मूलचेरा	11,308	22,673	19,891	23,114	175.90	101.94
9	एटापल्ली	30,451	44,701	29,400	37,012	96.54	82.79
10	भामरागड	14,992	21,208	13,121	15,117	87.52	71.27
11	अहेरी	32,958	56,538	53,329	60,454	161.80	106.92
12	सिरोंचा	26,249	44,449	33,511	30,307	127.66	68.18
	एकूण	3,50,437	6,15,432	4,30,254	4,05,772	122.77	65.93

स्रोत : गडचिरोली जिल्हा जनगणना पुस्तिका (C.D.) 2001 व 2011

निष्कर्ष : गडचिरोली जिल्हयात 2001 च्या तुलनेत 2011 ला एकूण कामगारांचे व मुख्य कामगारांच्या प्रमाणत क्रमशः 6.1 व 1.3 टक्केने वाढलेली आहे तर कामगार नसलेली लोकसंख्या 47.6 टक्केवरून व 42.7 टक्के वर असलेली आहे. अर्थातच कामगाराच्या संख्येत 4.9 टक्केने वाढ झालेली आहे. ही बाब विकासाची सूचक आहे. तसेच जिल्हयातील लोकांची आर्थिक स्थिती पाहण्या करीता अवलंबितेचा गुणांक काढून तो 65.93 टक्के बराच जास्त आहे. यावरून जिल्हयात अवलंबितेचे प्रमाण जास्त आहे. त्यामूळे लोकांची आर्थिक स्थिती फारशी चांगली दिसून येत नाही. याचा परिणाम विकासावर झालेला आहे.

उपाययोजना :

- 1) जिल्हयात रोजगाराच्या संधी शासकीय योजनांद्वारे उपलब्ध करून दिल्यास जंगल तोड कमी होण्यास मदत होईल.
- 2) वर्तमान स्थितीतील शासकीय योजनांची माहिती या भागातील कामगारांना पूर्णपणे माहिती नाही. त्यांचे हक्क व माहिती यांची जाणीव करून देणे अनिवार्य आहे.

- 3) जिल्ह्यात कामगारांचे प्रमाण वाढविण्याकरीता विपूल संसाधनाच्या प्रदेशात नविन उद्योगधंद्याची निर्मिती होणे गरजेचे आहे. त्यामुळे कामगारांचे प्रमाण वाढून लोकांची आर्थिक स्थिती सुधारण्यास मदत होईल. त्यामुळे जिल्ह्याच्या विकासाला चालना मिळेल. यातून निरंतर विकास साधता येईल.

संदर्भ ग्रंथ :

- 1) गडचिरोली जिल्हा जणगणना निर्देश ग्रंथ (C.D.) 2001 व 2011
- 2) Premi, M. K. & Tyagi, R. P. (1985) "Distribution and growth of population" Indian Geo. Vol. Population Geography. Heritage publication, P-7.
- 3) Chandana, R. C. (1980) "Introduction population Geography" Kalyani Publication, New Delhi.
- 4) Mehata's (1967) "India Rural Female working Fource and it's ocepational structure" A Geographical Analysis the India Geo. Vol. 12 No. 1 & 2.
- 5) Dadvi J. V. (2002) : "गडचिरोली जिल्ह्यातील कृमीचे वर्तमान सरक्षण व भवितव्य : एक भौगोलिक अभ्यास"
- 6) Dhote, G. L. (2011), गडचिरोली जिल्ह्यातील लोकसंख्या वैशिष्ट्यांचे कालिक व अभिक्षेत्रिय विश्लेषण : एक भौगोलिक अभ्यास.

स्त्रियांची सामाजिक व राजकीय स्थिती

प्रा.डॉ.प्रदीप शा. ढोले

इतिहास विभाग प्रमुख, स्व.पंचफुलाबाई पावडे कला व वाणिज्य महिला महाविद्यालय, वरुड जि.अमरावती

E-Mail – drpradeepdhole@gmail.com

ABSTRACT

प्राचीन काळापासून समाजात चालत आलेल्या अनिष्ट चालीरीती, रूढी, परंपरा यामुळे शतकानुशतके पुरुषवर्गाने स्त्रीवर्गावर सातत्याने अत्याचार केले आहेत. पितृसत्ताक कुटुंब पद्धती अंगिकारलेल्या समाजाने स्त्रियांवर सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक गुलामगिरी लादण्याचा प्रयत्न केला आहे. स्वातंत्र्यपूर्व काळापर्यंत समाजात बालविवाह प्रथा प्रचलित होती. वयाने लहान मुलींना कधी कधी तर वृद्ध व्यक्ति सोबत विवाह करण्यास भाग पडले जात असे. त्यातूनच मग बालविधवा ही समस्या निर्माण झाली. अगदी तरुण वयात स्त्रियांना सती जावे लागले. अनेक स्त्रियांना पती निधनानंतर त्यांचे केस कापले जाऊन विद्रूपतेला सामोरे जावे लागले. विधवा स्त्रियांना त्या कितीही श्रीमंत घरातील असतील तरी झोपडीत अलिप्तपणे अपमानास्पद जीवन जगावे लागले. पुरुषांनी कितीही लग्न केले तरी चालतील पण स्त्रियांना पुनर्विवाह करण्यास बंदी घातली. वर्षानुवर्षे समाजाने स्त्रियांवर जाचक बंधने लादल्याने स्त्रियांना मानसिक गुलामगिरीची सवय लागली. पण विसाव्या शतकात भारतातील अनेक समाजसुधारकांनी स्त्रियांच्या सामाजिक व आर्थिक स्थितीत सुधारणा करण्यासाठी आटोकाट प्रयत्न केल्याने स्त्रीवर्गात मोठ्या प्रमाणात जागृती झाली. अनेक स्त्रियांनी उच्च शिक्षण घेऊन अनेक क्षेत्रातील उच्च पदे काबिज केली. इतकेच नव्हे तर स्त्रीवर्गात राजकीय जागृती होऊन त्यांनी राजकारणात भाग घेण्यास सुरुवात केली. आता तर स्त्रियांना आरक्षणामुळे सत्ताप्राप्त करण्याचा मार्ग मोकळा झाला आहे.

आपल्या पुरुषप्रधान संस्कृतीने नेहमीच स्त्रियांना हिन लेखून पशुवत वागणूक दिली आहे. वर्षानुवर्षे स्त्रियांवर परंपरेच्या नावाखाली क्रूर अत्याचार केले गेले आहेत. काही अपवादात्मक प्रसंग वगळता पुरुषांनी कधीच स्त्रियांना आपल्या बरोबरीचे स्थान दिले नाही. संधी अभावी आत्मविश्वास व आत्मनिर्भर रहित स्त्रियांना आपल्या समाजात कायम दुय्यम स्थान मिळाले आहे. लहानपणापासून 'पती हाच परमेश्वर अशी शिकवणूक मिळालेल्या मुली व स्त्रियांनी पुरुषांना श्रेष्ठत्व देण्याची व स्वतःकडे कनिष्ठत्व घेण्याची सवय लावून घेतली आहे. अर्थातच समाजाने स्त्रीवर्गाला शिक्षण व व्यवसायाच्या संधी नाकारून समाजाची प्रगती खुंटविली आहे. मुली जन्माला आल्यापासूनच मुलींनी विशिष्ट कपडे घालू नये, मोठ्याने बोलू नये अशी बंधने घातल्याने त्या भावी आयुष्यात दुर्बल होत आहेत. स्वातंत्र्योत्तर काळात अनेक समाजसुधारकांनी स्त्री सुधारणांकडे लक्ष दिल्याने स्त्रियांना शिक्षणाची संधी मिळून त्या नोकरी देखील करत आहेत. तद्वतच भारतीय राज्यघटनेने सर्व स्त्री – पुरुषांना सर्व क्षेत्रात समान हक्क आणि समान संधी प्रदान केल्याने तसेच स्त्रियांना आरक्षण दिल्याने स्त्रियांना राजकीय संधी प्राप्त झालेल्या आहेत. पण जर भारताच्या पहिल्या निवडणुकीपासून आतापर्यंतच्या निवडणुकीचा विचार केला तर निवडून आलेल्या महिला खासदारांच्या संख्येत फार वाढ झालेली दिसत नाही. त्याच प्रमाणे महाराष्ट्रातील विधानसभा निवडणुकांचा विचार केला तर पहिल्या निवडणुकीपासून आतापर्यंत झालेल्या निवडणुकीत निवडून आलेल्या महिला आमदारांची संख्या जवळ जवळ कायम आहे. भारतीय राजकारणात पंतप्रधान, राष्ट्रपती, राज्यपाल असे महत्त्वाची पदे मिळूनही बहुतांश स्त्रीवर्गाला राजकीय संधी प्राप्त झाल्याचे दिसून येत नाही.

स्त्रियांची सामाजिक स्थिती :-

स्वातंत्र्यपूर्व काळातील स्त्रियांच्या तुलनेत आधुनिक काळातील स्त्रियांच्या सामाजिक स्थितीत आमुलाग्र बदल झाला आहे. राज्यघटनेने दिलेले अधिकार, शैक्षणिक संधी, सोयी सवलती या मुळे स्त्रियांना नोकरी तथा व्यवसाय करण्याची संधी प्राप्त होऊन त्या स्वावलंबी होऊन स्वतःच्या पायावर उभ्या आहेत. आधुनिक काळात स्त्रियांनी सामाजिक, आर्थिक, राजकीय क्षेत्रात फार मोठी प्रगती केली आहे. भिन्न भिन्न काळात स्त्रियांचा कौटुंबिक, सामाजिक दर्जा वेगवेगळा होता हे निदर्शनास येते.

वेदकाळ, मध्ययुगीन काळ व ब्रिटीश राजवटीतील स्त्रियांची स्थिती :-

प्राचीन संस्कृतीमध्ये प्रारंभीच्या काळात मातृहक्क मान्य होता आणि स्त्रियांचा दर्जा निश्चितच उच्च होता. स्त्रियांना विवाहाबाबत स्वातंत्र्या होते व बालविवाहाची पद्धत अस्तित्वात नव्हती. एक पत्नीत्व व बहुपत्नीत्व अशा दोन्ही पद्धती रूढ होत्या. पुरुषाप्रमाणेच स्त्रिया देखील यज्ञात सहभाग घेऊ शकत होत्या. मुलींना शिक्षणाचा अधिकार असून त्यांचे ब्राह्मवादिनी व सधोवाधू असे दोन वर्ग पाडले जात. उपनिषदात देखील स्त्रिया न्यायमंदिरात महत्त्वाच्या भूमिका पार पडतानाचे उल्लेख आहेत. महाभारत काळात देखील स्त्रियांना स्वातंत्र्य असल्याचे निदर्शनास येते. पण रामायणात स्त्रियांना फार जास्त स्वातंत्र्य असल्याचे दिसून येत नाही. इ. स. पूर्व ४०० ते इ. स. १०० वर्षांपर्यंतच्या काळात स्त्रियांवर अनेक बंधने आली. इ. स. पूर्व २०० ते इ. स. १०० पर्यंतचा काळ मनुस्मृतीचा मानला जात असून या काळात स्त्री जन्मापासून स्त्रीच्या मृत्यूपर्यंत तिचे जीवन नियंत्रित करणाऱ्या अनेक रूढी अस्तित्वात आल्या.^१

मध्ययुगीन काळात सती प्रथेला समाज मान्यता मिळाल्याचे दिसून येते. थोर समाज सुधारक राजा राममोहन रॉय यांनी सर्वात प्रथम सतीच्या चालीला विरोध करून तसेच रूढीच्या आणि परंपरांच्या ढोंगाखाली अडकलेल्या स्त्रियांना बंधनमुक्त करून स्त्री जातीची क्रूर थटा त्यांनी रोखली.^२ तसेच मध्ययुगीन काळात पडदा पद्धत अस्तित्वात आली. सम्राट अकबराने स्त्रियांच्या सामाजिक प्रश्नाचा उदारपणे विचार करूनही स्त्रियांच्या सामाजिक स्थितीत फारसा बदल झाला नाही. मनुस्मृतीत सांगितलेला 'न स्त्री स्वातंत्र्यमहीती' हा दृष्टिकोन कायम राहिला. ब्रिटिश राजवटीत निश्चितपणे स्त्रियांच्या स्थितीत सुधारणा होण्यास प्रारंभ झाला. सुरुवातीला नियमाचे पालन, रूढी-परंपरा कडकपणे पाळण्यात येत होत्या. पण नंतरच्या काळात समाजसुधारकांनी सामाजिक दृष्ट्या व सांस्कृतिकदृष्ट्या स्त्रियांवरच्या अन्यायाविरुद्ध लढा दिला. नंतर राजकीय व कामगार क्षेत्रात स्त्रियांच्या सहभागाला सुरुवात झाली. स्त्री मुक्ती चळवळ पुढे आली. कायद्यात बदल झाले. त्यामुळे स्त्रियांच्या सामाजिक स्थितीत सुधारणा होत गेली.^३

स्त्रियांच्या सामाजिक स्थितीबद्दल विचारवंतांची मते :-

एकूण लोकसंख्येच्या अर्धी लोकसंख्या स्त्रियांची असते. त्यामुळे स्त्रिया स्वावलंबी, आत्मनिर्भर व सुशिक्षित असणे गरजेचे आहे. समाजसुधारकांनी स्त्रियांच्या विचारात, आचरणात, विधवांच्या, असहाय्य स्त्रियांच्या स्थितीत सुधारणा करण्याचा प्रयत्न केला. अनेक मुली सुशिक्षित होऊन नोकरी करू लागल्याने त्यांच्या आर्थिक स्थितीत सुधारणा होण्यास मदत झाली. त्याचप्रमाणे अरुंधती आपटे यांच्या मते स्त्रियांनी व्यवहार क्षेत्रात पुरुषांशी स्पर्धा करणे इष्ट व आवश्यक आहे. त्यांच्या मते पुरुषांपेक्षा स्त्रिया ह्या बुद्धिमान, हुशार, स्वार्थत्यागी, सहनशील व सोशिक असतात. त्यांनाही स्वदेशप्रेमाची जाणीव असते. पुरुषांप्रमाणे आपणही सामाजिक कार्य करून देशाची प्रगती करावी व वेगवेगळ्या कार्यक्षेत्रात भाग घेऊन आपली चमक व बुद्धिमत्ता लोकांना दाखवून द्यावी अशी त्यांची इच्छा असते. तसेच स्त्रिया ह्या धोरणी व समयसूचक असतात. त्यामुळे त्या कोणत्याही प्रसंगाला न घाबरता आत्मविश्वासाने संकटास तोंड देऊ शकतात.^४

न्यायमूर्ती रानडे यांच्या मते सामाजिक सुधारणा करताना व्यक्तीचे हृदय परिवर्तन होणे आवश्यक आहे. बालविवाह, सक्तीचे वैधव्य, आंतरजातीय विवाह, चारित्र्याचे पावित्र्य आदी गोष्टींमध्ये सुधारणा करण्यासाठी जुनाट रूढी, अनिष्ट परंपरा यांना विरोध करून नवविचारांना संजीवनी देणे गरजेचे आहे. न्यायमूर्ती रानडे यांनी स्वतः स्त्री शिक्षण, प्रौढविवाह, पुनर्विवाह, भिन्नजातीची समानता आदी कार्यात पुढाकार घेऊन सुधारणांचा पुरस्कार केला. समाजात मनःक्रांती घडवून आणणे, समाजाच्या वृत्ती पालटून टाकणे तथा नवनिर्माण करण्याचे कार्य रानडेनी केले. न्यायमूर्ती रानडे यांच्या मते, 'स्त्रियांना स्वातंत्र्य देणे म्हणजेच समुद्रापलीकडेचे अनुकरण करणे नव्हे. असा आरोप करणाऱ्यांना आपल्या पूर्वतिहासाचे स्मरण नाही. त्यांच्या जुन्या उज्वल काळाचा खरा अभिमान नाही'.^५

महात्मा ज्योतिराव फुले यांच्यामुळे भारतीयांना विविध क्षेत्रातील ज्ञानार्जन करण्याची संधी मिळाली. त्यांनी १ जानेवारी १८४८ रोजी पुणे येथे मुलींची पहिली शाळा सुरू करून भारतीयांना शैक्षणिक स्वातंत्र्य देऊन स्त्रियांच्या शैक्षणिक प्रगतीस प्रारंभ केला.^६ रमाबाई रानडे यांनी सुद्धा स्त्रियांना सक्तीचे प्राथमिक शिक्षण व स्त्रियांना मतदानाचा अधिकार यांची मागणी करून सामाजिक चळवळ उभारली. मार्च ते जुलै १९२१ पर्यंत रमाबाई रानडे यांच्या नेतृत्वाखाली कायदे मंडळाच्या बाहेर पाच महिने आंदोलन लढविले गेले. रमाबाई रानडे यांच्या प्रयत्नामुळे स्त्री मताधिकारचा हा ठराव मंजूर झाला.^७

भारतीय महिलांची राजकीय स्थिती :-

अनेक समाजसुधारकांचे प्रयत्न तथा भारतीय राज्यघटनेद्वारा प्राप्त अधिकारामुळे स्त्रियांना शिक्षणाच्या संधी प्राप्त झाल्याने स्त्रियांच्या सामाजिक स्थिती बरोबरच राजकीय स्थितीत सुद्धा सुधारणा होत आहे. प्रसारमाध्यमेही स्त्रियांना सन्मान देण्याचा प्रयत्न करीत आहेत. प्रसारमाध्यमेही मुलगी व मुलगा हा भेदभावाचा दृष्टीकोन कमी करण्याची,

समानतेची, अनुकूल वातावरण निर्मिती करत आहेत.८ भारतीय स्त्रियांनी वेदकाळ, महाभारतकाळ, मध्ययुगीन काळ, ब्रिटिशराजवट, स्वातंत्र्यचळवळी, स्वातंत्र्यपूर्व काळ, स्वातंत्र्योत्तर काळ अशा भिन्न कालखंडातील राजकारणात आपल्या कर्तबगारीचा ठसा उमटविला आहे.

प्राचीन काळ व मध्ययुगीन काळात स्त्रिया यांचे राजकारणातील योगदान :-

अंदाजे इ. स. पूर्व २००० ते १४०० हा आर्यांच्या आगमनाचा काळ मनाला जातो. वेद हे आर्यांचे पवित्र ग्रंथ. वेदांसारख्या अतिप्राचीन संहितात स्त्रियांना सन्माननीय स्थान दिल्याचे उल्लेख आहेत. जैमिनीच्या पूर्वमीमांसेनुसार स्त्रीला वारसाधिकार व यज्ञाधिकार दिले जात असत. ऋग्वेदातील मंत्रानुसार

‘अग्र एती युवतिरह्याणा ॥ (ऋग्वेद ७० – ८० – २) वा

अधिरंथ यदजयत महस्त्रम (ऋग्वेद १० – १० – २ – ३)

यावरून राजकारण स्त्रियांचे स्थान निदर्शनास येते.९ वेदकालीन स्त्रियांना राजकारणात आपले मत मांडण्याचा अधिकार होता. युद्धामध्ये राजे मरण पावल्यानंतर जर त्यांना पुत्र नसेल तर त्यांच्या मुलीला राज्यावर बसवावे, असे भीष्माने युधिष्ठिराला सांगितल्याचे महाभारतात वचन आहे.१० उपनिषद काळात गार्गी, मैत्रेयी यांच्या नावाचा उल्लेख आलेला आहे. पुराणकाळात कैकयी, मंथरा राजनीतिसंबंधित होत्या. तर महाभारत काळात द्रौपदी, कुंती या राजनीतीच्या केंद्रस्थानी होत्या. प्राचीन काळाचा विचार केला तर चौथ्या शतकात दुसऱ्या चंद्रगुप्ताने त्याची मुलगी प्रभावती हिला आपल्या साम्राज्यातील एका भागाचे मुख्य बनविले होते. सातव्या शतकात चालुक्य वंशातील राजकुमारी विजय भट्टारिकासुद्धा राजनीती मध्ये होती. महाराणी दिव्याने इ. स. ९५८ ते इ. स. १००३ पर्यंत काश्मिरवर अनेक वर्षे सत्ता केल्याचा उल्लेख आढळतो.११

मध्ययुगीन कालखंड इ. स. १२०६ ते १५२६ असा समजला जातो. या कालखंडात मुसलमानांच्या आक्रमणानंतर पडदा पडत अस्तित्वात येऊन स्त्रियांवर अनेक बंधने आली. तरी देखील या काळात चितोडची राणी कर्णावती, उदयसिंहाचे रक्षण करणारी इतिहास प्रसिद्ध पद्मादाई, गोंडवनाची राणी दुर्गावती, मुरादच्या हल्ल्यास निकराने तोंड देणारी अहमदनगरची शूर चांदाबिवी, राणी चनम्मा, युगपुरूष छत्रपती शिवाजी महाराजांना घडविणाऱ्या जिजाबाई या कर्तबगार स्त्रियांनी आपले कर्तृत्व जगाला दाखवून दिले.१२ कुतुबुद्दीन ऐबकने त्यांची मुलगी रझिया हिला सत्ता दिली. रझियाचा अनेक ठिकाणच्या राज्यपालांवर, सरदारांवर, वचक होता. रझिया राजनीतीकुशल, शौर्यशाली, वीरांगना, रणविद्याविशारद, सेनानायिका असूनही केवळ स्त्री असल्याने तिला विरोध स्विकारावा लागला. दिल्लीचा शेवटचा सय्यद सुलतान अल्लाउद्दीन अलमशहा यांची कन्या जेलिला उर्फ हलिला ही हुसेनशहा शाकीची राणी होती. मोगलकाळात देखील स्त्रियांचा राजनीतिमध्ये प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहभाग असल्याचे निदर्शनास येते. अकबराच्या काळातील रणशूर राणी दुर्गावतीची महान शौर्यगाथा भारतीय स्त्रियांसाठी आदर्शवत आहे. राणी दुर्गावती ही धैर्यशाली, शौर्यशाली, प्रशासनकुशल अशी आदर्श हिंदू शासिका होती. राणी दुर्गावतीने गोंडवनचे रक्षण करण्यासाठी अकबराच्या सैन्याविरुद्ध शौर्याने निकराचा लढा देऊन वीरमरण स्वीकारले. तसेच हिंदुस्तानची मलिका नूरजहाँने वारसहक्क नसतानासुद्धा सौंदर्य, बुद्धिमत्ता व महत्वाकांक्षेच्या बळावर दिल्ली सल्तनतची मोगल सम्राज्ञी म्हणून नावलौकिक मिळविला. राजनीतीकुशल नूरजहाँने बुद्धीच्या जोरावर राजकारणात आपला ठसा उमटविला. मराठा कालखंडातही अनेक स्त्रियांनी राजनीतीत सहभाग घेतला. प्रामुख्याने छत्रपती शिवाजी महाराजांच्या आई राजमाता जिजाबाई या अश्वरोहण, दांडपट्टा आदी युद्धकलेत परांगत होत्या. राजमाता जिजाबाईचा ज्ञात राजकारणी स्त्री म्हणून राजकारणी स्त्री म्हणून लौकिक आहे. पेशवेकालीन स्त्रियांमध्ये आनंदीबाई, गोपिकाबाई आदी स्त्रियांचा राजकारणात सहभाग होता.१३

स्वातंत्र्यपूर्व काळात ब्रिटिश राजवटीत स्त्रियांचे राजकीय योगदान :-

भारतातील महिलांनी स्त्री-शिक्षण, बालविवाह, जरठविवाह, सतीप्रथा, घटस्फोट असे अनेक प्रश्न हाती घेत भारतीय स्वातंत्र्य चळवळीत भाग घेतला. तसेच समाजसुधारकांनी महिलांचा राजकारणात समावेश केला.१४ १८२४ मध्ये राणी चनम्माने आपले कित्तुर वाचविण्यासाठी इंग्रजांशी प्राणपणाने झुंज दिली. इ. स. १८३९ मध्ये पंजाब प्रांत वाचविण्यासाठी राणी जिंदानने इंग्रजांविरुद्ध निकराचा लढा दिला. त्या स्वातंत्र्यसंग्रामातील सर्वात शूर व्यक्ती म्हणून ज्यांचा उल्लेख केला जातो त्या झाशीची राणी लक्ष्मीबाई यांनी ‘झांशी नही दुँगी’ असे इंग्रजांना ठणकावून सांगतात झांशी, कालपी, ग्वाल्हेर येथे इंग्रजांविरुद्ध लढा देत वीरमरण स्वीकारले. याशिवाय दिल्लीची बेगम झीनत महल, तुळसापुरची राणी, ग्वाल्हेरची बायनाबाई शिंदे, कोल्हापूरची ताराबाई, नरगुंदची राजमाता यमुनाबाई, आरापलगीची

नागाबाई या स्त्रियांनी १८५७ च्या स्वातंत्र्यलढ्यात सहभाग घेतला. राष्ट्रसभेच्या १८८९ साली मुंबई येथे भरलेल्या पाचव्या अधिवेशनात दोन इंग्रज, एक पारसी, चार मराठी व तीन बंगाली स्त्रियांनी सहभाग घेतला होता.^{१५} महात्मा गांधींनी इंग्रजांविरुद्ध अनेक आंदोलने करून देशाला स्वातंत्र्य मिळवून दिले. सन १९२१ च्या सहकार चळवळीत स्त्री-पुरुष, मुले-मुली सामील झाले होते. सन १९३२ च्या सविनय कायदेभंगाच्या चळवळीत हजारो संख्येने स्त्रिया सामील झाल्या होत्या. सन १९४२ च्या अखेरच्या लढ्यात स्त्रियांनी खूप कष्ट केले.^{१६}

स्वातंत्र्योत्तर काळात स्त्रियांचे राजकीय योगदान :-

स्वातंत्र्य मिळाल्यानंतर स्त्रिया सहजपणे पुरुषांच्या बरोबरीने राजकीय क्षेत्रात उभ्या राहिल्या. घटनासमितीच्या बैठकीत, राज्यंत्रणेत, राष्ट्रीय नियोजनात आपोआप स्त्रियांना सभासद म्हणून प्रवेश मिळाला.^{१७} जर लोकसभा निवडणुकीचा विचार केला तर १९५२ च्या पहिल्या लोकसभा निवडणुकीत ४९९ पैकी २२ महिला खासदार निवडून आल्या होत्या. म्हणजेच ४.४० टक्के स्त्रिया निवडून आल्या होत्या. तर १९९६ च्या निवडणुकीत ५४३ पैकी ३९ महिला खासदार निवडून आल्या होत्या. म्हणजेच ७.१८ टक्के स्त्रिया खासदार म्हणून निवडून आल्या होत्या.^{१८} महाराष्ट्रातील विधानसभा निवडणुकीच्या विचार केला तर पहिला विधानसभा निवडणुकीत २५१ पुरुष व १३ महिला आमदार निवडून आले होते. तर २००९ च्या ११ व्या विधानसभा निवडणुकीत २७७ पुरुष व ११ महिला आमदार निवडून आले होते. लोकसभा व विधानसभा निवडणुकांचे विश्लेषण केल्यानंतर लक्षात येते की भारतीय राजकारणात पुरुषांपेक्षा स्त्रिया खूप मागे आहेत.^{१९}

निष्कर्ष :-

भारतीय महिलांच्या सामाजिक स्थितीचा विचार केला तर वेदकाळ, महाभारतकाळ, उपनिषद, प्राचीनकाळ या कालखंडात स्त्रियांचा सामाजिक दर्जा चांगला होता. स्त्रियांना पुरुषांच्या बरोबरीने दर्जा दिल्या जात होता. पण मध्ययुगीन काळात स्त्रियांवर अनेक बंधने लादल्या गेलीत. 'चूल आणि मूल' हेच कार्यक्षेत्र स्त्रियांसाठी आखून दिले गेले. समाजाने स्त्रियांसाठी लक्ष्मणरेषा आखून दिली. परंपरागत रूढी, अनिष्ट चालीरीती यामुळे स्त्रियांच्या गुलामगिरीच्या बेड्या अधिकाधिक मजबूत होत गेल्या. अनेकविध सामाजिक बंधनांनी स्त्रियांना मानसिक गुलामगिरीच्या अंधकारात लोटले. अठराव्या शतकात बालविवाह, सतीप्रथा, बालविधवा, पुनर्विवाह बंदी अशा अनेक सामाजिक बंधनांना स्त्रियांना सामोरे जावे लागले. एकोणिसाव्या शतकात अनेक थोर समाजसुधारकांच्या स्त्रियांची सामाजिक दयनीय स्थिती लक्षात आल्याने स्त्री सुधारणेचे देशात वारे वाहू लागले. महात्मा फुले, राजा राममोहन रॉय, शाहू महाराज आदी समाजसुधारकांच्या प्रयत्नाने शैक्षणिक संधी प्राप्त होऊन त्यांच्या सामाजिक स्थितीत सुधारणा झाली.

प्राचीन काळात स्त्रियांचा राजकीय क्षेत्रात प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष सहभाग घेतला जात होता. वेदकाळात स्त्रियांना सन्मानाची वागणूक दिली जात असे. तसेच त्यांना वारसाधिकार, यज्ञाधिकार दिले जात होते. वेदकाळात स्त्रियांना आपली मते मांडण्याचा अधिकार होता. महाभारत काळात द्रौपदी, कुंती यांनी राजकारणास प्रभावित केले होते. उपनिषदात गार्गी, मैत्रेयी यांच्या नावाचा सन्मानाने उल्लेख होतो. मध्ययुगीन काळात स्त्रियांवर अनेक बंधने लादली गेल्यानंतरसुद्धा राणी चांदबिबी, राणी चैनम्मा, राणी दुर्गावती या महान स्त्रियांनी शत्रूशी शौर्याने लढा दिला. नूरजहाँने आपल्या सौंदर्य, बुद्धिमत्ता, महत्त्वाकांक्षेच्या बळावर मोगल सम्राज्ञी हा किताब मिळविला. १८५७ च्या लढ्यात राणी लक्ष्मीबाईंचा उल्लेख स्वातंत्र्यलढ्यातील सर्वोत्तम शूर व्यक्ती असा केला जातो. राष्ट्र सभेच्या अधिवेशनात देखील भारतीय स्त्रिया सहभागी होत होत्या. महात्मा गांधींनी इंग्रजांविरुद्ध केलेल्या आंदोलनामध्ये स्त्रियांनी पुरुषांच्या बरोबरीने सहभाग घेतला होता. स्वातंत्र्यानंतरदेखील स्त्रियांनी पुरुषांच्या बरोबरीने राजकारणात योगदान देण्यास प्रारंभ केला. पंतप्रधान, राष्ट्रपती, राज्यपाल अशी महत्त्वाची पदे विभूषित केल्यानंतरसुद्धा स्त्रियांचा राजकीय क्षेत्रात बरीच सुधारणा करण्यास वाव असल्याचे निदर्शनास येते.

संदर्भ सूची :-

- १) वडगबाळकर, सौ. श्रुती श्री. – 'मराठीतील स्त्री आत्मचरित्रांचा सामाजिक अंगाने अभ्यास', श्री विद्या प्रकाशन, शनिवार पेठ, पुणे, २००६, पृ. क्रं. १४, १५
- २) कवि, माधवी – 'स्त्री – विचारधन', अन्मेष प्रकाशन, पुणे, २००६ पृ. क्र. ५
- ३) उपरोक्त, पृ. क्रं. १६, १७

- ४) डॉ. कर्वे, स्वाती संपादक – 'स्त्री विकासाच्या पाऊलखुणा', प्रतिमा प्रकाशन सदाशिव पेठ, पुणे, २००३ पृ. क्र. २१२, २१३
- ५) कवि, माधवी – 'स्त्री – विचारधन', अन्मेष प्रकाशन, पुणे, २००६ पृ. क्र. ४०, ४१
- ६) महाले, शिवश्री अशोक सदाशिवराव – 'क्रांतीसुर्य महात्मा ज्योतिबा फुले स्मृती विशेषांक', मराठा सेवा संघ जिल्हा शाखा वाशिम प्रकाशन, २००४ पृ. क्र. १३
- ७) डॉ.पवार वैशाली – 'महिलांच्या सत्तासंघर्षाचा आलेख', डायमंड पब्लिकेशन, पुणे २०१२ पृ. क्र. ९ – १०
- ८) पाटील डॉ. लीला – 'मुलींचे शिक्षण' साकेत प्रकाशन, औरंगाबाद पृ. क्र. २९
- ९) डॉ. कडू मोहिनी – 'भारतीय राजकारणातील स्त्रिया', विजय प्रकाशन, नागपूर, पृ.क्र.१
- १०) वडगबाळकर, सौ. श्रुती श्री. – 'मराठीतील स्त्री आत्मचरित्रांचा सामाजिक अंगाने अभ्यास', श्री विद्या प्रकाशन, शनिवार पेठ, पुणे, २००६, पृ. क्र. २४
- ११) उपरोक्त, पृ. क्र. २
- १२) उपरोक्त, पृ. क्र. २४, २५
- १३) डॉ. कडू मोहिनी – 'भारतीय राजकारणातील स्त्रिया', विजय प्रकाशन, नागपूर, पृ.क्र. २, ४
- १४) डॉ.पवार वैशाली – 'महिलांच्या सत्तासंघर्षाचा आलेख', डायमंड पब्लिकेशन, पुणे २०१२ पृ. क्र. ११९
- १५) उपरोक्त, पृ. क्र. ६ – १०
- १६) वडगबाळकर, सौ. श्रुती श्री. – 'मराठीतील स्त्री आत्मचरित्रांचा सामाजिक अंगाने अभ्यास', श्री विद्या प्रकाशन, शनिवार पेठ, पुणे, २००६, पृ. क्र. २५
- १७) कित्ता पृ. क्र. २५
- १८) डॉ. कडू मोहिनी – 'भारतीय राजकारणातील स्त्रिया', विजय प्रकाशन, नागपूर, पृ.क्र. ३८
- १९) डॉ.पवार वैशाली – 'महिलांच्या सत्तासंघर्षाचा आलेख', डायमंड पब्लिकेशन, पुणे २०१२ पृ. क्र. ९३

परळी तालुक्यातील पोषण घनता : एक भौगोलिक अभ्यास

श्री. कैलास भास्कर लव्हाळे डॉ. व्ही. एस. चिमनगुंडे

¹संशोधक, महात्मा बसवेश्वर महाविद्यालय, लातूर

²मार्गदर्शक, श्री संत जनाबाई कला वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, गंगाखेड, जि. परभणी

ई-मेल: chimangundev2012@gmail.com, lavhale123@gmail.com

सारांश :

देशाच्या विकासात कृषी क्षेत्र व लोकसंख्या यांचे योगदान सर्वात जास्त असते. कारण कोणत्याही प्रदेशाचा विकास करत असताना त्या प्रदेशातील कृषी भूमी व लोकसंख्या यांचे जर प्रमाण योग्य असेल तर त्या प्रदेशाचा विकास इतर प्रदेशापेक्षा वेगाने होत असतो. ज्यावेळेस आपण लोकसंख्येचा अभ्यास करत असतो. त्यावेळेस कृषी भूमी योग्य जमीन व लोकसंख्या यांचे प्रमाण अभ्यासणे गरजेचे असते. म्हणूनच या शोधनिबंधात पोषण घनतेचा अभ्यास केला आहे.

प्रस्तावना

लोकसंख्येच्या गणितीय घनते मुळे मानव आणि भूप्रदेश यामध्ये असणाऱ्या सहसंबंधाची कल्पना येते. कृषी घनतेमुळे कृषी व्यवसायात गुंतलेल्या लोकांची संख्या आणि कृषी खालील क्षेत्र याची माहिती मिळते. तसेच पोषण घनतेचा अभ्यास केला असता एखाद्या प्रदेशातील कृषी भूमीवर अवलंबून असलेल्या लोकांचे प्रमाण काढण्यासाठी होतो. पोषण घनता ही मानव आणि कृषी योग्य जमीन यातील प्रमाण व्यक्त करण्याची एक विधि आहे. पोषण घनता अभ्यासली असता त्या प्रदेशातील कृषि योग्य भूमीचे योग्य पद्धतीने विश्लेषण करता येते.

उद्दिष्टे

१) अभ्यास क्षेत्राची एकूण पोषण घनता अभ्यासणे. २) अभ्यास क्षेत्रातील मंडळनिहाय पोषण घनता अभ्यासणे.

अभ्यास क्षेत्र

परळी तालुका मध्य-पूर्व महाराष्ट्रात आणि बीड जिल्ह्याच्या पूर्वेस आहे. परळी तालुका १८ ४१'३३" उत्तर अक्षांश ते १९ ७'४६" उत्तर अक्षांश आणि ७६ १४'२७" पूर्व रेखांश ते ७६ ४१'४४" पूर्व रेखावृत्त दरम्यान विस्तारलेला आहे. परळी तालुक्याच्या दक्षिणपूर्व गंगाखेड तालुका तसेच पूर्वेस सोनपेठ व पाथरी तालुक्याच्या सीमा आहेत. तर परळी तालुक्याच्या दक्षिण पश्चिमेस अंबाजोगाई तर उत्तर दिशेस माजलगाव आणि पश्चिमेला धारूर तालुक्याचा सीमा आहेत. परळी तालुक्याचे एकूण क्षेत्रफळ ७३७.९९ चौ. की. मी. आहे. त्यामध्ये १०५ ग्रामीण वस्ती १ नागरी केंद्र व ५ मंडळांचा समावेश आहे.

संशोधन पद्धती व आधार सामग्री संकलन :

परळी तालुक्यातील पोषण घनतेचा अभ्यास करण्यासाठी दुय्यम स्वरूपाच्या आधार सामग्रीचा वापर केला आहे. दुय्यम स्वरूपाच्या आकडेवारीसाठी बीड जिल्ह्याचा कृषी अहवाल व बीड जिल्हा आर्थिक सामाजिक समालोचन सन २००१ व २०११ यातून माहिती संकलित केली आहे.

एकूण लोकसंख्या

पोषण घनता = -----

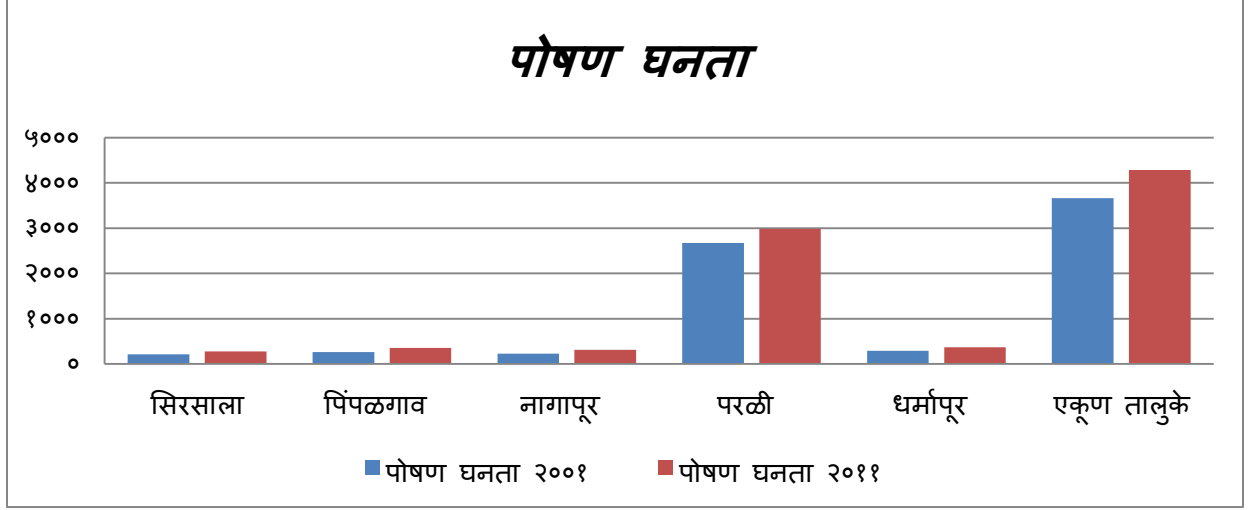
एकूण कृषि योग्य भूमी

अभ्यास क्षेत्रातील मंडळनिहाय पोषण घनता :

अ.क्र	महसूल मंडल	२००१			२०११		
		एकूण कृषि योग्य भूमी {चौ.की.मी}	एकूण लोकसंख्या	पोषण घनता	एकूण कृषि योग्य भूमी {चौ.की.मी}	एकूण लोकसंख्या	पोषण घनता
१	सिरसाला	१५२	२१६७८	२०९	१५२	४१३५०	२७५
२	पिंपळगाव	१२३	३२३५३	२६३	१२३	४३४५१	३५३

३	नागापूर	१२८	२८८०४	२२५	१२८	३९९४८	३१२
४	परळी	४२	११२१९३	२६७१	४२	१२५२१५	२९८१
५	धर्मापूर	१०२	२९७५६	२९१	१०२	३७२४४	३६५
	एकूण तालुके	५४७	२३४९८७	३६५९	५४७	२८७२०८	४२८६

साधनसामग्री : सामाजिक आर्थिक समालोचन २००१-२०११



विषय विवेचन :

अभ्यास क्षेत्रातील पोषण घनतेचा अभ्यास केला असताच्या २०११ असे लक्षात येते की. तालुक्यातील पोषण .मी एवढी होती.कि.प्रति व्यक्ती दर चौ ४२९ जनगणनेनुसार परळी तालुक्याची एकूण पोषण घनता च्या जनगणनेनुसार परळी मंडळाची पोषण घ २००१ घनतेचा मंडळनिहाय निष्कर्ष काढला असतानता दर चौमी . कि. कारण या ठिकाणी कृषी योग्य भूमीचे प्रमाण कमी व नागरी वस्ती .एवढी मोठ्या प्रमाणात होती २६७१ ला एवढी आढळून २०९ तर सिरसाळा मंडळात सर्वात कमी म्हणजे.असल्याकारणामुळे पोषण घनता वाढलेली आढळून येते च्या जनगणनेनुसार अभ्यास केला असता परळी त २०११ .येतेालुक्यातील कृषी योग्य भूमीत काहीच परिणाम व फरक पाहावयास मिळत नाहीच्या २०११ .त्यामुळे लोकसंख्येत वाढ झाली पण क्षेत्रफळ त्या स्थितीत राहिले आहे . .प्रति चौ ५२५ र परळी तालुक्याची पोषण घनताजनगणनेनुसाकिमी एवढी आहे त्यामध्ये मंडळ निहाय विश्लेषण केले . परळी म.असतांडळात सर्वाधिक २९८१ व्यक्ती प्रति चौतर सर्वात कमी सिरसाळा .मी एवढी पोषण घनता आहे.कि. .मी एवढी पोषण घनता पाहावयास मिळते.कि.व्यक्ती प्रति चौ २७५ मंडळात

निष्कर्ष :

- १) अभ्यास क्षेत्रातील मंडळनिहाय पोषण घनता सम विषम आहे.
- २) अभ्यास क्षेत्रातील भूमी उपयोजनाचा परिमाण पोषण घनतेवर झाला आहे.
- ३) परळी मंडळातील नागरीकरण याचा परिमाण पोषण घनतेवर झाला आहे.
- ४) धर्मापुरी मंडळातील डोंगराळ प्रदेश व जलसिंचन सुविधा याचा परिमाण पोषण घनतेवर झाला आहे.

उपाययोजना :

- १) परळी तालुक्यात आधुनिक कृषी चा विकास होणे गरजेचे आहे.

- २) सिरसाळा व धर्मापुरी मंडळात जलसिंचन सुविधा विकसित करणे.
- ३) कृषीचे महत्त्व पटवून देण्यासाठी कृषी संमेलन आयोजित करणे.

संदर्भ:

- १) भारतीय जनगणना अहवाल, २००१ आणि २०११
- २) ए.बी.सवदी प्रा.कोळेकर पी.एस. मानवी व लोकसंख्या भूगोल, निराली प्रकाशन, पुणे, १९९९
- ३) सामाजिक आणि आर्थिक समालोचन २००१
- ४) कृषि अहवाल, कृषि कार्यालय परळी
- ५) डॉ. विजया साळुंखे, २००३ कृषि भूगोल, शेठ पब्लिकेशन, मुंबई

भारूड भक्तीनाट्याचे स्वरूप व तत्वज्ञान.

प्रा.डॉ.शिवाजी सटवाजी वाघमारे

लोककला अकादमी, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई.

ईमेल shiwajirang@gmail.com

प्रस्तावना.

बाराव्या शतकात महानुभाव पंथाच्या स्थापनेपासून संतांनी अभंग गवळणी भजने भारुडे कीर्तने या प्रकारांमधून भगवंतांच्या नामस्मरना बरोबरच समाज प्रबोधन केलेली दिसते,चक्रधरा पासून ज्ञानेश्वरा पर्यंत, ज्ञानेश्वरांपासून ते एकनाथा पर्यंत , एकनाथा पासून ते तुकारामांपर्यंत सगळ्या संतांनी रुपकाच्या माध्यमातून भारुडे रचली.महाराष्ट्र मध्ये प्राचीन काळा पासून समाजाला काहीतरी सांगणारा, आणि समाजाचे प्रबोधन,उदबोधन, मनोरंजन करणारा असा एक फार मोठा वर्ग होता.तो म्हणजे वासुदेव,भराडी,गोंधळी,भुत्या,पोतराज,जोशी,दरवेशी,पिंगळा,शकुनी,कोल्हाटी,जोगी,जागल्या या सारख्या लोकभूमिका समाजात वावरत होत्या. या लोकभूमिकेच जनसंपर्क फार मोठा होता.गावगाड्यात हिंडून या लोकभूमिका लोकरंजन करित होत्या. राजाश्रयापेक्षा लोकांश्रयावर आपले उपजीविका भागवीत असतं.याच साऱ्या लोका भूमिकांच्या माध्यमातून तत्वज्ञानाची आणि नीतितत्वाची रूपकात्मक मांडणी करून सर्व नाथांनी भारुडे साकार केली.ते अनेक विषयवर भारुडे रचली आणि लोकप्रिय केली.त्यात जोहार,गोंधळ, गारूड डौर.मुका वासुदेव, बाळ संतोष अशा व्यक्ती त्यात आहेत.जाते दळण,डेरा,भूत,या सारख्या सांसारिक गोष्टी पण आहेत.तर पशू सृष्टीतील,कुत्रा,एडका,

बैल,विंचू.इत्यादी,प्राणी पण,हुतूतू,विठी दांडू,बोरा,पिंगा,फुगडी, इत्यादी खेळ आहेत.तर नवरा,नवरी,सासर,माहेर,सासुरवास , थट्टा,मस्करी असे लोकरांजनात्मक विषय त्यात आहेत.त्याच प्रमाणे महालक्ष्मी,गोंधळ, फुलावरा,खंडेराया,इत्यादी विषयची भारुडे आपल्याला दिसतात.बहुजनतील,अज्ञान, अंधःकार,दूर व्हावा या साठी संत भारुडतून अध्यात्म सांगत.समकालीन मूल्य साधण्याचा प्रयत्न करतात., "अध्यात्म" ही संकल्पना प्रामुख्याने सर्व सामान्यांना अतिशय गुंतागुंतीची वाटते.त्यामळे च सर्व सामान्यांना अतिशय गंभीर आणि अनाकलनीय वाटणारे जे तत्वज्ञान आहे. सोपे करून भारुडाद्वारे बहुजनांपर्यंत,अविरतकार्य संत परंपरेने केले आहे.

*भारुडचा अर्थ आणि उगम.

भारुड शब्द हा फार पुरातन असला तरी नाथांच्या लेखना पासूनच या प्रकाराला महत्त्व प्राप्त झाले आहे. हरिकीर्तनाच्या परंपरेतून भारुडाचा जन्म झाला असे म्हणता येईल, लळीत मधून रूपक हा नाट्य प्रकार उदयास आला असावा.भक्ताने रूपधारी पद्धतीने केलेले गुणगान म्हणजे भारुड होय.म्हणूनच भारुडाला रूपक म्हंटले जाते. कारण ते द्वार्थी असते.भारुड हे जरी काव्य असले तरी त्यात नाट्य अंग मोठ्या प्रमाणात दिसून येते. भारुड शब्दाच्या अर्था विषयी विविध संकल्पना रूढ आहेत. " भारुड म्हणजे "धनगर," असा शब्दकोषात अर्थ दिला आहे. "बहुरुड" वरून "भारुड"हा शब्द आला असे स्प्टीकरण संत साहित्याचे महान अभ्यासक ह.भ. प. ल. वा. पांगारकरांनी दिले आहे. "मराठी वाङ् मयाचा इतिहास"आणि मायबोलीची कहाणी, या पुस्तकात त्यांनी या विषयी सांगितली आहे."जी रूपके बहुजनांच्या मनावर आरूढ होऊन बहुजानात रूढ होतात त्याला भारुड असे म्हणतात.भक्ती संप्रदायात लोकप्रिय असणारे भक्ती नाटक म्हणजे भारुड होय. भारुड हा "भरुंड"या पक्षाशी निगडीत आहे. भरुंड" या पक्षाला दोन अर्थ असतात.त्याच पद्धतीने दोन अर्थ भारुडला.प्राप्त झालेला असतो.१.वाच्यार्थ. २. लक्ष्यार्थ.वाच्यार्थ हा व्यवहारिक असतो तर लक्ष्यार्थ हा पारमार्थिक असतो.

*भारूडाचे दोन प्रकार.

१. भजनी भारूड.

भजनी भारूड हे केवळ भजनातून गायले जाते. भजनी भारूड ची संपादनी गायन करीत असतो. असे असले तरी त्यांच्या चाली मात्र सुमधुर असतात. विविध लोकगीतांच्या चाली या भारूड ला लावल्या जातात.

उदा. फू बाई फू फुगडी फू

दमलास काय माझ्या गोविंदा तू. र गोविंदा तू.

२. सोंगी भारूड.

सोंगी भारूड मात्र मराठी रंगभूमीवर खूप प्रसिद्ध आहे. एकनाथ महाराजांनी भारूड कला प्रकाराला खूप उंचीवर नेऊन ठेवले आहे. ग्रामीण जीवनात लळीताची खूप जुनी परंपरा आहे. या लळीताचे भारूडे नाट्य रूपात सादर केली जातात. ज्या लोकनायकावरचे भारूड असेल त्याचे सोंग घेऊन त्याला नृत्य नाट्यची जोड देऊन, त्याचे सादरीकरण केले जाते. अशा वेळी भारूड दृकश्राव्यचे स्वरूप धारण करते. भारूड ही ऐक सामूहिक कला आहे. त्यात प्रमुख गायक असतो. भारूडाच्या आशयाचं निरूपण करतो. बाकीचे सहकारी त्याला साथ देतात. मुख्य द्रुवपद प्रमुख गायक व सहकारी गातात. नंतर मात्र ऐकटा म्होरक्या किंवा सूत्रधार गातो. ज्या अंतःत्यात आशय दडलेला असतो. म्होरक्या गद्याच्य स्वरूपात प्रेक्षकांना समजाऊन सांगतो. त्याला निरूपण असे म्हणतात. निरूपण चालू असताना त्याचे सहकारी त्याला आधे मध्ये प्रश्न विचारतात. म्होरक्या विचारलेल्या प्रश्नाचे उत्तर देत असताना दैनंदिन व्यवहारातील उदाहरणे देतो. अशाने काव्य फुलत जाते. प्रेक्षक त्यामध्ये तल्लीन होतो. प्रेक्षकांच्या मनोरजना बरोबर त्यांचे प्रबोधन होते. भारूडात व्यक्त होणारी संपादनी उत्स्फूर्त असते. त्यात किती रंग भरायच हे त्या मुख्य गायका वर अवलंबून असते.

भारूडातून होणारा संवाद ऐकाच वेळी साथीदार सोबत आणि प्रेक्षकांन बरोबर ही चाललेला असतो. नटाने प्रेक्षकांना सोबत प्रत्यक्ष संवाद करणे, भारतीय लोकनाट्य परंपरेचे खास विशिष्ट मानले जाते. भारूडात पखवाज, टाळ, विणा, ही वाद्य सादरीकरण दरम्यान वापरी जातात. रूपाच्या आशया नुसार, भारूडाच्या, आशया विषयाप्रमाणे, रंगभूषा, वेशभूषा, केली जाते. यात गीत, नाट्य, संगीताचा. मेळ साधल्याने 'सोंगी भारूड, नाट्य आविष्काराला रंग चढतो पौराणिक, धार्मिक, ग्रंथांच्या आधारे, सादर होणारी रूपके आजमितीला, कुटुंब नियोजन, हुंडाबळी, व्यसन मुक्ती, साक्षरता इत्यादी. सामाजिक विषयावर लोकप्रबोधनाचे, ऐक मध्यम म्हणून भारूडे सादर केली जातात.

*संत संप्रदाय आणि मराठी भारूडे.

भारूड हा समाज प्रबोधनासाठी फारच उपयुक्त आणि प्रभावी असा काव्यप्रकार असल्यामुळे बहुतेक बऱ्याच संत संप्रदायानी त्याचा उपयोग करून घेतला आहे. संत ज्ञानेश्वर हेच मराठीतील भारूड वाडू; मयाचे आद्य रचनाकार होत. संत ज्ञानेश्वरांनी "भारूड" ह्या काव्य रचनेची संकल्पना मांडल्यावर पुढे अनेक संतांनी हा रचना प्रकार हाताळला आणि संत एकनाथांनी त्याला कमालीची लोकप्रियता मिळवून दिली.

१. वारकरी संप्रदायातील- ज्ञानदेव, नामदेव, चोखा मेळा, एकनाथ, तुकाराम, जनाबाई, भानुदास, बहिणाबाई, निळोबाराय.

२. समर्थ संप्रदायातील - संत रामदास, रामी रामदास, केशव स्वामी, अचुतानंद, रामानंद.

३. नाथ संप्रदायतील- शिवदिन केसरी, नरहरी नाथ, महिपती नाथ, ढोली बुवा, देवनाथ. गोपाळनाथ.

४. दत्त संप्रदायातील - संतकवी दासोपंत.

४.महानुभाव संप्रदायातील काही अनामसंत कवी बरोबर वरील संप्रदाय वगळता,जोगा परमानंद,शेख महमद,शिवराम स्वामी,गणेश नाथ,दास तुका,माणिकप्रभू ,नारायण बुवा,यांच्या सारख्या कित्येक संत कवींनी भारुडे लिहिली आहेत.परंतु "भारूड" म्हंटले की डोळ्यासमोर उभे राहतात ते फक्त संत एकनाथ.

*ज्ञानदेवांच्या भारुडाचे स्वरूप.

ज्ञानदेवाची भारुड रचना खूप कमी आहेत. पण मराठी वाड;मया मध्ये अतिशय महत्वाची आहेत.ज्ञानदेवाची काही भारुडे प्रदीर्घ,काही सवादत्मक तर काही शब्द चित्रणात्मक आहेत.अध्यात्मिक उदबोधन आणि आत्मानुभव निवेदन या दृष्टीने ज्ञानदेवाचा,अबुला,फुगडी. घोंगडी जोहार , वासुदेव, डौर, आंधळा पांगुळ,गोंधळ या सारख्या भारुडातून,केलेला पारमार्थिक उपदेश सर्व सामान्यांना खडबडून जागे करणारा आहे.

ज्ञानदेव आपल्या "डौर"या भारुड तून उपदेश करतात.

"सभा समस्त साधू संताची,महामुनी विरक्तीची/
पंडित पाठक ज्ञानियाची समस्त सी विनवणी १//

आता परीसा पाच नांद,पाच नांदाचे पाच भेद ।

पहिला नाद चटचट चटचट,दुसरा नाद खटपट खटपट/
तिसरा लटपट लटपट ,चौथा फरफट फरफट/
पांचवा तळमळ तळमळ ॥

पांचवा तळमळ तळमळ ॥

ह्या सारख्या जिवाच्या पाच अवस्था आहेत तसेच जीवाला विकारांपासून दूर होण्यासाठी पांच नाद आणि पांच भेद सांगून ज्ञानदेवांचा डौर म्हणतो.

परी विषय वासना न सोडी

उपाधी गाढी श्रीपादा ॥

ऐसे भेद नादाचे , मनी घरा विवेकाचे ॥

ज्ञानदेवे बोले निवृत्तीचे,बोला वाचे हरिनाम ॥

या विषय वासना पासून दूर जाऊन जीवाला परमार्थाची तळमळ लागायला हवी.त्यातून पुढे विवेक जन्माला येतो आणि जीव हरिनामात गुंतून जातो.

*संत एकनाथांचे भारूड.

संत एकनाथ हे ऐक उत्तम लोकशिक्षण होते,समाज शिक्षक होते.तत्कालीन समाजाच्या स्थितीचे त्यांनी सूक्ष्म अध्ययन केले होते.ते अध्ययन विविधांगी व बहुरंगी होते.समाजाच्या कळवल्या पोटीच त्यांनी समाज दर्शन घेतले.नाथांच्या भारुड विषयीं बोलताना डॉ. श.गो. तुळपुते म्हणतात. "नाथांची भारुडे हा रूपक सृष्टीतील ऐक मोठा विजय आहे.भारुडात दिसून येणारा वक्ता आणि श्रोता, उपमेय आणि अपमान,जग आणि रंगभूमी,प्रपंच आणि सर्वांग सुंदर रूपक मराठीत दुसरे नाही."

नाथांनी वासुदेव, गोंधळी, भराडी, पांगुळ ,जोशी,फकीर,चोपदार , वाघ्या मुरळी, या सारख्या लोक भूमिका,भारुडातून बसवून व लोक कला मधून अध्यात्माची रचना करून जशी भारुडे लिहिली तशीच सामाजिक व्यवहार वृत्ती,चालीरीती या देखील भारुडातून अचूक टिपल्या आहेत.

*मला दादला नको ग बाई,

मला दादला नको ग बाई.

मोडकेच घर तुटकेच छपर

देवाला देवघर नाही //१//
फाटके च लुगडे तुटकीच चोळी.
शिवाय दोराच नाही //२//
जोंधळयची भाकर. अंबाड्याची भाजी /
वर तेलाची धारच नाही //३//
ऐका जनार्दनी समरस झाले तो रस येथे नाही //४//
मला दादला नको ग बाई...

अशा पद्धतीने जीवनरूपी नारी सात्विक बुद्धीने प्रेरित होऊन वैराग्याच्या भूमिकेवर येते. आणि अविचारी नवरा नकोय, तर विवेकी नवरा हवाय, म्हणून मनातले गुज सखी जवळ सांगते.

सारांश

भारूड हे जनसंपर्काचे साधन आहे. देशातील बहुसंख्य जनतेला जागृत करण्याचे सामर्थ्य लोकवाड; मयतच आहे. नवविचार पसरविणे व राष्ट्रीय ऐक्य निर्माण करण्याचे काम, भारूडातून पोवाडे. जलश्यातून केले जाते. म्हणून भारूड हा प्रकार जनसंपर्कचे अतिशय प्रभावी माध्यम आहे. त्यातील नाट्यगुण, विषयातील बहुविधता, गेयता, रूपके, प्रबोधन विचार, या साऱ्यांमुळे जन मनोरंजनाची साधने म्हणून लोकशिक्षनाचे व धर्मजागृतीचे कार्य भारूडानी केले. खरेतर जी रूपके बहुजनाच्या मनावर आरूढ होऊन बहुजनात रूढ होतात. ती लोकांला भावतात भक्ती संप्रदायात लोकप्रिय असणारे भक्ती नाटक म्हणजेच भारूड, भारूड विषयी बऱ्याच साहित्याकांनी विवेचन केले आहे. भारूड वाड; मय हे मराठी भाषेतच लोकप्रिय झाली आहेत. "तत्वज्ञान" व "अध्यात्मा" "बरोबर लोकशिक्षण. धर्मशिक्षण", समाज शिक्षण, जण्याचे नित्तीमुल्य समाजप्रबोधन, संतांनी आपल्या रूपकाच्या . भारूड च्या माध्यमातून जनसामान्यांना रुजू केली. भजनी भारूड असे दोन प्रकार आहेत. मृदुंग, पाखवज, टाळ, ही मुख्य वाद्य साथीला असतात. आज महाराष्ट्रात सोंगी भारूड करणारी मंडळी आहेत. भारूड रत्न निरंजन भाकरे हे कोरोनाच्या विळख्यात सापडले अन् ते अनंतात विलीन झाले.. मीराबाई उमप, चंदाताई . हमिद सय्यद. लक्ष्मण राजगुरू, इत्यादी भारूड करानी भारूडाच्या मध्यामातून समाजा प्रबोधन करतात. विशेष म्हणजे जसा काळ बदलत जातो, तसे कला ही बदलताना दिसते. शासनाच्या अनेक योजनेची माहिती प्रसार प्रचार करण्याचे काम आज भारूडतून केले जाते. भारूड ऐक समाज प्रबोधनाचे माध्यम आहे

संदर्भ ग्रंथ

डॉ. प्रभाकर मांडे : लोकसंगभूमी. गोदावरी प्रकाशन, औरंगाबाद. 1997.

डॉ. रा. चि. ढेरे : लोकसंस्कृतीचे उपासक, पद्मगंधा प्रकाशन, औरंगाबाद. 1997.

डॉ. रामचंद्र देखणे : गोंधळ परंपरा, स्वरूप आणि आविष्कार, पद्मगंधा प्रकाशन. पुणे. 2005.

डॉ. तारा भवाळकर : लोकसंचित, राजहंस प्रकाशन. पुणे. 2001.

डॉ. प्रकाश खांडगे : खंडोबाचं जागरण, लोकवाड; मय गृह, प्रकाशन. मुंबई. 2010.

डॉ. विश्वनाथ शिंदे : लोकसाहित्य मीमांसा, स्नेहवर्धन पब्लिशिंग हाऊस, पुणे. 1998.

जोशी अ. म. : भारतीय लोकनाट्य, विश्वकर्मा प्रकाशन, पुणे. 1980.

ठाणे – पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा भौगोलिक अभ्यास

प्रा. मानकरे ज्ञानेश्वर रघुनाथ डॉ.के.बी कणकुरे^१

^१संशोधक, विभाग प्रमुख, भूगोल विभाग, एस.एन.डी.टी.कला आणि एस.सी.बी.वाणिज्य व विज्ञान

महिला महाविद्यालय, चर्चगेट, मुंबई. २०

^२मार्गदर्शक, माजी प्राचार्य व भूगोल विभाग प्रमुख, पदव्युत्तर अध्ययन व संशोधनविभाग

महाराष्ट्र उदयगिरी महाविद्यालय, उदगीर

प्रस्तावना –

लोकसंख्या अभ्यासामध्ये लिंग गुणोत्तराच्या अभ्यासाला खूप महत्त्व आहे. लिंग गुणोत्तर म्हणजे साधारणपणे लोकसंख्येमध्ये पुरुष व स्त्रियांचे तुलनात्मक प्रमाण असते. १:१ असे पुरुष व स्त्रियांचे प्रमाण असेल तर आदर्श मानले जाते. परंतु जगामध्ये अशी आदर्श स्थिती आढळत नाही. स्थानिक परिस्थितीला अनुसरून लिंग गुणोत्तरामध्ये विविधता आढळते. साधारणतः १००० पुरुषामागे असलेल्या स्त्रियांच्या संख्येवरून लिंग गुणोत्तर काढले जाते. भारतामध्ये विशिष्ट सामाजिक स्थितीमुळे स्त्रियांच्या संख्येत घट होत असल्यामुळे ही एक गंभीर समस्या बनलेली आहे. सामाजिक स्वास्थ्य टिकून राहण्यासाठी लिंग गुणोत्तर संतुलित राहणे आवश्यक आहे. त्यासाठी सूक्ष्म स्तरावर लिंग गुणोत्तराचा अभ्यास होणे आवश्यक असल्यामुळे प्रस्तुत संशोधनात ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा भौगोलिक अभ्यास करण्यात आलेला आहे.

ठाणे – पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी -

आदिवासी हा शब्द Aboriginal या इंग्रजी शब्दावरून आला आहे. “आदिवासी” म्हणजे नागरी संस्कृतीपासून अलिप्त असलेल्या; पण आपल्या स्वतःच्या अशा पारंपारिक वैशिष्ट्यांनी निसर्गाच्या सहवासात फार पूर्वीपासून राहत आलेल्या आणि स्वतंत्र जीवन जगणारा लोकसमूह म्हणजे आदिवासी होय (व्यवहारे २००२). आदिवासी म्हणजे मूळ निवासी, विशिष्ट भौगोलिक प्रदेशात प्राचीन काळापासून राहणारे लोक (त्या-त्या प्रदेशातील मूळ निवासी) म्हणजे आदिवासी होय. (गारे, २००१)

इ.स. १९६२ साली शिलॉंग मध्ये आदिवासी समितीच्या परिषदेने आदिवासी ची व्याख्या पुढीलप्रमाणे केली आहे, “एका समान भाषेचा वापर करणाऱ्या, एकाच पुर्वजापासून उत्पत्ती सांगणाऱ्या, एका विशिष्ट भूप्रदेशात वास्तव करणाऱ्या, तंत्रज्ञानाच्या दृष्टीने मागासलेल्या, अशिक्षित असलेल्या व रक्तसंबंधावर आधारित सामाजिक व राजकीय रितीरिवाजांचे पालन करणाऱ्या एकजिनसी गटाला ‘आदिवासी’ समाज म्हणतात.”

महाराष्ट्रात एकूण ४७ आदिवासी जमाती आहेत व त्यातील २५ आदिवासी जमातींची लोकसंख्या जास्त आहे. महाराष्ट्रात आदिवासी जमातीच्या लोकसंख्येचे वितरण असमान आहे. महाराष्ट्रातील ठाणे जिल्ह्यात प्रामुख्याने महादेव कोळी,ठाकर,कातकरी,वारली,कोकणा व मल्हार कोळी या जमातींचे लोक वास्तव्य करतात. याशिवाय आंध्र, बैगा, बारदा, बावचा, भैना, भारिया भूमिया, भात्रा, भिल्ल, भुन्जिया, बिन्झवर, बिर्हूल, चोधरा, धानका, धनवार, धोंडिया, दुबळा, गावित, गोंड, राजगोंड, हलबा, कुमार, काठोडी, कवर, खैरवार, खारिया, कोकना, कोल, कोलम, कोळी डोर, कोळी महादेव, कोळी मल्हार, कोंड, कोरकू, कोया, नागोसिया, नैकडा, ओराओन, परधान, पारधी, परजा, पाटेलिया, पोम्ला, राठवा, सवर, ठाकूर, वारली, विटोलिया इ. आदिवासी जमातीचे लोक ठाणे – पालघर जिल्ह्यात राहतात.

ठाणे –पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी जमातींचे सामाजिक, आर्थिक जीवन, सांस्कृतिक वैशिष्ट्ये, रूढी,परंपरा यांच्यात विविधता आढळते. प्रत्येक जमातींची वेगळी वैशिष्ट्ये आढळतात. प्रत्येक जमातींचे सामाजिक जीवन हे त्यांच्या सभोतालच्या भौगोलिक, आर्थिक आणि परंपरागत चालत आलेल्या व रूढ झालेल्या जीवनदृष्टीने बनलेले आहे. असे असले तरी सर्वसामान्य ‘आदिवासींचे’ जीवन त्यांची मुख्य आणि वैशिष्ट्ये यांच्यात सारखेपणा आढळतो. शेती हा त्यांचा मुख्य व्यवसाय आहे. शेती बरोबरच पशुपालन व दूग्ध व्यवसाय करतात. तसेच लहान- मोठे जंगलावर आधारित व्यवसाय जसे फुले, फळे, मध, डिक विकणे, बांबू पासून विविध वस्तू बनविणे,शेतमजुरी, नोकरी यावर त्यांचा उदरनिर्वाह चालत असतो.

अभ्यास क्षेत्राचे स्थान आणि विस्तार –

प्रस्तुत संशोधन ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा भौगोलिक अभ्यास करताना अभ्यास क्षेत्र मर्यादित करताना ठाणे जिल्ह्याच्या विभाजन पूर्व क्षेत्राची निवड केली आहे. सद्यस्थितीत अभ्यास क्षेत्रात ठाणे आणि पालघर जिल्हे येतात .अभ्यास क्षेत्राचे अक्षवृत्तीय स्थान १८° ४२’ उत्तर ते २०° २०’

उत्तर असून रेखावृत्तीय स्थान ७२° ४५' पूर्व ते ७३° ४८' पूर्व आहे .अभ्यास क्षेत्राचे एकूण क्षेत्रफळ ९५५८ चौ.कि.मी .आहे. अभ्यास क्षेत्राची दक्षिणोत्तर लांबी १४० कि.मी .व पूर्व-पश्चिम लांबी १०१ कि.मी. आहे .अभ्यास क्षेत्राचे एकूण क्षेत्रफळ ९५५८ चौ.कि.मी. आहे. अभ्यास क्षेत्रात १५ तालुके येतात .२०११ च्या जनगणनेनुसार अभ्यास क्षेत्रातील लोकसंख्या १,१०,६०,१४८ एवढी असून महाराष्ट्राच्या एकूण लोकसंख्येपैकी ९.८४ % लोकसंख्या आहे .लोकसंख्येची घनता ११०६ इतकी आहे .आदिवासींच्या लोकसंख्येचा विचार केला तर २०११ च्या जनगणनेनुसार एकूण आदिवासींची लोकसंख्या १५४२४५१ असून एकूण लोकसंख्येपैकी १३.९५ %आदिवासी जमातींची लोकसंख्या आहे.

ठाणे जिल्हा महाराष्ट्राच्या पश्चिमेला उत्तर कोकणातील सर्वात मोठा जिल्हा होता .१ ऑगस्ट २०१४ रोजी ठाणे जिल्ह्याचे विभाजन करून पालघर हा नवीन जिल्हा करण्यात आला. या जिल्ह्यात ७ तालुके आहेत .ठाणे जिल्ह्याचे अक्षवृत्तीय स्थान १८° ४२' उ .ते २०° २०' उ .व रेखावृत्तीय स्थान ७२° ४५' पू .ते ७३° ४८' पू .असून एकूण क्षेत्रफळ ४२१४ चौ.कि.मी .आहे. २०११ च्या जनगणनेनुसार एकूण लोकसंख्या ८०,७०,०३२ आहे .तर लोकसंख्या घनता १९०० इतकी आहे.

पालघर जिल्ह्यात ८ तालुके असून पालघर जिल्ह्याचे एकूण क्षेत्रफळ ५३४४ चौ.कि.मी .आहे .२०११ च्या

जनगणनेनुसार एकूण लोकसंख्या ३०,१४,४३४ असून लोकसंख्येची घनता ५६४ एवढी आहे.

अभ्यास क्षेत्राच्या सीमा –अभ्यास क्षेत्राचा आकार साधारणतः त्रिकोणी आकाराचा आहे . याच्या पूर्वेला पुणे आणि अहमदनगर जिल्ह्यांच्या सीमा आहे. पूर्व आणि ईशान्येला नाशिक जिल्ह्याची सीमा आहे .उत्तरेला गुजरात आणि दादरा, नगर, हवेली हा केंद्र शाषित प्रदेश आहे .वाव्येला अरबी समुद्र असून दक्षिणेला मुंबई व मुंबई उपनगर जिल्ह्यांच्या सीमा आहेत.

नकाशा क्र. १ - ठाणे -पालघर जिल्ह्यांचे भौगोलिक स्थान, विस्तार, सीमा

संशोधनाच्या मर्यादा –

प्रस्तुत 'ठाणे – पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी

लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा भौगोलिक अभ्यास' या संशोधनासाठी ठाणे आणि पालघर या जिल्ह्यांचे भौगोलिक क्षेत्र घेतले आहे. या जिल्ह्यातील १५ तालुक्यांतील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा तुलनात्मक अभ्यास करण्यात येणार आहे.यासाठी १९९१ पासून २०११ पर्यंतच्या २० वर्षांचा कालखंड संशोधनासाठी घेतला आहे. तसेच आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तर या वैशिष्ट्याच्या अभ्यास केला जाणार आहे.

उद्दिष्टे :

प्रस्तुत संशोधनाचा मुख्य उद्देश ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा भौगोलिक अभ्यास करून त्यांच्या समस्या जाणून घेऊन त्या सोडवण्यासाठीच्या उपाय योजना सुचविणे आहे त्यासाठी खालील उद्दिष्टे ठेवली आहेत.

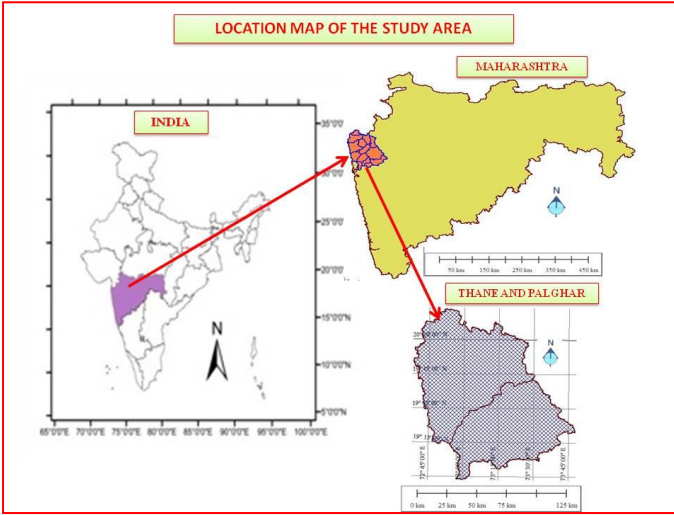
- १) अभ्यास क्षेत्रातील आदिवासी जमातीच्या स्त्री – पुरुष लोकसंख्येचे प्रमाण अभ्यासणे.
- २) अभ्यास क्षेत्रातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तराचे ग्रामीण व नागरी भागातील प्रमाण अभ्यासणे.

गृहीतके :

ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येचा भौगोलिक अभ्यास करताना वरील उद्दिष्टे साध्य करण्यासाठी खालील गृहीतके मांडली आहेत.

- १) ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरात प्रादेशिक भिन्नता आढळते.
- २) ठाणे – पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरात प्रामुख्याने ग्रामीण भागात लिंग गुणोत्तर जास्त आढळते.

अभ्यास पद्धती व माहितीचे स्रोत :



प्रस्तुत संशोधनासाठी प्राथमिक व द्वितीयक स्वरूपाच्या माहितीचे स्रोत वापरले आहेत. द्वितीयक माहितीच्या स्रोतामध्ये ठाणे जिल्ह्याचे सांख्यिकीय हस्तपुस्तिका, जिल्हा जनगणना अहवाल, जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालोचन, आदिवासी विकास विभागाचे अहवाल, आदिवासी संशोधन व प्रशिक्षण संस्थेचे अहवाल, भारतीय जनगणना विभागाचे अहवाल यांचा संशोधनासाठी उपयोग केला आहे.

माहिती व आकडेवारी संकलित केल्यानंतर त्याचे सांख्यिकीय पृथक्करण आणि वर्गीकरण करण्यासाठी तत्ते, आकृत्या, आलेख व नकाशे आवश्यक तेथे काढण्यात आलेली आहेत. सांख्यिकीय विश्लेषण व नकाशाशास्त्रीय तंत्राच्या वापरातून निष्कर्ष काढलेली आहेत.

अभ्यास विषयाचे महत्त्व :

प्रस्तुत संशोधनामध्ये ठाणे- पालघर जिल्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा आणि लिंग गुणोत्तराच्या प्रादेशिक वितरणाचा, त्यावर परिणाम करणारे घटक या लोकसंख्याशास्त्रीय घटकाचा अभ्यास केल्यामुळे या संदर्भात निर्माण होणारे प्रश्न सोडवण्यास मदत होईल.

ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येची वैशिष्ट्ये –

ठाणे पालघर जिल्ह्यातील आदिवासींची लोकसंख्या २०११ च्या जनगणनेनुसार १५,४२,४५१ इतकी आहे. यात ७,६९,१९१ पुरुष लोकसंख्या व ७,७३,२६१ स्त्रियांची लोकसंख्या आहे. अभ्यास क्षेत्रातील आदिवासी लोकसंख्येची घनता १६१ प्रती चौ.कि.मी. आहे. २००१ ते २०११ या दशकातील आदिवासी लोकसंख्येची वाढ २७.४३% झालेली आहे. याच दशकात या जिल्ह्यातील सर्वसाधारण लोकसंख्या वाढ ३६.०१% झालेली आहे याचा अर्थ आदिवासी लोकसंख्येच्या वाढीचा दर कमी आहे. या जिल्ह्यातील एकूण लोकसंख्येच्या १३.९४% लोकसंख्या आदिवासी जमातींची आहे. येथील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर १,००५ इतके आहे. आदिवासी लोकसंख्येमध्ये शिक्षणाचे एकूण प्रमाण ५८.८७% असून पुरुष साक्षरतेचे प्रमाण ६८.५२% तर स्त्रियांच्या साक्षरतेचे प्रमाण ४९.३२% इतके आहे.

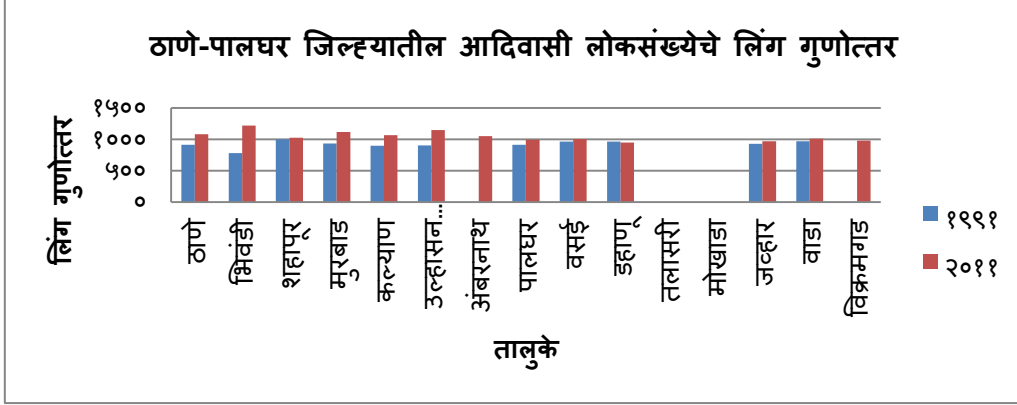
ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर –

अ.क्र.	तालुके	१९९१	२०११	लिंग गुणोत्तरातील बदल
१	ठाणे	९१५	१०१८	१६६
२	भिवंडी	९३८	१०५८	१२०
३	शहापूर	९५०	१०१८	६८
४	मुरबाड	९५४	९९९	४५
५	कल्याण	९०६	१०६६	१६०
६	उल्हासनगर	९४८	११४७	१९९
७	अंबरनाथ		१०४५	
८	पालघर	९७३	९८५	१२
९	वसई	९९०	९९१	०१
१०	डहाणू	९९६	९५६	-४०
११	तलासरी	१०१०	९६०	-५०
१२	मोखाडा	९८५	९९१	०६
१३	जव्हार	१००७	९७१	-३६
१४	वाडा	९६५	१०१२	४७
१५	विक्रमगड	-	९८३	-
	एकूण	९७७	१०१८	४१

तक्ता क्र. १ – ठाणे पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर(२०९१ -२०११)

ठाणे- पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येतील लिंग गुणोत्तराचा १९९१ सालचा आढावा घेताना सर्वसाधारण ठाणे- पालघर जिल्ह्यातील १९९१ मधील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर ९७७ होते. सर्वाधिक लिंग गुणोत्तर तलासरी या तालुक्यात १०१० असल्याचे दिसून येते. त्यानंतर जव्हार या तालुक्यातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर १००७ होते. त्यानंतर अनुक्रमे डहाणू ९९६, वसई ९९०, मोखाडा ९८५, पालघर ९७३, वाडा ९६५, मुरबाड ९५४, शहापूर ९५०, उल्हासनगर ९४८, भिवंडी ९३८, ठाणे ९१५ आणि सर्वात कमी कल्याण ९०६ इतके आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर दिसून येते. यावरून ग्रामीण विभाग बहुसंख्य असणाऱ्या तालुक्यांचे लिंग गुणोत्तर जास्त तर शहरी विभाग जास्त असणाऱ्या तालुक्यांचे आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर

कमी आढळते. २०११ साली ठाणे- पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर १०१८ इतके होते. सर्वाधिक लिंग गुणोत्तर उल्हासनगर तालुक्याचे ११४७ येवढे जास्त आढळते. त्यानंतर ठाणे तालुक्याचे १०८१ इतके आढळते. त्यानंतर कल्याण १०६६, भिवंडी १०५८, अंबरनाथ १०४५, शहापूर १०१८, वाडा १०१२ या तालुक्यात पुरुषापेक्षा स्त्रियांची संख्या जास्त आढळते. हे सर्व तालुके शहरीकरण जास्त झालेले आहेत. त्यामुळे या शहरामध्ये रोजगार मिळवण्यासाठी या स्त्रियांचे शहरात स्थलांतर झालेले दिसून येते. त्यानंतर अनुक्रमे मुरबाड ९९९, मोखाडा ९९१, वसई ९९१, पालघर ९८५, विक्रमगड ९८३, जव्हार ९७१, तलासरी ९६०, डहाणू ९५६ असे लिंग गुणोत्तर दिसून येते. यावरून ग्रामीण भागातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर कमी आढळते. ठाणे पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरातील दोन दशकातील चढ-उतार (१९९१ - २०११)-



आलेख क्र.१ - ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर

ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या १९९१ आणि २०११ या २० वर्षातील लिंग गुणोत्तरातील चढ उतार अभ्यासले असता असे दिसून येते की लिंग गुणोत्तरात सर्वाधिक वाढ उल्हासनगर तालुक्यात झालेली असून ती + १९९ इतकी आहे. त्यानंतर सर्वाधिक वाढ ठाणे +१६६, कल्याण +१६०, भिवंडी +१२०, शहापूर +६८, वाडा +४७, मुरबाड +४५, पालघर +१२, मोखाडा +६, वसई +१ अशी लिंग गुणोत्तरात वाढ झालेली दिसून येते म्हणजे या तालुक्यात आदिवासी पुरुषांच्या तुलनेत स्त्रियांची लोकसंख्या वाढलेली दिसून येते. स्त्रियांची लोकसंख्या वाढण्याचे कारण आरोग्याच्या सुवेधेतील वाढ आणि शहरीकरण प्रामुख्याने दिसून येते. याशिवाय कांही तालुक्याचे लिंग गुणोत्तर घटले आहे. त्यात सर्वाधिक घट तलासरी तालुक्यात - ५० इतके लिंग गुणोत्तर घटले आहे. त्यानंतर डहाणू - ४०, जव्हार -३६ अशी लिंग गुणोत्तरात घट झाल्याचे दिसून येते. या तलासरी, डहाणू आणि जव्हार या आदिवासी बहुल तालुक्यातील स्त्रियांची संख्या पुरुषांच्या मानाने कमी झालेली दिसून येते.

ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील ग्रामीण आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर (१९९१ -२०११) -

अ.क्र.	तालुके	१९९१	२०११	लिंग गुणोत्तरातील बदल
१	ठाणे	९८१	-	-
२	भिवंडी	९५६	१०२४	६८
३	शहापूर	९४९	१०१७	६८
४	मुरबाड	९५५	९९६	४१
५	कल्याण	९५६	१०६४	१०८
६	उल्हासनगर	९६३	-	-
७	अंबरनाथ	-	१०४१	-
८	पालघर	९७४	९८३	९
९	वसई	९९६	९७७	-१९
१०	डहाणू	९९७	९५७	-४०
११	तलासरी	१०१०	९६०	-५०
१२	मोखाडा	९८५	९९१	६
१३	जव्हार	१००९	९७१	-३८
१४	वाडा	९६५	१०१२	४७
१५	विक्रमगड	-	९८५	-
	एकूण	९८५	९९८	१३

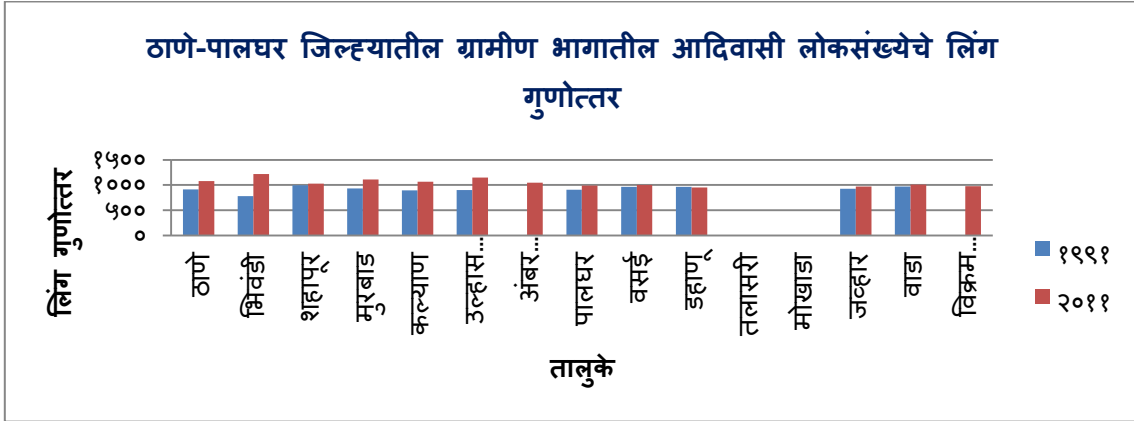
तक्ता क्र. २ : ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील ग्रामीण आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर

(१९९१-२०११)

ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील ग्रामीण भागातील आदिवासी लोकसंख्येचे लोक गुणोत्तर अभ्यासले असता १९९१ साली येथील जिल्ह्याचे लिंग गुणोत्तर ९८५ होते. तालुकानिहाय आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तरात सर्वाधिक प्रमाण तलासरी तालुक्यात १०१० इतके होते. त्यानंतर जव्हार तालुक्यातील १००९ असे दोनच तालुक्यात पुरुषांच्या तुलनेत स्त्रियांची लोकसंख्या जास्त आढळते. हे दोन्ही तालुके तसे ग्रामीण तालुके आहेत. त्यानंतर अनुक्रमे डहाणू ९९७, वसई ९९६, मोखाडा ९८५, ठाणे ९८१, पालघर ९७४, वाडा ९६५, उल्हासनगर ९६३, भिवंडी ९५६, मुरबाड ९५५, आणि सर्वात कमी शहापूर तालुक्यात ९४९ इतके ग्रामीण आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर होते.

२०११ साली ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील ग्रामीण आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर ९९८ इतके होते. तालुक्यानुसार जिल्ह्यातील ग्रामीण आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरात सर्वाधिक कल्याण तालुक्याचे १०६४ इतके होते. त्यानंतर अंबरनाथ तालुक्याचे १०४१ होते. याशिवाय पुरुषांच्या तुलनेत स्त्रियांची लोकसंख्या जास्त असलेले तालुके म्हणजे अनुक्रमे भिवंडी १०२४, शहापूर १०१७, वाडा १०१२ असे लिंग गुणोत्तर दिसून येते. यानंतर पुरुषांच्या तुलनेत स्त्रियांची लोकसंख्या कमी असलेल्या तालुक्यात अनुक्रमे मुरबाड ९९६, मोखाडा ९९१, विक्रमगड ९८५, पालघर ९८३, वसई ९७७, जव्हार ९७१, तलासरी ९६०, आणि सर्वात कमी लिंग गुणोत्तर डहाणू तालुक्याचे ९५७ इतके दिसून येते. ग्रामीण भागातील लिंग गुणोत्तराच्या वितरणात तालुक्यानुसार खूपच फरक पहावयास मिळतो.

ठाणे पालघर जिल्ह्यातील ग्रामीण भागातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरातील दोन दशकातील चढ-उतार (१९९१-२०११)-



आलेख क्र.२ ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील ग्रामीण भागातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर

१९९१ पासून २०११ पर्यंत २० वर्षातील चढ उतार अभ्यासल्यास असे लक्षात येते की जिल्ह्यात या काळात ग्रामीण आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरात + १३ इतकी वाढ झालेली आहे. तालुक्यानुसार वाढ पाहिल्यास सर्वाधिक वाढ कल्याण तालुक्यात +१०८ इतकी वाढ झालेली दिसून येते. त्यानंतर भिवंडी व शहापूर तालुक्यात +६८ इतके लिंग गुणोत्तर वाढले आहे. त्यानंतर अनुक्रमे वाडा +४७, मुरबाड +४१ पालघर +९, आणि मोखाडा +६ इतकी वाढ झालेली आहे. ठाणे-पालघर जिल्ह्यात ग्रामीण आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरात १९९१ च्या तुलनेत काही तालुक्यात घट झाल्याचेही दिसून येते यात सर्वाधिक घट तलासरी तालुक्यात -५० इतकी घट झालेली आहे. या तालुक्यात १९९१ साली लिंग गुणोत्तर १०१० होते ते २०११ साली घटून ९६० झाले आहे. त्यानंतर डहाणू तालुक्यात -४० लिंग गुणोत्तर कमी झालेले आहे. डहाणू तालुक्यात १९९१ साली ९९७ लिंग गुणोत्तर होते तर २०११ साली ते ९५७ इतके कमी झाले आहे. त्यानंतर जव्हार -३८ आणि वसई -१९ अशी आदिवासींच्या ग्रामीण लिंग गुणोत्तरात घट झालेली आहे.

ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील नागरी भागातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर, (१९९१-२०११)

अ.क्र.	तालुके	१९९१	२०११	लिंग गुणोत्तरातील बदल
१	ठाणे	९१४	१०८१	१६७
२	भिवंडी	७७७	१२२०	४४३
३	शहापूर	९९८	१०२५	२७
४	मुरबाड	९३१	१११३	१८२

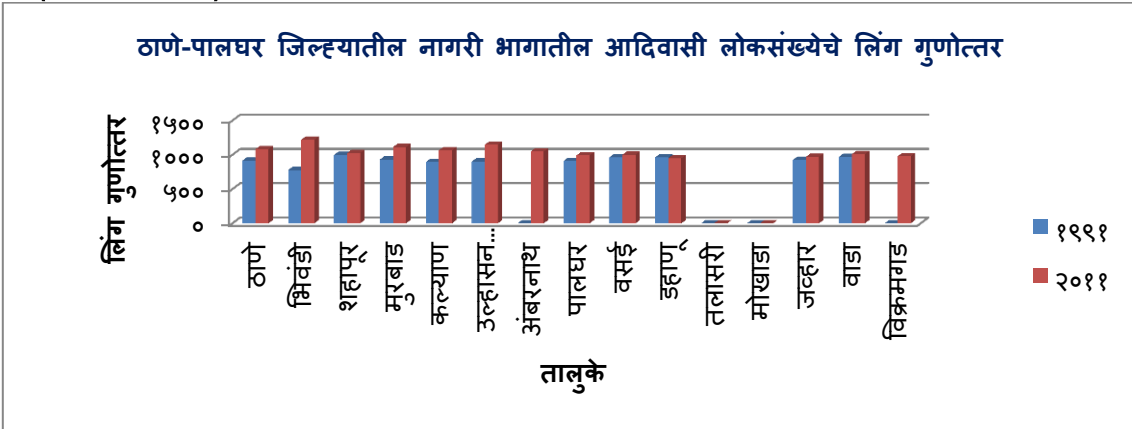
५	कल्याण	८९४	१०६६	१७२
६	उल्हासनगर	९०१	११४७	२४६
७	अंबरनाथ	-	१०४८	-
८	पालघर	९०९	९९२	८३
९	वसई	९६३	१००१	३८
१०	डहाणू	९६३	९४९	-१४
११	तलासरी	-	-	-
१२	मोखाडा	-	-	-
१३	जव्हार	९२५	९७०	४५
१४	वाडा	९६८	१००९	४१
१५	विक्रमगड	-	९७९	-
	एकूण	९१२	९०७	-५

तक्ता क्र. ३: ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील नागरी भागातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर (१९९१-२०११)

ठाणे- पालघर जिल्ह्यातील नागरी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर १९९१ साली ९१२ इतके होते. यामध्ये तालुक्यानुसार लिंग गुणोत्तराचे वितरण पाहिल्यास सर्वाधिक शहापूर तालुक्याचे ९९८ इतके होते.त्यानंतर वाडा तालुक्याचे ९६८ नागरी आदिवासी लिंग गुणोत्तर होते. वसई आणि डहाणू या दोन्ही तालुक्याचे समान म्हणजे ९६३ इतके लिंग गुणोत्तर आढळते. त्यानंतर अनुक्रमे मुरबाड ९३१, जव्हार ९२५, ठाणे ९१४, पालघर ९०९, उल्हासनगर ९०१, कल्याण ८९४ आणि सर्वात कमी भिवंडी तालुक्याचे ७७७ इतके लिंग गुणोत्तर होते. साधारणपणे १९९१ मध्ये नागरी भागात राहणाऱ्या आदिवासी लोकसंख्येत पुरुष लोकसंख्येचे प्रमाण अधिक असलेले दिसून येते.

२०११ साली ठाणे- पालघर जिल्ह्यातील नागरी भागात राहणाऱ्या आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर ९०७ इतके होते. तालुक्यानुसार या नागरी आदिवासी लिंग गुणोत्तरात खूपच विविधता दिसून येते.यात सर्वाधिक लिंग गुणोत्तर भिवंडी तालुक्याचे असून ते १२२० इतके होते. त्यानंतर उल्हासनगर तालुक्याचे ११४७ इतके होते. मुरबाड तालुक्यात १११३ असे नागरी आदिवासी लिंग गुणोत्तर होते. याशिवाय पुरुषापेक्षा स्त्रियांची लोकसंख्या जास्त असलेल्या तालुक्यात ठाणे तालुक्यात १०८१, कल्याण तालुका १०६६, अंबरनाथ १०४८, शहापूर १०२५, वाडा १००९, वसई १००१ असे लिंग गुणोत्तर होते.तर पुरुषांच्या तुलनेत स्त्रियांची लोकसंख्या कमी असलेल्या तालुक्यात अनुक्रमे पालघर ९९२, विक्रमगड ९७९, जव्हार ९७०, डहाणू ९४९ इतके नागरी आदिवासी लोकसंख्या लिंग गुणोत्तर होते. या आधीच्या दशकापेक्षा नागरी भागातील लिंग गुणोत्तरात लक्षणीय वाढ झालेली दिसून येते.

ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील नागरी भागातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरातील दोन दशकातील चढ - उतार (१९९१-२०११)-



आलेख क्र. ३ ठाणे-पालघर जिल्ह्यातील नागरी भागातील आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर (१९९१-२०११) - १९९१ पासून २०११ या २० वर्षात ठाणे- पालघर जिल्ह्यातील नागरी आदिवासी लोकसंख्या लिंग गुणोत्तरात खूपच चढ उतार दिसून येतात. साधारणपणे जिल्ह्याच्या नागरी आदिवासी लिंग गुणोत्तरात -५ इतकी घट झालेली दिसून येते. तालुक्यानुसार चढ उतार पाहिल्यास सर्वाधिक वाढ +४४३ इतकी भिवंडी तालुक्यात दिसून येते. त्यानंतर उल्हासनगर तालुक्यात +२४६ तर मुरबाड तालुक्यात +१८२ आणि कल्याण तालुक्यात +१७२ इतकी वाढ झालेली आहे. याशिवाय ठाणे +१६७, पालघर तालुक्यात +८३, जव्हार तालुक्यात +४५, वाडा तालुक्यात +४१,

वसई +३८ आणि शहापूर +२७ अशी लिंग गुणोत्तरात वाढ झालेली दिसून येते. यावरून या काळात शहरातील आदिवासी स्त्रियांची संख्या वाढलेली दिसून येते. त्याचे कारण ग्रामीण भागातून या काळात शहरात आदिवासी स्त्रियांचे स्थलांतर झालेले दिसून येते. तर फक्त डहाणू तालुक्यातील नागरी आदिवासी लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर -१४ इतके घटलेले दिसून येते.

लिंग गुणोत्तरात झालेले बदल हे प्रामुख्याने येथे वाढत जाणारे नागरीकरण, स्थलांतरीत लोकसंख्येचे वाढते प्रमाण, शिक्षणाचे वाढते प्रमाण, आरोग्याच्या व इतर नागरी सुविधेत झालेली वाढ, स्त्रियांच्या स्थितीत झालेला बदल या प्रमुख कारणामुळे झालेले दिसून येतात.

निष्कर्ष-

ठाणे-पालघर जिल्ह्यांतील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तराचा अभ्यास केल्यानंतर खालील निष्कर्ष निघतात-

- १) ठाणे - पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लिंग गुणोत्तरात तालुक्यानुसार भिन्नता आढळते.
- २) ठाणे- पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी बहुल तालुक्यातील ग्रामीण लोकसंख्येचे लिंग गुणोत्तर खूपच सकारात्मक असून ते आदिवासी समाजातील स्त्रियांची सुदृढ स्थिती दर्शवते.
- ३) ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लिंग गुणोत्तर ग्रामीण भागापेक्षा नागरी भागात अधिक आहे.
- ४) १९९१ ते २०११ या कालावधीत ठाणे -पालघर जिल्ह्यातील आदिवासी लोकसंख्येच्या लिंग गुणोत्तरात वाढ झालेली आहे.

संदर्भ सूची :

- १) अहिरराव व अलीझाड (२००१) : " लोकसंख्या भूगोल ", निराळी प्रकाशन, पुणे.
- २) कुलकर्णी शौनक (२००९) : "महाराष्ट्रातील आदिवासी", डायमंड प्रकाशन, पुणे.
- ३) **Thane District Gazetteer**
- ४) **District Census Handbook Thane 1991**
- ५) **District Census Handbook Thane 2001**
- ६) **District Census Handbook Thane 2011**
- ७) **Thane district Statistical Handbook 2012**
- ८) जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालोचन २०१३ -ठाणे जिल्हा
- ९) जिल्हा आपत्ती व्यवस्थापन आराखडा २०१२, ठाणे जिल्हा
- १०) <https://mr.wikipedia.org/s/a24>
- ११) <http://www.thanezp.mahapanchayat.gov.in/home/>
- १२) <http://indikosh.com/subd/582845/thane>
- १३) <https://data.gov.in/catalog/villagetown-wise-primary-census-abstract-2011-maharashtra>
- १४) <https://data.gov.in/search/site/census>

नांदेड जिल्ह्यातील करडाई पीकाचा भौगोलिक अभ्यास

प्रा.डॉ.यु.एस.कानवटे

संशोधक व मार्गदर्शक, वसंतराव नाईक महाविद्यालय, नांदेड.

प्रस्तावना :

हजारो वर्षांपासून भारताच्या अर्थकारणामध्ये कृषी क्षेत्र हेच केंद्रस्थानी आहे. सिंधू संस्कृतीच्या काळपासून भारताला समृद्ध शेतीचा वारसा लाभला आहे. सिंधू संस्कृती ही नागरी संस्कृती होती. सिंधू व तिच्या उपनद्या परिसरात गाळाची जमीन विपुल गाळपुरवठा व अनुकूल हवामान ह्यामुळे शेती हा प्रमुख व्यवसाय होता. गहु, वाटाना, तीळ इ. पिके काढीत.^१

राष्ट्रकुटांची प्रारंभिक काळातील राजधानी असलेले नांदेड जिल्ह्यातील 'कंधार' हे नगर महाराष्ट्रातील प्राचीन नगरांपैकी एक आहे. शेती हाच या काळातील लोकांचा प्रमुख व्यवसाय होता. शेती हेच त्यांच्या उपजिवीकेचे साधन होय. शेती निसर्गावर अवलंबून असली तरी विहीर, तलाव बांधून शेतीला पाणीपुरवठा केला जाई.^२ राष्ट्रकुट कालखंडात विभिन्न प्रकारची पिके घेतली जात असत. ज्वारी, बाजरी, एरंडी, कापूस, हरभरा, गहु, ज्वारी, तीळ, भूईमूग, हळद व जवस पिकांचे उत्पादन घेतले जाई. शेतकऱ्यांना आपल्या शेतीतील उत्पन्नाचा दहावा हिस्सा शेतसारा राज्याच्या तिजोरीत भरावा लागे. कंधार येथून नांदेड येथील विद्यार्थ्यांना तेल, मीठ, दुधाचा पुरवठा केला जाई.^३

प्रस्तुत शोध निबंधात "नांदेड जिल्ह्यातील 'करडाई' पिकाचा भौगोलिक अभ्यास" यासाठी सन १९९१ ते २००५ या पंधरा वर्षांचा कालावधी करडाई पिकाचे क्षेत्र व उत्पादन अभ्यासासाठी निवडलेला आहे. या संशोधन काळात पीक क्षेत्रात व उत्पादनात बदल झालेला असून सन १९९१-९५ या पाच वर्षात करडाई पिकाखालील सर्वात जास्त क्षेत्र देगलूर तालुक्यात १७४९ हेक्टर तर सर्वात जास्त उत्पादन मुखेड तालुक्यात ५७.१२% असलेले आढळते. तर सन १९९६ ते २००० या पाच वर्षात करडाई पिकाखालील सर्वात जास्त क्षेत्र देगलूर तालुक्यात १८०८ हेक्टर असून सर्वात जास्त उत्पादन भोकर तालुक्यात ४३.१३% आढळले. तर सन २००१ ते २००५ या पाच वर्षात करडाई पिकाचे सर्वात जास्त क्षेत्र देगलूर - १९५५ हेक्टर तर सर्वात जास्त उत्पादन देगलूर तालुक्यात ३०.१६% आढळते. यावरून असे लक्षात येते की संशोधन क्षेत्रातील करडाई पिकाचे क्षेत्र दिवसेंदिवस कमी होत असलेले दिसून येते.

बीज संज्ञा : शेती, क्षेत्र, पिके, उत्पादन इत्यादी

प्रास्ताविक :

रब्बी हंगामातील करडाई हे महत्वाचे तेलबिया पिक आहे. करडाईला हिंदीमध्ये 'कुसुम', संस्कृतमध्ये 'कुसंब' तर इंग्रजीमध्ये 'सॅफ्लावर' किंवा 'पॅरोटसीड' असे म्हणतात. करडाईचे शास्त्रीय नाव 'कार्येमस टिकोरियस' असे आहे. करडाईचे मुळस्थान पश्चिम आशिया आणि अफगाणिस्तान यांचे दरम्यानचे समजले जाते.

करडाई हे समशितोष्ण व उष्ण हमावनातील पिक आहे. सुरुवातीची वाढ ही थंड हवामानात योग्य होते. कमी दिनमानाचे पीक असल्याने आपल्याकडे रब्बी हंगामात सर्वोत्तम येते. फुलोऱ्याच्या काळातील पाऊस त्रासदायक ठरतो. जमिन उत्तम निचऱ्याची, मध्यम ते भारी काळी जमीन पिकाच्या वाढीस मानवते. शेतात पाणी साठवून राहिल्यास मर या रोगाचे प्रमाण वाढते. हलकी, मुरमाड तसेच डोंगर उताराची जमीन करडाईस मानवत नाही. सामान्यपणे १५° ते १७° से. तामानात करडाईचे पीक चांगले येते.^४

करडाई या पीकास मध्यम म्हणजे २० ते २५ से.मी. पाऊस लागतो. करडाईचे मूळ खोल जात असल्याने हे कमी ओल्यावर येणारे पीक आहे.^५ करडाई पीकास ओलावा धरून ठेवणारी मृदा अधिक पोषक असते. गाळाची लोम

प्रकारची मृदा या पिकास उत्तम असते.^६ नांदेड जिल्ह्यातील हिवाळ्यातील तापमान, मृदा, जमिन करडाई पिकास अनुकूल आहे.

- उद्दिष्टे :** १) नांदेड जिल्ह्यातील करडाई पीकाचा अभ्यास करणे.
२) नांदेड जिल्ह्यातील एकुण लागवड क्षेत्रातील झालेल्या बदलाचा अभ्यास करणे.
३) नांदेड जिल्ह्याच्या विकासात करडाई पिकाचे योगदान अभ्यासणे.

सामग्री संकलन आणि संशोधन पध्दती :

प्रस्तुत शोध निबंधासाठी आवश्यक असणारी आकडेवारी ही द्वितीय स्वरूपाची असून ती माहिती नांदेड जिल्हा सा. आर्थिक समालोचन वर्ष १९९१ ते २००५ यामधून संकलीत केलेली आहे. प्राप्त माहितीचे सांख्यिकीय पनन करून कोष्टक दर्शविले आहे. सदर संशोधनात प्राप्त झालेल्या माहितीची टक्केवारी काढण्यासाठी खालील सुत्राचा वापर करण्यात आलेला आहे.

विशिष्ट घटकाची आकडेवारी

$$\text{सुत्र : } \frac{\text{घटकाची टक्केवारी एकुण घटकाची बेरीज}}{\text{एकुण घटकाची बेरीज}} \times १००$$

अभ्यासक्षेत्र :

नांदेड जिल्हा हा मराठवाड्यातील एकुण ८ जिल्ह्यांपैकी एक असून महाराष्ट्राच्या दक्षिण पूर्व दिशेला दक्षिणोत्तर पसरलेला आहे. नांदेड जिल्ह्याचा अक्षवृत्तीय विस्तार १८°१५ ते १९°५५ उत्तर अक्षांस व रेखावृत्तीय विस्तार ७६°५६ पूर्व ते ७८°१९ पूर्व रेखांश मध्ये स्थित आहे.^७ नांदेड शहर गोदावरी नदीच्या काठावर वसलेले आहे. नांदेड जिल्ह्याच्या उत्तरेस महाराष्ट्राचा यवतमाळ जिल्हा, दक्षिणेस परभणी जिल्हा, दक्षिण-पश्चिमेस लातूर जिल्हा आहे. जिल्ह्याच्या दक्षिण पूर्व दिशेला आंध्रप्रदेशातील आदिलाबाद व निजामाबाद हे जिल्हे आहेत. दक्षिण कर्नाटक राज्यातील विदर जिल्ह्याचे संतापुर तहसिल आहे. प्राकृतिक रचनेच्या बाबतीत उत्तरेकडील डोंगराळ प्रदेश, गोदावरी खोऱ्याचा प्रदेश व बालघाट डोंगर रांगाचा प्रदेश असे एकूण तीन स्वाभाविक विभाग पडतात. तर नांदेड जिल्ह्यातून वाहणाऱ्या महत्वाचा नद्या - गोदावरी, मांजरा, मन्याड, सरस्वती, पैनगंगा, आसना, सिता व लेंडी ह्या आहेत. नांदेड जिल्ह्याचे हवामान उन्हाळ्यात ४२° कमाल से. तर हिवाळ्यात १८°से. इतके किमान तापमान असते. यामुळे येथील हवामान थोडे विषम आहे.^८ नांदेड जिल्ह्यात नांदेड, अर्धापूर, मुदखेड, लोहा, कंधार, हदगाव, भोकर, हिमायतनगर या तालुक्यात ७६ से.मी. ते १०० से.मी. दरम्यान पावसाचे वार्षिक प्रमाण आहे. माहूर, किनवट, धर्माबाद, बिलोली, देगलूर, मुखेड, नायगाव व उमरी या तालुक्यात १०० से.मी. ते १५० से.मी. दरम्यान पावसाचे वार्षिक प्रमाण आहे.^९ नांदेड जिल्ह्यात खोल काळी, मध्यम काळी व उथळ काळी तीन प्रकारच्या मृदा आहेत.^{१०} सर्वसाधारणपणे काळी सुपिक व कसदार, मध्यम काळी, जंगलव्याप्त, मुरमाड, रेतीयुक्त इ.प्रकारच्या मृदा आढळतात. नांदेड जिल्ह्यातील तालुकानिहाय करडाई पिकाचे क्षेत्र व उत्पादन कोष्टक. ०१, (क्षेत्र = हेक्टरमध्ये) (उत्पादन = टक्केवारीमध्ये)

तालुके	करडाई					
	१९९१ ते १९९५		१९९६ ते २०००		२००१ ते २००५	
	क्षेत्र हे.	उत्पादन	क्षेत्र हे.	उत्पादन	क्षेत्र हे.	उत्पादन
नांदेड	६७८	३२.३६	८१	१३.६९	१४६	०.११
हदगाव	५५७	३३.७२	५५८	३५.०४	९८	०.६८
किनवट	४२	८.९२	१८६	२.०४	४०	४.४९
भोकर	८११	२८.१२	१६१	४.३१	४२७	०.४४

बिलोली	१३५५	२१.६०	१०८७	२१.०४	७९५	५.०९
देगलूर	१७४९	४५.९२	१८०८	१५.२७	१९५५	३०.१६
मुखेड	८८६	५७.२२	१०२६	२५.४०	६५७	३.३१
कंधार	४७६	७.८८	५६७	८.५३	२८९	२.७२
एकुण	६५६४		५४७४		६६०७	

स्त्रोत : संशोधन, एप्रिल-२०१२

नांदेड जिल्ह्यातील तालुकानिहाय करडाई पिकाचे क्षेत्र सन १९९१-९५ या पाच वर्षांचा अभ्यास केल्यास असे स्पष्ट होते की, कोष्टक क्र.०१ नुसार नांदेड जिल्ह्यात सर्वात जास्त क्षेत्र देगलूर तालुक्यात - १७४९ हे असून त्या खालोखाल बिलोली-१३५५ हे., मुखेड - ८८६ हे., भोकर-८११ हे., नांदेड - ६७८ हे., हदगाव - ५५६ हे., कंधार - ४७६ हे., तर सर्वात कमी क्षेत्र किनवट तालुक्यात असलेले आढळते. नांदेड जिल्ह्यात एकुण करडाई क्षेत्र - ६५६४ हे. असलेले आढळते.

तसेच नांदेड जिल्ह्यातील तालुकानिहाय करडाई पिकाच्या उत्पादनाचा सन १९९१ ते १९९५ या पाच वर्षांचा अभ्यास केल्यास असे स्पष्ट होते की, कोष्टक क्र.०१ नुसार नांदेड जिल्ह्यात सर्वात जास्त उत्पादन मुखेड तालुक्यात ५७.२२ टक्के असलेले आढळते. त्याखालोखाल देगलूर - ४५.९२ टक्के, हदगाव - ३३.७२ टक्के, नांदेड - ३२.३६ टक्के, भोकर - २८.१२ टक्के, बिलोली - २१.६० टक्के तर सर्वात कमी कंधार - ७.८८ टक्के व किनवट ८.९२ टक्के असलेले आढळून येते.

नांदेड जिल्ह्यातील तालुकानिहाय करडाई पिकांचे क्षेत्र सन १९९६ ते २००० या पाच वर्षांचा अभ्यास केल्यास असे स्पष्ट होते की, कोष्टक क्र.०१ नुसार नांदेड जिल्ह्यात सर्वात जास्त क्षेत्र देगलूर-१८०८ हे. असून त्याखालोखाल बिलोली-१०८७ हे., मुखेड-१०२६ हे., कंधार-५७६ हे., हदगाव-५५८ हे., भोकर १६१ हे. व सर्वात कमी क्षेत्र नांदेड तालुक्यात - ८१ हे. आढळते. नांदेड जिल्ह्यात सन १९९६ ते २००० या पाच वर्षांचे एकुण क्षेत्र- ५४७४ हे. आढळते. म्हणजेच सन १९९१ ते १९९५ या पाच वर्षांतील क्षेत्रापेक्षा १०९० हे. ने कमी झालेले आढळते.

तसेच नांदेड जिल्ह्यातील तालुकानिहाय करडाई पिकाच्या उत्पादनाचा सन १९९६ ते २००० या पाच वर्षांचा अभ्यास केल्यास असे स्पष्ट होते की, कोष्टक क्र.०१ नुसार नांदेड जिल्ह्यात सर्वात जास्त उत्पादन हदगाव तालुक्यात - ३५.०४ टक्के आढळते. त्याखालोखाल मुखेड - २५.४० टक्के, बिलोली - २१.०४ टक्के, देगलूर - १५.२७ टक्के, नांदेड - १३.६९ टक्के, कंधार - ८.५३ टक्के, भोकर - ४.३१ टक्के तर सर्वात कमी उत्पादन किनवट तालुक्यात असलेले आढळते.

नांदेड जिल्ह्यातील तालुकानिहाय करडाई पिकाचे क्षेत्र सन २००१ ते २००५ या पाच वर्षांचा अभ्यास केल्यास असे स्पष्ट होते की, कोष्टक क्र.०१ नुसार नांदेड जिल्ह्यात सर्वात जास्त करडाईचे क्षेत्र देगलूर तालुक्यात - १९५५ हे. आढळून येते. त्याखालोखाल बिलोली - ७९५ हे., मुखेड ६५७ हे., भोकर - ४२७ हे., कंधार २८९ हे., नांदेड- १४६ हे., हदगाव - ९८ हे. तर सर्वात कमी क्षेत्र किनवट - ४० हे. असलेले आढळते. सन २००१ ते २००५ या पाच वर्षांत नांदेड जिल्ह्यात एकुण करडाईचे क्षेत्र ४४०७ हेक्टर असलेले आढळते. याचाच अर्थ सन १९९१-९५ व सन १९९६ ते २००० या दहा वर्षांच्या मानाने कमी झालेले आढळते.

तसेच नांदेड जिल्ह्यातील तालुकानिहाय करडाई पिकाच्या उत्पादनाचा सन २००१ ते २००५ या पाच वर्षांच्या अभ्यास केल्यास असे स्पष्ट होते की, कोष्टक क्र.०१ नुसार नांदेड जिल्ह्यात सर्वात जास्त देगलूर तालुक्यात ३०.१६ टक्के, असून त्याखालोखाल बिलोली - ५.०९ टक्के, किनवट - ४.४९ टक्के, तर सर्वात कमी नांदेड तालुक्यात ०.११ टक्के असलेले आढळते.

निष्कर्ष :

- १) नांदेड जिल्ह्यात करडाईचे पिक क्षेत्र सर्वात जास्त देगलूर तालुक्यात असलेले आढळते.
- २) नांदेड जिल्ह्यात संशोधन कालावधीत करडाईचे क्षेत्र दिवसेंदिवस कमी होत असलेले दिसून येते.
- ३) नांदेड जिल्ह्यातील किनवट तालुक्यात करडाई पिकास क्षेत्र सर्वात कमी असलेले आढळून येते.

उपाय :

- १) लोकसंख्येची तेलाची गरज भागवण्यासाठी करडाई पिकाचे लागवड क्षेत्र वाढवणे गरजेचे आहे.
- २) नांदेड जिल्ह्यात करडाई पिक क्षेत्रातील लागवड क्षेत्रातील विषमता कमी करून सम पातळीवर पिके घेण्यासाठी शेतकऱ्यांना लाभदायी योजना लागू कराव्यात.

संदर्भ सूची :

- १) मा.म.देशमुख, "प्राचीन भारताचा इतिहास" विश्वभारती प्रकाशन नागपूर, दहावी आ. जून १९९०, पृ.क्र.३९
- २) अ.मु.ठारके, अ.भा.दळवे, "राष्ट्रकुटाची राजधानी कंधार", कल्पना प्रकाशन नांदेड प्रथम आवृत्ती २००५, पृ.क्र.११.
- ३) अ.मु.ठारके, अ.भा.दळवे, "राष्ट्रकुटाची राजधानी कंधार", कल्पना प्रकाशन नांदेड प्रथम आवृत्ती २००५, पृ.क्र.२२१.
- ४) मिलींद भुजबळ, "गळीत धान्य", ओम प्रकाशन पुणे, प्र.आ.२००५, पृ.क्र.८२.
- ५) के.ए.खतिब, "महाराष्ट्राचा भूगोल" सागर प्रकाशन पुणे, द्वितीय आवृत्ती २००७, पृ.क्र.२३८.
- ६) के.ए.खतिब, "महाराष्ट्राचा भूगोल" सागर प्रकाशन पुणे, द्वितीय आवृत्ती २००७, पृ.क्र.२४०.
- ७) जिल्हा सामाजिक, आर्थिक समालोचन जिल्हा नांदेड, २००४-०५, पृ.क्र.०३
- ८) सु.प्र.दाते, करमरकर, "सुगम भूविज्ञान" विद्या प्रकाशन नागपूर, २००१, पृ.क्र.१०२.
- ९) नांदेड जिल्हा विकास पर्व, "पूर परिस्थितील नांदेड", वर्ष - २००५, पृ.क्र.४५.
- १०) ए.बी.सवदी, "द मेगा स्टेट महाराष्ट्र", निराली प्रकाशन पुणे, नववी आवृत्ती - २००५, पृ.क्र.५३.

गरीबी निर्मूलन वेध व अभ्यास

प्रा.सौ. अरुणा ईटकापल्ले¹ प्रा. सारीका बकवाड²

1ग्रामीण महाविद्यालय वसंतनगर,

2ब्ल्यू वेल्स ज्युनियर कॉलेज वामननगर नांदेड

“देवा तुझ्या पायरीला

सांग कुठे न्याय आहे?

रोज येथे आतड्याला

वेगळाच घाव आहे”

ही विदारक विवंचना रोजच्या जगण्यातली स्थिरता हरवणारी आहे, सत्ता गाजवणारी अस्थिरता, ही अनेक अनेक विकृत मानसिकतेला जन्माला घालते. गेल्या कित्येक दशकांपासून देशात “गरीबी हटाव” चा नारा दिला जातोय, दारिद्र्यरेषेखालील लोकांचा जीवनमान सुधारण्याचा सरकार वेगवेगळ्या योजना आणल्याचा व आणण्याचा दावा करते, पण तसं खरच आहे की? हे विचार करणेही तितकेच महत्वाचे.

“देशाची सुबत्ता ज्या घटकावर ती निर्धारित असते त्यातील महत्वाचे घटक म्हणजे देशात असणारी बेरोजगारी व उद्योग व्यवसायातील उद्यमशील कामगार, देशातील चौथ्या वर्गापर्यंत सोयी व सुविधा मूलभूत गरजांची पूर्तता होणे म्हणजे राष्ट्र गरिबीतून निर्मूलन झाले असे म्हणावयास हरकत नाही”.

गरीबीला अनेक घटक जबाबदार असतात. सद्य परिस्थिती जर आपण आढावा घेण्याचा घ्यायचा ठरवला तर कोरोनाच्या प्रचंड विघातक प्रादुर्भावाने जनजीवन विस्कळीत झाले आहे. अनेकांच्या उदरनिर्वाहाचा प्रश्न निर्माण झाला अनेकांनी टोकाचे पाऊल उचलून या निरंतर जीवनाला मुकावे लागले. देशातील अनेक घटकांमध्ये गरिबी निर्मूलन सारखे विषय घेऊन ती निवारणासाठी प्राथमिक सत्ता कार्यरत राहिली तर गरिबीची उद्रेक होणार नाही. संधी मिळण्यातील विषमता ही गरीबी निर्मूलन च्या दृष्टीने सर्वात जास्त धोकादायक आहे. गरीबी ही बावन कर्मे बरोबर सामाजिक आर्थिक घटकांशी सुद्धा जोडून आणणारी अवस्था आहे. गरीबीमुळे जिच्या जीवनातील असंख्य अशा घटकांवर परिणाम पडतो. उत्पन्नाच्या संधी व अर्धोजनांचा प्रश्न समस्या इत्यादी अनेक बाबींच्या माध्यमातून निर्माण होणारे वैफल्य हे विवंचना व गरीबीतून निर्माण होते. सधन राष्ट्रांच्या व्याख्येत त्या देशातील व्यक्तींची स्वावलंबी दृढता कारणीभूत आहे. परावलंबन, अज्ञान, अस्थिरता या गोष्टीमुळे अत्याचाराला बळी पडण्याची शक्यता नाकारताच येत नाही. गरिबी निर्मूलनाचा उद्देशातून पर्यायी उपचार वा विकल्प निवडले तर चौथ्या स्तरापर्यंत वा तळागाळातील वर्गापर्यंत रोजगाराची उत्पत्तीची साखळी पोहोचली पाहिजे, उत्पन्न व निर्मिती रोजगाराने सुबत्ता वाढते यातून आर्थिक चणचण नाहीशी झाली की प्राथमिकतेपासूनच गरिबी निर्मूलनासाठीचे प्रण पूर्ण करण्याचा उद्देश्यापर्यंत आपण पोहोचता येते.

गरिबीनिर्मूलनाची पाळंमुळं हे रोजगार उत्पन्न व्यर्थ खर्च व एकंदरीत उत्पन्न व खर्चाशी असतो. त्यातले संतुलन योग्य असले की गरजा वा त्यांची पूर्ती होऊन संचियातून उर्वरित घटकांना प्रधानता देता येते. गरिबी निर्मूलन हे एक मोठे आव्हान आहे आणि ते स्वीकारून त्याला संपुष्टात आणणे यासाठी तत्पर असणे गरजेचे आहे.

गरीबी निर्मूलनातील काही महत्वाच्या बाबी :-

1) आर्थिक प्रगतीचा वेगळा वेग :-

जर देशाचा विकास होत नसेल तर मग गरिबी निर्मूलनाच्या पातळीवर प्रगती होणं कठीण आहे. कारण मोठ्या प्रमाणात उत्पन्नाची पुनर्रचना झाली तरच गरिबी निर्मूलन होऊ शकते आणि असं करणं कठीण आहे.

2) सर्वसमावेशक :-

गरिबी कमी होण्यासाठी अर्थव्यवस्थेची स्थिती प्रगती होत राहणं गरजेचं असतं. पण गरिबी निर्मूलनासाठी गरजेची ही एकमेव गोष्ट नाही अनेक देशांची प्रगती ही पुरेशी सर्वसमावेशक नाही.

3) पायाभूत सुविधांची उपलब्धता :-

लोकांकडे पैसा आला की मगच अर्थव्यवस्थेची भरभराट होते असं नाही. शिक्षण, अर्थसहाय्य आणि चांगल्या पायाभूत सुविधा यांचीही यात महत्त्वाची भूमिका असते. जर या गोष्टीतील परिपक्वता नसेल तर याचाही परिणाम सर्वसमावेशक प्रगतीवर होताना आपणास दिसून येईल.

मजुरीतून उत्पन्न वाढवलं गेलं तर गरिबी सामना करताना आर्थिक वाढीला चालना मिळते.

4) संघर्ष :-

गेल्या काही वर्षांमध्ये झालेल्या राजकीय आणि हिंसक संघर्ष यामुळे अनेक देशांनी गेल्या काही काळात केलेली प्रगती पुसली गेली. गरीबी निर्मूलनातील काही महत्त्वाच्या बाबी ज्या देशांमध्ये स्थिती नाजूक आहे, ज्या देशांमध्ये संघर्ष सुरू आहे तिथे गरिबी जास्त केंद्रित झालीय. कारण याच काळामध्ये इतर देशांनी मात केलेली आहे. संघर्ष हा प्रवाहाचा ओघ असतो. निर्माण झालेल्या परिस्थितीवर मात करण्यासाठी संघर्षातून उपाययोजना करत परिणामकारक ठरवावे लागतात.

5) शेवटच्या वर्गापर्यंत पोहोचणे आवश्यक :-

2030 पर्यंत गरिबीचे निर्मूलन करणे हे संयुक्त राष्ट्रांच्या महासंघाच्या उद्दिष्ट यापैकी एक आहे. पण, गतीने जर यात वेग धरला नाही तर हे उद्दिष्ट शेवटी उद्दिष्टच राहील. आपल्या क्षमता वाढवून शिक्षण आरोग्य यासारख्या सामाजिक सुविधा सगळीकडे शेवटच्या तळापर्यंत पोहोचल्या तरच निर्मूलन साध्य होईल.

6) विषमता :-

प्रत्येक घटकाच्या ह्यासासाठी वा अविकसितेसाठी त्या घटकाची विषमता कारणीभूत ठरते. म्हणूनच गरिबी निर्मूलन आणि सामाजिक प्रगतीच्या दिशेने पुढे जाताना वाढती विषमता हेच आपल्या समोर मोठे आव्हान असेल, ही विषमता केवळ उत्पन्नासाठी नव्हे तर संधीची उपलब्धता मिळण्यातही विषमता आहे. मिळणारी नोकरी वा नविन गुंतवणुकीच्या संधी मिळायला हव्यात.

निष्कर्ष :-

शिक्षण पद्धती आणि क्षमता यांचा जेव्हा विचार केला जातो तेव्हा बहुतांशतः तो मध्यमवर्गीय अंगानेच केला जातो..समानतेचा सामान्य दर अभ्यासला तर भारतात गरिबीचं प्रमाण प्रचंड आहे आणि सर्व आर्थिक वर्गातील मुले एकत्र शिकत असताना, एकाच दर्जाची परीक्षा देत असताना, त्या मुलांच्या घरातील दारिद्र्याचाही त्यांच्या बौद्धिक क्षमतांवर मोठा प्रभाव पडत असतो. शास्त्रीय अंगाने या वास्तवाचा घेतलेला हा वेध-

मुल्य:-

विकास ही सार्वभौम प्रक्रिया आहे. .

तीच्या पूर्णत्वासाठी विघातक ठरणार्या घटकांना प्रथमतः ताळेबंद केले गेल्यास ते साध्य करता येईल

संदर्भ:-

1. गरिबी. २०१८ जून १० शिक्षण आणि क्षमता यावरील लेख ,
2. जगातली गरिबी खरंच नाहीशी होऊ शकते का? यावरील लेख २९ डिसेंबर २०१९.
3. महाराष्ट्र टाइम्स या वर्तमान पत्रातील लेख.
4. बीबीसी न्यूज ऑनलाईन यातील लेख.
5. लोकसत्ता वर्तमान पत्रातील लेख.

कोरोना व्हायरसचा पर्यटनावरील प्रभाव

प्रा. डॉ. कळसकर सूर्यकांत नागनाथ

भूगोल विभाग प्रमुख, कै. बापूसाहेब पाटील एकंबेकर ग्रामीण महाविद्यालय हणगेगांव ता. देगलूर जि. नांदेड

Email. ID kalaskarsuryakant@gmail.com

सारांश :-

संपूर्ण जगामध्ये कोरोना व्हायरसचा प्रसार वेगाने झाल्यामुळे त्याचे आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, औद्योगिक आणि पर्यटनावर परिणाम झाला आहे. एकूणच कोरोना व्हायरसचा परिणाम सर्वच क्षेत्रावर झाला आहे. कोविड-19 चा प्रभाव सर्वाधिक पर्यटन क्षेत्रावर आणि व्यवसायावर झाला आहे. कोविड-19 हा संसर्गजन्य असल्यामुळे प्रवासावर बंदी आणि सामाजिक अंतर या दोन घटकावर अवर्जून भर देण्यात आला. या दोन्ही नियमांचा परिणाम पर्यटन व्यवसायावर झालेला दिसून येतो. कोरोना व्हायरसचा प्रादुर्भाव व प्रसार रोखण्यासाठी लॉकडाऊन या ऊपायायोजनांची निवड करण्यात आली. या लॉकडाऊनमुळे अंतरराष्ट्रीय प्रवास आणि राष्ट्रीय प्रवासच नाही तर जिल्हा-जिल्हाच्या सीमाही बंद करण्यात आल्या त्याचबरोबर जिल्हा अंतर्गत प्रवासावरही बंदी घालण्यात आली. प्रवासास बंदी असल्यामुळे पर्यटन व्यवसाय लॉकडाऊनसोबतच लॉक झाला असे म्हणावयास काही हरकत नाही. कोरोना या संसर्गजन्य रोगाची लोकांमध्ये अशी दहशत निर्माण झाली की, लोक पर्यटनाच्या अनुषंगाने बोलायलाही तयार नसल्याचे दिसून आले. प्रेक्षणीय स्थळे, नैसर्गिक प्रेक्षणीय स्थळे आणि धार्मिक स्थळे किंवा अभिक्षेत्र या ठिकाणाची अर्थव्यवस्था ही पर्यटकावर अवलंबून असते. अशा या अभिक्षेत्रातील सर्व व्यावसायावर सुध्दा या कोरोनामुळे करण्यात आलेल्या लॉकडाऊनचा परिणाम झाला असल्याचे दिसून येते.

प्रस्तावना :-

भारताच्या सकल राष्ट्रीय उत्पन्नामध्ये पर्यटन व्यवसायाचा हिस्सा 9.2 टक्के आहे, तर जगाच्या जीडीपीत दहा टक्के इतका आहे. भारतात सुमारे 2.67 कोटी जणांना पर्यटनातून रोजगार मिळतो. 2018 या वर्षात पर्यटन व्यवसायातून भारताला 28.6 अब्ज डॉलरची कमाई झाली आहे. गेल्या काही वर्षात पर्यटनाला जाणाऱ्यांची संख्या झपाट्याने वाढत चालली असल्यामुळे तसेच सोयीसुविधांची उपलब्धतेमध्ये वाढ होत गेल्यामुळे हा व्यवसाय भरभरटीच्या शिखरावर जात असतानाच कोरोनाच्या संकटामुळे हा व्यवसाय डबघाईला आला. कोरोना या संसर्गजन्य आजाराला आळा घालण्यासाठी जगातील सर्वच देशांनी लॉकडाऊन हा पर्याय निवडला. या लॉकडाऊनमुळे काही व्यवसाय पूर्णतः बंद तर काही व्यवसाय अंशतः बंद करण्यात आले. लॉकडाऊनमुळे पर्यटन व्यवसाय पूर्णतः बंद झाला, कारण अंतरराष्ट्रीय प्रवासापासून ते जिल्हांतर्गत प्रवासावर बंदी घालण्यात आली आणि पर्यटन व्यवसाय हा प्रवासाशिवाय होणे शक्यच नाही तसेच या व्यवसायामध्ये वर्क फ्रॉम होम हा ऑप्शन नाही. त्यामुळे आपोआपच हा व्यवसाय संपूर्ण लॉकडाऊनच्या कालावधीत पूर्णतः बंद झाला. कोरोनाचा प्रसार जगभर ज्या पध्दतीने झाला त्यामुळे लोकांच्या मनात प्रवासाची भीती आहे यामुळे ते लॉकडाऊननंतरही फिरायला किंवा पर्यटनासाठी प्रवासाला लगेच जातील असे दिसून येत नाही.

विशेषतः एप्रिल आणि मे हे दोन महिने भारतीय पर्यटन व्यवसायासाठी आणि पर्यटकांसाठी अनुकूल असतात. गेल्या वर्षी मार्च 2020 मध्ये संपूर्ण भारतात संपूर्ण लॉकडाऊन करण्यात आले आणि हे लॉकडाऊन 30 जून पर्यंत कायम ठेवण्यात आले. चालू वर्षामध्ये मार्च 2021 मध्येच लॉकडाऊनची सुरुवात झाली आणि 31 मे पर्यंत संपूर्ण लॉकडाऊन ठेवण्यात आले. 1 जून पासून अंशतः लॉकडाऊन करण्यात आले. म्हणजेच ज्या महिन्यात पर्यटन व्यवसायाची भरभराट असते त्याच महिन्यात कोरोनाचा प्रसार वेगाने होत असल्यामुळे संपूर्ण लॉकडाऊन करणे अनिवार्य झाले असल्याचे दिसून येते.

विषय विवेचन :-

भारत हा विविधतेने नटलेला देश असल्यामुळे भारतातील ही विविधता प्रक्षेपित असून ही प्रक्षेपित, नयनरम्य आणि नसर्गरम्य स्थळे पाहण्यासाठी देशातीलच नाही परदेशातील अनेक पर्यटक भारतामध्ये पर्यटनासाठी येतात. या पर्यटकांमुळेच भारतातील काही अभिक्षेत्राचीच नाही तर राज्याची सुद्धा अर्थव्यवस्था पर्यटन या व्यवसायावर अवलंबून असल्याचे दिसून येते. भारतामध्ये काही नैसर्गिक पर्यटन स्थळे आहेत, ज्यामध्ये सागर किनारे, सरोवरे, धबधबे, राखीव जगले, व्याघ्र प्रकल्प, पर्वत शिखरे, नैनिताल, दार्जिलिंग, सिमला, ऊटी, महाबळेश्वर, माथेरान, लोणावळा, खंडाळा तर अनेक ऐतिहासिक स्थळे ज्यामध्ये किल्ले, राजवाडे, ताजमहल, मिनार, मनोरे इत्यादी. धार्मिक पर्यटन स्थळे ज्यामध्ये सर्व धर्मांची पवित्र ठिकाणे, तिरुपती, शिर्डी, पंढरपूर, महाबळेश्वर, चार धाम, काशी, मथूरा, अजमेर, बौद्धगया, नागपूर येथील दिक्षाभूमी, विविध संगम स्थाने इत्यादी यांचा समावेश होतो. अशा ठिकाणी जे व्यवसाय विकसित झाले आहेत किंवा या परिसराचा जो विकास झाला आहे, त्यामध्ये पर्यटनासाठी येणाऱ्या पर्यटकांच्या संख्येनुसार आणि पर्यटकांच्या प्रकारानुसार म्हणजेच येणार पर्यटक हा अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय, राज्यीय किंवा जिल्हा अंतर्गत आहे, यावरून तेथील व्यवसायाचा दर्जाची श्रेणी असलेली दिसून येते. अशा पर्यटन स्थळांची व्यावसायिक आणि आर्थिक उभारणी पर्यटकांच्या संख्येवरून झाली आहे. कोरोना संसर्गाला रोखण्यासाठी करण्यात आलेल्या लॉकडाऊनमुळे या पर्यटन स्थळांची अर्थव्यवस्थाच मोडकळीस आली असल्याचे दिसून येते.

पर्यटनावर अवलंबून असलेल्या खालील व्यवसायावर परिणाम झालेला आहे
हॉटेल व्यवसायावरील परिणाम :-

पर्यटनासाठी प्रसिद्ध असलेले अनेक ठिकाणे लॉकडाऊनमुळे ओस पडली आहेत. गोवा असेल किंवा कोकणची किनारपट्टी. तसेच तिरुपती, रामेश्वराम, काशी, पंढरपूर, शिर्डी, तुळजापूर, मिनाक्षी मंदीर, महाबळेश्वर यासारखी धार्मिक स्थळे बंद करण्यात आली असल्याने येथील हॉटेल व्यवसाय जवळपास बंद करण्यात आले होते. तसेच लॉजिंगची बुकिंग काही महिने आधी ऑनलाईन पध्दतीने करण्यात येत असल्यामुळे लॉकडाऊनमुळे सर्वच बुकिंग रद्द करण्यात आले. यामुळे या व्यवसायावर आणि व्यावसायिकांना मोठा आर्थिक तोटा सहन करावा लागला.

ट्रॅव्हलिंग व्यवसायावरील परिणाम :-

पर्यटनासाठी प्रवाशांना वाहनांची आवश्यकता असते. विविध प्रकारची वाहने खास प्रवाशांच्या सोयीसाठी व्यवसायिकांनी खरेदी केलेली असतात विशेषतः टॅक्सी व्यावसायिक. लॉकडाऊनमुळे या व्यवसायावरही परिणाम झाला आहे. अनेकांचे रोजगार बुडाले, त्यामध्ये ड्रायव्हर, हेल्पर, गाईड, मेकॅनिकल वर्कर्स तसेच या व्यवसायात काम करणाऱ्यांना नोकरीवरून काढून टाकण्यात आले.

छोट्या उद्योगावरील परिणाम :-

पर्यटन स्थळांच्या ठिकाणी अनेक छोट्या उद्योगांचा विकास झालेला असतो. पर्यटन स्थळांच्या स्थानिक ठिकाणचे वैशिष्ट्ये अनेक पर्यटकांना आकर्षक करतात. तसेच पर्यटकांच्या सोयीसाठी विविध दुकाने, लहान हॉटेल्स, मसाज सेंटर, लाँड्री इत्यादी व्यवसाय असतात. हे व्यवसायही बंद झाले असल्यामुळे या व्यवसायिकावर बेकारीची आणि उपासमारीची वेळ कोरोनामुळे आली आहे.

पर्यटन व्यवसायामध्ये वर्क फ्रॉम होम नसल्यामुळे या व्यवसायामध्ये काम करणारे मॅनेजर, ऑनलाईन काम करणारा वर्ग, वेटर, मजूर, ड्रायव्हर इत्यादीवर बेकारीची वेळ आली आहे.

निष्कर्ष :-

पर्यटन व्यवसायाने अनेकांना स्वतःच्या पायावर उभे राहण्यास मदत केली आहे. प्रतिकूल परिस्थितीमुळे फारसे शिक्षण घेऊ न शकलेल्यांनाही पर्यटनाच्या क्षेत्राने समाधानकारक, भक्कम रोजगार दिला आहे. अर्थव्यवस्थेत

भरीव योगदान देण्याच्या क्षेत्रात पर्यटनाचा समावेश होतो. येणाऱ्या काळात विदेशातील सहलींना येणाऱ्या मर्यादा लक्षात घेता, देशांतर्गत पर्यटन स्थळांचा विकास शीघ्रतेने करण्यासाठी नियोजन करण्याची नितांत आवश्यकता आहे.

भारताला निसर्गाचे वरदान लाभले आहे. भारतामध्ये धार्मिक, आध्यात्मिक, प्राचान वारसाही अत्यंत संपन्न आहे. पर्यटनासाठी सुरक्षित असलेल्या देशामध्ये भारताची गणना केली जाते. देशातील पर्यटन स्थळांची स्थिती सुधारण्याची तसेच पायाभूत सुविधांचा विकास करण्याची गरज आहे. तसेच या उद्योगक्षेत्राला दिलासा देण्यासाठी आर्थिक मदत, सहायता देणे आवश्यक आहे. याखेरीज भारतीय वाणिज्य संघाने दिलेला पर्यटन स्थैर्यकोषाची निर्मिती करण्याचा प्रस्तावही विचारात घ्यायला हवा, या कोषाच्या माध्यमातून वित्तीय नुकसान आणि कामगार कपात रोखण्यासाठी थेट लाभ हस्तांतरित करणे आवश्यक आहे. या माध्यमातून या व्यवसायात गुंतलेल्या आणि या व्यवसायामध्ये नोकरी करणाऱ्यांना मोठा हातभार लागू शकतो.

संदर्भ ग्रंथ :-

1. <https://www.bbc.com/marathi/india>
2. <https://maharashtratimes.com/editorial/article/tourism-and-corona>.
3. <https://www.jagran.com/lifestyle/travel-tourism-want-to-travel-go-during-coronavirus-pandemic-know-the-new>.

शाश्वत विकास ध्येये निर्देशांक आणि भारत

प्रा. डी. बी. कोनाळे

सहाय्यक प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, शिवाजी महाविद्यालय, उदगीर जि. लातूर

kdattababu@gmail.com

गोषवारा: शाश्वत विकास ध्येये निर्देशांक अहवाल सामाजिक, आर्थिक आणि पर्यावरणीय निकषांवर राज्ये आणि केन्द्रशासित प्रदेशांच्या प्रगतीचे मूल्यांकन करतो. नीती आयोगाद्वारे या प्रगती मूल्यांकनाचा वार्षिक अहवाल 2018-19 पासून दरवर्षी जाहीर केला जातो. या अहवालाचे वैशिष्ट्य हे आहे कि त्यात पारदर्शकता आणि सामान्य नागरिकालाही तो समजून घेता येईल असा आहे. विशिष्ट उद्दिष्टांची परिपूर्ती करण्याची जबाबदारी कोणकोणत्या सरकारी विभागावर आणि मंत्रालयावर सोपविण्यात आली आहे, याची ही माहिती या अहवालात देण्यात आली आहे. या निर्देशांकानुसार भारतातील केरळ, हिमाचलप्रदेश व तामिळनाडू या राज्यांनी कामगिरीच्या आधारे अनुक्रमे प्रथम, द्वितीय व तृतीय क्रमांक मिळविला आहे. हा निर्देशांक प्रगती अहवाल हा राज्यांची धोरणे ठरवित असताना अशी कोणती क्षेत्र आहेत ज्यावर अधिक लक्ष केन्द्रित करावयाचे आहे हे दर्शवितो.

प्रस्तावना: शाश्वत विकास ध्येये ही जगातील सर्व प्रकारची गरिबी निर्मूलनासाठी व एक समान न्याय आणि सर्व व्यक्तींसाठी व पृथ्वीवर सुबत्ता आणणा-या जगाच्या निर्मितीसाठी दूरदर्शी व वैश्विक मान्यतेची तत्वे आहेत. शाश्वत विकास ध्येये हा आंतरराष्ट्रीय स्तरावरील एक महत्वाकांक्षी जाहिरनामा आहे. संयुक्त राष्ट्र संघटनेच्या सर्व 193 सदस्य देशांनी सप्टेंबर 2015 मध्ये एकमताने हा जाहिरनामा स्वीकारला आहे. या जाहिरनामानुसार 2015 ते 2030 या पंधरा वर्षांच्या कालावधीत हा संकल्पित विकास घडवून आणणे अपेक्षित आहे. सन 2030 पर्यंत गरीबी संपुष्टात आणणे आणि, विषमता कमी करण्यासाठी आणि अधिक शांततापूर्ण, समृद्ध समाज निर्माण करण्यासाठी संयुक्त राष्ट्रांच्या सर्व सदस्यांनी शाश्वत विकास लक्ष्ये स्वीकारली आहेत. यापूर्वी संयुक्त राष्ट्र संघटनेची ही ध्येये विकसनशील देशांपूरतीच मर्यादित होती. परंतु आता या शाश्वत विकास ध्येये जाहिरनाम्यात जगातील सर्वच राष्ट्रांना सामावून घेतले आहे. शाश्वत विकास ध्येये निश्चित करित असताना यात भारताने प्रमुख भूमिका बजावली आहे. या शाश्वत विकास ध्येये जाहिरनाम्यातील उद्दिष्टे पूर्ण करणे बंधनकारक नसून ऐच्छिक आहे. भारताच्या नीती आयोगाने 2018 पासून शाश्वत विकास ध्येये भारतीय निर्देशांक बेसलाईन अहवाल सादर केला आहे. भारतातील सर्व राज्ये व केन्द्रशासित प्रदेशांमध्ये शाश्वत विकासाच्या दिशेने किती प्रगती होते आहे त्याचा हा अहवाल आहे. या अहवालाचे वैशिष्ट्य हे आहे कि त्यात पारदर्शकता आणि सामान्य नागरिकालाही तो समजून घेता येईल असा आहे. विशिष्ट उद्दिष्टांची परिपूर्ती करण्याची जबाबदारी कोणकोणत्या सरकारी विभागावर आणि मंत्रालयावर सोपविण्यात आली आहे, याची ही माहिती या अहवालात देण्यात आली आहे.

शाश्वत विकास ध्येये व निर्देशांक: शाश्वत विकास ध्येयांमध्ये एकुण 17 ध्येये निश्चित करण्यात आली आहेत ती खालील प्रमाणे आहेत.

- 1) सार्वत्रिक दारिद्र्य नष्ट करणे
- 2) उपासमारी नष्ट करणे
- 3) सर्व वयोगटातील लोकांसाठी उत्तम आरोग्याची सुनिश्चिती करणे, चांगल्या जीवनमानास चालना देणे
- 4) सर्वांसाठी सर्वसमावेशक व सम न्याय गुणवत्तापूर्ण शिक्षणाची सुनिश्चिती करणे आणि आजीव शिक्षणाच्या संधींना चालना देणे.
- 5) लैंगिक समानता साध्य करणे आणि महिला व मुलींचे सक्षमीकरण करणे
- 6) सर्वांसाठी पाणी व स्वच्छता यांची उपलब्धता व शाश्वत व्यवस्थापन याची सुनिश्चिती करणे
- 7) सर्वांसाठी परवडण्यायोग्य, खात्रीची शाश्वत व आधुनिक उर्जा यासाठीच्या प्रवेशाची सुनिश्चिती करणे

- 8) सर्वांसाठी शाश्वत सर्वसमावेशक आणि शाश्वत आर्थिक वृद्धी पूर्णवेळ आणि उत्पादक रोजगार आणि प्रतिष्ठापूर्वक काम या गोष्टींना चालना देणे.
- 9) स्थितीस्थापक पायाभूत सुविधा तयार करणे सर्व समावेशक आणि शाश्वत औद्योगिकरणास चालना देणे व नवनवीन कल्पना जोपासणे.
- 10) देशांतर्गत आणि देशा-देशांमधील असमानता दूर करणे.
- 11) शहरे आणि मानवी वसाहती समावेशक, सुरक्षित स्थितीसापेक्ष आणि शाश्वत बनविणे.
- 12) शाश्वत उपभोग्य व उत्पादन आकृतिबंध सुनिश्चित करणे
- 13) हवामानातील बदल व त्याचे दुष्परिणाम यांचा सामना करण्यासाठी तात्काळ कृती करणे.
- 14) शाश्वत विकासासाठी महासागर, समुद्र व सागरी स्रोतांचे जतन व शाश्वत वापर.
- 15) भूभागावरील परिस्थितीकी संस्थांचे संरक्षण, पुनःस्थापना, आणि शाश्वत वापरस प्रोत्साहन देणे, वनांचे व्यवस्थापन करणे, वाळवंटीकरणाशी लढा देणे, व ते थांबविणे, आणि वनांचे अवनत व वसाहतीमुळे होणारी जैवविविधतेची हानी थांबविणे व तिची भरपाई करणे.
- 16) शाश्वत विकासासाठी शांततापूर्ण व समावेशक संस्थांना प्रचलित करणे, सर्वांसाठी न्याय पुरविणे आणि परिणामकारक, जबाबदार आणि सर्व स्तरांवर समावेशक अशा संस्थांची उभारणी करणे.
- 17) शाश्वत विकासासाठी कार्यान्वयनाच्या साधनांचे बळकटीकरण करणे आणि जागतिक सहभाग पुनर्जिवित करणे. जागतिक पातळीवर शाश्वत विकास ध्येयांसाठी निर्देशांक अहवाल संयुक्तराष्ट्र संघ दरवर्षी जाहीर करित असते. आर्थिक वर्षे 2019-2020 नूसार 193 सदस्य देशांच्या यादीत भारत 61.92 गुणासह 117 क्रमांकावर आहे. स्वीडन देश हा 84.72 गुणासह पहिल्या, डेन्मार्क 84.56 गुणासह दुस-या तर फिनलंड 83.77 क्रमांकासह तिस-या क्रमांकावर आहे. शाश्वत विकास ध्येयांसाठी निर्देशांकाची सुरुवात डिसेंबर 2018 मध्ये करण्यात आली. शाश्वत विकास ध्येयासाठी निर्देशांक हा 17 ध्येयांवर राज्य व केन्द्रशासित प्रदेशांच्या प्रगतीचे मूल्यांकन करतो. हा निर्देशांक भारतातील शाश्वत विकास ध्येयांच्या प्रगतीवर लक्ष ठेवण्यासाठीचे प्राथमिक साधन बनले आहे. या निर्देशांकात गुण हे 0 ते 100 दरम्यान असतात.

तक्ता क्रं.1 शाश्वत विकास ध्येये निर्देशांक भारतात प्रथम दहा राज्यांची कामगिरी

अ क्रं	राज्य	2020-21	2019-20	2018-19	एकुण गुण	सरासरी गुण
1	केरळ	75	70	69	214	71.33
2	हिमाचलप्रदेश	74	69	69	212	70.67
3	तामिळनाडू	74	67	65	206	68.67
4	आंध्रप्रदेश	72	67	64	203	67.67
5	कर्नाटक	72	66	64	202	67.33
6	गोवा	72	65	64	201	67.00
7	महाराष्ट्र	70	64	64	198	66.00
8	गुजरात	69	64	64	197	65.67
9	उत्तराखंड	72	64	60	196	65.33
10	सिक्कीम	71	65	58	194	64.67

संदर्भ: वार्षिक अहवाल, नीती आयोग भारत सरकार

वरील तक्ता हा शाश्वत विकास ध्येये निर्देशांक भारतातील प्रथम दहा राज्यांची आर्थिक वर्षे 2018-19 ते 2020-21 या तीन वर्षातील कामगिरी गुणांच्या आधारे दर्शवितो. आर्थिक वर्षे 2020-2021 मध्ये भारताची शाश्वत विकास

ध्येये कामगिरीच्या गुणामध्ये 6 अंकांची वाढ झाली आहे. 2019 च्या 60 गुणावरून 2020-21 मध्ये 66 गुण प्राप्तकेले आहेत. याचे प्रमुख कारण म्हणजे स्वच्छ पाणी आणि परवडणारी शौचालये या सुविधा पुरवठा कामगिरीत झालेली सुधारणा होय. सन 2020-21 मध्ये केरळ राज्य हे संपूर्ण भारतात 75 गुणांसह पहिल्या क्रमांकावर आहे तर हिमाचलप्रदेश व तामिळनाडू हे 74 गुणांसह संयुक्तपणे दुस-या क्रमांकावर आहेत. सर्वात वाईट कामगिरी ही बिहार 52 गुण, झारखंड 56 गुण तर आसाम 57 गुण यांची आहे. केन्द्रशासित प्रदेशात चदीगड हे 79 गुणांसह प्रथम तर दिल्ली 68 गुणांसह द्वितीय क्रमांकावर आहे. मागील तीन वर्षात केरळ राज्य हे सरासरी 71.33 गुण घेवून प्रथम क्रमांकावर, हिमाचलप्रदेश सरासरी 70.67 गुण घेवून दुस-या क्रमांकावर तर तामिळनाडू राज्य हे सरासरी 68.67 गुण घेवून तिस-या क्रमांकावर आहे.

निष्कर्ष: संयुक्त राष्ट्र संघाने जाहीर केलेला शाश्वत विकास ध्येये जाहीरनामा तयार करण्यासाठी भारताने प्रमुख भूमिका बजावली आहे. परंतु या शाश्वत विकास ध्येये साध्य करण्यासाठी भारत शासनास आणखी मोठ्या प्रमाणावर धोरणे ठरवून त्या धोरणांची अंमलबजावणी परिणामकारकपणे करून घेणे आवश्यक आहे. भारतातील कांही राज्यांची कामगिरी अतिशय उत्तम आहे केरळ राज्याने मागील तीन वर्षात आपले प्रथम स्थान कायम राखले आहे तसेच उत्तराखंड राज्याने 2018-19 च्या तुलनेत 2020-21 मध्ये आपली कामगिरी सुधारली आहे. तरी सुद्धा बिहार, झारखंड व आसाम हे राज्य भारतात शाश्वत विकास ध्येये गाठण्यासाठी करण्यात येणा-या कामगिरीत खूपच मागे आहेत. या राज्यांनी आपली कामगिरी सुधारणे आवश्यक आहे. या राज्यांच्या कामगिरीवरच भारताची जागतिक पातळीवर कामगिरीत सुधारणा होईल. तज्ञ व विकास धोरण निश्चितकरणा-यांना नक्कीच विचार करावा लागणार आहे कि, केरळ सारख्या राज्याने देशात प्रथम क्रमांक मिळविला यासाठी त्यांनी काय केले व जी राज्ये यात मागे पडली त्या राज्यांच्या काय कमतरता आहेत व त्या कशाप्रकारे दूर करता येईल यावर लक्ष केंद्रीत करणे आवश्यक आहे.

संदर्भ:%

- 1) SDG India Index & Dashboard 2020-21, NITI Aayog, Govt. of India.
- 2) SDG India Index & Dashboard 2019-20, NITI Aayog, Govt. of India.
- 3) NITI Aayog, Annual Report 2018-19, Govt. of India.
- 4) <https://maharashtratimes.com/editorial/ravivar-mata/trailing-in-sustainable-development/articleshow/71128371.cms>
- 5) <http://www.srjis.com/pages/pdfFiles/146943747013.%20Prof%20patil.pdf>
- 6) <https://indianexpress.com/article/explained/niti-aayog-sustainable-development-goals-ranks-explained-7343640/>

शाश्वत कृषी विकास : एक भौगोलीक अभ्यास

प्रा.डॉ. विनकर विजय नागोजी

भूगोल विभाग प्रमुख, कै.बापूसाहेब पाटील एकबेकर महाविद्यालय, उदगीर जि.लातूर

Email : vinkar.vijay@gmail.com

प्रस्तावना :

भारत हा कृषीप्रधान देश म्हणून जगात ओळखला जातो. भारतातील हवामान अत्यंत वैशिष्ट्यपूर्ण आहे. भारतात अन्नधान्य, फळबाग, भाजीपाला व कडधान्य उत्पादनासाठी लागणारे वातावरण आहे. त्यामुळे भारत हा कृषीप्रधान देश असल्याचे दिसते. भारतातील शेती व्यवसायाला आधुनिकतेची व तंत्रज्ञानावर आधारित नाविन्यपूर्णतेची जोड हवी तरच शेती व्यवसाय व त्यावरील उद्योग अधिक प्रमाणात चालतील व उत्पादनात वाढ होईल. शेती हा मानवाचा मुलभूत आणि प्राचीन व्यवसाय आहे. भारत देशामध्ये अनेक क्षेत्र हे प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्षरित्या शेतीवर अवलंबून आहेत. शेती हा भारतीय अर्थव्यवस्थेचा कणा आहे. पूर्वीच्या काळात पारंपारीक अवजाराच्या मदतीने व पारंपारीक पध्दतीने मानव शेती करत होता. परंतु आधुनिक काळातमध्ये झालेल्या आद्योगिक क्रांतीने आणि नवनवीन तंत्रज्ञानाने कृषी विकासाला चालना मिळाली. कृषी व्यवसाय हा मानवाचा प्राचीन काळापासून चालत आलेला व्यवसाय असून भारत देश हा बहुतांश शेतीवर अवलंबून आहे. शेती हे केवळ उदरनिर्वाहाचे साधन नसून त्याचा व्यापारी तत्वावर उपयोग होवू लागला आहे. पूर्वी शेती पारंपारीक पध्दतीने केली जात होती.

शाश्वत म्हणजे चिरकाल टिकणारा होय. म्हणजेच शाश्वत विकास हा सध्या जो विकास होत आहे तसाच तो भविष्यातही टिकवून ठेवणे. भविष्यात कितीही समस्या निर्माण झाल्या तरी कोणतीही तडजोड न करता व्यक्तीला त्याच्या आवश्यक गरजा पूर्ण करता येतील असा विकास म्हणजे शाश्वत विकास होय.

उद्दिष्ट्ये :

१. शाश्वत विकास संकल्पनेचा अभ्यास करणे.
२. शाश्वत शेतीच्या विकासाचा अभ्यास करणे.

संशोधन पध्दती :

वरील शोध निबंधासाठी दुय्यम स्रोताचा संदर्भग्रंथ म्हणून उपयोग करण्यात आला आहे. यामध्ये विविध पुस्तके, मासिके, संदर्भ ग्रंथे म्हणून उपयोग केलेला आहे. तसेच शोधनिबंध व इंटरनेटवरील माहितीचा उपयोग केलेला आहे.

विषय विवेचन :

प्रस्तुत शोध निबंधाचा आढावा घेत असताना आपणास शाश्वत विकासाची संकल्पना म्हणजे काय त्याचा आढावा घ्यावा लागेल.

शाश्वत विकास संकल्पना :

शाश्वत विकास ही संकल्पना व्यापक आहे. भविष्यातील विकासाच्या अनुषंगाने वर्तमानातील विकास करणे असा शाश्वत विकासाचा अर्थ मांडला जातो. दुर्मीळ व पर्यायी साधनसंपत्तीच्या अवाजवी वापरातून भविष्यातील पिढ्यासमोर प्रश्न निर्माण होऊ शकतात म्हणून साधनसामग्रीच्या शाश्वत वापराने भविष्यातील गरजांचा विचार करून निर्णय घेणे गरजेचे आहे. यादृष्टीने शाश्वत विकास ही एक महत्वपूर्ण संकल्पना ठरते.

रॉबर्ट अॅल्डच्या मते :

“शाश्वत विकास म्हणजे मानवी गरजांचे समाधान चिरकाल टिकवून ठेवणे आणि व्यक्तीच्या जीवनमानात सुधारणा घडवून आणणे होय”.

शेती हा मानवाचा मुलभूत आणि प्राचीन व्यवसाय आहे. कालसापेक्ष कृषी व्यवसाय व मशागतीच्या स्वरूपात मोठी स्थित्यांतरे झाली. ही परिवर्तने विकासाच्या दृष्टीने झाली असली तरी त्या बरोबर अनेक समस्या निर्माण झाल्या. निसर्गातील प्रत्येक घटकाचा झपाटयाने होत असलेल्या न्हासातून शाश्वत विकासाची संकल्पना पूढे आली. आज शाश्वत शेती ही काळाची गरज बनली आहे. थोडक्यात मानवाच्या बदलत्या गरजा भागवतांना कृषीसाठी साधनसंपत्तीचे यशस्वी व्यवस्थापन करणे की, ज्या योगे पर्यावरणाचा दर्जा आणि नैसर्गिक साधनसंपत्तीचे गुणसंवर्धन होईल याला शाश्वत शेती असे म्हणतात.

शाश्वत कृषी विकासाचे उद्देश :

- १) उपलब्ध साधन सामुग्रीच्या आधारे शाश्वत कृषीचा विकास साधणे.
- २) वर्तमान गरजेनुसार उत्पादन वाढवण्यासाठी कृषीची भुमिका निभावणे.
- ३) जैवीक व सेंद्रीय शेती उत्पादने घेऊन शेतकऱ्यांना कृषी उत्पादने पुरविणे.
- ४) मानवाचे जीवनमान पर्यावरण न बिघडविता सुधारणे व ते भावी पिढीसाठी दिर्घकाळ टिकवून ठेवणे.
- ५) मृदेचा कस टिकवून ठेवणे.
- ६) जमीनीतील पाण्याचा साठा वाढवणे.
- ७) एकात्मिक कीड, तण व रोग नियंत्रण यावर भर देणे.

शाश्वत कृषी आणि ग्रामीण विकासाचे महत्वाचे उद्दिष्टे म्हणजे अन्नधान्याच्या उत्पादनात शाश्वत पध्दतीने वाढ करणे. शाश्वत शेती विकासासाठी व्युरचना करताना खालील घटकाचा विचार करावा लागतो.

- १) भूसंधारण करणे.
- २) कृषी उत्पादनात जैवीक बियाणाचा व खतांचा वापर करणे.
- ३) पाणलोट क्षेत्राचा विकास करणे.
- ४) पशुधन आरोग्य व उत्पादन वाढवणे.
- ५) वातावरणातील प्रदुषण, पाणी आणि जमीनीचे दुषीतीकरण होणार नाही याची काळजी घेणे.
- ६) रासायनीक खतांचा मर्यादीत वापर करणे.
- ७) पाण्याचा कार्यक्षम व काटकसरीने वापर करणे.

८) कृषी जैविक विविधता संरक्षण करणे.

९) कृषी क्षेत्राचे पिकातील विविधता राखून अर्थसहाय्य ठेवून शेतकऱ्यांच्या आर्थिक स्थितीत सुधारणा करणे.

१०) पडीक जमीन लागवडीखाली आणणे.

शेतीचा शाश्वत विकास करण्यासाठी वरील घटक महत्वपूर्ण आहेत. याचा वापर शेतीच्या शाश्वत विकासासाठी करावा लागतो त्याशिवाय शाश्वत शेतीचा विकास होणे अशक्य आहे.

शेतीच्या शाश्वत विकासात काही समस्या आहेत त्या खालीलप्रमाणे अभ्यासता येतील.

१) भारतीय भूप्रदेशाची रचना एक सारखी नाही.

२) पर्जन्याच्या लहरीपणामुळे वारंवार नैसर्गिक आपत्तीना तोंड द्यावे लागते.

३) पिकांवर वारंवार पडणारी किड व रोग ही शेती व्यवसायाच्या शाश्वत विकासाची एक गंभीर समस्या बनली आहे.

४) अपुरे भांडवल ही शेतीच्या शाश्वत विकासातील महत्वाची समस्या आहे.

५) जलसिंचनाच्या अपुऱ्या सुविधा.

६) बाजारपेठांचा अभाव.

७) शेतीचे विभाजन — तुकडी करणे.

८) बाह्यकारकांमुळे जमीनीची मोठया प्रमाणात धुप.

९) वाहतुकीच्या समस्या.

१०) अधिक उत्पादन देणाऱ्या बि—बियाणाचा अभाव.

शेतीच्या शाश्वत विकासासाठी ह्या समस्या आहेत. त्यावर उपाययोजना करणे आवश्यक आहे. त्या उपाययोजना खालीलप्रमाणे आहेत.

भारत हा कृषीप्रधान देश असल्याने बरचसे उद्योग शेती व्यवसायावर अवलंबून आहे. त्यामुळे शेतीचा शाश्वत विकास होणे आवश्यक आहे त्यासाठी खालीलप्रमाणे उपाययोजना करता येतील.

१) जलसिंचनाच्या सुविधांना मोठया प्रमाणात वाढ करणे.

२) जमीनीची धुप थांबविणे.

३) शेतीत आधुनिक तंत्रज्ञानाचा वापर करणे.

४) शेतकऱ्यांना आर्थिक मदत करून भांडवल उपलब्ध करून देणे.

५) शेतकऱ्यांच्या शेतीमालासाठी बाजारपेठ उपलब्ध करून देणे.

६) शेतकऱ्यांचा शेतमाल नेण्यासाठी वाहतुकीच्या सुविधा करणे.

७) पर्वतीय व डोंगर उतरणीच्या भागात पायऱ्यापायऱ्याची शेती करणे.

८) खताचा व किटकनाशकाचा योग्यवेळी योग्य वापर करणे.

९) शेती जमीनीत बांध घालून पाणी अडविणे व ते जमीनीत मुरविणे.

१०) शेतकऱ्यांना शेती विषयक बि—बियाणे व अवजारे याचे प्रशिक्षण देणे.

सारांश :

भारत हा कृषीप्रधान देश आहे. कृषी व त्याच्याशी संबंधीत व्यवसायावर बहुतांश लोकसंख्या अवलंबून आहे. भारतातील हवामान हे अत्यंत वैशिष्ट्यपूर्ण आहे. शाश्वत म्हणजेच चिरकाल टिकणारा होय. शाश्वत विकास हा सध्या जो विकास आहे तसाच तो भविष्यातही टिकून राहतो. शाश्वत विकास ही संकल्पना व्यापक आहे. शाश्वत शेती विकासाचे काही उद्देश आहेत ज्यातून शाश्वत शेती विकास करणे सहज शक्य होते. उपलब्ध साधनसामुग्रीच्या आधारे मध्यम पातळी साधण्यासाठी कृषीचा उपयोग करणे, मृदेचा कस टिकवून ठेवणे, जमीनीतील पाण्याचा अपव्यय टाळणे. तसेच काही शाश्वत विकास करत असताना समस्या निर्माण होतात. पर्जन्याच्या लहरीपणामुळे वारंवार नैसर्गिक आपत्तीना तोंड द्यावे लागते. अपुरे भांडवल, बाजारपेठांचा अभाव, वाहतुकीच्या समस्या, शेतीचे विभाजन इत्यादी महत्वपूर्ण समस्यांचा सामना करावा लागतो. शाश्वत शेती विकासाच्या समस्येवर काही उपाययोजना कराव्या लागतात. जलसिंचनाच्या सुविधांत मोठयाप्रमाणात शेतीमालासाठी बाजारपेठ उपलब्ध करून देणे, शेतकऱ्यांना शेती विषयक प्रशिक्षण देणे वरीलप्रमाणे शाश्वत कृषी विकास करता येईल.

संदर्भ :

१. डोईफोडे एच.के.(२००७) भूगोल संपूर्ण मार्गदर्शक स्टडी सर्कल पूणे.

२. ढोणे कुसुम (२०१४) भारताचा भूगोल, अरुणा प्रकाशन, लातूर.

3- www.google.co.in

४. कृषी भूगोल — डॉ. विठ्ठल घारपुरे

५. कृषी भूगोल — अरुण कुंभारे

NPS एक संस्था – एक चिकित्सक अभ्यास

प्रा. गोवर्धन कृष्णाहरी दिकोंडा

सहाय्यक प्राध्यापक, इतिहास विभाग, कला व वाणिज्य महाविद्यालय, माढा, ता. माढा, जि. सोलापूर.

ईमेल – govardhan.docs@gmail.com

गोषवारा :

National Pension System म्हणजे थोडक्यात NPS असे म्हटले जाते. वस्तुतः वस्तुनिष्ठपणे पाहता NPS ही योजना National Pension System Trust या संस्थेअंतर्गत चालवली जाणारी एक आर्थिक योजना आहे. जे की सरकारी कर्मचाऱ्यांच्या वेतनातून व सामान्य नागरिकांच्या उत्पन्न स्रोतातून जे पेन्शन स्वरूपात रक्कम जमा होते, त्याचे नियोजन करणारी संस्था आहे. National Pension System Trust ही संस्था पेन्शन निधी विनियामक आणि विकास प्राधिकरण (राष्ट्रीय पेन्शन प्रणाली न्यास) २०१५ अंतर्गत स्थापित केलेली आहे. National Pension System Trust चे स्वतःचे बोर्ड म्हणजे मंडळ आहे. त्यांच्यासाठी स्वतंत्रपणे नियमावली विहित केलेली आहे. त्यानुसार Trust चे कोण कोण संचालक असतील, त्यासाठी पात्रता, त्यांचा कार्यकाल व त्यांना कसे काढता येते याचे स्पष्ट तरतूद केलेले आहे. NPS मध्ये समाविष्ट असलेल्या सभासद वर्गणीदार यांना त्यांच्या जीवनावर आर्थिकदृष्ट्या काही सकारात्मक व नकारात्मक परिणाम झालेले आहेत.

महत्त्वाचे शब्द : NPS, NPST, PFRDA, TRUSTEE, EPFO, NDLI

प्रस्तावना : National Pension System ही भारतातील सद्यस्थितीतील शासकीय व निमशासकीय कर्मचाऱ्यांच्या पेन्शन संदर्भात समभाग जमा करून घेणारी एक योजना आहे. ही योजना National Pension System Trust अंतर्गत चालते. ही संस्था पेन्शन निधी विनियामक आणि विकास प्राधिकरण (राष्ट्रीय पेन्शन प्रणाली न्यास) २०१५ च्या राजपत्रानुसार नोंदणी अधिनियम १९०८ च्या कायदा अंतर्गत स्थापित केलेली आहे. National Pension System Trust स्वतःचे स्वतंत्रपणे वैशिष्ट्ये आहेत. National Pension System Trust चे स्वतःचे बोर्ड म्हणजे मंडळ असून त्यात कोण संचालक असतील, त्यासाठी पात्रता, त्यांचा कार्यकाल व त्यांना कसे काढता येते याचे स्पष्ट तरतूद केलेले आहे. याशिवाय Trust चे स्वतःचे तक्रार निवारण केंद्र आहे. NPS च्या माध्यमातून प्राप्त रक्कम Trust त्याचे व सभासद वर्गणीदार यांच्या फायद्याच्या दृष्टीने नियोजन करित असते. त्यानुसार NPS चे सभासद वर्गणीदार यांच्या जीवनावर काही प्रमाणात सकारात्मक व नकारात्मक परिणाम होतात.

उद्दिष्टे – १) National Pension System Trust वैशिष्ट्ये पाहणे , २) National Pension System Trust चे NPS परिणाम पाहणे

गृहीतके : National Pension System Trust चे चिकित्सक दृष्टीने अभ्यास करताना NPS चे सभासद असलेल्या वर्गणीदार यांच्या जीवनावर काय परिणाम होतो याचा अभ्यास करणे.

संशोधन पद्धती : उपलब्ध मूळ प्राथमिक साधनांच्या माध्यमातून संशोधकाने विश्लेषण व वर्णनात्मक संशोधन पद्धतीचा वापर करून संशोधन केले आहे.

NPS एक संस्था – एक चिकित्सक अभ्यास

National Pension System म्हणजे थोडक्यात NPS म्हणजेच राष्ट्रीय पेन्शन योजना, ही योजना दि. १ जानेवारी २००४ पासून देशभरात सर्वप्रथम केंद्र शासनाच्या शासकीय कर्मचार्यांना लागू करण्यात आला. राज्य शासनाच्या सेवेतील कर्मचार्यांना DCPS म्हणजेच अंशदायी पेन्शन योजना लागू करण्यात आलेला होता. आज भारतात पश्चिम बंगाल वगळता इतर सर्व राज्यांनी NPS स्वीकार केलेला आहे. नुकतेच मागील वर्षापासून महाराष्ट्र शासनाने राज्यातील सर्व प्रकारच्या शासकीय कर्मचार्यांना लागू करण्यात आलेला आहे.

NPS ची व्याख्या Interim Pension Fund Regulatory and Development Authority या २००३ मध्ये स्थापित केलेल्या प्राधिकरणात पुढीलप्रमाणे केलेली आहे. – 'National Pension System' means the contributory pension system referred to in section 20 whereby contributions from a subscriber are collected and accumulated in an individual pension account using a system of points of presence, a central recordkeeping agency and pension funds as may be specified by regulations.'

उपरोक्त प्रमाणे प्राप्त पेन्शन फंडाचे नियोजन करण्यासाठी शासनाने Employment Provident Fund Organisation च्या धरतीवर एक Trust तयार केलेली आहे. त्याचे अर्थ Interim Pension Fund Regulatory and Development Authority मध्ये स्पष्ट केलेली आहे. 'National Pension System Trust' means the Board of Trustees who hold the assets of subscribers for their benefit'.

सन २०१३ मध्ये Interim Pension Fund Regulatory and Development Authority चे शीर्षक व इतर काही संकल्पनेत बदल करणेबाबत ड्राफ्ट तयार करण्यात आला. दि. १२ मार्च २०१५ मध्ये Pension Fund Regulatory and Development Authority (National Pension System Trust) Regulations 2015 असे नामकरण करून भारतीय राजपत्रात प्रसिद्ध करण्यात आला.

National Pension System Trust ही भारतीय नोंदणी कायदा, १९०८ (१६ ऑफ १९०८) अंतर्गत नोंदणीकृत करण्यात आली. भारतीय नोंदणी कायदा, १९०८ कायद्याला अनुसरून NPST चे Trust Deed तयार करण्यात आले आहे. त्यानुसार आज देशभरात NPS चे कामकाज चालू आहे.

• National Pension System Trust वैशिष्ट्ये

- १) National Pension System Trust ही Trust Deed प्रमाणे चालते.
- २) Trust Deed नुसार NPST चे स्वतंत्रपणे एक संचालक मंडळ असणार आहे.
- ३) संचालक मंडळावर नेमणूक करताना त्याचे स्वतंत्र नियामवली तयारी केलेली आहे.
- ४) संचालक मंडळावर नेमणूक केलेल्या व्यक्तीस काढून टाकण्याचेही नियामवली केलेली आहे.
- ५) संचालक मंडळाचे हक्क, अधिकार, कर्तव्ये व जबाबदारी निश्चित केलेली आहे.
- ६) Accounts and Maintenance of Record अंतर्गत पेन्शन फंड बाबत लेखाजोखा पारदर्शक ठेवणेबाबत तरतूद केलेली आहे.
- ७) NPST अंतर्गत स्वतंत्र तक्रार निवारण अधिकारी नेमणूक केलेली आहे तसेच अपिलीय न्यायिक tribunal ची सोय केलेली आहे. बाधित तथा अन्याय झालेली व्यक्तीला कोणत्याही दिवाणी न्यायालयात दाद न मागता थेट यांच्याकडे तक्रार करू शकेल, या तक्रार निवारण अधिकारी कडून न्याय न मिळाल्यास शिवाय थेट सर्वोच्च न्यायालयात अपील करून दाद मागता येते अशी तरतूद केलेली आहे.
- ८) <https://www.pfrda.org.in/> याप्रमाणे वेबसाईट निर्मिती करून वेबसाईटवर NPST बाबत सर्व प्रकारचे माहिती प्रसिद्ध करण्यात आलेली आहे. या वेबसाईटच्या माध्यमातून NPS वर्गणीदार सभासदांना त्यांचे पेन्शन फंड कुठे व किती प्रमाणात गुंतवणूक केलेली आहे त्याची माहिती तसेच रक्कम किती जमा झाली याची सविस्तर माहिती मिळते.



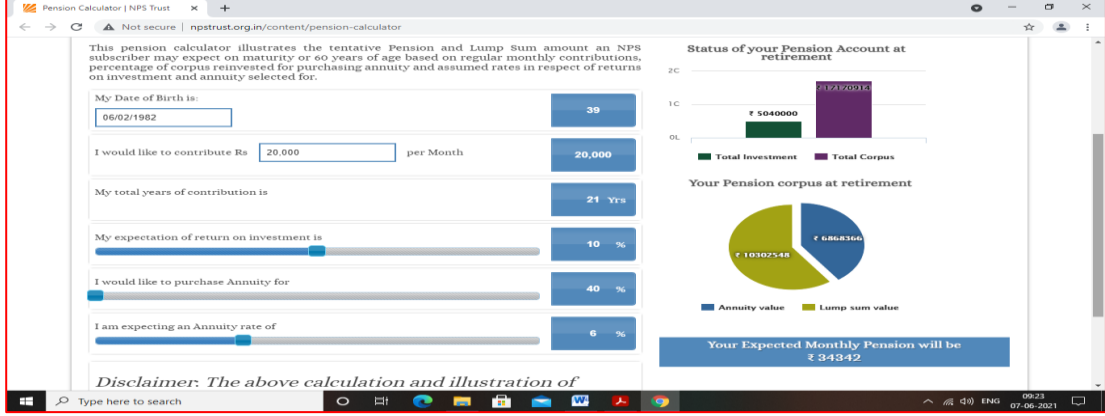
• NPS चे सभासद वर्गणीदार यांच्या जीवनावर सकारात्मक व नकारात्मक परिणाम

उपरोक्त प्रमाणे NPS चे NPST च्या माध्यमातून सर्व वैशिष्ट्ये असले तरी NPS च्या वर्गणीदार सभासद असलेल्यांना याचा त्यांच्या जीवनावर आवश्यक असे सकारात्मक परिणाम ऐवजी नकारात्मक परिणाम जास्त असल्याचे निदर्शनास येते.

सकारात्मक : १) NPS हे पूर्णतः ऐच्छिक आहे. या योजनेत १८-६५ या वयोगटातील कोणताही नागरिक सहभागी होऊ शकतो. २) ही परिवर्तनशीलता म्हणजे थोडक्यात लवचिक स्वरूपात आहे.

- ३) ही योजना स्वतंत्र असल्याने या योजनेतून कधीही बाहेर पडता येते.
- ४) सुरक्षित गुंतवणूक या योजनेत आहे.
- ५) कमीत कमी रक्कम भरून या योजनेत सहभागी होता येते.

नकारात्मक : १) या योजनेत Employees Deposit Linked Insurance Scheme प्रमाणे वर्गणीदार सभासदांना कोणतेही तरतूद नाही. २) या योजनेत पेन्शन फंड म्हणून जे जमा होणार आहे. निवृत्तीनंतर आवश्यक असे लाभ दिसून येत नाहीत. ते पुढीलप्रमाणे निदर्शनास येते.



उपरोक्त प्रमाणे एखाद्या व्यक्तीचे NPS या योजनेत पेन्शन फंड म्हणून जे जमा होणार आहे त्यास निवृत्तीनंतर जे लाभ प्राप्त होणार आहे. त्याबाबत <http://www.npstrust.org.in/> या वेबसाईटवर हिशोब मांडणी केलेली आहे. त्यानुसार आपणास हे स्पष्ट म्हणावयास हरकत नाही की, सदर योजना NPS चे वर्गणीदार सभासद यांना लाभदायक नाही. ३) या योजनेत जुन्या पेन्शन प्रमाणे वर्गणीदार सभासद यांस आकस्मिकरित्या काही झाले तर त्यावेळी यांच्या कुटुंबातील सदस्यांचे निवृत्तीवेतन बाबत आवश्यक असे काळजी घेण्यात आलेली नाही. ४) ज्यावेळी वर्गणीदार सभासद यांना या योजनेतून बाहेर पडायचे आहे त्यावेळी फक्त ६०% पर्यंत एकरकमी रक्कम काढता येते. सदर रक्कमेवर शासनाचे कर असेल आणि उर्वरित ४०% रक्कमेवर कर नसणार आहे. ५) Provident Fund प्रमाणे या योजनेत वर्गणीदार सभासद असलेल्यांना शासनाचे कोणतेही व्याज देय प्राप्त होत नाही.

निष्कर्ष :

उपरोक्तप्रमाणे पाहता NPS ही National Pension System Trust द्वारे चालवली जाते. NPS या योजनेचे सकारात्मक व नकारात्मक परिणाम पाहता. NPS ही एक योजना असून ते Trust म्हणजे विश्वस्तांच्या द्वारे चालवली जाते. NPS चे सभासद असलेल्या वर्गणीदार यांना याचा कोणताही आवश्यक असे लाभ प्राप्त होणार नाहीत असे निदर्शनास येते. एकंदरीत पाहता NPS ही Trust प्रमाणे न अंमलात आणता जुन्या पेन्शनप्रमाणे अंमलात आणणे हे नेहमीच योग्य राहिल.

शिफारस (Recommendations) :

उपरोक्तप्रमाणे पाहता NPS ही योजना शासनाने रद्द करून पूर्वी प्रमाणे जुनी पेन्शन योजना सुरु करण्यात यावी.

संदर्भ :

- १) Pension Fund Regulatory and Development Authority (National Pension System Trust) Regulations 2015 भारतीय राजपत्र
- २) महाराष्ट्र शासनाचे वेळोवेळी NPS संदर्भात पारित केलेले शासननिर्णय
- ३) Employees Deposit Linked Insurance Scheme DoPT व केंद्र शासनाचे परिपत्रक
- ४) <https://www.pfrda.org.in/> Date : 7th June 2021 Time : 9.01 am
- ५) <https://www.epfindia.gov.in/> Date : 7th June 2021 Time : 9.10 am
- ६) <http://www.npstrust.org.in/> Date : 7th June 2021 Time : 9.23 am

कोकणातील लाल सोनं - जांभा दगड (Laterite stone)

Tendolkar Dipa Dattaram

Departmental Of Hindi, Kankavali College Kankavali

Email- Shriravalnath@Gmail.Com

प्रस्तावना :-

पुरावनस्पती शास्त्र (Palaeobotany) या शास्त्राचा भारतातील पाया प्रा. बिरबल सहानी यांनी घातला. प्राचीन काळातील वनस्पतीचा खडकातील अवशेषाद्वारे अभ्यास करणे म्हणजेच पुरावनस्पतीशास्त्र होय. खडकांचे प्रामुख्याने तीन प्रकार आहेत. १) अग्नीजन्य खडक २) गाळाचे खडक ३) रुपांतरीत खडक.

खडकांची पार्श्वभूमी (इतिहास)

लाव्हारसापासून बनलेला कठीण रुपातील निसर्गजन्य वस्तूला दगड किंवा खडक किंवा पाषाण म्हणतात. लाव्हारस घट्ट झाला की त्यापासून डोंगर बनतात भूपृष्ठावर व त्याखाली काही किलोमीटर खोलीपर्यंत आढळणा-या व नैसर्गिकरित्या तयार झालेल्या खनिजांच्या मिश्रणालाही खडक म्हणतात. खडकाचे गुणधर्म हे त्यातील खनिजे एकत्र प्रक्रियेवर अवलंबून असतात. बहुतांशी खडकांत सिलिका, अॅल्युमिनिअम, मॅग्नशियम व लोह यांचे प्रमाण जास्त असते.

खडकांची व्याख्या :-

भूपृष्ठावरील अतिशय कठीण अशा दगडापासून तर अतिशय मृदू अशा बारिक मातीपर्यंत सर्व पदार्थांचा समावेश 'खडक' या संज्ञेत होतो.

खडकांचे वर्गीकरण:-

वेगवेगळ्या आधारभूत तत्वांचा वापर करून विविध प्रकारे खडकांचे वर्गीकरण केले जाते. उत्पत्तीनुसार झालेले खडकांचे वर्गीकरण सर्वसामान्य आहे.

१) अग्नीजन्य खडक २) जलजन्य खडक किंवा स्तरीत खडक /गाळाचे खडक ३) रुपांतरित खडक

जांभा दगड

जांभा या लॅटेराइट हा एक प्रकारचा खडक आहे. हा सहसा उष्ण आणि ओल्या त्रिषुववृत्तीय प्रदेशात सापडतो. भारतात जांभा दगड कोकणात आढळून येतो. हा खडक लाल रंगाचा असतो. यात लोह आणि बॉक्साइट खनिजे मोठ्या प्रमाणात असतात. हा अतिशय खडबडीत असतो. आणि कातळापेक्षा वजनाने हलका असतो. तसेच सच्छिद्र असतो. उष्ण कटिबंधीय प्रदेशात आर्द्र हवामानात जांभा जमिन तयार होते. पावसाचे प्रमाण 200 से.मी. पेक्षा जास्त असल्याने खडकांचे अपक्षरण होते. खडकामधील सिलिकांवर अपक्षयाची क्रिया होऊन लिचिंगची प्रक्रिया व त्यापासून आयर्न ऑक्साइड तयार होते. अशा तांबूस पिवळसर जमिनीस "जांभा मृदा" असे म्हणतात.

जांभा मृदेमध्ये अॅल्युमिनिअम ऑक्साइड व लोह ही द्रव्ये या मृदेत जास्त असतात. ही मृदा फारशी सुपिक असत नाही. परंतु खताला चांगला प्रतिसाद देते. या मृदेत नाचणी, भात, कडधान्ये, ऊस ही पिके तसेच आंबा फणस, काजू, सुपारी पिके मोठ्या प्रमाणात घेतली जातात.

जांभी मृदा:-

मृदेच्या लॅटेराइट प्रकारामध्ये मोडणारी ही मृदा आहे. जांभा खडकांवर दीर्घकालीन प्रक्रिया तयार होऊन ही मृदा तयार झालेली आहे. लोह व अॅल्युमिनियमच्या संयोगामुळे या मृदेला लाल अथवा जांभा रंग प्राप्त होतो. महाराष्ट्रातील दक्षिण कोकणात रत्नागिरी व सिंधुदूर्ग या दोन जिल्हामध्ये ही मृदा आढळून येते.

या मृदेत नत्र पालाश व सेंद्रीय द्रव्यांचे प्रमाण अत्यंत कमी असते. त्यामुळे शेतीच्या दृष्टीकोनातून ही मृदा कमी सुपिक असते. परंतु फळ पिकांच्या दृष्टीने ही मृदा अधिक उपयोगी असते. महाराष्ट्रात या मृदेतील काजू व आंबा

ही फळ पिके महत्वाची आहे. महाराष्ट्राचा सह्याद्री डोंगर माध्यावरील जांभी मृदेच्या थरांना "लॅटेराइट कॅम्प" असे म्हणतात. जांभी मृदेच्या भागात पावसाचे प्रमाण जास्त असल्याने मृदेची धूप मोठ्या प्रमाणात होते. ही मृदा ओलावा टिकवून ठेऊ शकत नाही. त्यामुळे सिंचनाच्या दृष्टीने ही मृदा अयोग्य आहे. परंतु या मातीतून पाण्याचा निचरा चांगला होतो. व ही मृदा रासायनिक खतांना लवकर प्रतिसाद देते.

संशोधन हेतू

कोकणातील या लाल सोन्यापासून घरे तर बांधली जातातच पण त्याचबरोबर मार्बल, ग्रॅनाईटसह अन्य दगडांपासून टाइल्स बनवल्या जातात मग कोकणातील जांभ्या दगडापासून (चिरे) टाइल्स बनविण्यात येतात का? असा विचार मनात आला आणि शेवटी अलिकडेच देवगड मधील एका व्यक्तीने या प्रकारचे तंत्रज्ञान विकसित केले त्याचा शोध मला लागला.

या व्यक्तीने आपल्या सहाका-याच्या मदतीने वर्षभर प्रात्यक्षिक केली. आणि त्यानंतर एका नव्या व्यवसायाची नांदी सिंधुदूर्गामध्ये उदयास आली. इतकेच नाही तर पुणे, मुंबई आदी शहरांमध्ये इंटीरियर डिझाईनरकडून अशा टाईल्सची मागणी वाढू लागली. केरळ कर्नाटकमध्ये अशा पध्दतीने तयार केलेल्या टाइल्स महाराष्ट्रात विक्रीस येतात. यातूनच हा नवा विचार समोर आला. एका बॉक्समध्ये 20 एम. एम जाडीचे ६ × १२ इंचाचे ५ टाईल्सचे नग असतात. एका बॉक्समध्ये सुमारे अडीच स्क्वेअरफूट इतके असते. इंटीरियर डिझाईनर तसेच स्टोन टाईल्स व्यावसायिक यांच्याकडून मोठी मागणी आहे. यासाठी तरुणांना प्रशिक्षण देण्याची गरज असते. आतापर्यंत सुमारे २५ टनापेक्षा अधिक टाईल्स शहरात पाठवण्यात आलेले आहेत. १० टन टाईल्स तयार होण्यासाठी दीड महिन्याचा कालावधी जातो. जांभ्या दगडामुळे टाईल्स बनवणारा जिल्ह्यातील बहुदा पहिलाच प्रयत्न असल्याने टाईल्स व्यवसाय व्यक्ती श्री. कदम प्रमोद हे आवर्जून सांगतात. संशोधनाचा माझा हेतू म्हणजे कोकण हे निसर्गाने नटलेले आहे. परंतु कोकणची मुख्यतः दक्षिण कोकणची ज्या पध्दतीने प्रगती होणे आवश्यक आहे त्या पध्दतीने ती झालेली नाही. जर या प्रकारचे व्यवसाय उभारले गेले तर सर्वसामान्य लोकांसाठी व्यवसायाची संधी उपलब्ध होईल.

उद्देश्य :-

- १) जांभी मृदा / दगड यापासून अनेक फळे, पिके घेता येतात हे गावातील लोकांना समजावे. २) या मृदेतून पाण्याचा निचरा योग्य प्रमाणात होतो त्यामुळे दलदलीचे प्रमाण कमी आढळते. ३) जांभा दगडापासून घरे बांधली जातात हे लोकांना समजावे. ४) जांभी मृदा ही काजू, सुपारी, नाचणी या पिकांसाठी योग्य आहे. हे लोकांपर्यंत जावे तसेच सर्वसामान्य लोकांना समजावे. ५) जांभा दगडावरच आज इंटीरियर डिझाईनची प्रोसेस केल्याने बाजारात मोठ्या प्रमाणात मार्केट उपलब्ध होऊ शकते हे समजावे.

अडचणी /समस्या / मर्यादा :-

- १) विशिष्ट प्रातांमध्येच ही मृदा आढळते. त्यामुळेच सर्वच ठिकाणी या प्रकारची पिके घेता येत नाहीत. उदा. जळगाव मध्ये आंबा उत्पादन करता येत नाही.
- २) जांभ्या मृदेमुळे सुपिकता कमी असते त्यामुळे नगदी पिके घेता येत नाही. ३) या जमिनीतून पाण्याचा निचरा मोठ्या प्रमाणात होत असल्याने पाण्याचा साठा करता येत नाही. ४) जांभा दगड खर्चिक असल्याने सर्वसामान्य लोकांना घरे बांधणीसाठी परवडत नाही. ५) रेताळ जमिनीमुळे पाणी धरून ठेवण्याची क्षमता कमी आढळते.

संशोधन पध्दती

या शोध पेपरसाठी मी संशोधनाची दुसरी पध्दत वापरली. यामध्ये प्रत्यक्ष भेट देणे आवश्यक होते. त्याचप्रमाणे त्याची सोबत बातचित करणे आवश्यक होते.

सर्वेक्षणाची गोष्ट करावयाची झाली तर हे सर्वेक्षण प्रत्यक्षपणे करावयाचे होते. सिंधुदूर्ग जिल्ह्यातील चिरे-खाणी बघणे व त्यांच्याशी चर्चा करणे हे महत्वाचे होते. त्याचप्रमाणे ज्यांनी तंत्रज्ञानाचा वापर करून यंत्र शोधून काढले त्यांना जाऊन भेटणे गरजेचे होते.

विवेचन / स्पष्टीकरण

आपणा सर्वांना ज्ञात आहे की सर्वसामान्यपणे खडकांचे तीन प्रकार आहेत. आणि या खडकांमध्ये असलेल्या गुणधर्मावरूनच ह्या मृदेला त्या-त्या प्रकारचे महत्व प्राप्त झाले आहे.

सह्याद्रीच्या घाटमाथ्यावर, पूर्व घाट, राजमहल टेकड्यांवर, केरळ, कर्नाटक तसेच महाराष्ट्रातील रत्नागिरी, सिंधुदूर्ग, राधानगरी, आंध्रप्रदेशात मयूरभंज येथे अशीच एक मृदा आढळते त्याचे नाव जांभा मृदा किंवा जांभा दगड असा आहे.

मी सिंधुदूर्ग जिल्ह्यातील रहिवासी असल्याने प्रामुख्याने सिंधुदूर्गामध्ये जांभा दगड व त्याचा उपयोग कोणत्या प्रकारे केला जात आहे यावर थोडासा प्रकाश टाकण्याचा प्रयत्न करित आहे.

दगडाला खाणीतून काढल्यानंतर त्याचे तुकडे करतात त्यालाच मालवणी भाषेमध्ये चीरा असे म्हटले जाते. हा चीरा बांधकामासाठी वापरतात. कोकणातील घरे या दगडापासून बांधली जातात. हा चीरा १४ इंच लांब व ९ इंच रुंद व ७ इंच उंच अशा आकारात साधारणतः वापरला जातो. आज सिंधुदूर्ग सारख्या दुर्गम भागामध्ये जांभा दगड निर्मिती हा व्यवसाय म्हणून बघणे गरजेचे आहे. यासारखे छोटे व्यवसाय निर्माण करून उपजिविकेचे साधन म्हणून त्यांच्याकडे बघता येईल आणि म्हणूनच याचा प्रचार-प्रसार होण्यासाठी मी हा लेख लिहित आहे. सिंधुदूर्गातील या दगडाला चांगले मार्केट मिळणे आवश्यक आहे. आणि त्यासाठी सर्वोत्तमरी कोकण भागाकडे सर्वांचे लक्ष जाणे आणि आर्थिक बाजू बळकट करणे फार महत्वाचे ठरले आहे. कणातील या लाल सोन्याचा प्रचार आणि प्रसार होणे काळाची गरज आहे. आणि याच उद्देशाने मी या लेखाचे प्रस्तुतीकरण करित आहे.

सारांश

प्रस्तुत शोध लेखाच्या माध्यमातून “जांभा दगड” याविषयी जागृती निर्माण होईल. सिंधुदूर्गातील डोंगराळ भागामध्ये जांभा दगडाचा व्यवसाय करणे शक्य होईल. या दगडावर आधुनिक पध्दतीने डिझाईन केली तर त्याला योग्य प्रकारे मार्केट मिळू शकेल. कोकणातील लोकांना व्यवसायाची संधी उपलब्ध होईल व आर्थिक परिस्थिती सुधारण्यास मदत होईल.

सल्ला :-

१) कोकणातील या मृदेमध्ये जे गुणधर्म आहेत त्यातून वेगवेगळी पिके काढणे गरजेचे आहे. २) मृदेची माहिती देणारे शिबीरे, कृतीसत्रे होणे आवश्यक आहे. ३) अनेक पिकांवर येणारे रोग याविषयी माहिती देणारे मासिके, त्रैमासिके उपलब्ध करणे आवश्यक आहे. ४) दगडखाण याविषयी प्रशिक्षण देणे गरजेचे आहे. ५) नविन तंत्रज्ञानाचा वापर करून दगडी टाईल्स बनविणे व त्याकडे व्यवसायाच्या दृष्टीने लक्ष देणे आवश्यक आहेत. यासाठी लोकांचे त्याविषयी ज्ञान वाढविणे आवश्यक आहे.

संदर्भ ग्रंथ :-

भारतात मृदा विषयाचा अभ्यास व संशोधन हे प्रामुख्याने खालील संस्थामध्ये होतो.

- १) बिरबल सहानी इन्टीट्यूट ऑफ पॅलिओ बॉटनी लखनौ.
- २) वाडीया इन्टीट्यूट ऑफ हिमालयीन जिओलॉजी देहराडून
- ३) आधारकर रिसर्च इन्टीट्यूट, पुणे.
- ४) डेक्कन कॉलेज पुणे.
- ५) ऑईल अँड नॅचरल गॅस कमिशन (ONGC)
- ६) शासकिय महाविद्यालय नागपूर
- ७) मृदा व त्याचे प्रकार – डॉ. चितळे.
- ८) जिवाश्म संशोधन – डॉ. चिटणीस
- ९) इयत्ता सहावी -पाठ्यपुस्तक
- १०) इयत्ता बारावी -पाठ्यपुस्तक.

**हदगाव भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण
बोधले कविता केरबा**

संशोधक विद्यार्थिनी, भुशाख संकुल, स्वा.रा.ती.म.विद्यापीठ, नांदेड

ईमेल-kavitabodhale1983@gmail.com

सारांश :-

कोणत्याही राष्ट्राचे सामाजिक व आर्थिक प्रगती ही त्या देशातील साक्षरतेच्या प्रमाणावर अवलंबून असते. प्रदेशानुसार व त्यानुसार साक्षरता प्रमाणात बदल होत असते साक्षरता हे प्रमाण सर्वत्र सारखे नसते. अविकसित व विकसनशील देशामध्ये साक्षरतेचे प्रमाण विकसित राष्ट्रांच्या तुलनेत कमी आहे. भारत हे विकसनशील राष्ट्र आहे त्यामुळे साक्षरता प्रमाण कमी असलेले दिसून येते. देशात स्वातंत्र्योत्तर काळात मोठ्या प्रमाणात वाढ झालेली आहे. दारिद्र्य, गरिबी, बेरोजगारी, रूढी, अंधश्रद्धा इत्यादी अनेक कारणांमुळे साक्षरता प्रमाण कमी असलेले दिसून येते. पुरुषांपेक्षा स्त्री साक्षरतेचे प्रमाण कमी आहे. स्त्री शिक्षणाकडे बघण्याचा लोकांचा उदासीन दृष्टिकोनामुळे साक्षरतेचे प्रमाण कमी असलेले दिसून येते. अलीकडच्या काळात साक्षरतेच्या प्रमाणात दिवसेंदिवस वाढ होत आहे. स्त्री शिक्षणासाठी विविध योजनांची अंमलबजावणी केली जात असल्यामुळे स्त्री साक्षरता प्रमाणात सध्या वाढ होताना दिसते.

नांदेड जिल्ह्यातील हदगाव व भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण याचा अभ्यास केल्यास असे दिसून येते की, सन 1971 मध्ये हदगाव तालुका एकूण साक्षरता-24.34, पुरुष साक्षरता- 36.02 स्त्री साक्षरता-12.41 सन 1981 मध्ये एकूण साक्षरता प्रमाण-29.64, पुरुष साक्षरता-43.36, स्त्री साक्षरता- 15.56 सन 1991 मध्ये एकूण साक्षरता- 47.57, पुरुष साक्षरता-50.57, स्त्री साक्षरता 23.67, सन 2001 मध्ये एकूण साक्षरता-55.42 पुरुष- 66.06, स्त्री-44.14 इतकी व सन 2011 मध्ये एकूण साक्षरता-64.98, पुरुष साक्षरता-72.39, स्त्री साक्षरता- 57.08 इतकी आहे.

भोकर तालुक्यातील सन 1971 मध्ये एकूण साक्षरता-18.26, पुरुष 29.48 तर स्त्री साक्षरता 6.72, सन 1981 मध्ये एकूण साक्षरता-24.73, पुरुष साक्षरता-38.20, स्त्री साक्षरता-10.88 इतकी सन 1991 मध्ये एकूण साक्षरता-39.43, पुरुष साक्षरता-44.65, स्त्री साक्षरता-16.67, सन 2001 मध्ये एकूण साक्षरता-51.81, पुरुष- 43.41, स्त्री साक्षरता-39.62 तर सन 2011 मध्ये एकूण साक्षरता-63.08, पुरुष साक्षरता-72.12 तर स्त्री साक्षरता 53.52 एवढी आहे. सन 1971 ते 2001 या कालावधीतील हदगाव व भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण याचा अभ्यास करण्यात आला आहे.

बीज संज्ञा:- हदगाव व भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण याचा अभ्यास

प्रस्तावना-

साक्षरतेमुळे एखाद्या प्रदेशाचा सर्वांगीण विकास जलद गतीने होते. समाजाची आधुनिकीकरणाची प्रक्रिया वेगाने होत असते. साक्षरता प्रमाण जास्त असणाऱ्या प्रदेशांमध्ये जन्मदर व मृत्युदर प्रमाण कमी असते, व स्त्रियांचे विवाहाची वयही जास्त साक्षरता प्रमाण जास्त असणाऱ्या प्रदेशांमध्ये अंधश्रद्धा वर गरिबीचे प्रमाण कमी असते. साक्षरतेमुळे विवाहाचे वय जन्मदर-मृत्युदर यावर परिणाम करणाऱ्या घटकांची व त्यांच्या वाढीतून निर्माण होणाऱ्या समस्या यांची माहिती मिळते. साक्षरतेच्या आधारित नियोजन व शैक्षणिक धोरणे निश्चित करता येतात.

संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या लोकसंख्या विभागात साक्षरतेचे परिभाषा पुढील प्रमाणे स्पष्ट केलेली आहे. "कोणत्याही भाषेत किंवा मातृभाषेत लिहिता-वाचता येणे म्हणजे साक्षरता होय." भारतात 1951 च्या जनगणनेनुसार अशा व्यक्तीला साक्षर म्हणून ओळखले जाते. ज्याची वय चार वर्षांपेक्षा जास्त असून त्याला कमीत कमी पत्र वाचता आले

पाहिजे. नांदेड जिल्ह्यातील हदगाव व भोकर तालुक्यातील 1971 ते 2011 या कालावधीतील साक्षरता प्रमाण अभ्यासण्याचा प्रयत्न केला आहे.

अभ्यास क्षेत्र :

महाराष्ट्राच्या इतिहासात मानाचे स्थान असणाऱ्या प्राचीन वैभवशाली व ऐतिहासिक परंपरा लाभलेला जिल्हा म्हणून नांदेड जिल्हा सर्वपरिचित आहे. शिखांचे दहावे गुरू गुरूगोविंद सिंग यांच्या पदस्पर्शाने पावन झालेली ही भूमी तीर्थक्षेत्र म्हणून ओळखली जाते. नांदेड जिल्ह्यात एकूण सोळा तालुके आहेत. त्यापैकी हदगाव व भोकर त्यापैकी दोन तालुके आहेत. हदगाव तालुका पैनगंगा नदीच्या किनाऱ्यावर वसलेला असून तालुका मुख्यालय नांदेड पासून 64 किमी अंतरावर आहे. हदगाव तालुक्याच्या अक्षवृत्तीय विस्तार 19°49' 47" उत्तर ते 77°65' 93" पूर्व रेखावृत्त आहे. तालुक्याचे एकूण क्षेत्रफळ 1149.59 चौ.किमी इतके आहे. नांदेड जिल्ह्यातील भोकर तालुका गोदावरी नदीच्या खोऱ्यात वसलेला असून तालुक्याचा अक्षवृत्तीय विस्तार 19°10' ते 77°40' पूर्व रेखावृत्त आहे. तालुक्याचे एकूण क्षेत्रफळ 688.00 चौ.कि.मी आहे.

उद्दिष्टे:

१. हदगाव भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण अभ्यासणे.
२. हदगाव व भोकर तालुक्यातील स्त्री पुरुष साक्षरता प्रमाण अभ्यास करणे
३. हदगाव भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण कालसापेक्ष बदलाचा अभ्यास करणे.
४. हदगाव भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण याचा तुलनात्मक अभ्यास करणे.

संशोधन पद्धती व साहित्याचे संकलन:

सदरील शोधनिबंधासाठी मिळवलेली साक्षरतेची आकडेवारी दुय्यम स्वरूपाची आहे. या आकडेवारीसाठी नांदेड जिल्हा जनगणना अहवाल 1971 ते 2011 या आकडेवारीची संकलन केले आहे. या माहितीचे विश्लेषण करण्यासाठी आकडेवारीची सारणीकरण करण्यात आले आहे. सारणीकरण केलेली आकडेवारी दर्शवण्यासाठी आलेखाचा उपयोग करण्यात आला आहे.

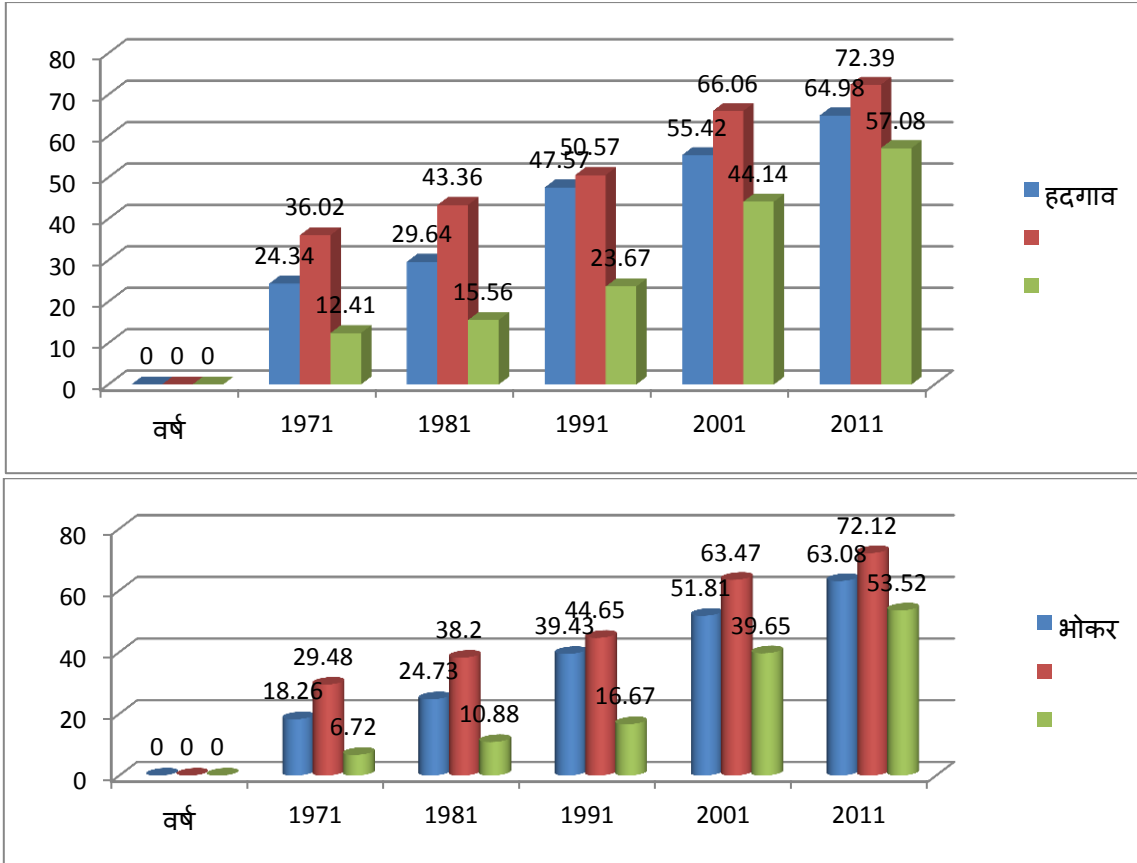
साक्षरता दर काढण्यासाठी खालील सूत्राचा उपयोग करण्यात आला आहे.

$$\text{साक्षरता :- } \frac{\text{एकूण साक्षर लोकसंख्या}}{\text{एकूण लोकसंख्या}} \times 100$$

हदगाव व भोकर तालुक्यातील साक्षरता प्रमाण- हदगाव व भोकर तालुक्यातील एकूण, स्त्री, पुरुष साक्षरता प्रमाण खालील सारणीमध्ये दर्शविण्यात आले आहे.

अ.क्र.	वर्ष	हदगाव			भोकर		
		एकूण	पुरुष	स्त्री	एकूण	पुरुष	स्त्री
1.	1971	24.34	36.02	12.41	18.26	29.48	6.72
2.	1981	29.64	43.36	15.56	24.73	38.20	10.88
3.	1991	47.57	50.57	23.67	39.43	44.65	16.67
4.	2001	55.42	66.06	44.14	51.81	63.47	39.65
5.	2011	64.98	72.39	57.08	63.08	72.12	53.52

स्त्रोत: डिस्ट्रीक सेन्सेस हॅन्डबुक, नांदेड – सन 1971-2011



सन 1971 मध्ये हदगाव तालुक्यातील एकुण साक्षरतेचे प्रमाण 24.34 टक्के इतके आहे तर पुरुष साक्षरता प्रमाण 36.02 टक्के व स्त्री साक्षरतेचे प्रमाण 12.41 टक्के इतके होते. भोकर तालुक्याचे एकुण साक्षरतेचे प्रमाण 18.26 टक्के इतके आहे. तर पुरुष साक्षरता प्रमाण 29.48 टक्के व स्त्री साक्षरतेचे प्रमाण 6.72 टक्के इतके होते. सन 1971 च्या जनगणनेनुसार हदगाव तालुक्याचे एकुण साक्षरता प्रमाण भोकर तालुक्याच्या एकुण साक्षरता प्रमाणापेक्षा 6.08 टक्के ने पुरुष साक्षरता प्रमाण 6.54 टक्के व स्त्री साक्षरता प्रमाण 5.69 टक्के ने जास्त होते.

सन 1981च्या जनगणनेनुसार हदगाव तालुक्यांचे एकुण साक्षरता प्रमाण 29.64 टक्के, पुरुष साक्षरता प्रमाण 43.36 टक्के व स्त्री साक्षरता प्रमाण 15.56 टक्के तर भोकर तालुक्यातील एकुण साक्षरता प्रमाण 24.73 टक्के ने पुरुष साक्षरता प्रमाण 38.20 टक्के व स्त्री साक्षरता प्रमाण 10.88 टक्के इतके होते. तर सन 1981 च्या जनगणनेनुसार हदगाव तालुक्यांचे एकुण साक्षरता प्रमाण भोकर तालुक्याच्या 4.91 टक्के ने पुरुष साक्षरता 5.16 टक्के ने व स्त्री साक्षरता 4.68 टक्के अधिक असल्याचे दिसून येते. सन 1991 मध्ये हदगाव तालुक्याचे एकुण साक्षरता प्रमाण 47.57 टक्के, पुरुष साक्षरता प्रमाण 50.57 टक्के, स्त्री साक्षरता 23.67 टक्के होती. भोकर तालुक्याचे एकुण साक्षरता प्रमाण 39.43 टक्के, पुरुष साक्षरता 44.65 टक्के, व स्त्री साक्षरता 16.67 टक्के, इतकी होती. सन 1991 च्या जनगणनेनुसार हदगाव तालुक्याचे साक्षरता प्रमाण भोकर तालुक्याच्या 8.14 टक्यांनी, पुरुष साक्षरता 5.92 टक्के व स्त्री साक्षरता 7.00 टक्केनी जास्त असल्याचे दिसून येते. सन 2001 हदगाव तालुक्यांचे एकुण साक्षरता प्रमाण 55.42 टक्के, पुरुष साक्षरता 66.06, स्त्री साक्षरता 44.14 टक्के इतकी आहे तर भोकर तालुक्याचे एकुण साक्षरता प्रमाण 51.81 टक्के पुरुष साक्षरता 63.47 व स्त्री साक्षरता 39.42 टक्के इतकी आहे. सन 2001 च्या जनगणनेनुसार हदगाव तालुक्याचे एकुण साक्षरता प्रमाण 3.61 टक्के ने पुरुष साक्षरता प्रमाण 2.59 टक्के न व स्त्री साक्षरता प्रमाण 4.52 टक्के ने भोकर तालुक्यापेक्षा जास्त आहे. सन 2011 मध्ये हदगाव तालुक्याचे साक्षरता प्रमाण 64.98 टक्के पुरुष साक्षरता 72.39 व स्त्री साक्षरता 57.08 टक्के इतकी आहे. तर भोकर तालुक्याचे साक्षरता प्रमाण 63.08 टक्के, पुरुष साक्षरता 72.12

व स्त्री साक्षरता 53.52 टक्के इतकी आहे. सन 2011 च्या जनगणनेनुसार हदगाव तालुक्यातील एकुण साक्षरता प्रमाण भोकर तालुक्यापेक्षा 1.09 टक्के ने पुरुष साक्षरता 0.27 टक्के ने तर स्त्री साक्षरता 3.56 टक्के ने जास्त आहे.

वरील अभ्यासावरून असे दिसून येते की हदगाव व भोकर तालुक्याच्या एकुण पुरुष व स्त्री साक्षरतेच्या प्रमाणात वाढ होत आहे. प्राथमिक शिक्षणाची अनिवार्यता, सर्व शिक्षा अभियान व शिक्षणाबाबत लोकांमध्ये होत असलेली जाणीव जागृती यामुळे साक्षरतेच्या प्रमाणात दिवसेदिवस वाढ होत असल्याचे दिसून येते.

निष्कर्ष:-

1. हदगाव व भोकर तालुक्यातील एकुण, पुरुष व स्त्री साक्षरता प्रमाणात वाढ होत आहे.
2. हदगाव व भोकर तालुक्यातील पुरुष साक्षरतेचे प्रमाण स्त्रियांपेक्षा जास्त आहे.
3. हदगाव व भोकर तालुक्याचे स्थान भौगोलिक दृष्टा डोंगराळ भागात असल्याने शैक्षणिक सुविधांचा फारसा विकास झालेला नाही, म्हणून साक्षरतेचे प्रमाण कमी आहे.
4. हदगाव व भोकर तालुक्यातील बहुसंख्य लोकसंख्या ग्रामिण भागातील आहे. ग्रामिण भागातील वातावरणास पोषक नसल्यामुळे शिक्षणाच्या सोयी आवश्यक त्या प्रमाणात उपलब्ध नसतात त्यामुळे साक्षरता प्रमाण कमी असल्याचे दिसून येते.
5. हदगाव व भोकर तालुक्यातील एकुण, पुरुष व स्त्री साक्षरता प्रमाण भोकर तालुक्यापेक्षा जास्त आहे.
6. हदगाव व भोकर तालुक्यातील स्त्री साक्षरता प्रमाणात वाढ होत आहे. स्त्री शिक्षणाकडे बघण्याचा लोकांचा दृष्टिकोन बदलत आहे.

संदर्भ:-

१. सवदी ए.बी. – लोकसंख्या भूगोल
२. प्रा. कुसूम बाबूराव ढोणे, देवडी- लोकसंख्या भूगोल
३. प्रा. डॉ. व्हि.जे. पाटील, प्रा. एस.व्हि ढाके- लोकसंख्या भूगोल
४. विठ्ठल धारपूरे- लोकसंख्या भूगोल
५. डॉ. एन. के. वाघमारे यांचा पीएचडी शोधप्रबंध स्वा.रा.ती.म. विद्यापीठ(2008)
६. भारतीय जनगणना अहवाल 1971-2011

लिंगभाव व लिंगभेद असमानता सामाजिक समस्या: एक अभ्यास

प्रा.कदम करुणा लक्ष्मणराव

विभाग भूगोल, राजर्षी शाहू कला व विज्ञान महाविद्यालय, वाळूज, ता.गंगापूर जि.औरंगाबाद -४३११३३

Email Id: karuna.kadam50@gmail.com

गोषवारा:

प्रस्तुत शोध निबंधामध्ये जन्मताच एखाद्या व्यक्तीमध्ये एखादी नैसर्गिक विकृती असेल तर तिचा कशा प्रकारे आपल्या समाजामध्ये त्या व्यक्तीकडे बघण्याचा दृष्टीकोनाचा असतो या बाबीचा अभ्यास करण्यात आला आहे. त्याचप्रमाणे लिंगभेदाचे प्रकार याचा देखील या ठिकाणी अभ्यास करण्यात आला आहे. आणि या समस्येवर कश्याप्रकारे आपण उपाय करू शकतो याचा देखील अभ्यास करण्यात आला आहे. शारीरिक लिंगभेद व मानसिक लिंगभावाचा सविस्तर अभ्यास करण्यात आला आहे.

सूचक शब्द: लिंगभाव, लिंगभेद, असमानता.

प्रस्तावना :

लिंगभाव म्हणजे स्त्रियांचा वेगळा विचार नव्हे तर लिंगभाव म्हणजे एखाद्या समाजातील स्त्रिया आणि पुरुषांची सापेक्ष सामाजिक स्थिती. स्त्री आणि पुरुष हा भेद निसर्गाने तयार केला म्हणजे तो नैसर्गिक आहे. स्त्रिया आणि पुरुष यांच्या शरीररचनांमध्ये फरक आहे, पण समाजामध्ये स्त्रिया आणि पुरुषांबाबत जे भेदभाव केले केल्याचे दिसून येते.

थोडक्यात असे म्हणता येईल अर्थात आजपर्यंत प्रामुख्याने स्त्री आणि पुरुष ह्या दोन लिंगभाव अस्मितांचाच विचार झाला आहे. याहून भिन्न लिंग व लिंगभाव अस्मिता समजून त्याचीही लिंगभाव संवेदनशील दृष्टीकोनातून चिकित्सा होणे गरजेचे आहे. तसे काही प्रयत्न चालू असल्याचे दिसते.

लिंगभेद प्रकार

१) तृतीयपंथीय(हिजडा) : एखादी व्यक्ती जन्मतःच नैसर्गिकरित्या लैंगिक विकृती घेऊन जन्मास येतो आणि अशा वेळेस तो स्त्री लिंग आहे की पुलिंग आहे हे स्पष्ट होत नाही. म्हणजेच तो नर आहे की मादी हे स्पष्ट होत नाही. या विकृतीलाच आपल्या समाजात तृतीयपंथी, हिजडा, समलैंगिक, किंवा नपुंसक असे संबोधले जाते.

२) T= ट्रांसजेंडर: ही अशी व्यक्ती असते की जन्माच्या वेळेस तिचे लिंग वेगळे होते आणि नंतर ती व्यक्ती स्वतःला वेगळ्या लिंगाची समजते तिला ट्रांसजेंडर म्हणतात. जी ट्रांसजेंडर आपल्या मनाप्रमाणे आपला ड्रेस बदलते तिला 'क्रॉस ड्रेसर' पण म्हटले जाते. जे ट्रांसजेंडर औषधी, ऑपरेशन, हार्मोन रिप्लेसमेंट थेरेपी आणि सेक्स रिसाइनमेंट सर्जरी ने लिंग बदलवून घेतात त्यांना 'ट्रांस सेक्शुअल' म्हटले जाते. यातही लेस्बियन ट्रांसजेंडर, गे ट्रांसजेंडर, आणि बाईसेक्शुअल ट्रांसजेंडर असे प्रकार आहेत.

३) लेस्बियन=L: ज्या महिलेला दुसऱ्या महिले विषयी आकर्षण वाटते तिला लेस्बियन म्हणतात. लेस्बियनपैकी जिचे व्यक्तिमत्व पुरुषासारखे असते तिला 'बुच' म्हटले जाते. ती पुरुषासारखे बोलते, कपडे घालते. पण काही लेस्बियन पुरुषासारखे राहात नाहीत, त्यांना 'फेम' म्हटले जाते.

४) गे, = G: एक पुरुष दुसऱ्या पुरुषाकडे आकर्षित होतो त्याला 'गे' म्हटले जाते. मात्र या शब्दाचा वापर सर्वच समलैंगिक व्यक्तींबाबत केला जातो. यात लेस्बियन, गे, बायसेक्शुअल असे सर्वच आहेत. 'गे' कम्युनिटी किंवा 'गे पिपल' असेही त्यांना ओळखले जाते

५) इंटर-सेक्स, =I : जन्म झाल्या नंतर ती व्यक्ती स्त्री आहे की पुरुष हे कळतच नाही त्यांना इंटर-सेक्स म्हटले जाते. त्यावेळेस डॉक्टरांना जे वाटते त्याच लिंगाच्या आधारे त्यांचे नाव ठेवले जाते. पुढे मोठे झाल्यानंतर ती व्यक्ती स्वतःला स्त्री, पुरुष किंवा ट्रांसजेंडर यापैकी एक समजायला लागते.

६) बायसेक्शुअल, = B जर कुणाला पुरुष आणि स्त्री अशा दोन्ही लिंगाच्या व्यक्ती आवडत असतील, त्यांच्यासोबत संबंध ठेवायची इच्छा असेल त्यांना बायसेक्शुअल असे म्हणतात.

७) क्वीयर, =Q: आपण निश्चित कोणत्या लिंगाचे आहोत हेच काही जण निश्चित करू शकत नाहीत. ते स्वतःला स्त्री, पुरुष, ट्रांसजेंडर, लेस्बियन, गे, किंवा बायसेक्शुअल असे काहीच म्हणून घेत नाहीत, त्यांना 'क्वीयर' म्हणतात.

निष्कर्ष:

- १) तृतीयपंथीय लोक विकृतीने जन्मास येणे हे एक हार्मोन असंतुलन आहे. ही कुठलीही विमारी, आजार किंवा दैवी कोप नाही.
- २) गरीब, अस्पृश्य, दलित, तृतीयपंथी, मानसिक बीमार, मठ, भ्रष्टाचारी, किंवा अपंग जन्मलेले असतात परंतु हे माणसाने ठरवलेले मानसिक लिंगभाव दिसून येतो.
- ३) अश्या वंचित घटकांना शिक्षण नाही, सन्मान नाही, समाजात त्यांना कुणीही मानवीय नजरेने बघत नाही त्यांची घर्ना केलेली आपणास दिसून येते.
- ४) उदा. स्वयंपाक, घरसफाई, शिवण-टिपण, शेतातले काम, डॉक्टर, नर्स, इंजिनिअर, शिक्षक इ.इ. मात्र घरकाम आणि बालसंगोपन ह्या आजही स्त्रीच्याच प्राथमिक जबाबदाऱ्या मानल्या जातात
- ५) . पुरुषाकडे रेतन तर स्त्रीकडे गर्भारपण, बाळंतपण आणि स्तनपान अशा प्राकृतिक जबाबदाऱ्या आहेत मात्र या पलीकडे कोणतीही कामे स्त्री/पुरुष कोणीही करू शकतात.

शिफारशी

- १) स्त्रियांना घरातील बटकी न समजता तिला सन्मानाची वागणूक दिली गेली पाहिजे, त्यांना त्यांच्या अधिकाराची जाणीव करून दिली पाहिजे.
- २) मुलीने फक्त घर काम करणे असे लिंग भेदावर आधारित काम करणे असा दृष्टीकोन बदलणे आवश्यक आहे.
- ३) स्त्रियांबद्दल केवळ चूल आणि मुल हा दृष्टीकोन बदलणे गरजेचे आहे.
- ४) स्त्रियांना दर्जेदार शिक्षण देणे गरजेचे आहे
- ५) स्त्री किंवा पुरुष यांना जन्मताच विकृती येते त्यांच्याबद्दल आदर बाळगून त्यांचे प्रबोधन केले गेले पाहिजे.
- ६) सुशिक्षित समाजाने या लोकांना भावनिक आधार देणे गरजेचे आहेव सामाजिक मुख्य धारेत आणणे गरजेचे आहे,
- ७) या लोकांचा छळ न करता मानसिक प्रेरणा देणे गरजेचे आहे.
- ८) आधुनिक पाश्चात्य संस्कृतीचा पाठपुरावा करणाऱ्या समाजाने कधी शांतपणे या गोष्टींचा विचार किंवा आत्मचिंतन करून या लोकांना सन्मानाने वागणूक देणे गरजेचे आहे.
- ९) स्त्रिया सार्वजनिक क्षेत्रात अनेक जबाबदाऱ्या निभावत आहेत आणि स्त्रियांवरील अत्याचाराच्या घटनाही वाढत आहेत. ह्यासाठी सामाजिक प्रबोधन आणि स्त्रियांचा माणूस म्हणून आदर समाजात रुजवणे गरजेचे आहे.

संदर्भ:

- १) www.विकिपीडिया
- २) वंदना सोनळकर, शर्मिला रेगे, पितृसत्ता व स्त्रीमुक्ती, क्रांतिसिंह नाना पाटील अकादमी.
- ३) भाषिण कमला (२०००) अंडर जेन्देर, इंग्रजी भाषेत काली फॉर वूमन.

शाश्वत उपाय - जलपुनर्भरण एक भौगोलिक अभ्यास

प्रो. डॉ. नाईक व्ही.टी.¹ प्रा. देठे एस. के.²

¹भूगोल विभाग प्रमुख, ग्रामिण महाविद्यालय वसंतनगर ता. मुखेड

²क्रिडा संचालक, ग्रामिण महाविद्यालय वसंतनगर ता. मुखेड

सारांश:-

पाण्याला जीवन हे दुसरे नाव आहे व ते अगदी अर्थ आहे कारण सर्व सजीव सृष्टी पाण्यावर पोसते वाढते पाणी तेथे जीवन असे समीकरण आहे परंतु पाण्याचा दर्जा आणि साठे सर्वत्र सारखे नाही. पाण्याला मानवी जीवनात अतिशय महत्त्व आहे. भूपृष्ठावर पडणारे पावसाचे पाणी अडवून जमिनीत मुरवणे व जलसंवर्धन करून भूजल स्थिती वाढविणे याची आवश्यकता आहे. त्यासाठी पडणाऱ्या दुष्काळी परिस्थितीवर मत करण्यासाठी विशेष करून पिण्याच्या पाण्याचा शाश्वत पुरवठा करण्यासाठी जलपुनर्भरण करणे अतिशय गरजेचे आहे.

संशोधन पद्धती:-

सदरील शोध निबंध हा द्वितीय साधन सामग्रीवर आधारित असून त्यासाठी विविध संदर्भ ग्रंथ, मासिके नियत साधिके आधी चा वापर करण्यात आलेला आहे.

उद्दिष्टे:-

1. जलपुनर्भरण संवर्धनासाठी जबाबदारीची भूमिका पार पाडणे.
2. निसर्गाच्या सानिध्यात राहून त्याचे नियम पाळणे.
3. पाणीटंचाई समस्याचा व उपाय अभ्यास करणे.
4. जनमानसात पाण्या विषयी जाणीव जागृती निर्माण करणे.
5. जल पुनर्भरण नीती आढावा घेणे.

अभ्यासाची गृहितके:-

1. ज्या भागात भूगर्भ पाणी पातळी वाढली त्या भागात कृषी व्यवसाय व पिण्याच्या पाण्याचा प्रश्न कमी झाला.
2. पुनर्भरणामुळे पिण्याच्या पाण्याचा प्रश्न मिटला आहे व पाण्याची पातळी वाढली आहे.

अभ्यास क्षेत्र:-

जमीन पाणी हवा सूर्यप्रकाश मनुष्यवळ या साधन सुविधा मुबलक प्रमाणात उपलब्ध असलेला आपला भारत जगाच्या पाठीवर एक वैशिष्ट्यपूर्ण देश आहे. असं असताना आम्ही मात्र त्यांची जोपासना करण्याच्या बाबतीत कपाळ करंटे ठरत नाही ना हा आपल्या समोरील एक मोठा प्रश्न आहे. पाणी हा एक नैसर्गिक एक महत्त्वपूर्ण घटक असून आपण ते निर्माण करू शकत नाही व ते आयात ही करू शकत नाही पाण्याला कुठल्याही पर्याय नाही. म्हणूनच पडणाऱ्या पानाचे सर्वांगीण व्यवस्थापन हा एकमेव पर्याय आपल्या समोर उपलब्ध आहे अधिकाधिक खाली जात आहे. आज हि आपल्या देशातील अनेक राज्यात खेड्यात प्रति वर्षी तानकर ने पाणी पुरवठा करावा लागतो. या सारखी लाजिरवाणी बाब दुसरी नाही. पावसाळ्यात धो-धो पडणारा पाउस वाहून जावू द्यायचे व नंतर तेच पाणी तंकर द्वारे आणून टंचाई ग्रस्तांना पुरवायचे हे नियोजन सुरु आहे. महाराष्ट्रातील ८५ % पाणी पुरवठा योजना या भूजालावर अवलंबून आहेत. ग्रामीण भागातील महिलांचा बहुतांश वेळ पाणी शेंडण्यात खर्च होतोय. आधुनिक कृपेने भूजालातील पाणी उपसण्याची स्पर्धाच सुरु आहे. त्यामुळे पाणी पतळी अधिक जल प्रदूषण जास्त प्रमाणात वाढ होत आहे सर्वत्र दूर पाणीटंचाई भासत आहे याचा परिणाम जनमानसावर होऊन समाजामध्ये पाण्याबाबत संघर्ष निर्माण होत आहे हे असंच चालू असल्यास त्याचे दूरगामी परिणाम जनमानसावर होतील आज तागायत कायमस्वरूपी दुष्काळ निर्मूलनासाठी एकत्रित सर्व समावेशक शास्त्रशुद्ध नियोजन पद्धती व काल बद्द प्रयत्न झाले पाहिजे महाराष्ट्राच्या जनतेला पाण्यापासून वंचित असलेल्या जनमानसाला व भुकेल्या शेतीला कायम स्वरूपी शाश्वत पाणीपुरवठा करावयाचा असल्यास येणाऱ्या पुढच्या काळात सामूहिक प्रयत्न करावे लागतील.

सदरील शोध प्रकल्पाचा अभ्यास करत असताना प्रामुख्याने वर्णनात्मक अभ्यास विषयाची निवड करून दुय्यम स्वरूपाची माहिती गोळा करून पाण्याविषयी जे आज मोठे प्रश्न निर्माण झाले आहे ते या विषयातून पाण्याचे पुनर्भरण करून किंवा पावसात द्वारे जे भरपूर पाणी उपलब्ध होते त्या पाण्याचे ज्या ठिकाणी शक्य आहे त्याठिकाणी जलसंवर्धन करणे काळाची गरज आहे म्हणून आज दिवसेंदिवस पाणीटंचाई समस्या उग्र स्वरूप धारण करू लागली आहे त्यासाठी विविध उपाययोजना करणे आवश्यक आहे.

उपाय:-

भारतीय संस्कृतीमध्ये पर्यावरण संवर्धनाला विशेष महत्त्व आहे तसेच पाण्याला जीवन व जमिनीला माता असे विश्लेषण आपण वापरतो पाण्याचे पुनर्भरण व्यवस्थापन व पर्यावरण संवर्धन हा पूर्वी पासूनच आपल्या जीवनाचा अविभाज्य घटक राहिलेला आहे.

शासनामार्फत वसुंधरा पाणलोट प्रकल्प सिंचन विहीर महामंडळे हरियाली, आसेगाव, एम. आर. इ. जी. एस, शिवकालीन पाणी साठवण योजना या प्रकल्पा अंतर्गत विविध स्तरावर महाराष्ट्राच्या वाटेच्या पाणी अडविणे व संवर्धनासाठी प्रयत्न चालू आहेत. हे प्रयत्न हव्या त्या गतीने व कार्यक्षम पद्धतीने न झाल्यामुळे ही परिस्थिती निर्माण झाली आहे. त्यात कामाची गती व त्यातील जनतेचा सहभाग वाढविणे गरजेचे आहे त्यासाठी पाण्याच्या वापरा बाबत महाराष्ट्र शासनाने भूजल विषयक कायदांची प्रभावी अंमलबजावणी व समाजात जाणीव जागृतीची आवश्यकता आहे.

पाणी प्रश्न हा शासकीय कार्यक्रम न बनता त्याला वैयक्तिक जलपुनर्भरण जोड द्यावी लागेल. त्यामुळे महाराष्ट्रातील भरपूर भूजल पातळी वाढेल म्हणून जलपुनर्भरण ही पद्धत प्रभावी ठरेल.

नांदेड, यवतमाळ, चंद्रपूर भागातील भूजलात क्लोराईड, गडचिरोली, ग्रीन बेल्ट भागात लोह व ठाणे, वसई, विरार भागातील भूजलात थाराचे प्रमाण जास्त आहे त्यासाठी मोठ्या प्रमाणात होणाऱ्या बाष्पीभवन यापासून पाण्याला वाचवून येणाऱ्या पिढीसाठी जल जलसंचय करण्यासाठी जलपुनर्भरण हा रामबाण उपाय आहे.

रेन-वॉटर हार्वेस्टिंग:- घराच्या छतावर पडणारे पावसाचे पाणी गोळा करून या पाण्याचा वापर भूगर्भीय जलस्तर वाढविण्यासाठी प्रयत्न करणे. रेन वॉटर हार्वेस्टिंग हा शब्द विशेष करून शहरी आणि ग्रामीण भागात छतावर पडणाऱ्या पाण्यासाठी व ते पाणी अडविण्यासाठी उपयोगात आणण्याच्या प्रक्रियेसाठी वापरला जातो.

जलपुनर्भरण:- जमिनीच्या पोटात गाळून किंवा चाळून पाणी सोडणे म्हणजे जलपुनर्भरण होय. जलपुनर्भरण हे पारंपारिक व अपारंपारिक साध्या सोप्या कमी खर्चाच्या कमी तांत्रिक व सहज करता येण्यासारख्या सर्व सामान्य जनते पर्यंत पोहचल्या पाहिजे.

बोरवेल फेरभरण:- प्रत्येकाने आपापल्या घराच्या छतावरील वाहून जाणाऱ्या पाण्याचा योग्य वापर करण्यासाठी ही पद्धत उपयुक्त आहे आपल्या घराच्या छतावरील पाणी वाहून जाऊ न देता पीव्हीसी पाईप द्वारे एकत्रित करून खास फिल्टर द्वारे बोरवेल मध्ये सोडणे व त्यामुळे ते पाणी फिल्टर होऊन बोरवेल मध्ये साठेल व आपणास बारामाही पाणी मिळेल.

विहीर पुनर्भरण:- पावसाळ्यामध्ये विहिरीच्या परिसरात पडलेले पाणी गाळून विहिरीत सोडणे म्हणजे विहीर पुनर्भरण होय. विहिरीच्या वरच्या भागात $10 \times 10 \times 3$ आकाराचा खड्डा तयार करून त्यात दगड गोटे खडी वाळू भरून खड्डा तयार करणे व ते पाणी पीव्हीसी पाईपद्वारे विहिरीत सोडणे.

मृदा संधारण जलसंधारण व संवर्धन यासाठी उभार वयाच्या अभियांत्रिकी रचनांमध्ये खालील रचना सर्वसाधारणपणे राबविल्या पाहिजेत.

मृदा, जलसंधारण व संवर्धन:- या साठी उभारावयांच्या अभियांत्रिकी रचना मध्ये खालील रचना सर्व साधारणपणे राबविल्या पाहिजे

पुनर्भरण (रिचार्ज पिट):- ज्यांच्याकडे पुनर्भरणासाठी विहीर किंवा इंधन विहीर नाही व जलपुनर्भरण करावयाचे आहे, अशासाठी ही पद्धत $3 \times 3 \times 3$ मीटर या आकाराचा खड्डा करून त्यात दगड-गोटे विटा चे तुकडे भरून जमिनी वरील पाणी फिल्टर करून जमिनी मध्ये मुरविता येते.

वनराई बंधारे:- वनराई बंधारे ही एक कमी खर्चाची जलपुनर्भरण पद्धत आहे गावाजवळ वाहत असलेल्या नाल्यावर बांध घालता येईल. यासाठी प्रथम नाल्यात छोटे-मोठे दगडे व त्यावर माती घालून दबाई करावी यानंतर सिमेंटच्या किंवा खताच्या रिकाम्या बॅगमध्ये माती भरून त्यावर दोन किंवा तीन लाईन लावावे व पुन्हा त्या बॅगावर माती टाकावी या बॅगात साठलेले पाणी जमिनीत झिरपिल्यामुळे कालांतरानी पाण्याचा वापर करता येईल.

महाराष्ट्रातील 81 टक्के भूस्तर हा पाण्यापासून बनलेला असल्यामुळे काही ठिकाणी यावरील पद्धतीचा परिणाम कमी होतो त्यासाठी विधन विहिर विस्फोटक तंत्र, फक्कर शील शिमंटेशन, जलभंजन या आधुनिक पद्धतीचा वापर करावा लागतो.

पाण्याचा कार्यक्षम वापर:- जागतिक बँकेच्या अहवालानुसार महाराष्ट्रातील पाणीपुरवठा योजना व गळतीचे सरासरी प्रमाण पन्नास टक्के असून औद्योगिकरणामुळे पाण्याचा पुनर्भरण करण्यास मोठ्या प्रमाणात वाव आहे उसाच्या श्रमाला तीन टक्के पाणी वापर आहे. विविध नवीन पीक पद्धतीचा विचार यापुढे कमी पाण्यावर जास्त उत्पादन देणाऱ्या

नगदी पिके पद्धतीचा विचार करणे व पाणी देण्यासाठी ठिबक तुषार स्पिंकलर अशा आधुनिक पद्धतीचा वापर शेतकऱ्यांनी केल्यास पाण्याचा कार्यक्षम वापर होऊन आर्थिक विकास होईल.

जलसाक्षरता:- देशातील एकूण धरणांपैकी बहुसंख्य धरणे महाराष्ट्रात असून आज तागायत पाणलोट विकासाचा प्रकल्प मोठ्या प्रमाणात राबवून आपण सतरा टक्के जमीन सिंचनाखाली खाली आणलो यासाठी मात्र महाराष्ट्राची भौगोलिक रचना आहे. शास्त्रीय कारण असले तरी जलपुनर्भरण या कार्यक्रमाला लोक चळवळीचे स्वरूप प्राप्त होऊ शकले नाही हे यामागचे मुख्य कारण आहे म्हणून आजही खालील विषयावर जलसाक्षरता करणे काळाची गरज आहे.

1. पाण्याचे संवर्धन करणे हे आपल्या हातात आहे आणि ते जनतेस पटवून सांगावे लागेल कोण्या ठिकाणी किती पाणी आहे आणि ते कुठे आहे याचा शोध घेऊन संवर्धन करणे.
2. महाराष्ट्रात पाणी या विषयावर अनेक अशा स्वयंसेवी संस्थांनी यशस्वीपणे काम केले पण ते जनतेपर्यंत पोहोचले पाहिजे.
3. हवामान खात्याचा अंदाज पर्जन्य मापक यंत्राची योग्य वापर करण्यासाठी कृषी खात्याचे मार्फत स्थानिक पातळी पर्यंत यंत्रणा उभी करावी लागेल.
4. उपलब्ध पाणी व भूजल पाण्याचा कार्यक्षम वापर सिंचन पुनर्भरण पुनर्वापर पाणलोट असे विकास पर्यावरण दूषित पाणी याबाबत सखोल माहिती विविध प्रसार माध्यमाद्वारे जनतेपर्यंत पोहोचवावी लागेल.
5. यापूर्वी झालेल्या पाणलोट क्षेत्रातील कामातील साठलेला गाळ काढणे व देखभाल दुरुस्तीची कामे लोकसहभागाने करणे

लोकचळवळ:- येणाऱ्या पुढच्या काळात पाण्याबाबत चर्चा चिंता व चिंतन करून बसण्यापेक्षा तीव्र पाणीटंचाई व दुष्काळ सदृश्य परिस्थिती वर मात करण्यासाठी कृतीची जोड देऊन समन्यायी पाणी वाटपासाठी स्वयंसेवी संस्था, धार्मिक विविध संघटना, महाविद्यालयीन युवक महिला मंडळ, शेतकरी यांच्यामार्फत सजग, प्रगल्भ सामाजिक दृष्ट्या जबाबदार लोक भिमुख लोकमान्य अशी चळवळ उभी करून पाणी प्रश्न सुटेलव स्वराज्याचे सुराज्य होईल.

निष्कर्ष:

1. पुनर भरण योजनेमुळे पाण्याची पातली वाढते 2. नव्या जल स्रोतांचा शोध घेणे. 3. पाणी वाया जावू न देणे 4. शास्वत पाणी साठे निर्माण करणे 5. जल युक्त शिवार मोहीम राबवणे 5. भूजलाचे जास्त उपसा न करणे 6. पाणी अडवा पाणी जिरवा मोहीम राबवणे

ग्रंथ सूची

1. कृषी अॅग्रीव्हन
2. कृषी भूगोल - डॉ. फुले सुरेश
3. महाराष्ट्र सिंचन विकास
4. दैनिक पेपर
5. श्वेतपत्रिका जलसंपदा विभाग मंत्रालय मुंबई - नोव्हेंबर 2012-13
6. महाराष्ट्र भूगोल डॉ. फुले सुरेश
7. पाणलोट क्षेत्र विकास - चिंतामणी थिटे व प्रसाद रसाळ

लिंगभाव समानता आणि साहित्य : स्त्री संतांचे समाज विकासातील योगदान

प्रा.डॉ.कविता चंद्रकांत लोहाळे

मराठी विभाग, ग्रामीण (कला, वाणिज्य व विज्ञान), महाविद्यालय वसंतनगर, कोटग्याळ ता. मुखेड जि. नांदेड.

प्रस्तावना-

भारतीय समाजजीवनातील विविध स्तरांचे भावविश्व साहित्यात प्रामुख्याने मांडले जाते. त्या-त्या काळातील परिवर्तनवादी विचारांच्या लेखकांनी साहित्याच्या माध्यमातून विषमतावादी, जात-वर्ण-लिंग-वर्गवादी व्यवस्थेविरुद्ध जोरदार युद्ध पुकारलेले असते. फुले-शाहू-आंबेडकरी विचारांच्या प्रभावातून निर्माण होत असलेले साहित्य नव्या मानवतावादी समाजरचनेची मांडणी करणारे ठरते. मराठी साहित्य १९६० नंतर अधिक व्यापकपणे जीवनवादी बनले. मानवी जीवनातील वास्तव प्रश्नाला भिडणारे साहित्य प्रामुख्याने समाज विकासात महत्त्वाची भूमिका पार पाडणारे ठरले.

माझ्या या लेखाचा विषय 'लिंगभाव समानता' ही साहित्याद्वारे कशाप्रकारे दृग्गोचर झाली. त्यादृष्टिने साहित्याचे समाज विकासातील योगदान अभ्यासणे हा आहे. लिंगभाव समानता समाजात प्रस्थापित करताना सर्वप्रथम लिंगभावाची संकल्पना समजून घ्यावी लागते. स्त्रिया आणि पुरुष यांच्या शरीरांमध्ये फरक आहे, पण समाजात त्यांच्यामध्ये जे विविध प्रकारचे भेद दिसतात त्या सर्वांचे कारण आपल्याला त्यांच्या शारीरिक फरकामध्ये सापडणार नाही. स्त्रिया आणि पुरुष जी अनेक कामे, अनेक व्यवहार रोज करतात त्या सर्व कामांमध्ये शारीरिक फरकाचा संबंध नसतो. स्त्री पुरुष यांच्यातील सामाजिक भेद आणि स्त्रियांचे समाजातील गौण स्थान यांची कारणे नैसर्गिक नसून ती सांस्कृतिक आहेत. आपले विचार साहित्य, कला, शिक्षण यांच्यातून स्त्री-पुरुष भेद आकार घेत असतो. म्हणून त्याला आपण सांस्कृतिक म्हणतो.

उद्देश -

- १) संत स्त्रियांच्या लेखनाची वैशिष्ट्ये अभ्यासणे.
 - २) लिंगभेदाच्या पैलूची परिपूर्ण अभिव्यक्ती संत स्त्रियांच्या लेखनातून व्यक्त होते हे सिद्ध करणे.
 - ३) समकालीन समाजातील घडामोडी व गतिरोधाना संत स्त्रिया नेमका कोणता प्रतिसाद देतात याचे आकलन करणे
- तथ्यसंकलन व विश्लेषण -

प्रस्तुत अध्ययनासाठी दुय्यम स्रोतातील संदर्भग्रंथ, मासिके, संत स्त्रियांवर इतर विचारवंतांनी लिहिलेले लेख इत्यादी स्रोतांचा आधार घेऊन तथ्य संकलन केले आहे.

गृहितके -

- १) जातीव्यवस्था आणि पुरुषसत्ताक व्यवस्था बदलण्याची अंतर्दृष्टी संत स्त्रियात आहे.
- २) संत स्त्रिया यांच्या लेखनातून परिवर्तनवादी विचाराची अभिव्यक्ती झाली आहे.
- ३) संत स्त्रियांनी अनेकविध विषयावर मौलिक लेखन केले आहे.

मध्ययुगीन महाराष्ट्रात भक्तीमार्गाचे जे अनेक पंथ निर्माण झाले त्यातील एक प्रमुख आणि जनसामान्यांच्या मनावर आजही अधिराज्य गाजवणारा पंथ म्हणजेच वारकरी पंथ. वारकरी पंथ हा मुळातच सर्वसमावेशक पंथ म्हणून ओळखला जातो. म्हणून इथे वय, जात, लिंग, वर्ण, धर्म याला अजिबात थारा दिला गेला नाही. या पंथात जे साहित्य निर्माण झाले ते पुरुषांइतकेच स्त्रियांसाठी सुद्धा महत्त्वपूर्ण ठरले. तत्कालीन सामाजिक परिस्थिती पाहता आणि वारकरी संप्रदायाच्या सतत संपर्कात आल्याने महाराष्ट्रातील स्त्रीया या काव्यरचना करू लागल्या. संत, कवयित्रींनी आपल्या काव्यातून अध्यात्मासारखा विषय हाताळलेला आहे. परंतु अध्यात्मिक विषयाची मांडणी करण्यासाठी त्यांनी प्रचलित समाजजीवनातील रूपके, दृष्टांत, उदाहरणे, दाखले वापरलेले दिसून येतात. या संतकवयित्रींचे अभंग निश्चितच स्त्री जीवनातील अनुभवांना स्पर्श करणारे आहेत. त्यांनी समाजातील अनेक चांगल्या वाईट प्रथा परंपरा यांचेही उल्लेख त्यांच्या साहित्यात आणले. संत कवयित्रींनी तत्कालिन समाज संस्कृती व स्त्रीजीवनाच्या विविध पैलूंचे दर्शन त्यांच्या साहित्याद्वारे घडविले. एकूणच काय तर मध्ययुगीन काळातील धार्मिक बंधनात जखडलेल्या सामान्य स्त्रीला आत्मोद्धाराचा मार्ग मिळाला. भक्ती व अध्यात्मिक ज्ञान यांच्या आधाराने संतकवयित्रींनी स्वकर्तृत्व प्राप्त केले. त्यांनी आध्यात्म व साहित्य क्षेत्रात दिलेल्या योगदानामुळे त्यांना सामाजिक प्रतिष्ठाही प्राप्त झाली. आपण या ठिकाणी काही स्त्री संतांच्या वाङ्मयीन कार्याचा थोडक्यात आढावा घेणार आहोत.

संत मुक्ताबाई

संत मुक्ताबाईची रचना मोजकीच आहे; पण तिच्या लेखनाचा दरारा मात्र लोकांच्या मनात मोठा दिसतो. जन्मल्या पासून मुक्ताबाईने तिच्या कुटुंबाचे बहिष्कृत जगणे अनुभवले. अशा तणावपूर्ण अनुभवामुळेच तिने सगळ्या ताणापलीकडे जाऊन 'स्थितप्रज्ञ' होण्याचा निर्णय घेतला असेल. विश्वरहस्याचा ध्यास घेणारी मुक्ताबाई विपरीत परिस्थितीत 'आपले संरक्षण आपणच करीत असतो.' अशा आत्मविश्वासात्मक निष्कर्षाला आलेली दिसते. मुक्ताबाईने गांजलेल्या, पोळलेल्या सामान्य स्त्री-पुरुषांना मुक्तीचा किती सोपा मार्ग सांगितला आहे. ती म्हणते, "अवघी साधने हातवटी | मोले मिळत नाही हाती || अहो आपण तैसे व्हावे | अवघे अनुमानुनी घ्यावे ||" अनुभवाचा पडताळा घेताना आपणच आपली परीक्षा घ्यावी.

भक्तविजय मध्ये मुक्ताबाई आणि चांगदेव यांच्यातील एक प्रसंग वर्णिला आहे. एकदा मुक्ताबाई आंधोळ करतांना अचानक चांगदेव येतो आणि शरमून तोंड फिरवतो. त्याबरोबर मुक्ताबाई त्याला 'निगुरा' (म्हणजे ज्याला गुरु नाही असा) म्हणून फटकारते. ती त्याला म्हणते –

जरी गुरुकृपा असती तुजवरी
तरी विचार न येता अंतरी
भिंतीसी कोनाडे तैसिया परी |
मानूनि पुढे येतासी ||
जनी वनी हिंडता गाय
वस्त्रे नेसत असती काय |
त्या पशु ऐसीच मी पाहे |
तुज का प्रत्यया न ये |

भिंतीवरचे कोनाडे ज्या सहजपणे आपण पाहतो त्या सहजपणे देहाकडे पाहावे ही मुक्ताबाईची शिकवण अत्यंत मोलाची आहे. मुक्ताबाईच्या अभंगातून आपण प्रत्येक गोष्ट स्वतःशोधून पाहावी, अनुमानून घ्यावी असा विचार समोर येतो. त्याच्या ऐतिहासिक व कालोचित अर्थ आपण लावला, तर त्यातूनही आधुनिक स्त्रीच्या मुक्तीला पोषक असा मार्ग सापडू शकेल असे वाटते.

संत जनाबाई

संत कवयित्री जनाबाईच्या अभंगातून दिसून येणारी स्त्री-पुरुष समानता पाहता येईल. जनाबाईनी वारकरी संप्रदायाचे नेतृत्व केले. एखादी स्त्री सार्वजनिक जीवनात वावरू लागते, नेतृत्व करू लागते. तेंव्हा पुरुषप्रधान व्यवस्थेला ते तडा देणारे ठरते. काळाच्या ओघात जनाबाईने मांडलेले बंडखोर विचार विरून गेल्यासारखे दिसतात पण 'नामयाची दासी जनी' हा तिच्यावरचा शिक्का मात्र समाजमनात चांगलाच रुतलेला दिसतो. जनाबाईने स्वतःला सतत नामदेवाची दासी असे म्हटले असले तरी स्वतंत्र माणूस म्हणून उभे राहण्याचे स्वातंत्र्यही तिने तितक्याच निर्धाराने घेतले होते. विठ्ठलाची भक्ती करण्याचे ठरविल्यावर एक बाई म्हणून आणि त्यातूनही शुद्ध जातीची बाई म्हणून काय सोसावे लागते, याची स्पष्ट शब्दांत तिने नोंद केली आहे. चोखामेळा हाच खरा वैष्णव आहे असे जाहिर करण्याइतका अधिकार ती कमाविते. जनाबाईची कर्तबगारी अशी की ती खुद्द विठ्ठलालाच तिच्या जगात खेचून आणते. ईश्वराला ईश्वरपणा आपल्यामुळेच होतो हे जाणून ती म्हणते, "राग येऊन काय करिशी? तुझे बळ आम्हापाशी ||" यावेळी जनाबाई विठ्ठलावर आपला राग व्यक्त करताना दिसतात.

चारचौघांसारखे चाकोरीत राहण्याचे नाकारलेल्या बाईच्या वाट्याला आजही बदनामी येते. तेव्हाही येत असेलच. अशावेळी जगाचे पावित्र्य अपावित्र्याचे नियम मला मान्य नाही हे जनाबाई सांगत आहे. त्यासाठी मुद्दाम देहात्म अनुभवाचे तपशील देत आहे. घरदार सोडून विठ्ठलाचे वेड घेणाऱ्या बाईला त्या काळात जे अपशब्द ऐकावे लागले असतील ते ऐकून जनाबाई हतबल झाली नाही. तिने डोईवरचा पदर खांद्यावर घेऊन भरल्या बाजारात वेसवा होऊन जायची प्रतिज्ञा केली.

'डोईचा पदर आला खांद्यावरी,
भरल्या बाजारी जाईन मी
हातामध्ये टाळ खांद्यावरी वीणा,
आता मज मना कोण करी'

असे निर्भिडपणे त्या अभिव्यक्त होतांना दिसतात. 'स्त्री जन्म म्हणोनी न व्हावे उदास' या अभंगाद्वारे व्यक्त झालेल्या संत जनाबाई वैचारिकदृष्ट्या कितीतरी प्रगल्भ वाटतात.

संत निर्मळा

कर्मकांड नाकारणाऱ्या संत निर्मळा देखील स्वआस्तित्वाची जाणीव करून देतात. संत निर्मळा यांनी कर्मकांड नाकारून भगवंताच्या नामाचा सोपा पर्याय निवडा असे आपल्या अभंगातून सूचविले त्या म्हणतात -

'संसाराचे कोण कोड | नाही मज त्याची चाड
एका नामेचि विश्वास | दूढ घालोनिया कांस
जेथे न चले काळसत्ता | विठोबाचे नाम गाता
शास्त्रे पुराणे वदती | नाम तारक म्हणती.'

ज्या व्यवस्था कर्मकांडामध्ये समाजाला जखडून ठेवण्यासाठी शास्त्र आणि पुराणाचे दाखले देतात. त्याचेच दाखले देऊन संत निर्मळा यांनी समाजाला कर्मकांडातून मुक्ती देण्यासाठी प्रयत्न केले.

संत बहिणाबाई

वारकरी संत परंपरेतील बहिणाबाई ही शेवटची संत स्त्री. ती गरीब ब्राह्मण कुटुंबात जन्मली. शाक्त पंथातील ३० वर्षे वयाच्या वेदिक पंडिताशी तिचे वयाच्या तिसऱ्या-चौथ्या वर्षी लग्न झाले. नवऱ्याची मारहाण सहन केली. परंतु बहिणाबाईने तुकाराम नावाच्या शुद्ध गुरुची निवड केली आणि वारकरी होऊन कृतिशीलपणे तिने भक्तीमध्ये सहभाग घेतला. तिच्या लेखनात वारकरी संप्रदायाचे ऐतिहासिक तपशील नोंदविलेले दिसतात. इतकेच नाही तर अश्वघोषाच्या बौद्ध परंपरेतील कर्मठ ब्राह्मण्याला विरोध करणाऱ्या 'वज्रसूची' या संहितेचे भाष्यासह केलेले रूपांतर आणि ७२९ अभंगांचे आत्मनिवेदन जे महाराष्ट्राच्या सामाजिक इतिहासाच्या दृष्टिने महत्त्वाचा स्रोत आहे. असे सज्जड योगदान बहिणाबाईचे आहे. बहिणाबाईच्या आयुष्यातील संघर्ष फक्त पतिव्रताधर्म आणि ईश्वर यामधील ओढाताणीचा नव्हता, तर वर्णवर्चस्व तसेच ब्राह्मणाचा स्वतःला लागणारा अर्थ, वेदांचा खरा अर्थ आणि व्रतवैकल्यांच्या शिस्तीचा बडगा या साऱ्याशी जुळलेला होता. या मराठी संत स्त्रीने आपल्या नवऱ्याच्या विचारांची कर्मठ चौकट बदलली. पतिव्रता धर्माच्या संकल्पनेची पुनर्व्याख्या केली आणि केवळ पतिनिष्ठेपासून उच्चतर ध्येय या अर्थाकडे पत्नीधर्म वळवून स्त्री-पुरुष दोघांनाही तो लागू केला. ज्या काळात बहिणाबाई जन्मली त्या काळात स्त्रियांना ज्ञान संपत्ती, अध्यात्म या कोणत्याच क्षेत्रात कोणतेही हक्क नव्हते. हे लक्षात घेतले पाहिजे. बहिणाबाई वारकरी संप्रदायात एका मुक्त समाजाच्या शोधात गेली असेल म्हणूनच ब्रह्म जाणणारा तो ब्राह्मण या तऱ्हेची नवी व्याख्या करून जन्मजात ब्राह्मणी वर्चस्वाला शह देऊन सर्व मानवतेसाठी वैश्विक सत्य सांगण्याचा ती प्रयत्न करते. पुरुषसत्ताक व्यवस्थेच्या इमारतीचे खांबे नवे अर्थ देऊन ती खिळखिळे करू पाहते. स्वतःला पूर्णपणे जाणून घेणे यालाच ती पतिव्रताधर्म म्हणते.

संत कवयित्रीचे साहित्य वाचताना त्या ज्या काळात जन्मल्या, वावरल्या त्यांचे संदर्भ विसरून चालणार नाही. त्यांच्या संघर्षांचे आध्यात्मिक स्वरूप डावलून चालणार नाही. हे जितके खरे, तितकेच आपले ध्येय गाठताना या स्त्रियांनी कितीतरी पारंपारिक समज आणि चौकटी मोडून काढल्या होत्या हे लक्षात ठेवले पाहिजे.

संत स्त्रियांचे भक्तीमधील लेखन अगदी अलीकडच्या काळापर्यंत निव्वळ साहित्यातील अभिव्यक्ती या दृष्टीनेच पाहिल्या गेले. त्यामुळे त्यांनी जात, जातीची उतरंड आणि त्यातील लिंगभेदाची जडणघडण यातून ज्या वैचारिक अधिसत्ता निर्माण होतात त्यांची केलेली धारदार चिवट चिकित्सा दुर्लक्षित राहिली किंवा पार्श्वभूमी म्हणून मागे ढकलली गेली. वास्तवात खरेतर वारकरी संप्रदायामध्ये ज्या स्त्रिया वारकरी होऊन समान पायावर सामील झाल्या त्यांनी आपल्या समाजात मोठे धीराचे पाऊल उचलले होते. ज्या रोजच्या घरगुती विश्वासाने त्यांना दुय्यमत्व दिले होते. त्यातील आशय घेऊन विषमतेच्या व्यवस्थेला शह देण्याची एकही संधी न गमावता निर्भिडपणे त्या लिहित राहिल्या. जहाल बंडखोर आशय, चिकित्सा आणि दमदार अभिव्यक्ती यांनी परिपूर्ण असलेल्या स्त्री संतांची एक मालिकाच आपल्याला दाखवता येईल. महदाइसा, बाईसा, आऊसा त्या नंतर येणार मुक्ताबाई, जनाबाई, सोयरा, निर्मळा, संत सखु, प्रेमाबाई आणि बहिणाबाई इत्यादी. संत कवयित्रीची १३ व्या ते १७ व्या शतकामध्ये अशी एक अखंडित परंपराच दिसते.

संत मुक्ताबाई, संत जनाबाई, संत निर्मळा, संत बहिणाबाई या स्त्री संतांच्या वाङ्मयीन कार्याचा आढावा घेताना त्यांच्या वैचारिक प्रगल्भतेची जाणीव प्रकर्षाने होताना दिसते. स्त्री-पुरुष भेदापलीकडचे त्यांचे विचार समाज परिवर्तनाच्या अनुषंगाने महत्त्वपूर्ण ठरतात. स्त्री संतांच्या साहित्यातून दिसून येणारी लिंगसमानता, लिंगभेदभाव विरहित मुक्त जीवन, स्त्री सक्षमीकरण या विचारांनी समाजाला एक दिशा मिळाली. लिंगभाव समानता हा केवळ

मानवी हक्कच नाही तर शांततापूर्ण समृद्ध आणि शाश्वत जगासाठी आवश्यक पाया आहे. तो पाया वरील संत स्त्रियांच्या लेखनातून घातल्या गेला आहे असे दिसून येते.

निष्कर्ष :-

- १) संत स्त्रियांच्या लेखनात स्त्री-पुरुष समानतेचे बीजारोपन झालेले आहे असे दिसून येते.
- २) संत स्त्रियांच्या लेखनात परिवर्तनवादी वैचारिक मुल्ये आढळतात.
- ३) संत स्त्रियांच्या लेखणाने संत साहित्याला विकसित केले, समृद्ध केले.
- ४) संत स्त्रियांचे विचार स्त्री-पुरुष भेदापलीकडे जाणारे होते असे त्यांच्या साहित्यातून दिसून येते.

संदर्भ :-

- १) भागवत विद्युत, 'स्त्री-प्रश्नांची वाटचाल : परिवर्तनाच्या दिशेने', प्रतिमा प्रकाश, पुणे प्र.आ. ८ मार्च २००४
- २) जाधव निर्मला (संपा), भारतीय स्त्री प्रश्न आकलनाच्या दिशेने, हरिती पब्लिकेशन्स, पुणे आणि मैत्री प्रकाशन, पुणे, प्र.आ. २०१५
- ३) गीताली वि.म. स्त्रीप्रश्न सोडवताना, दिलीपराज प्रकाशन, पुणे २००३

राजर्षी शाहू महाराजांचे शैक्षणिक विचार व सद्यस्थिती

प्रा.डॉ.सखाराम यशवंतराव गोरे

ग्रामीण महाविद्यालय वसंतनगर (कोटयाळ) ता.मुखेड जि.नांदेड

राजर्षी शाहू महाराज म्हणजे एका प्रचंड वादळी वाऱ्याचे मानवी रूप होय. रोगट आणि सडलेल्या कर्मकांडाचे स्तोम माजविलेल्या आणि वर्णवर्चस्वाद्धारे सामाजिक गुलामगिरीची निर्माती झालेल्या विचारांना झुंगारून, लाथाडून स्वातंत्र्य, समता आणि बंधुत्वाच्या उदात्त विचारांना आणि शाश्वत मुल्यांना महाराष्ट्राच्या भूमीत रुजविण्याचा प्रयत्न जीवनभर केला हे वादळी वारे महाराष्ट्राच्या भूमीत रुजविण्याचा प्रयत्न जीवनभर केला हे वादळी वारे महाराष्ट्राच्या पाठीवर अड्यावीस वर्षे वाहिले. त्यांच्या कामाचा व्याप व वेग प्रचंड प्रमाणात होता. जुन्या व कुजलेल्या विचारांच्या विरुद्ध जेव्हा नवीन व मुलगामी विचार संघर्षासाठी पुढे सरसावतात तेव्हाच क्रांतीची पहिली टिणगी पडते. सामाजिक क्रांतीच्या टिणग्या महाराष्ट्रात प्रथम महात्मा ज्योतीबा फुल्यांच्या कृतीशील विचारातून बाहेर पडल्या आणि अशाच टिणग्यांचे पुन्हा निखाऱ्यात रुपांतर झाले. राजर्षी शाहू महाराजांच्या कार्यात हजारो वर्षांपासून या देशातील जनमाणसावर सत्ता गाजविण्याच्या आणि धर्माच्या नावावर समाजात उच्च निचवतेचे वातावरण निर्माण करणाऱ्यांवर त्यांनी कठोर असे हल्ले चढविले.

आधुनिक महाराष्ट्राच्या इतिहासात आपल्या शैक्षणिक, सामाजिक, आर्थिक आणि अस्पृश्य विषयक कार्याद्वारे बहुजन समाजाला जागृत करणारे व त्यांची सर्वांगीण प्रगती घडवून आणणारे म्हणजे राजर्षी शाहू महाराज होय. राजर्षी शाहू महाराज हे जन्मतः राजघराण्यातील नव्हते. ते मुळचे कागल येथील घाटगे घराण्याचे होते. कागलचे हे घराणे पेशव्यांच्या काळात आपल्या पराक्रमाबद्दल प्रसिद्ध होते. याच घराण्यात त्यांचा जन्म २६ जून १८७४ या शुभदिशी एका क्षत्रिय परिवारातील जयसिंगराव घाटगे व राधाबाई या दाम्पत्यांच्या पोटी झाला होता. त्यांचे पुर्वाश्रमीचे नांव यशवंतराव होते. शाहू महाराज आपल्या नावाप्रमाणे यश घेऊन जन्माला आले होते. म्हणूनच पुढे त्यांची आयुष्यभर जे जे कार्य हाती घेतले ते प्रत्येक कार्य यशस्वी करूनच ते थांबले. म्हणूनच त्यांच्या जीवनाची यशोगाथा पावलो पावली गायीली जाते. अशा या यशवंतरावाला कोल्हापूर संस्थानचे छत्रपती चौथे शिवाजी यांच्या अकाली निधनानंतर त्यांच्या पत्नी आनंदीबाई साहेबांनी घाटगे या परिवारातून कोल्हापूर संस्थानच्या राजघराण्यात १७ मार्च १८८४ साली दत्तक घेतले. दत्तक विधीनंतर त्यांचे नाव “ शाहू छत्रपती ” असे ठेवण्यात आले. त्यानंतर राजघराण्याच्या प्रथेनुसार शाहू महाराजांचे प्रारंभिक शिक्षण खाजगी शिक्षका मार्फत झाले. त्यानंतर पुढे १८८५ साली राजकोट येथील राजकुमार कॉलेजात पाठविण्यात आले. १८८९ पर्यंत तेथील त्यांचे शिक्षण पूर्ण झाले. यानंतर १८९० ते १८९४ पर्यंत महाराजांचे शिक्षण सर फ्रेजर यांच्या देखरेखीखाली झाले. या काळात त्यांनी इंग्रजी भाषा, राजकारभार इत्यादी सर्व विषयांचे अत्यंत सखोल असे अध्ययन केले. धारवाद येथे महाराजांचे अध्ययन चालू असतानाच त्यांचा विवाह बडोद्याचे गुणाजीराव खानविलकर यांची कन्या लक्ष्मीबाई साहेब यांच्या बरोबर १ एप्रिल १८९१ रोजी झाला. त्यानंतर म्हणजेच २ एप्रिल १८९४ मध्ये कोल्हापूर संस्थानाची सुत्रे महाराजांनी हाती घेतले.

उद्दिष्ट

शाहू महाराजांचे शिक्षण विषयक विचारांचा अभ्यास करणे.

शाहू महाराजांनी सांगितलेल्या शिक्षण विषयक विचार आजच्या शिक्षण पध्दतीत रुढ झाले का ?

मोफत व सक्तीच्या शिक्षण पध्दतीचा, बहुजन समाजासाठी कितपत फायदा झाला हे जाणून घेणे.

शाहू महाराजांच्या शिक्षण विषयक विचारांचा आजच्या शिक्षण पध्दतीवर प्रभाव पडला आहे.

गृहितकृत्ये

राजर्षी शाहू महाराजांच्या शिक्षण विषयक विचारांचा वारसा आजच्या शिक्षण पध्दतीत शोधणे.

शिक्षण विषयक महान विचारांची समाजात जगृती निर्माण झाली आहे का ?

त्यांच्या विचारांचा वास्तविक शिक्षण पध्दतीवर प्रभाव पडला आहे का ?

संशोधन पद्धती

या विषयावर संशोधन करत असताना विविध ग्रंथ, मासिके, वर्तमानपत्र या द्वितीय सामुग्रीचा आधार घेण्यात आला आहे.

शाहू महाराजांचे शैक्षणिक विचार

प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे व मोफत करण्याबाबतचा कायदा.

प्राथमिक शिक्षणाचे सार्वत्रीकरण करावे हा विचार शाहू महाराजांच्या मनात १९१२-१३ च्या सुमारासच होता. असे त्या वर्षीच्या प्रशासकीय अहवालावरून स्पष्ट होते. प्राथमिक शिक्षण मोफत आणि सक्तीचे करण्याबाबत २४ जुलै १९१७ ला शाहू महाराजांनी एक जाहिरनामा प्रसिद्ध केला. सक्तीच्या प्राथमिक शिक्षणाची नियमावली तयार करण्यासाठी शिक्षण क्षेत्रातील तज्ञांची एक समिती नेमण्यात आली. २१ सप्टेंबर १९१७ ला या तज्ञांच्या समितीने तयार केलेल्या नियमावलीवर आधारित सक्तीच्या शिक्षणाचा कायदा खास जाहिरनामा काढून प्रसिद्ध करण्यात आला.

या कायद्याचा उद्देश स्पष्ट करतांना शाहू महाराजांनी नमुद केले की, “करवीर क्षेत्रातील आमच्या सर्व प्रजाजनांना लिहता वाचता येऊन आपली स्थिती ओळखून सुधारण्यास समर्थ व्हावे ” या कायदानुसार शिक्षण घेण्यासाठी योग्य वयाची मुले शाळेत पाठविण्याची सक्ती आई-वडिलांना करण्यात आली. त्यांनी मुलांना शाळेत पाठविले नाही तर त्यांना प्रत्येकी एक रुपया दर महिना दंड लावण्याची तरतुद करण्यात आली होती. शाहू महाराज आपल्या संस्थानच्या बजेटमध्ये प्राथमिक शिक्षणावर दरवर्षी एक लाख रुपये खर्च करित असत. त्यांनी संस्थानातील प्रत्येक घरावर एक रुपया असा नाममात्र कर लावून पैसा गोळा केला होता. तर इनामदार, सरंजामदार या सारख्या श्रीमंत लोकांच्या उत्पन्नावर शेंकडा १० ते २० टक्के “ शिक्षण पट्टी ” बसविली होती. १९१८ यावर्षी शाहू महाराजांनी आपल्या संस्थानात सक्तीच्या व मोफत शिक्षणासाठी एक स्वतंत्र खाते स्थापन केले त्यावर “ एज्युकेशनल इन्स्पेक्टर ” या वरिष्ठ अधिकार्याची नेमणूक करण्यात आली. इतकेच नव्हे तर हे खाते आपल्या नजरेखाली ठेवले होते.

समाज समृद्ध व बलवान करण्यासाठी बहुजन समाजातून उत्तम शेतकरी, उत्तम शिक्षक, उत्तम व्यापारी, उत्तम उद्योगपती, उत्तम सैनिक निर्माण झाले पाहिजेत. आणि त्यासाठी शिक्षण गंगेचे पाट खेड्यापाड्यातील गोरगरीब जनतेच्या दारापर्यंत नेले पाहिजेत, असे शाहू महाराजांना वाटत होते.

वस्तीगृह मोहीम

शाहू महाराजांनी संस्थानातील शिक्षण घेणाऱ्या मुलांसाठी राहण्याची व खाण्याची व्यवस्था करण्यासाठी म्हणून वसतीगृह निर्माण केलेली होती. यांचा उद्देश एवढाच होता की विविध जातीधर्माची मुले गरीब, कष्टकरी, शेतकरी, दलीत, आदिवासी यांची मुले शिक्षणापासून वंचित राहू नयेत. म्हणून १९०१ मध्ये पहिले वसतीगृह त्यांनी सुरू केले. त्याचबरोबर विविध जाती धर्माची २० विद्यार्थी वसतीगृह निर्माण केली. अस्पृश्य मुलांसाठी देखील १९०८ मध्ये एक वसतीगृह निर्माण केले होते. शाहू महाराज म्हणत वसतीगृह हे केवळ राहण्यासाठी व खाण्यासाठी नसून त्या शिक्षण देणाऱ्या व

संस्कार करणाऱ्या संस्था आहेत. या शिवाय या वसतीगृहाच्या माध्यमातून परंपरागत चाली, रिती, रुढी, स्पृश्य, अस्पृश्य भावनेला तिलांजी मिळविण्याचा व ब्राम्हणेत्तर सर्व वर्गांच्या मूलांना शिक्षण मिळाले पाहिजे हा पुरोगामी दृष्टीकोण शाहू महाराजांकडे होता म्हणून त्यांनी वसतीगृह मोहीम चालू केलेली होती. जी या देशाला, राज्याला मिळालेली एक महत्वपूर्ण देण आहे.

उच्च व व्यवसाय शिक्षण

उच्च आणि व्यवसायीक शिक्षणासाठी शाहू महाराज महत्व देताना म्हणतात की, प्राथमिक शिक्षणावर भर दिला असला तरीही माध्यमिक व उच्च शिक्षणाकडे माझे लक्ष कमी नाही. माझ्या रयतेत प्राथमिक व उच्च शिक्षणाचा प्रसार करण्यासाठी माझा प्रयत्न चालू आहे. इ.स.१८५१ मध्ये कोल्हापुर येथे इंग्रजी शाळा सुरु झाली. पुढे इ.स. १८८१ मध्ये या शाळेचे रुपांतर राजाराम महाविद्यालयात झाले. दरबारतर्फे दरवर्षी ५०,००० हजार रुपये या महाविद्यालयाच्या खर्चासाठी दिले जात. व्यावसायिक शिक्षणासाठी शाहू महाराजांनी खेडे गावाचा कारभार व्यवस्थीत चालविता येण्यासाठी पाटील व तलाठी शाळा सुरु केल्या या शाळेत पाटील व तलाठ्यांना जमाखर्च, कायदे, शांतता, सुव्यवस्था व महसूल विषयक शिक्षण दिले जात असे. शिक्षकासाठी प्रशिक्षण केंद्रे सुरु करून सहा महिन्यांच्या काळात २० शिक्षकांना अंकगणित, भाषा, शालेय व्यवस्थापन व अध्यापन पध्दतीचे शिक्षण देण्यात आले. तांत्रिक शिक्षणासाठी जयसिंगराव घाटगे यांनी तांत्रिक संस्था स्थापन केली. या संस्थेत लोहा, सुतार व गवंडी काम यासारख्या विषयांचे शिक्षण दिले जात असे. लष्करी शिक्षणासाठी शाहू महाराजांनी इन्फन्ट्री स्कूल सुरु केले. यामुळे विद्यार्थ्यांत व्यावसायीक व लष्करी शिक्षणाची आवड निर्माण झाली.

मुस्लीमांच्या शिक्षणासाठी प्रयत्न

तत्कालीन समाजात ब्राम्हण सोडले तर सर्वच जाती शैक्षणिक दृष्ट्या मागासलेल्या होत्या. शाहू महाराजांनी मुस्लीम समाजाने शिक्षण घेण्यासाठी पुढे यावे असे उद्गार इ.स. १९०२ मध्ये मुस्लीम समाजाने आयोजित केलेल्या सत्कार समारंभ प्रसंगी काढले होते. परंतु मुस्लीमात शिक्षणाबद्दल पराकोटीची अनास्था होती. म्हणून शाहू महाराजांनी मुस्लीम १० विद्यार्थ्यांना मराठा बोर्डीगात प्रवेश देवून मुस्लीमांच्या शिक्षणाला सुरुवात केली. पुढे इ.स.१९०६ साली मोहमेडन ऐज्यूकेशन सोसायटी ही मुस्लीमांतील प्रतिष्ठित संस्था स्थापन करून शाहू महाराज स्वतः अध्यक्ष झाले. मुस्लीम बोर्डींग सुरु करून चौफाळ्याच्या माळावर जागा देऊन ईमारतीसाठी ५५०० रु. ची देणगी दिली.

अस्पृश्यांना शिक्षण

शाहू महाराजांना शुद्र म्हणणाऱ्या ब्राम्हण शाहीने तर शुद्रातीशुद्रांना तर पशूतूल्य जीवनन जगण्याला भाग पाडले. म्हणून शुद्रातीशुद्रांना मानसिक व सामाजिक गुलामगोरीतून मुक्त करण्यासाठी शिक्षण हेच माध्यम महत्वाचे होते. याची जाणीव शाहू महाराजांना असल्यामुळे अस्पृश्यांना शिक्षण देण्याचे धोरण आमलात आणले त्यासाठी अस्पृश्यांच्या शाळेची संख्या वाढविण्याची गरज शाहू महाराजांना वाटली. इ.स. १८९४ ला अस्पृश्यांच्या ५ शाळा असून १६८ अस्पृश्य विद्यार्थी होते तर १९१८ साली शाळांची संख्या २७ तर अस्पृश्य विद्यार्थ्यांची संख्या ६३६ वर पोहचली म्हणजेच शाहू महाराजांच्या परिश्रमाने अस्पृश्य शाळांचा अभ्यासक्रम सारखा नव्हता. अस्पृश्यांच्या शाळेत चौथी पास झालेला मूलांना पात्रता नसून पाचवित प्रवेश मिळत नव्हता. त्यासाठी शाहू महाराजांना श्रीपत शिद्यांच्या मार्फत खास पात्रता वर्ग चालवून अस्पृश्य विद्यार्थ्यांचे शिक्षण खंडीत न होऊ देण्याचे कार्य शाहू महाराजांनी केले.

स्त्री शिक्षणाला प्रोत्साहन

कुटुंब व समाजाचा विकास घडवून आणायचा असेल तर स्त्री शिक्षणाशिवाय तरणोपाय नाही हे शाहू महाराजांनी ओळखले होते. त्यामुळे शाहू महाराजांनी स्त्री शिक्षणाकडे विशेष लक्ष दिले. मिस लिटल या शिक्षणाधिकारी असलेल्या इंग्रज बाई मायदेशी गेल्यावर फिमेल ट्रेनिंग स्कूलमधील शिक्षिका रुखमाबाई केळकर यांना शिक्षणाधिकारी म्हणून नेमले त्यांनी स्त्री शिक्षणाला गतीमान केले. संस्थानात मुलामुलींच्या शाळा होत्या त्याशिवाय खस मुलींच्या शाळा स्थापन केल्या. मुलींच्या शिक्षणात शिक्षकांनी अधिक रस घेण्यासाठी मुलांच्या शाळेत पास होणाऱ्या मुलींच्या संख्येवर त्या शिक्षकांकडून खास इनाम दिले जात. हुशार मुलीसाठी दरबारने शिष्यवृत्ती ठेवली.

गाव तेथे शाळा

बहुजन समाजातील बोधदीक जागृती करण्याचे एक प्रभावी साधन म्हणून त्यांनी शिक्षणाकडे पाहिले. वर्षानुवर्षे ज्या मुठभर लोकांच्या हाती ज्ञानार्जन ज्ञानदानाची सुत्रे होती ती समाजातील तळागाळातील लोकांपर्यंत पोहचली पाहिजे. गरीबांची मुले आपल्या आयपतीप्रमाणे शिक्षण घेवून मोठी झाली पाहिजेत आणि स्वतंत्रपणे व्यवसाय केला पाहिजे अशी त्यांची प्रबळ इच्छा होती. म्हणून त्यांनी गाव तेथे शाळा असा संकल्प केला. प्रत्येक गावातील शाळा व्यवस्थितपणे चालविण्यासाठी व तिथी गुणवत्ता वाढविण्यासाठी शाळा - पंच पध्दती सुरु केली.

शाहू महाराजांनी विविध जाती-धर्मांच्या मुलांना शिक्षण देवून राष्ट्राला डोळसकरण्याचा प्रयत्न केला. त्यांच्या शैक्षणिक कार्यामुळे बहुजन समाज प्रकाशमय झाला. आजही शाहू महाराजांच्या प्राथमिक शिक्षण सक्तीचे व मोफत करण्याच्या विचारांची देशाला नितांत आवश्यकता आहे.

शिक्षण विषयक सद्यस्थिती

बहुजन समाजाच्या उध्दाराचे कंकण ज्यांनी हाती बांधले होते ते म.फुले व शाहू महाराज समाजसुधारकांनी शिक्षण ही सर्व सुधारणांची गुरुकिल्ली मानली होती. त्या पायावर आजही शिक्षण पध्दती अस्तित्वात आहे. जे विचार राजर्षी शाहुंनी शिक्षणासाठी वास्तवात आणले त्याच विचाराची आज पर्यंत महाराष्ट्र राज्याला अमलबजावणी करता आली त्यांच्या महान विचारानना आज २१ व्या शतकात पाहत आहोत असे दिसते.

आज राज्याच्या सर्व शिक्षा अभियानातून राजर्षी शाहू महाराजांचे विचार दिसतात त्यांच्या विचारातूनच ग्राम शिक्षण समिती, १४ वर्षांखाली सर्वांना सक्तीचे शिक्षण उच्च शिक्षणासाठी शिष्यवृत्ती, आर्थिक मदत, सामाजिक न्याय विभागामार्फत मिळणारी शिक्षणासाठीची सोय, महिला शिक्षण, गावातील प्रौढ शिक्षण, सामाजिक आरक्षण, मागास जाती जमातींना शैक्षणिक सवलत, शहरी व ग्रामीण भागात शिक्षणाचा समान दर्जा, आरक्षण, वस्तीगृहे, गाव तेथे शाळा, सुज्ञ शिक्षक वर्ग, स्त्री-पुरुष समानता, राष्ट्रीय एकात्मता हे सर्व त्या महान पुरुषाने १९ व्या शतकात स्वप्न पाहिले. याचे त्यांचे ते विचार आज सर्वत्र दिसत आहेत.

आज राज्यात शिक्षण घेणे हा त्याचा मुलभूत हक्क झाला आहे. व शिक्षण घेणे सक्तीचे झाले आहे. आज राज्याच्या कल्याणकारी धोरणामुळे प्रत्येक व्यक्तीपर्यंत शिक्षणाची सोय झालेली आहे. राजर्षी शाहू महाराजांनी सांगितल्या प्रमाणे शिक्षणाची गंगा घरोघरी पोहचली आहे. या ज्ञान गंगेत सर्वांचेच हित आहे. पण आज मोफत शिक्षणावरील विश्वास कमी होत असल्याचे असे दिसून येत आहे. परत मक्तेदारी स्वरुपाचे लोक क्षेत्रात हस्तक्षेप करताना दिसतात. मोफत शिक्षणापेक्षा खर्चीक शिक्षणाला महत्त्व वाढत जात आहे. सर्व समाज आज शिक्षीत झाला आहे. शिक्षितांची संख्या वाढलेली आहे. परंतु गुणवत्तापूर्ण असलेले शिक्षण दिसून येत नाही. म्हणून सर्वांनासाठी समान असावे असे मत मांडणाऱ्या महापुरुषाला मान देत शिक्षणाची दिशा बदललेली आहे. सामान्य मानसाच्या तुलनेत उच्च वर्गीयात शिक्षणाचे धडे ही वेगळी दिली जात असल्याचे चित्र आज समाजात दिसत आहे.

सर्व शिक्षा अभियाना मार्फत मोफत व सक्तीचे शिक्षण देणाऱ्या शाळा मात्र वस पडत जात आहेत. हे वास्तव आहे. मोफत शिक्षणापेक्षा महागडे शिक्षण गरजेचे आसी परिस्थिती आज राज्याराज्यात निर्माण झाली आहे. त्यामुळे शिक्षणाची स्थिती एका वेगळ्या बाजूस जात आहे असे दिसते.

संदर्भग्रंथ

- १) राजर्षी शाहू छत्रपती - धनंजय किर
- २) राजर्षी शाहू छत्रपती जीवन व शिक्षण कार्य - भगत रा.तु.
- ३) राजर्षी शाहू एक व्यक्ती दर्शन - शाम येडेकर
- ४) राजर्षी शाहू गौरव ग्रंथ - साळुंके पी.बी.
- ५) राजर्षी शाहू महाराज - श.रा. देवळे
- ६) शाहू व्याख्यानमाला - न.र. पाठक
- ७) आधुनिक महाराष्ट्राचा इतिहास- डॉ.एस.एस. गाटाळ
- ८) महाराष्ट्रातील समाज सुधारणेचा इतिहास -प्राचार्य गरुड व सावंत

**शाश्वत विकास आणि भारतातील ग्लोबल हंगर इंडेक्स
प्रा. रोहिणी निवृत्ती अंकुश**

गृहविज्ञान विभाग प्रमुख, खोलेश्वर महाविद्यालय, अंबाजोगाई, जिल्हा बीड-

Email- rohiniankush88@gmail.com

माणसाची वाढती लोकसंख्या तिला लागणारे अन्न पुरवण्यासाठी आणि त्या लोकसंख्येच्या दैनंदिन प्राथमिक व वाढत्या गरजा पुरवण्यासाठी आपण पृथ्वीवरील बहुतेक भूभाग हडप केला आहे. यात मानवी वस्त्या माणसाने पाळली सर्व जनावरे यासाठी, या सर्व माणसांसाठी आणि त्यांच्या जनावरांसाठी जंगले तोडून चाललेली शेती, पाणी, निवाऱ्याची सोय या सर्व गोष्टी माणसाच्या फूटप्रिंट मध्ये येतात. जगातील 75% शेती ही माणसासाठी अन्न पिकवण्यासाठी होत नाही. या जनावरांचे अन्न तयार करण्यासाठी केली जाते. माणसाच्या वाढत्या बहुतेक हव्यासापायी आपण ऊर्जेच्या वापराकडे झोकलो आहोत. शाश्वत विकासाची पहिली पायरी ही माणसाची संसाधनाची आणि ऊर्जेची एकूण गरज कमी करणे हीच आहे.

2015 चाली संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या पुढाकारातून सगळ्या जगाने शाश्वत विकासाची उद्दिष्टे स्वीकारली. जगातील गरिबी व भूक संपवणे, सर्वांना प्राथमिक शिक्षण उपलब्ध करून देणे, माता आरोग्य सुधारणे, पर्यावरण रक्षण करणे आणि हे करण्यासाठी जागतिक सहकार्य व्यवस्था उभारणे अशा दृष्टीकोन ठेवण्यात आला. यातील एक उद्देश म्हणजे भूक संपवणे. ग्लोबल हंगर इंडेक्स 2018 च्या अहवालामध्ये भुकेची समस्या प्रमुख्याने असणाऱ्या देशांमध्ये 119 देशांच्या यादीत भारत 103 स्थानावर आला आहे. त्या मागील वर्षी भारत हा 100 क्रमांकावर होता.

भुकेचा प्रश्न सोडवण्यासंदर्भात भारताचा क्रमांक खाली घसरला आहे. कुपोषणाची समस्या भारतातल्या प्रमुख राज्यामध्ये आजही तीव्र आहे. गर्भावस्थेमध्ये आईचे वेगवेगळ्या कारणांनी होणारे कुपोषण त्यामुळे जन्माला येणारी कमी वजनाची मुले, उपलब्ध असणाऱ्या आहारयोजना राबवण्यातील अपयश, या योजना फोल ठरल्यामुळे भुकेची तीव्र होत जाणारी समस्या, राजकीय इच्छाशक्तीचा अभाव असे अनेक पदर या प्रश्नांभोवती गुंतलेले आहेत. एकात्मिक बाल विकास विभागाच्या अहवालानुसार जून २०१८ या एका महिन्याच्या कालावधीत राज्यात ६ लाख ६९ हजार १४० बालके कमी वजनाची असल्याची नोंद आहे. यामध्ये एक लाख २२७ बालके तीव्र कमी वजनाची तर पाच लाख ६८ हजार ९१३ बालके मध्यम कमी वजनाची आहेत. आदिवासी भागात एक लाख ८५ हजार २३४ बालके कमी वजनाची असून त्यामध्ये तीव्र कमी वजनाची बालके ३८ हजार १९९ व मध्यम कमी वजनाच्या बालकांचे प्रमाण १ लाख ४७ हजार ०३५ इतके नोंदवण्यात आले आहे. जून महिन्यात राज्यात ० ते ५ वयोगटातील एकूण १२६१ बालके दगावली होती. शून्य ते एक वर्ष वयोगटातील बालमृत्यूंची संख्या १००५ इतकी असून एक ते पाच वर्ष वयोगटातील १५६ मुलांचा मृत्यू झाला आहे. पोषण आहाराअभावी मृत्यूच्या गर्तेत राज्यातील एक लाख २२७ बालके असून आदिवासी भागातील बालकांची संख्या ३८ हजार १९९ इतकी आहे.

ग्लोबल हंगर इंडेक्स जागतिक भूक निर्देशांक आता आशियाई देशाचा स्थान भारत 102 पाकिस्तान 94, बांगलादेश 88, नेपाळ 73, श्रीलंका 66, दक्षिण आशियाई देशातील इतर देश 66 ते 94 च्या दरम्यान आहेत. इतर सर्वाधिक लोकसंख्या असलेल्या शेजारी चीनच्या परिस्थितीही चांगली आहे. चीन 25 व्या क्रमांकावर आहे.

हंगर इंडेक्स मध्ये भुकेच्या स्थितीवर 0 ते 100 क्रमांक दिले जातात.

0 ते 9.9 - कमी समस्या

10.0 ते 19.9 - मध्यम

20.5 ते 30 - गंभीर

49.99 ते 50.0 आणि त्यापेक्षा जास्त - अति भीषण

भारताला भारताला 3.3 क्रमांक मिळाला आहे. म्हणजेच भारतात भुकेची गंभीर समस्या आहे. ग्लोबल हंगर इंडेक्स मध्ये भारताची गेल्या काही वर्षांपासून घसरण सुरूच आहे.

साल आणि स्थान

2015 - 93

2016 - 97

2017 - 100

2018 - 103

भारतात मुलांच्या कुपोषणाचे प्रमाण सर्वाधिक आहे. ग्लोबल हंगर इंडेक्स मध्ये सांगितल्या नुसार भारतातील सहा महिने ते दोन वर्षे वयोगटातील फक्त 9.6 % पोषक आहार मिळतो. उंचीच्या तुलनेत कमी वजन असले मुलं 39.99% . 2015 - 16 च्या नॅशनल फॅमिली सर्वेक्षणानुसार देशातील जवळपास 38 टक्क्यांपेक्षा जास्त मुलं त्यांच्या वयाच्या मानाने खूप कमी उंचीचे आहेत, तर 35 टक्के मुले कमी वजनाची आहेत. भारतात 2016 मध्ये जवळपास 97 लाख मुलंही कुपोषणाने ग्रस्त होती. अभ्यासानुसार पाच मुली मागे एक मुलगी आणि तीन मुलांमागे एक मुलगा कुपोषित असल्याचं समोर आलं आहे. केंद्र आणि राज्य सरकारने कुपोषणाबाबत विविध उपाययोजना केल्या तरीही कुपोषणाची समस्या देशात अजूनही तशीच आहे.

ग्लोबल हंगर इंडेक्स 2020 च्या अहवालानुसार, 27.2 गुण असलेल्या भारतात उपासमारीची समस्या ही 'गंभीर' आहे. या अहवालानुसार भारताची 14% लोकसंख्या कुपोषणाची बळी आहे. या समस्येचे गांभीर्य लक्षात घेऊन हा विषय संशोधनासाठी निवडण्यात आला.

संशोधनाचे उद्देश -

1. शाश्वत विकासाचे उद्देश जाणून घेणे.
2. भारतातील ग्लोबल हंगर इंडेक्स बाबत माहिती घेणे.
3. भारतातील भुकेची समस्यांची कारणे जाणून घेणे.
4. भारतातील भुकेच्या समस्येच्या परिणामांचा अभ्यास करणे.

गृहीतक -

1. भारतातील ग्लोबल हंगर इंडेक्स हा इतर देशांच्या तुलनेत कमी असावा.
2. भारतातील नोबल हंगर इंडेक्स व शाश्वत विकास यांचा काहीच संबंध नाही.

संशोधन पद्धती -

1. या संशोधनासाठी दुय्यम स्रोताचा वापर करण्यात आला आहे.
2. हे संशोधन भारताचा शाश्वत विकास आणि भारतातील ग्लोबल हंगर इंडेक्स जाणून घेणे एवढ्यापुरतेच मर्यादित आहे.
3. या संशोधनासाठी इंटरनेट, संशोधन अहवाल ,जर्नल्स, मासिके, वर्तमानपत्रे इत्यादी दुय्यम स्रोताचा वापर करण्यात आला.
4. मिळालेल्या माहितीचे विश्लेषण करण्यात आले .तसेच सांख्यिकीय चाचण्या लावण्यात आल्या.

चर्चा व विश्लेषण -

The Sustainable Development Goals (SDGs) म्हणजे शाश्वत विकास ध्येये हा आंतरराष्ट्रीय स्तरावरचा एक महत्वाकांक्षी जाहिरनामा आहे, ज्यात गरिबी, भूक आणि महिलांच्या बाबतीत होणाऱ्या हिंसेला पूर्णविराम देण्याचे महत्वाचे उद्दिष्ट समोर ठेवण्यात आले आहे. त्याचप्रमाणे जगातल्या प्रत्येक मानवाला कायदेशीररित्या स्वतःची ओळख मिळावी आणि प्रत्येकाला समान न्याय मिळावा हे देखील उद्दिष्ट त्यात समाविष्ट आहे. संयुक्त राष्ट्र संघटनेच्या सर्व १९३ सदस्य देशांनी सप्टेंबर २०१५ मध्ये एकमताने स्वीकारलेल्या या जाहिरनामानुसार २०१५ ते २०२० या पंधरा वर्षांच्या काळात हा संकल्पित विकास घडवून आणणे अपेक्षित आहे.

भारताचा पर्यावरण अहवाल २०२१ प्रसिद्ध झाला आहे. यानुसार, भारताचे स्थान दोन क्रमांकांनी घसरले आहे. भूक आणि अन्न सुरक्षा (एसडीजी २), लिंग समानता (एसडीजी ५) आणि दर्जेदार पायाभूत सुविधा, सर्वसमावेशक औद्योगिकीकरण आणि संशोधन (एसडीजी ९) ही उद्दिष्टे साध्य करण्यात भारताला फारसे यश न आल्याने स्थान घसरल्याचे अहवालात म्हटले आहे. एकूण १०० पैकी भारताचे ६१.९ गुणांक आहेत.

भारतातील ग्लोबल हंगर इंडेक्स वाढण्याची कारणे

- भारतीय शेतीवर 121 कोटी लोकसंख्येला अन्नधान्य पुरवून त्याची भूक भागविण्याची जबाबदारी आहे. अन्नधान्य उपलब्ध न झाल्यामुळे देशात कुपोषण आहे.
- देशातील देशात दुष्काळ, अतिवृष्टी, भूकंप यासारख्या नैसर्गिक आपत्तीमुळे शेतीची उत्पादकता कमी झालेली आहे.
- देशातील लोकसंख्येची गुणवत्ता वाढविण्यासाठी अन्न सुरक्षा महत्वाची ठरते.
- लोकसंख्येला अन्नधान्याची टंचाई निर्माण झाल्यामुळे मोठ्या प्रमाणावर किमतीत वाढ होते .
- भारतामध्ये एकूण लोकसंख्येच्या 21.8 टक्के लोकसंख्या ही दारिद्र्यरेषेखालील जीवन जगताना दिसून येते.
- देशातील दारिद्र्य रेषेखालील लोकांना एक वेळचे अन्न मिळणे सुद्धा कठीण असते.
- देशातील बेकारी व बेरोजगारीचे वाढते प्रमाण.
- पोषण व आहार विषयक अज्ञान.
- भारताची अन्न सुरक्षितता विषयक समस्या.

निष्कर्ष

1. भारताचे स्थान दोन क्रमांकांनी घसरले आहे.
2. भूक आणि अन्न सुरक्षा, लिंग समानता आणि दर्जेदार पायाभूत सुविधा, सर्वसमावेशक औद्योगिकीकरण आणि संशोधन ही उद्दिष्टे साध्य करण्यात भारताला फारसे यश न आल्याचे दिसून येते.
3. भारतातील भुकेची समस्याही आजही खूप तीव्र प्रमाणात दिसून येते. त्यामुळे शाश्वत विकासातील हा खूप मोठा अडथळा असल्याचे दिसून येते .

शिफारशी-

- 'टेक होम रेशन' पाकिटे आणि पाकिटबंद 'पोषण पेस्ट' हे पहिल्या पर्यायाचे भाग आहेत.
- ग्राम बाल विकास केंद्र परत सुरु करणे, आदिवासी भागांमध्ये गरोदर स्त्रिया व लहान मुलांना शिजवलेला आहार देणारी 'अमृत आहार योजना' बळकट करणे.
- पोषण व आरोग्य सेवांवर लोकाधारित देखरेख प्रक्रिया राबवणे. हे दुसऱ्या पर्यायचे भाग असतील.

सारांश-

एकीकडे महासत्तेची आस, तर दुसरीकडे भूकबळी आणि कुपोषण यांचे विदारक वास्तव. याचा अर्थ भारताच्या विकासाचे दावे खोटे आहेत असा होतो का? वस्तुस्थिती ही आहे की या विकासाचे लाभ समानातील फार थोड्या घटकापर्यंत मर्यादित राहिले आहेत. त्यामुळे सध्या विकासाच्या ज्या गुजरात मॉडेलची चर्चा होत आहे, त्या राज्यातील कुपोषणाची स्थितीदेखील मागासलेल्या राज्यापेक्षाही भीषण असल्याचे पाहावयास मिळते. आपल्या देशाची शोकांतिका ही आहे की एकीकडे लोक भूकेने प्राण सोडत आहेत, तर दुसरीकडे लाखो टन धान्य उघड्यावर सडत आहे. ज्यामुळे फार मोठ्या लोकसंख्येला पोटभर अन्न मिळणेही दुरापास्त झाले आहे. देशात धान्योत्पादन वाढले आहे, तरीही लोकांचे भूकबळी जात आहेत. लोक दारिद्र्यात जीवन कंठत आहेत. आजही देशातील १२१ कोटी लोकसंख्यापैकी ३२ कोटी लोकांना खायला पुरेसे अन्न मिळत नाही. २९.८ टक्के लोक आजही गरिबी रेषेखाली जीवन जगत आहेत. आता सर्वांना परवडेल आशा किंमतीत अन्नधान्याची उपलब्धता करून देणारा राष्ट्रीय अन्नसुरक्षा कायदा भुकेलेल्यांना पोटभर अन्न देईल का, हा प्रश्न आहे. मात्र, योग्य अंमलबजावणी केल्यास कुपोषणाचे 'पोषण' काही प्रमाणात तरी थांबू शकेल.

संदर्भसूची -

- घाडगे आणि वावरे, भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रथमावृत्ति- 2010, निराली प्रकाशन पृष्ठ क्रमांक 21.2
- जगताप आणि वाणी - भारतीय अर्थव्यवस्था एक दृष्टिक्षेप. प्रथमावृत्ती 2011 प्रशांत पब्लिकेशन, जळगाव, पृष्ठ क्रमांक 130
- जागतिक भूक निर्देशांक 2013
- भारतीय भूक निर्देशांक (आय. एफ. आय. आय.) 2013
- जागतिक भूक निर्देशांक - 2013
- राष्ट्रीय नमुना सर्वेक्षण अहवाल - 541- 2013
- <https://mr.wikipedia.org>
- <https://www.tv9marathi.com/internationa>
-

लिंग समभाव : काळाची गरज

प्रा. कांबळे शिवाजी ईरबा

इतिहास विभाग प्रमुख, कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, शंकरनगर ता. बिलोली जि. नांदेड

प्रस्तावना :

आज आपण एकविसाव्या शतकात राहत असलो तरी समाजामध्ये लिंग समभाव म्हणावा तसा रुजला नाही. स्त्रीला राजकीय, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक इत्यादी क्षेत्रात समान संधी न देता तिच्याकडे वेगळ्या नजरेने बघितले जाते. पुरुष आणि स्त्रियांच्या शारीरिक रचनेत फरक असला तरी त्या पुरुषापेक्षा कार्यक्षमतेच्या बाबतीत कमी नाहीत. स्त्री - पुरुष असा भेदभाव करून समाजव्यवस्थेत स्त्रीयावर अनेक निर्बंध लादले गेले. अनेक वर्षांपासून चालत आलेल्या स्त्रीत्व आणि पुरुषत्वाच्या रुढ कल्पना ह्या स्त्रीया आणि पुरुषांना साचेबद्ध करून एकमेकाविरुद्ध उभे करण्यात आल्या. मुलगा आणि मुलगी यांना विशिष्ट प्रकारे वाढविले जाते. यात मुलीने आणि मुलाने कसे वागावे हे बालवयापासून त्यांच्यावर बिंबविले जाते. स्त्री - पुरुष असा लिंगभाव हा सामाजिक - सांस्कृतिक संरचनातून घडविण्यात आला. भारतामध्ये स्त्री - पुरुष असा भेदभाव अनेक वर्षांपासून चालत आलेला आहे. भारतातील उच्च जातीतील स्त्री असली तरी तिच्या बाबतीत भेदभाव केला जातो. स्त्री ही केवळ उपभोगाची आणि हवं तसं शोषण करण्याची वस्तू आहे अशी मानसिकता होती. पुरुष प्रधान संस्कृतीचे स्त्रियांना तुच्छ लेखण्याचे काम केले. आजही काही आदिवासी जमातीमध्ये मातृसत्ताक कुटूंब पध्दती आहे. पुरुष प्रधान असलेल्या आर्यांचे भारतात अगमन झाल्यानंतर येथील मातृसत्ताक अनार्य व त्यांच्यात संघर्ष झाला. या संघर्षात शेवटी आर्यांचा विजय झाला. अनार्य पराभूत झाले तरी त्यांना आपली मातृसत्ताक कुटूंबपध्दती सोडली नाही. मातृसत्ताक पध्दती दडपून टाकण्याचे धोरण आर्यांनी स्विकारल्यामुळे या पध्दतीचा हळूहळू प्रभाव कमी होत गेला. आजही अनेक आदिवासी व भटक्या जमातीत मातृसत्ताक कुटूंब पध्दती अस्तित्वात आहे. डॉ. गाडगीळ यांनी स्पष्ट केले आहे की, "पुरुषप्रधान आर्य समाजाने अनेक क्रूर चालीरितीच्या साह्याने या जमातीच्या जीवनातील मातृसत्ताकाचे महात्म्य नष्ट करण्याचा प्रयत्न करून पाहिला. बालविवाह, बहुपत्नीत्व विधवांना दिली जाणारी अमानुष वागणूक आणि सतीची चाल या सर्व गोष्टी या दृष्टीने उद्बोधक आहेत. स्त्रियांच्या तुलनेत पुरुष हाच श्रेष्ठ आहे. ही पुरुषप्रधान समाजाची कल्पना येथील मातृसत्ताक प्रभावित समाजावर बिंबविण्यासाठी वैदिक आर्य परंपरेत वाढलेल्या विचारवंतानी या चालीरिती केल्या. स्त्री महात्म्याचे अवमुल्यन करण्याचा इतका कठोर आग्रही प्रयत्न जगात अन्यत्र कुठेही झालेला आढळत नाही. एहरनफेल्सच्या मते त्याचे एक स्पष्टीकरण संभवते. आर्य पूर्व भारतात मातृसत्ताकाचा असलेला विलक्षण प्रभाव कृत्रिमरित्या नाहीसा करण्यासाठी अशा कठोर मार्गाचीच गरज वैदिक आर्यांना भासली असावी."

भारतातील स्त्री - पुरुषात असमानता निर्माण होण्यासाठी येथील स्मृतीग्रंथ कारणीभूत ठरली. मनुस्मृतीसारख्या ग्रंथानी एकीकडे स्त्रीला पुज्य मानून दुसरीकडे तिच्यावर कठोर निर्बंध लादल्यामुळे समाजात स्त्रीयाकडे तुच्छ नजरेने पाहण्याचा दृष्टीकोन निर्माण झाला. भारतातील समाजरचना ही मनुस्मृती, अपस्तंभ धर्मसूत्र, विष्णुस्मृती, बृहस्पतीस्मृती इत्यादी हिंदू धर्मग्रंथावर आधारीत निर्माण झाली. हिच समाजव्यवस्था लिंगभेदभाव निर्माण करण्यास कारणीभूत ठरली. भारतावर इंग्रजांची राजवट निर्माण झाल्यानंतर उच्चशिक्षित भारतीय निर्माण झाले. असे उच्च शिक्षण घेतलेले भारतीय पाश्चिमात्य तत्त्वज्ञानाच्या संपर्कात आले त्यामुळे त्याला नविन तत्त्वज्ञानाची ओळख झाली. पाश्चिमात्य देशातील समाजव्यवस्थेचा अभ्यास केल्यानंतर भारतीय समाजव्यवस्थेतील अनेक दोष त्याच्या लक्षात आले. त्याला स्वातंत्र्य, समता, बंधुत्व, न्याय, मानवतावाद, लोकशाही, स्त्री पुरुष समानता या संकल्पना कळाल्या. वास्तविक पहात पाश्चिमात्या विचारवंतानी मांडलेल्या संकल्पना त्यांच्यापूर्वी म. गौतम बुद्ध आणि म. बसवेश्वररांना मांडल्या होत्या. राजा राममोहन रॉय, म. फुले,

सावित्रीबाई फुले, महर्षी कर्वे, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, पंडिता रमाबाई इत्यादींनी समाजसुधारणा चळवळ चालून स्त्री - पुरुष भेदभाव नष्ट करण्याचे प्रयत्न केले. या समाजसुधारकांनी चळवळ चालविली तिचा परिणाम समाजावर झालेला दिसून येतो.

संशोधन पेपर लिहिण्याची उद्दिष्ट्ये :

1) भारतात लिंगभेदभाव का निर्माण झाला याचा अभ्यास करणे. 2) लिंग समभाव निर्माण करण्यासाठी झालेल्या कार्याचा आढावा घेणे. 3) लिंग समभाव निर्माण करण्यासाठी झालेल्या चळवळीचा भारतीय समाजावर झालेल्या परिणामाचा आढावा घेणे.

संशोधनाची गृहितके :

1) स्त्री ही अबला असते अशी पुरुषी मानसिकता बनलेली आहे. 2) स्त्री ही पुरुषाची बरोबरी करू शकत नाही. ही पुरुषी मानसिकता आहे. 3) स्त्री शिकली तर ती बिघडले अशी पुरुषी मानसिकता आहे. 4) स्त्रियांना स्वातंत्र्य देऊ नये अशी ही मानसिकता आहे.

संशोधन पध्दती :

प्रस्तुत शोधनिबंध लिहिण्यासाठी लिंगसमभाव निर्माण करण्याच्या संबंधात दुय्यम तथ्य सामुग्रिचा अवलंब करण्यात आला आहे. तसेच विविध संदर्भ ग्रंथ, पुस्तके व मासिके यांचा आधार घेण्यात आला आहे.

लिंग भेदभावाची निर्मिती :

स्त्री पुरुष असा भेदभाव निर्माण होण्यासाठी पार्श्वभूमी अनेक वर्षांपासून तयार झालेली आहे. भारताचा विचार केला तर पूर्व वैदिक कालखंडानंतर स्त्रियांचा समाजातील दर्जा खालावत गेलेला आढळून येतो. वंशाचा दिवा म्हणून मुलीपेक्षा मुलाला जास्त महत्त्व देण्यात आले. वास्तविक पाहता वैदिक कालखंडात अनेक विद्वान स्त्रियांना पुरुषाबरोबर वादविवाद भाग घेतलेला होता. पण स्त्रियांच्या बुद्धीमत्तेकडे दुर्लक्ष करण्यात आले. स्मृती ग्रंथ व शास्त्रकारांनी शूद्रावर जसे अनेक निर्बंध लादले तसेच निर्बंध स्त्रियांवर लादल्यामुळे शूद्राप्रमाणे स्त्रियांनाही गुलामगिरीचे जिवन जगावे लागले. अस्पृश्य समाजातील स्त्रियांची स्थिती तर अतिशय वाईट होती. उच्च जातीतील स्त्री स्वतः गुलामित होती. तरी ती अस्पृश्य जातीतील स्त्रीला कमी लेखत असे. अस्पृश्य समाजातील पुरुषही वरील जातीची गुलामगिरी करत असताना आपल्या घरातील स्त्रिया कमीपणाची वागणूक देत होते. म्हणून अस्पृश्य समाजातील स्त्रीला अनेकांच्या गुलामित जीवन जगावे लागत होते. खुले आमपणे स्त्रियांचे लैंगिक शोषण करण्याचीही प्रथा भारतात होती. मद्रास प्रांतात नाडर नावाची एक जात आहे. ती अस्पृश्यांच्या थोडी वरची मानली जाते. नाडर हे गावकुसाबाहेर राहत असले तरी ते अस्पृश्य नव्हते. या नाडर जातीतील स्त्रियांना आपली वक्षस्थळे झाकण्याची परवानगी नव्हती. त्यांना नंबुद्री ब्राम्हण किंवा नायर जातीचा पुरुष कुठेही दिसला तरी आपली वक्षस्थळे त्यांना दाखवावी लागत. ही स्त्रियांची घोर विटंबना होती, पण ब्राम्हण आणि नायर यांना मजा वाटायची. भारतावर ब्रिटिशांची सत्ता स्थापन झाल्यानंतर नाडर जातीमध्ये शिक्षणाचे प्रमाण वाढत गेले. वयात आलेल्या सुशिक्षित नाडर जातीच्या मुलीमध्ये जागृती होऊन आपली वक्षस्थळे दाखवण्याची लाज वाटली. शिक्षणामुळे त्यांचा स्वाभिमान जागृत झाला. अशा मुलींनी अनेक वर्षांपासून चालत आलेल्या या वाईट चाली विरुद्ध आवाज उठविला. ही प्रथा मोडून काढण्यासाठी नाडर स्त्रियांनी बंड केल्यामुळे नंबुद्री व नायर चिडले. तुम्ही चोळ्या घातल्या तर आम्ही त्या रस्त्यात फाडू आणि तुमची वक्षस्थळे उघडी करून पाहू असा दम नंबुद्री आणि नायरानी दिला. कारण ही परंपरा धर्माने निर्माण केल्यामुळे यांची जाण ठेवून तुम्ही तुमच्या पायरीने वागा असे त्यांनी नाडर स्त्रियांना सांगितले. तत्कालिन त्रावणकोरचा राजाही परंपरावादी होता. त्याने फर्मान काढले की, नाडर स्त्रियांनी इतर हिंदू जातीच्या स्त्रियांची बरोबरी करू नये. त्रावणकोरच्या राजाच्या या फर्मानाला नाडर स्त्रियांनी आव्हान देऊन बंड पुकारले.

स्त्रीने पुरुषाच्या बरोबरीने वागावे किंवा स्त्रीने पुरुषावर अधिकार गाजवावा या बाबी पुरुषप्रधान संस्कृतीला आवडल्या नाहीत. स्त्रिया पुरुषांच्या बरोबरीने शिकल्या तर त्या बरोबरीचे हक्क मागू लागतील ही भिती होती. स्त्री शिक्षणाचा त्यांच्या अनितिमान होण्याशी, विधवा होण्याशी जोडून, ज्ञानाची दारे त्यांच्यासाठी बंद करण्यात आली. त्यातूनही कोणी शिकू लागलीच तर आमची अमर्यादा केलेली आम्हास खपायची नाही अशी समाज घरातील मोठ्या माणसाकडून, विशेषत स्त्रियाकडून मिळत असे ही बाब रमाबाई रानडे यांनी आपल्या आमच्या आयुष्यातील काही आठवणी मध्ये नोंदवून ठेवलेल्या आहेत. शिक्षणामुळे घरातील मोठ्या माणसांचा अपमान होतो ही समजूत होती असे काशिबाई कानिटकर नमूद करतात. शिक्षण हे माणसाच्या मनात कुतूहल निर्माण करते. प्रश्न निर्माण करते. ज्ञान हे कसल्याही दडपणाखाली राहू शकत नाही. तेव्हा स्त्रियांना पुरुषाप्रमाणे शिक्षण दिले तर त्या घरातील मोठ्या माणसांचा अधिकार त्यांचे घरातील श्रेष्ठत्व, अढळ स्थान याविरुद्ध आव्हान देतील, प्रश्न विचारतील ही भिती या अमर्याद व अपमान शब्दांच्या मागे दिसून येते. स्त्रिया या जास्त शिकल्या तर आपला अपमान होईल ही पराकोटीला गेलेली पुरुषांची भावना होती. इतकेच नाही तर स्त्रीने शुद्ध बोलू नये असे सांगितले जात. शुद्राप्रमाणे स्त्रीला संस्कृत शब्द उच्चारण्याचा अधिकार नव्हता. मुलीपेक्षा मुलांच्या शिक्षणाकडे लक्ष दिले जात असे. लहान मुलींना पुजेची तयारी करता आली. तांदुळ कांडता येऊ लागले, उष्टे खरकटे काढता येऊ लागले, लहान मुलांना आंघोळ घालून त्यांच्या खाण्यापिण्याची व्यवस्था करता येऊ लागली म्हणजे मुलीला सर्व शिक्षण मिळाले असा समाज होता. मुलीला भात - पिटले करता येऊन दोन पानांचा स्वयंपाक करता येणे म्हणजे मॅट्रिक पास होणे असा समाज होता. या सर्व प्रकारामुळे लिंग भेदभाव वाढत गेला. बालविवाहाचे मोठ्या प्रमाणात होते. त्यामुळे विधवाची संख्या जास्त होती. त्यात बाल विधवांचे प्रमाण बरेच होते. सती प्रथा अस्तित्वात होती. इंग्रजी राजवटीमुळे पाश्चिमात्या तत्त्वज्ञानाच्या संपर्कात आलेल्या भारतीयांना नविन तत्त्वज्ञानाची ओळख झाल्यामुळे भारतात नवीन विचाराचे वार े वाहत गेले. अशा उच्च विद्याविभूषित भारतीयांनी जुन्या रुढी परंपरेच्या विरुद्ध आवाज उठविला. राजा राममोहन रॉय यांनी सती प्रथे विरुद्ध आवाज उठविला. सती प्रथा ही अमानवी अतिशय क्रूर होती. पतिच्या निधनानंतर पत्निने सती जावे या परंपरेचे पालन करण्यासाठी विधवा स्त्रीवर दडपण आणले जात. पत्नीच्या मृत्युनंतर विदुराने सता व्हायला पाहिजे होते म्हणजे सतीप्रथा किती वाईट होती, हे पुरुषाला कळले असते. जन्मोजन्मी हाच पती मिळो म्हणून वडाच्या झाडाची पूजा स्त्री करते. पुरुषाकडून अशी पूजा का होत नाही ?

लिंगसमभाव निर्माण करण्यासाठी चळवळ :

स्त्रीला पुरुषाबरोबरीचा दर्जा दिल्याशिवाय समाजाचा विकास होत नाही ही बाब समाजसुधारकांच्या लक्षात आली. म्हणून त्यांनी स्त्रीला सन्मान मिळवून देवून तिला पुरुषाच्या बरोबरीचा दर्जा मिळवून देण्यासाठी समाजसुधारकांनी चळवळ चालविली. स्त्रीयावरील होणा-या अन्यायाच्या विरुद्ध आवाज उठविला. ज्या अमानुष रुढी परंपरा होत्या त्या विरुद्ध चळवळ चालविली. राजा राममोहन रॉय यांनी सती प्रथा कशी वाईट आहे. हे समाजाला आणि इंग्रज राज्यकर्त्यांत पटवून दिले. विधवा स्त्रीला संसपतीचा हक्क मिळू नये म्हणून त्यांना सती जाण्यासाठी मजबूर केल्या जायचं. तू सती गेलीस तर पतीबरोबर स्वर्गात जाशिल असं तिच्या मनावर बिंबवल्या जात असे. बंगालमध्ये दायभाग हे धोरण होते. या धोरणानुसार नवरा मृत्यू पावल्यावर त्याच्या विधवा पत्नीला कौटुंबिक मालमत्तेचा काही वाटा द्यावा लागत. त्यामुळे कुटुंबातले इतर कर्ते पुरुष आपला थोडा हिस्सा गमावत. यावर तोडगा म्हणून तिथे स्त्रीवर सतीची भावनिक सक्ती केली जाई. त्यामुळे कौटुंबिक मालमत्तेचे उगीच वादावाद होणे थांबत असे. इ.स. 1824 साली बंगालमध्ये कॉल-याची भिषण साथ आली होती. तेव्हा अनेक तरुण दगावले. अशा दगावलेल्याच्या धर्मपत्नी मोठ्या प्रमाणावर सती गेल्याच्या नोंदी आढळतात. इंग्रज राज्यकर्त्यांनाही सतीची प्रथा बंद करायची होती. म्हणून भारताचा गव्हर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बेंटिक याने इ.स. 1829

रोजी कायदा करुन सतीप्रथेवर बंदी आणली. हा कायदा स्त्रीवर धर्माच्या नावाने होणारा अत्याचार थांबवणारा होता. पण भारतातील सनातन्यांनी या कायद्याला विरोध केला. आमच्या धर्माचा अपमान होतो, तसेच आमची संस्कृती भ्रष्ट, नष्ट होईल असा विलाप त्यांनी केला. धर्मसभेने सती बंदीचा कायदा रद्द ठरावा असा अर्ज इ.स. 1832 साली प्रीव्ही कॉन्सिलकडे केला होता. पण तो नामंजूर करण्यात आला.

भारतातील स्त्रियांचा उध्दार करुन लिंगभेद नष्ट करण्यासाठी म. जोतिराव फुले आणि क्रांति ज्योती सावित्रीबाई फुलेनी चळवळ चालविली. पुण्यासारख्या प्रतिगामी शहरात त्यांनी अस्पृश्यता निवारण आणि स्त्रियांचा उध्दार करण्यासाठी सनातन्याविरुद्ध रणसिंग फुंकले. स्त्रियांचा उध्दार करण्यासाठी सनातन्याविरुद्ध रणसिंग फुंकले. म. फुले हे बुद्धिप्रामाण्यवादी व कर्ते समाजसुधारक होते. भारतातील स्त्रिया आणि अस्पृश्य यांच्या अधोगतीची कारणे, त्यांनी ओळखली होती. शिक्षणाच्या अभावामुळेच त्यांची अधोगती झाली म्हणून शैक्षणिक कार्य हाती घेतले. मुलींना शिक्षण देणे म्हणजे धर्माविरुद्ध पाप आहे असे सनातनी मानित. स्त्रियांचा विकास आणि लिंगभेदभाव नष्ट करायचा असेल तर त्यांना शिक्षण दिले पाहिजे म्हणून त्यांनी परंपराविरुद्ध बंड करुन इ.स. 1848 साली त्यांनी पुणे येथे बुधवार पेठेत असलेल्या तात्यासाहेब भिडे यांच्या वाड्यात मुलींची पहिली शाळा सुरु केली. यासाठी त्यांना पुरोगामी विचाराच्या तात्यासाहेब भिडे, सखाराम यशवंत परांजपे इत्यादी उच्चवर्णियांनी सहकार्य केले. अस्पृश्यांच्या मुला मुलींना शिक्षण देण्यासाठी म. फुलेनी शाळा काढल्यामुळे सनातनी वर्ग चिडला. सावित्रीबाई फुले या शिक्षण देण्यासाठी शाळेत जात असताना सनातन्यांनी त्यांचा छळ केला, पण न डगमगता त्यांनी आपले कार्य चालूच ठेवले. म. फुलेच्या खांद्याला खांदा लावून त्यांनी अस्पृश्य व स्त्रियांच्या उध्दारासाठी कार्य केले. म. फुलेनी बालविवाहाना विरोध करुन विधवा पुनर्विवाहाचा पुरस्कार केला. समाजसुधारक महर्षी कर्वे यांनी 1892 साली विधवेशी पुनर्विवाह केला, तेव्हा ग्रामस्थानी रस्त्याच्या दोन्ही बाजूंनी उभं राहून त्यांच्यावर थुंकण्यापर्यंत निषेध केला. मुरुडमध्ये त्यांना कोणी राहू दिलं नाही. त्यांना गावाबाहेर राहाव लागलं होते. म. फुलेनी विधवा पुनर्विवाहाला चालना देऊन तसे विवाह घडवून आणले होते. भारतीय समाजात देवदासी, वाघ्या, मुरळी या प्रथा होत्या. त्या प्रथेच्या नावाखाली स्त्रियांचे शोषण केले जात. याही प्रथेला समाजसुधारकांनी विरोध करुन स्त्रियावर होणा-या अन्यायाला वाचा फोडली.

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, पंडिता रमाबाई, महर्षी धोंडो केशव कर्वे, विठ्ठल रामजी शिंदे इत्यादी समाजसुधारकांनी स्त्री सुधारणा चळवळ चालवून लिंग भेदभाव नष्ट करण्यासाठी कार्य केले. पंडिता रमाबाई यांनी आयुष्यभर विधवा आणि परित्याक्त्या स्त्रियांच्या उध्दाराचे कार्य केले. शारदा सदन, मुक्ती मिशन, कृपासदन, प्रीती सदन, बार्तमी सदन व सदानंद सदन इत्यादीच्या माध्यमातून पंडिता रमाबाई यांनी विधवा, परित्यक्ता, अपंग, अनाथ आणि दुष्काळाने त्रस्त झालेल्या स्त्रियांच्या उध्दाराचे कार्य केले. त्या काळात स्त्रियांना सभेस येण्यास परवानगी दिली जात नव्हती. स्त्रिया या सभेस आल्या पाहिजेत अशी भूमिका त्यांनी घेतली. त्यामुळे त्यांनी त्यांची व्याख्याने पुराणे होतील त्या ठिकाणी निमंत्रण पत्रिकेत एक अट घालत असत. जो कोणी व्याख्यानाला येईल. त्याने आपली पत्नी, मुलगी, सून, बहिण व भावजय यापैकी आपल्या घरची महिला सोबत आणल्या शिवाय रांगेत बसता येणार नाही अशी ती अट होती. लिंग भेदभाव नष्ट करण्यासाठी पंडिता रमाबाईने घातलेली अट परिणामकारक होती. त्यांनी 1 मे 1882 रोजी आर्य महिला समाज स्थापन करुन नवीन असा स्त्री समाज स्थापन करण्याचा विचार केला. अंधश्रद्धेमुळे होणा-या अत्याचारातून स्त्रियांची मुक्तता करणे आणि त्यांची उन्नती करणे ही या कार्य महिला समाजाची उद्दिष्टे होती. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी स्त्रियांना आपले हक्क मिळवून देऊन त्यांना पुरुषाबरोबरीचा दर्जा प्राप्त करुन देण्याचे कार्य केले. कायद्याने त्यांचे हक्क प्राप्त करुन दिले. हिंदू कोडबिलाच्या माध्यातून स्त्रियांना हक्क मिळवून दिले.च वेतनाच्या बाबतीत स्त्री – पुरुष असा भेदभाव केला जात होता. त्याला

विरोध करुन त्यांना समान वेतनाचा पुरस्कार केला. कोळशाच्या खाणीस प्रत्यक्ष भेट देऊन स्त्रियांचे प्रश्न जाणून घेतले.

निष्कर्ष :

स्मृतीग्रंथ आणि इतर ग्रंथाची स्त्रियांच्या बाबतीत मांडलेल्या विचाराचा प्रभाव भारतीय समाजावर निर्माण झाल्यामुळे स्त्री ही कर्तबगार असते हे मानायलाच पुरुषी मानसिकता लवकर तयार झाली नाही. स्त्री ही अबला असते या दृष्टीकोनाचे स्त्रयाकडे पाहण्यात आले. परंतु स्त्री ही कधीही अबला नव्हती ती सबलाच होती. परंतु पुरुषी मानसिकतेने तिला अबला बनण्यास मजबूर केले होते. पूर्व वैदिक कालखंडानंतरच्या काळातील स्त्रियांची स्थिती जाणून घेतली तर असे दिसून येते की, तिच्यावर अनेक निर्बंध लादून तिची कुचंबना करण्यात आली होती. तिच्यातील कार्यक्षमता सिध्द करण्यासाठी तिला संधीच देण्यात आली नाही. त्यामुळे तिची अधोगती झाली. धार्मिक चालीरुढी, अंधश्रद्धा व खुळचट भावना यामुळे स्त्रियांना त्यांच्या हक्कापासून दूर ठेवण्यात आले होते. स्त्रियावर निर्बंध न लादता त्यांना संधी दिली गेली असती तर त्यांनी नक्कीच आपला कर्तृत्व सिध्द करुन दाखवलं असतं. समाजसुधारकांनी सामाजिक सुधारणा चळवळ चालवल्यामुळे भारतीय समाजाचा स्त्रीकडे पाहण्याचा दृष्टीकोण बदलल. या चळवळीमुळे तिला अनेक क्षेत्रात संधी मिळाली. मिळालेल्या संधीचं सोनं करुन त्यांनी आपलं कर्तृत्व सिध्द करुन दाखवलं. स्त्रिया या कोणत्याही क्षेत्रात कमी नसतात हे रजिया सुलतान, राजमता जिजाऊ, अहिल्याबाई होळकर, सावित्रीबाई फुले, रमाबाई आंबेडकर, इंदिरा गांधी इत्यादी स्त्रियांनी दाखवून दिले आहे. प्रतिगामी विचार असलेल्या त्रावणकोरच्या राजामुळे स्त्रियावर अन्याया झाला. त्यामुळे स्त्रिश्चन धर्माच्या वाढीला चालना मिळाली. अन्यायी प्रथेविरुद्ध बंड करणा-या केरळमधील महिलांनी स्त्रिश्चन धर्म स्विकारला. स्त्रिश्चन धर्म स्विकारल्यामुळे आपल्या संरक्षण मिळेल असा उद्देश त्यामागे होता. म. गांधींनी चालविलेल्या स्वातंत्र्य चळवळीत भाग घेवून आम्ही अबला नाहीत हे स्त्रियांनी दाखवून दिले. डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांनी चालविलेल्या समाजसुधारणा चळवळीतही महिला मोठ्या प्रमाणात सामील झालेल्या होत्या. इतकेच नाही तरी भारताच्या स्वातंत्र्यासाठी क्रांतीकारी चळवळीत भाग घेवून जुलमी इंग्रज अधिका-यावर गोळ्या झाडण्याचे कार्य महिलांनी केले. भारताला स्वातंत्र्य मिळाल्यानंतर राजकीय, सामाजिक, शैक्षणिक इत्यादी क्षेत्रात महिला संधी मिळाल्यानंतर त्यांनी आपली कार्यक्षमता सिध्द करुन दाखविली. वैज्ञानिक क्षेत्रातही महिलांनी फार मोठं योगदान दिलेलं आहे. संशोधन क्षेत्रात अनेक महिलांनी भरारी घेतली आहे. क्रीडा क्षेत्रातही भरीव अशी कामगिरी त्यांनी केली. समाजसुधारणा चळवळीमुळे लिंगभेदभाव कमी होत गेलेला आढळून येतो. तरीही महिलांकडे पाहण्याच्या दृष्टीकोनातही

संदर्भ ग्रंथ :

- 1) डॉ. बाबर सरोजनी, स्त्री शिक्षणाची वाटचाल, महाराष्ट्र राज्य शिक्षण मंडळ, 1968.
- 2) कसबे रावसाहेब, गांधी पराभूत राजकारणी आणि विजयी महात्मा, लोकवाङ्मयगृह, लेनिनग्रांड चौक, प्रभादेवी, मुंबई, ऑक्टो 2020.
- 3) कीर धनंजय, म. जोतिराव फुले, पॉप्युलर प्रकाशन, मुंबई.
- 4) भागवत कमल, स्त्री चळवळीची वाटचाल, प्रागैतिक पुस्तक प्रकाशन, पुणे 1985.
- 5) साने पी.एस., स्त्री जीवन, मौज प्रकाशन, मुंबई 1967.
- 6) कठारे अनिल, भारतातील सामाजिक व धार्मिक सुधारणा चळवळीचा इतिहास, प्रशांत पब्लिकेशन, जळगाव 2015.
- 7) व्होरा राजेंद्र (संपादक), आधुनिकता आणि परंपरा, प्रा. य.दी. फडके गौरव ग्रंथ, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, नोव्हेंबर 2000.
- 8) प्रतिभा रानडे, स्त्री प्रश्नाची चर्चा : एकोणिसावे शतक, पद्मगंधा प्रकाशन, पुणे, मार्च 2005.
- 9) मंगला गोडबोले, सती ते सारोगसी, राजहंस प्रकाशन, सदाशिव पेठ पुणे, जुलै 2018.

अनुसूचित जातीच्या संकल्पनेचा विश्लेषणात्मक अभ्यास

प्रा.डॉ.वसंत तुकाराम नाईक^१ नारायण हणमंतराव पांचाळ^२

^१मार्गदर्शक, विभागप्रमुख तथा संशोधक मार्गदर्शक, ग्रामीण महाविद्यालय, वसंतनगर, ता.मुखेड जि.नांदेड
^२संशोधक, भूगोल विभाग, स्वामी विवेकानंद महाविद्यालय, मुक्रमाबाद, ता.मुखेड जि.नांदेड

प्रस्तावना

आर्यांचे भारतात आगमन झाल्यानंतर त्यांनी स्थानिक भारतीय लोकांबरोबर युद्ध केले. या युद्धात स्थानिक भारतीयांचा पराभव होऊन आर्य विजयी झाले. त्यामुळे पराभूत मूळ भारतीयांना आर्यांनी दास बनविले. आर्यांमध्ये वर्णव्यवस्था होती. वर्णांचा प्रथम उल्लेख ऋग्वेदात आढळतो. वर्ण या शब्दाचा ऋग्वेदात अर्थ शरीराचा रंग यावरून ठरविले जात होते. वर्णाने विचार करता या काळात दोन वर्ण होते. एक आर्य जे रंगाने गोरे होते तर दुसरे दास हे रंगाने काळे होते. दास या शब्दाला नंतर सेवक, गुलाम, अस्पृश्य असा अर्थ प्राप्त झाला व सामाजातील कनिष्ठ दर्जा हे दासांचे एक वैशिष्ट्य ठरले.

अभ्यासाची उद्दिष्टे

१. अनुसूचित जातीच्या संकल्पनेचा अभ्यास करणे.
२. अनुसूचित जातीची ऐतिहासिक पार्श्वभूमी जाणून घेणे.
३. अनुसूचित जातीच्या अभ्यासाचे महत्त्व जाणून घेणे.

अनुसूचित जातीची संकल्पना

वैदिक कालखंडात चार वर्ण तयार झाले यामध्ये ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य आणि शूद्र. या कालखंडात ऋग्वेदातील वर्ण या शब्दाचा अर्थ बदलून वृ-वृणोती म्हणजे व्यवसाय निवडणे असा अर्थ प्राप्त झाला. ऋग्वेदात पहिल्या तीन वर्णांचा उल्लेख आढळतो. पुरुष सूक्तांची रचना ऋग्वेदातील इतर सूक्तांच्या नंतर झाली असावी. त्यामुळे पुरुष सूक्तात मात्र शूद्रांचा उल्लेख आढळतो. पुरुष सूक्तात चारही वर्णांची कर्तव्ये निश्चित करण्यात आली होती. या संदर्भातील एक सूक्त आढळते-

ब्राह्मणस्य मूख्यमासिद बाहू राजन्यकृता

उरूस्तदस्य यद्वेश्या शूद्रो पादजायते

या सूक्तानुसार चारही वर्णांची कर्तव्ये पुढीलप्रमाणे दिली आहेत.

१. ब्राम्हण : अध्ययन, अध्यापन, यज्ञ कार्यातील पैराहित्य, दान घेण्याचा अधिकार होता.
२. क्षत्रिय : पुरुष सूक्तात क्षत्रियांचा उल्लेख राज्यन्य असा केला असून क्षात्रतेजाशी निगडित युद्ध शासकीय धर्म करण्याचे अधिकार होते.
३. वैश्यांना पशुपालन, शेती, व्यापार करण्याचे अधिकार होते.
४. शूद्र : शूद्रांची निर्मिती पायातून झाली. पाय संपूर्ण शरीराची सेवा करतात म्हणून शूद्रांनी संपूर्ण समाजाची म्हणजेच तिन्ही वर्णांच्याची सेवा करणे असे त्यांचे कर्तव्य होते.

वेगवेगळे धर्मशास्त्र, विचारवंत, राजकीय पंडित, समाजसुधारक, शासनाचे अहवाल यामध्ये बदलत्या काळानुसार अस्पृश्य शब्दात बदल होत गेला आहे. या शब्दाचे बदलते स्वरूप पुढीलप्रमाणे नमूद केले आहे.

१. ऋग्वेदात चर्मन म्हणजे चामडे कमविणारा अर्थात चांभार यांना अस्पृश्य मानले होते.
२. मनुस्मृतीनुसार प्रतिलोम विवाहातून निर्माण झालेल्या संततीला अस्पृश्य म्हटले.
३. विष्णुधर्मशास्त्र यानुसार चांडाळ, म्लेच्छ आणि पारसी यांना अस्पृश्य मानले.
४. महात्मा गांधींनी सर्व अस्पृश्यांना हरिजन या संज्ञेचा वापर केला.
५. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर स्वतः एक अस्पृश्य समजल्या जाणाऱ्या जातीत जन्माला आले होते. त्यांनी अस्पृश्यांसाठी भ्रमरहृदयी माणसे (Broken Men) असे म्हटले.
६. ब्रिटीश सरकारने अस्पृश्यांना दलित जाती हा शब्द उल्लेख केला.
७. इ.स.१९३१ मध्ये जनगणना आयुक्तानी अस्पृश्य जातीचा उल्लेख बहिर्जाती (Exteruir Castes) असा केला.
८. सायमन कमिशनने अस्पृश्य जातीसाठी सर्वप्रथम अनुसूचित जाती असा शब्द वापरला.

डॉ.वि.रा.शिंदे यांनी दलित असाच उल्लेख केला. भारतीय संविधानातील अनुच्छेद ३४१ मध्ये या जातींची सूचि दिली आहे. त्यामुळे आज अनुसूचित जाती ही संज्ञा सर्वत्र रूढ झाली आहे. मुळात दलित या विशेषणाची उत्पत्ती 'दल' या संस्कृत धातूपासून झाली असून दलित शब्दाचा अर्थ दलित-सांवे, तुडविलेले चुरडलेले असा आहे. इंग्रजीमध्ये या शब्दासाठी Depressed Class हा शब्द वापरला जातो.

अनुसूचित जाती म्हणजे काय ?

१. अनुसूचित जाती ही संज्ञा मानवी प्रगतीत सर्वात मागे पडलेल्या आणि रेटलेल्या सामाजिक वर्गासाठी वापरली जाते.
२. अनेक शतकापासून संस्कृतीचा ज्यांना बरोबरीचा हिस्सा मिळू शकला नाही. या देशाचे मूळ वारसदार असूनही त्यांना तो वारसा प्राप्त झाला नाही. ते या देशाचे मुळनिवासी आहेत परंतु हा देश त्यांचा कधीच होऊ शकला नाही, ही खंत सर्वच दलित बांधवात निर्माण झाली.

३. अनुसूचित जाती ही संज्ञा अशा व्यक्तीच्या समुहासाठी आहे, की ज्यांचा माणूस म्हणून जगण्याचा हक्क नाकारला गेला. समाज रचनेच्या उतंरडीनुसार ज्यांच्या वाट्याला एकाच प्रकारचे जीवन आले, ज्यांचे माणूस म्हणून माणूसपण गेले, ज्यांना मानसन्मान नाकारला गेले ते सर्व दलित ठरतात.
४. अनुसूचित जाती ही संज्ञा सनातन संस्कृतिच्या व्यवस्थेत दबल्या गेलेल्या लोकांसाठी आहे.
५. आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आणि राजकीय दृष्ट्या ज्यांना कित्येक शतके उपेक्षित ठेवल्या गेले ते सर्व अनुसूचित जाती ठरतात.
६. अनुसूचित जाती ही संज्ञा कोण्या एका विशिष्ट जातीसाठी किंवा गटासाठी नसून समाजव्यवस्थेमध्ये ज्यांचे अस्तित्व पशुवत आहे, त्या सर्वांसाठी आहे.

अनुसूचित जातीची ऐतिहासिक पार्श्वभूमी

प्राचीन काळापासून भारतीय समाजव्यवस्थेतील अनुसूचित जाती संबंधी अनेक मत मतांतरे आहेत. काहींनी जन्मावर आधारित, काहींनी श्रमावर आधारित तर काहींनी त्यांच्या कर्मावर आधारित वर्गीकरण केले आहे. वैदिक काळात अनुसूचित जातीचा उल्लेख हा ऋग्वेदाच्या पुरुष सुक्तामध्ये सर्वप्रथम प्रयोग केल्याचे आढळून येते. वर्णव्यवस्थेमध्ये अनुसूचित जातीची स्थिती सर्वात खालची होती. अथर्ववेदाच्या १९ व्या अध्यायामध्ये अनुसूचित जातीचे वर्णन एका वर्गाच्या रूपात केले होते. सामाजिक जीवनाच्या प्रत्येक क्षेत्रामध्ये इतर वर्णांच्या लोकांसोबत वेदपठन, शिक्षण आदी बाबतीत भाग घेत असत. असे दलितता प्रति वैदिक काळात वर्णन आलेले आहे. समाजाची जडणघडण ही जातीय वर्गीय समाजावर होती. ज्यात जातिव्यवस्था प्रधान होती. ती धार्मिक, सांस्कृतिक अशा घकांच्या परिणामातून घडत गेली.

उत्तरवैदिक काळाच्या शेवटी-शेवटी अनुसूचित जातींना धार्मिक कृत्यापासून दूर केले गेले. या काळात वर्णाचा उगम हा जन्माचा आधार प्रमुख मानला आणि कर्म गौण मानले. वर्णव्यवस्थेच्या स्थितीमध्ये अनुसूचित जातींना महत्त्व देण्यात आले. यातूनच शुद्र किंवा अस्पृश्य जाती निर्माण झाल्या. शुद्रांना वेदपठनाच्या आधिकारापासून वंचित करण्यात आले. तसेच त्यांना सर्व धार्मिक विधी पासून दूर करण्याचा प्रयत्न ब्राह्मणाकडून होऊ लागला. पाणिनी यांनी अनुसूचित जातीचे निर्वासित (बहिष्कृत) आणि अनिर्वासित (अबहिष्कृत) असे वर्गीकरण केले आहे. रामायण महाभारत आणि उत्तरवैदिक काळातील वर्णव्यवस्थेचे चित्र अनुसूचित जाती संदर्भात पहावयास मिळते. तसेच गीतकार यांनी गुण आणि कर्मानुसार चार वर्ण सांगितले.

मौर्य काळात चांडाळांना अस्पृश्य मानले जात होते. परंतु मौर्यकाळामध्ये शुद्रांची सामाजिक स्थिती आजून बिघडली. ब्राह्मण आणि शुद्रामध्ये सामाजिक विभेद निर्माण झाला. स्मृती काळामध्ये मनुने ब्राह्मणांना आकाशात नेऊन ठेवून त्यांना भू देवताचा दर्जा दिला. त्यामुळे वर्णव्यवस्थेच्या जागी जातिव्यवस्था दृढ बनली गेली. शुद्रांना वेदपठण्याचा व यज्ञ करण्याचा अधिकार नव्हता, मनुच्या नियमानुसार शुद्रांना अतिशय हिन समजले गेले. या काळात शुद्रांच्या गुन्हांना दंड देण्यासाठी अत्यंत कठोर नियम बनविण्यात आले.

प्राचीन काळात न्यायसंस्थेवरही वर्णव्यवस्थेचा खूप प्रभाव पडला होता. ब्राह्मण हे समाजव्यवस्थेत सर्वात वरच्या स्तरावर होते. ते त्याचा सतत फायदा घेत असत. त्यामुळे ब्राह्मण जातीला खुपच मोठे मान सन्मान होते. पारंपारिक न्यायव्यवस्थेत व्यक्तीच्या वर्णावरून नियम व कायदे बदलत असल्याचा अगदी स्पष्ट उल्लेख आलेला आहे. यातूनच एकप्रकारची विषमतेवर आधारलेली समाजव्यवस्था निर्माण करून त्यांच्यावर कायदेशीरपणाची मोहोर लावण्यात आली. त्या प्रद्धतीप्रमाणे एखाद्याने पालन केले नसेल तर तो शिक्षेस पात्र ठरत होता.

अनुसूचित जातीचा उल्लेख १८८१ मधील जनगणना म्हणजे फक्त निरनिराळ्या राज्यांतील आणि परगाण्यांतील जातीबदलचे वर्णन आहे. जातीचे वर्णाप्रमाणे विभाजन केले जात होते. त्यामुळे अनुसूचित जातीचे लोक त्या यादीच्या शेवटीच असत. १८९१ च्या जनगणनेत जातीचे वर्गीकरण करून त्यावेळच्या प्रथेप्रमाणे प्रत्येकाला जे काम दिले जात असे त्यांची नोंद आहे. अनुसूचित जातीत व्यवसाय धंद्यात, श्रेणीत शेतमजूर, चामड्याचे काम, सफाई कर्मचारी, पहारेकरी आणि खेड्यातील किरकोळ हलके काम करणारे अशा श्रेणीत ठेवले गेले. असा भारतीय जनगणनेच्या माध्यमातून दलिततासंबंधी माहिती आल्याचे आढळून येते. १९३१ मध्ये वार्तकनाच्या वेळी अस्पृश्यांचा उल्लेख दलित म्हणून सर्वप्रथम केला गेला. अनुसूचित जाती हा शब्द सर्वप्रथम एप्रिल १९३५ मध्ये वापरला गेला. इंग्रज सरकारने भारत सरकारला (अनुसूचित जाती) जो आदेश १९३६ मध्ये दिला त्यानुसार काही जाती, वंश आणि जमाती या अनुसूचित जातीमध्ये गणल्या जाऊ लागल्या. आदी सदर लोकांचे गट मागासवर्गीय म्हणून ओळखले जात असत.

‘दलित’ या शब्दाची उत्पत्ती डॉ.बाबासाहेब आंबेडकरांच्या सामाजिक क्रांतिच्या लढ्यातून झाली. १९४२ मध्ये नागपूर येथे ‘ऑल इंडिया शेड्युल्ड कास्ट फेडरेशन’ या संघटनेची स्थापना झाली. फेडरेशनला मराठीत ‘दलित फेडरेशन’ असे म्हटले जाऊ लागले. तसेच शेड्युल्ड कास्ट या इंग्रजी शब्दाला मराठी पर्याय म्हणून दलित हा शब्द पुढे आला. या शब्दाचे मूळ १९३१ साली डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर आणि श्रीनिवास यांनी गोलमेज परिषदेला सादर केलेल्या प्रस्तावामध्ये ‘डिप्रेसड क्लासेस’ असा उल्लेख केला होता. डिप्रेसड क्लासेसची व्याख्या पुढील पोटकलम क्रमांक दोन मध्ये नमूद केली आहे.

निवडणुकीच्या वेळी शेड्युल कास्ट हा शब्द अस्पृश्य जमातीसाठी वापरण्यात आला होता. शेड्युल्ड कास्ट या शब्दाचे मराठीकरण ‘अनुसूचित जाती’ असे झालेले आहे. अनुसूचित जाती या प्रामुख्याने अस्पृश्य असल्याच्या दिसून येतात. १९४२ मध्ये शेड्युल्ड कास्ट फेडरेशन चे ‘दलित फेडरेशन’ मध्ये रूपांतर झाले. तेथूनच खऱ्या अर्थाने दलित हा शब्द अस्तित्वात आला. हा शब्द प्रामुख्याने अस्पृश्य जातीच्या

संदर्भाने उदयाला आला आणि दलित म्हणजे अस्पृश्य असा अर्थ जनसामान्यात रूढ झाला. डिप्रेस्ड क्लासेस हाच शब्द सरकारी यंत्रणेपासून ते भारतीय जनतेपर्यंत अस्पृश्यांना लागू केला गेला. पुढे बहिष्कृत समाज हा शब्द वापरला जाऊ लागला. परंतु भारतीय संविधानात अस्पृश्य समजल्या जाणाऱ्या जातीसाठी अनुसूचित जाती अशी संज्ञा वापरली आहे.

अनुसूचित जातीच्या अभ्यासाचे महत्त्व

अनुसूचित जातीच्या अभ्यासाचे महत्त्व पुढील विविध मुद्द्यांच्या आधारे जाणून घेण्यात आले आहे.

१. भारतीय समाजाचे यथार्थ दर्शन

हिंदू धर्म हा एक सनातन धर्म आहे. या धर्माला कोणीही संस्थापक नसून हा एक अपौरुषीय धर्म आहे. या धर्मात सुरुवातीला तीन वर्ण होते; पण कालांतराने चौथ्या शूद्र वर्णाच समावेश करण्यात आला. समाजातील हलक्या दर्जाची कामे करणाऱ्यांचा समावेश शूद्रांमध्ये करण्यात आला. वर्णव्यवस्थेचे उत्तरोत्तर जातीव्यवस्थेत रूपांतर झाले. जाती या जन्मानेच ठरू लागल्या. कनिष्ठ जातीचे सर्व सामाजिक, राजकीय, आर्थिक व सांस्कृतिक अधिकार वरिष्ठ जातीने काढून घेतले. त्यामुळे हजारो वर्षे शोषितांचे जीवन कनिष्ठ जातींना जगावे लागले, ही वस्तुस्थिती आहे. जातीव्यवस्था ही स्पृश्य-अस्पृश्यतेवर आधारलेली आहे. ही जातीव्यवस्था संपूर्ण भारतीय समाजाला व्यापून राहिलेली आहे. प्रत्येक राज्यातील जाती व्यवस्थेचे स्वरूप आणि अनुसूचित जातीचे असणारे स्थान समजून घ्यावयाचे असेल तर साहित्याचा अभ्यास करणे गरजेचे आहे. त्यामुळे भारतीय समाजाचे यथार्थ दर्शन या दलित साहित्यातूनच होऊ शकते.

२. अनुसूचित जातींसाठी कार्य करणाऱ्यास प्रोत्साहन

दलितांच्या मुक्तीला खऱ्या अर्थाने सुरुवात ही १९ व्या शतकात महात्मा फुले यांनी केली. त्याची प्रेरणा घेऊन राजर्षी शाहू महाराज यांनी आपल्या संस्थानात कार्य केले. तर दक्षिण भारतात १२ व्या शतकातील महात्मा बस्वेश्वर आणि स्वतंत्र्यपूर्व काळातील ई.व्ही.रामास्वामी पेरियार यांनीही महत्त्वपूर्ण कार्य केले. बाबासाहेबांनी काळाराम मंदिर प्रदेश, महाडचा चवदार तळ्याचा सत्याग्रह, मनुस्मृतीचे सामूहिक दहन इत्यादी कार्य करून समाजातील विषमतेला जोरदार हादरे दिले. परंतु अलीकडच्या काळात अनेक नेत्यांच्या किंसा समाज सुधारकांच्या कार्याविषयी समाजात जाणीवपूर्वक गैरसमज निर्माण केला जात आहे. राजकीय पोळी भाजून घेण्यासाठी कोणीही कोणत्याही मार्गाचा अवलंब करीत आहेत. अशावेळी वस्तुस्थिती काय आहे, दलितांसाठी कार्य करणाऱ्या नेत्यांची भूमिका, तत्कालिन परिस्थिती काय होती याचा वस्तुनिष्ठ अभ्यास असणे आवश्यक आहे. त्यामुळे समाजात होणारी चुकीची आंदोलने थोपविता येतात. आणि समाजाला योग्य दिशा दाखविण्याऱ्या नेत्यांचे कार्य मार्गदर्शक ठरत असते.

३. अनुसूचित जातीच्या समाजशास्त्रीय अभ्यासाला चालना

दलितांचा अभ्यास अनेक अंगानी आज केला जात आहे. त्यामुळे दलित अभ्यासाला एक व्यापक स्वरूप प्राप्त झालेले आहे. स्वातंत्र्यपूर्वकाळापासून अस्पृश्यता निर्मूलनाचे प्रयत्न केले जात आहे. स्वातंत्र्योत्तर कालखंडात अस्पृश्यता निर्मूलनासाठी व अस्पृश्यांच्या उन्नतीसाठी अनेक प्रकारचे कायदे करण्यात आले आहेत. आज स्वातंत्र्यानंतरही खेरलांजी, खेरडा सारख्या घटना घडतात. अनुसूचित जातीवर गावपातळीवर सामाजिक बहिष्काराचे प्रकार घडतात, दलित शिक्षकाला गावात घर भाड्याने दिले जात नाही. एखादी स्त्री सरपंच झाल्यास तिच्या विरुद्ध जाणीवपूर्वक अविश्वासाचा ठराव आणला जातो किंवा तिला कामच करू दिले जात नाही. जात पंचायती डोके वर काढताना दिसून येतात. याचा अर्थ दलितांच्या समस्या संपलेल्या आहेत असे नाही. यासाठी दलितांच्या समस्यांच्या मूळाशी जाऊन त्यांच्या सामाजिक, राजकीय, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक प्रश्नांचा समाजशास्त्रीय अभ्यास अनुसूचित जातीच्या अभ्यासात करता येतो. म्हणून अनुसूचित जातीच्या अभ्यासाचे महत्त्व दिवसेंदिवस वाढत आहे.

४. अनुसूचित जातीतील परिवर्तनाचा अभ्यास

अनुसूचित जातीच्या कल्याणासाठी अनेक योजना शासकीय पातळीवरून राबविल्या जात आहेत. त्यासाठी राष्ट्रीय आयोगाची स्थापना करण्यात आलेली आहे. पंचवार्षिक योजनेच्या माध्यमातून अनुसूचित जातींसाठी आर्थिक तरतुदी करण्यात येतात. पहिल्या पंचवार्षिक योजनेत ३०.०४ कोटींची तरतूद केली होती. आठव्या पंचवार्षिक योजनेत १७७२.३६ कोटीची तरतूद करण्यात आली होती. ही तरतूद प्रत्येक पंचवार्षिक योजनेत वाढविली जात आहे. महाविद्यालयीन शिक्षण घेणाऱ्या विद्यार्थ्यांना शिष्यवृत्ती दिली जाते. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर संशोधन संस्थेच्या माध्यमातून उच्च शिक्षण घेणाऱ्या अनुसूचित जातीतील युवक व युवतींना आर्थिक मदत दिली जाते. ७३ व्या घटनादुरुस्तीने पंचायत राजव्यवस्थेत अनुसूचित जातीच्या महिला व पुरुषांना सत्तेत सहभाग मिळाला. ३३० ते ३३२ व्या कलमानुसार लोकसभा व विधानसभेत राखीव जागाची तरतूद करण्यात आली. यामुळे सत्तेत सहभाग वाढू लागला. त्यामुळे नेतृत्व करणारे राज्य व राष्ट्रीय पातळीवरील नेते उदयास आले. त्यामुळे त्यांच्यात परिवर्तनाची प्रक्रिया सुरू आहे. हे परिवर्तन कोणत्या दिशेने सुरू आहे, त्याचे तुलनात्मक प्रमाण किती आहे? याचा अभ्यास अनुसूचित जातीत होतो. परिवर्तनाचा सातत्याने व शास्त्रीय पद्धतीने अभ्यास करण्याच्या दृष्टीने याचे महत्त्व अनन्यसाधारण असे आहे. या अभ्यासामुळेच कल्याणकारी योजना गरजूवंताना मिळण्यास कोणत्या अडचणी येत आहेत या अभ्यासामुळे लक्षात येते.

निष्कर्ष :-

१. अनुसूचित जाती या संकल्पनेचा अभ्यास केल्यानंतर एक बाब लक्षात येते. म्हणजेच शब्दाचा कालपरत्वे अपभ्रंस होऊन वर्ण, अस्पृश्य, हरिजन, भ्रमहृदयी, दलित, बहिर्जाती आणि अनुसूचित जाती हा शब्द प्रयोग अस्तित्वात आला. अनुसूचित जाती हा शब्द विशिष्ट व्यक्ती समूहाचे नाम निर्देशन करण्यासाठी उपयोगात आणला गेला आहे.
२. निसर्गतः सर्व मानव समान होते, परंतु आर्यानी भारतात प्रवेश केल्यानंतर त्यांनी मनूस्मृती या ग्रंथात समाजव्यवस्थेचे चार वर्ग निर्माण केले. ही वर्ग किंवा वर्ण व्यवस्था विषमतावादी व असमर्थनीय आहे. स्वतंत्र्यपूर्व भारतामध्ये ज्या समूहाचे शोषण झाले आहे अशांना समान पातळीत आणण्यासाठी विशेष तरतुदी देण्याच्या दृष्टीने अनुसूचित जाती हा वर्ग निर्माण केला आहे. त्यामुळे अनुसूचित जाती हा जात नसून एक मानव समूह आहे.
३. अनुसूचित जातीमध्ये समाजातील अनेक लहान-लहान समूह आहेत. त्यांचे स्वातंत्र्योत्तर भारतात हजारो वर्षांपासून सातत्याने शोषण झाले आहे. तसेच स्वातंत्र्य भारताच्या ७० वर्षांत सुद्धा त्यांना योग्य तो न्याय मिळाला नाही. त्यामुळे त्यांच्यात दारिद्र्य, कुपोषण, बेकारी, बेरोजगारी, वेशण, निरक्षरता, लोकसंख्या वाढ, स्थलांतर इत्यादी समस्या वाढीस लागल्या आहेत. या विविध समस्यांच्या अभ्यास करून योग्य मार्ग काढण्याच्या दृष्टीने अनुसूचित जातीच्या अभ्यासाचे महत्त्व वाढत आहे.

संदर्भग्रंथ :-

१. डॉ.भिमराव रामजी आंबेडकर, भारतातील जाती त्यांची संरचना, उत्पत्ती आणि विकास, प्रबुद्ध भारत प्रकाशन, नागपूर, २०१२
२. स.मा.गर्गे (संपादक), भारतीय समाज विज्ञान कोष, खंड २, समाज विज्ञान मंडळ पुणे, प्रथमावृत्ती १९९१
३. यशवंत सुमंत व द.वि.पुंडे (संपादक) महाराष्ट्रातील जाती संस्था विषयक विचार, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे, प्रथमावृत्ती १९९८
४. महादेव शास्त्री जोशी (संपादक) भारतीय संस्कृती कोष खंड ३, भारतीय संस्कृती मंडळ, शनिवार पेठ, पुणे
५. जॉन सी.बी.वेबस्टर (अनुवाद विद्या भागे, संपादक एस.एम.मायकेल), भारतीय संस्कृतीतील अस्पृश्यता आणि सामाजिक स्तर व वर्गीकरण, आधुनिक भारतातील दलित, दृष्टिकोन आणि मुल्ये, डायमंड पब्लिकेशन, पुणे
६. जॉन सी.बी.वेबस्टर (अनुवाद विद्या भागे, संपादक एस.एम.मायकेल), दलित म्हणजे कोण आधुनिक भारतातील दलित दृष्टिकोन आणि मुल्ये, डायमंड पब्लिकेशन, पुणे, पृ.क्र.३४
७. तत्रैव २०११
८. B.R. Ambedkar, What Congress & Gandhi have done to the untouchables, Appendix-II
९. The term for out castes in Govt. lit was usually Depressed classes Aout, १९३२ it was changed to scheduled caste, १९७९
१०. संजय साळवे, भारतीय समाज, यशवंतराव चव्हाण मुक्त विद्यापीठ नाशिक, प्रकाशित ग्रंथ, नाशिक
११. भालचंद्र फडके, दलित साहित्य वेदना आणि विद्रोह, दामोदर दिनकर कुलकर्णी, श्रीविद्या प्रकाशन, पुणे, तृतीय आवृत्ती, १९८९
१२. म.ना.वानखेडे, दलितांचे विद्रोही वाडःमय, प्रबोधन, नागपूर

चिरंतन विकास - एक भौगोलिक आढावा

प्रा.डॉ.अनिल निवृत्ती शिंदे

भूगोल विभाग प्रमुख, डॉ.सी.डी.देशमुख कॉलेज रोहा. ता.रोहा, जि.रायगड.

Email- anilshinde.geo@gmail.com

गोषवारा

मानवाच्या वैज्ञानिक प्रगतीबरोबरच काही देशांच्या विस्तारवादी वृत्तीने जगातील बहुतेक देशांना पारतंत्र्यात लोटले. पारतंत्र्यातील देशांची नैसर्गिक साधनांची व अन्य संपत्तीची लूट केली गेली. त्यातूनच जग आज विनाशाच्या उंबरठ्यावर पोहचले आहे. संयुक्त राष्ट्रांची स्थापना झाल्यावर सगळ्यांना एकत्र आणून जगाचा एकत्रित विचार करायचे प्रयत्न झाले. पण त्यांना वेगवेगळ्या कारणांनी मर्यादा राहिल्या. पण खऱ्या अर्थाने विकासासाठी पर्यावरण रक्षणासाठी आणि मानवी स्वातंत्र्य अबाधित राखण्यासाठी जगाने एकत्रित प्रयत्नांची सुरुवात २०व्या शतकाच्या उत्तरार्धात झाली. १९९२ साली ब्राझिलमधील रिओ शहरात भरलेल्या पर्यावरणविषयक जागतिक परिषदेनंतर याला गती मिळाली. यामुळे अनेक प्रश्नासंबंधी जगभरात एकत्रित प्रयत्न सुरू झाले, त्यांना गती मिळाली. जगातील मोठ्या परिसरात वन्य जीव, सागरी जीव यांना संरक्षण मिळाले, पृथ्वीभोवती जो ओझोन आहे, त्याला हानी पोहोचवणाऱ्या पदार्थांचा वापर अत्यंत कमी झाला, पर्यावरण रक्षणासाठी आर्थिक मदत पुरवणारी जागतिक व्यवस्था तयार झाली हे अशा प्रयत्नांचे महत्त्वाचे यश आहे. पण यातील बरेच प्रयत्न विशिष्ट प्रश्नांबद्दल होते. त्यामुळे अशा प्रयत्नांचे यश मर्यादितच राहिले. यानंतर मात्र सध्याची बदलणारी परिस्थिती व मानवी जीवनावरील आपत्तीचा विचार करून संयुक्त राष्ट्रसंघाने आपल्या सभासद राष्ट्रांसाठी 'चिरंतन विकास ध्येये २०३०' असा एक आराखडा सप्टेंबर २०१५ मध्ये तयार केला. त्यामध्ये जगातल्या सर्वच देशांनी चिरंतन विकासाची एकूण १७ ध्येये २०३० पर्यंत पूर्ण करायची आहेत असे ठरविण्यात आले आहे.

प्रस्तावना:-

“जो विकास चालू पिढीच्या गरजा पुढील पिढ्यांच्या गरजा धोक्यात न आणता पूर्ण करतो अशा विकासाला चिरंतन विकास (Sustainable Development) असे म्हणतात” म्हणजेच जो विकास मानवाच्या सध्याच्या व भाविष्यातील गरजांची संतुलित पूर्तता करतो तोच चिरंतन विकास होय.

चिरंतन विकास याचा साधा अर्थ आहे चिरकाल विकास. तात्पुरत्या लाभाचा केवळ भौतिक सुविधा वाढवून पैशाच्या लोभाच्या हव्यासापोटी केला जाणारा व नैसर्गिक संसाधनांना ओरबाडणारा आणि त्यांचे कायमचे नुकसान करणारा विकास हा चिरंतन विकास नसतो.

थोडक्यात सध्याच्या पिढ्यांच्या गरजा भागविताना पुढच्या पिढ्यांना त्यांच्या गरजा भागविण्यासाठी संसाधने (जल, जंगल, जमीन, पर्यावरण) शिल्लक राहतील, अशा पद्धतीने विकास आराखडा तयार करणे म्हणजे चिरंतन विकास होय.

चिरंतन विकास ही संकल्पना सर्वप्रथम संयुक्त राष्ट्र संघ, जागतिक पर्यावरण आणि विकास आयोगाने 1987 मध्ये प्रकाशित केलेल्या आपल्या सामान्य भविष्याविषयीच्या अहवालात व्यक्त केली होती. या अहवालात असे म्हटले आहे की भविष्यातील पिढ्यांच्या गरजा भागविण्यासाठी निसर्गाची क्षमता धोक्यात न घालता लोक दैनंदिन गरजा भागवू शकतात आणि याप्रकारे विकास चिरंतन करू शकतात .

१९८७ मध्ये पर्यावरणव विकास यावरील जागतिक (ब्रूटलंड) समितीने प्रथमच चिरंतन विकास ही संकल्पना वापरली सन १९९९-२००० मधील जागतिक विकास अहवालात यावर अधिक भर देण्यात आला. ही संकल्पना पर्यावरणाच्या संबंधात ओळखली जाते चिरंतन विकास ही संकल्पना दीर्घकालीन, भविष्याभिमुख ,बळकट व फलदायी विकास असून ज्याचा संबंध चालू व भावी पिढ्यांशी जोडला जातो.

उद्देश :- १) चिरंतन विकासाचा आढावा घेणे.

विषय विवेचन

गेल्या २०० वर्षांत जागतिक अर्थव्यवस्था सहापटीने वाढली. औद्योगिक क्रांतीचा लाभ घेतलेल्या देशांमध्ये तर ती दहापटीने वाढली. त्या त्या देशांच्या राहणीमानात, आरोग्यसेवेत खूपच बदल झाले, पण या विकासाची त्या त्या देशाने मोठी सामाजिक किंमत चुकती केली आहे. कोणत्याही अविचाराने किंवा नियोजनाशिवाय झालेला अनियंत्रित विकास हा

चिरंतन ठरत नाही, तर फायद्यापेक्षा काही काळाने तो अधिक धोकादायक ठरू लागतो. मानवाचा इतिहास हेच सांगत आला आहे. कोणत्याही अर्थव्यवस्थेची प्रचंड वाढ होत असताना त्या व्यवस्थेतील समाज, निसर्ग व विकास यांची योग्य ती सांगड घातली गेली नाही, तर त्या अर्थव्यवस्थेचा पूर्ण नाश होतो. विकासाबरोबर आजूबाजूचा निसर्ग, वातावरण व समाजाचे सशक्तीकरण करण्याकडे दुर्लक्ष झाले, तर मानवाचे मोठे नुकसान होते. हे अनेक ऐतिहासिक उदाहरणांवरून दिसून येते. आजच्या जगातील अर्थतज्ज्ञ, समाजशास्त्रज्ञ, राजकीय नेतृत्व या सगळ्यांनाच आजच्या अर्थविकासाचा म्हणूनच आनंद होत असला तरी हे सर्व आणखी किती दिवस टिकेल या काळजीनेही ग्रस्त केले आहे. जगातील सर्व लोकसंख्येच्या भल्यासाठी जो विकास आवश्यक आहे, तो जर अनियंत्रित किंवा अविचारी राहिला तर त्याच्या फायद्यांऐवजी समाजाला मोठी किंमत चुकवावी लागेल व कदाचित संपूर्ण मानवजातीच्या जहासालाच हा विकास कारणीभूत ठरेल की काय, अशी भीती व्यक्त होत आहे. या विकासाच्या वेडापायी माणूस या पूर्ण जगाचा नाश करील की काय, अशी भीती वाटल्याने १९९२ सालापासून जागतिक पातळीवर संयुक्त राष्ट्रांच्या वतीने एक परिषद घेतली व त्यानुसार यापुढे होणारा विकास हा नुसता विकास न राहता तो चिरंतन विकास व्हावा व त्याची समाजाला कमीत कमी किंमत मोजायला लागावी, असा विचार प्रकर्षाने मांडण्यात आला. अर्थात विकसनशील देशांनी आजही त्याविरुद्ध ओरड चालवली आहे. विकसित देशांनी गेल्या १०० वर्षांत स्वतःचा आर्थिक-औद्योगिक विकास करताना नैसर्गिक संपत्तीची भरमसाट वाट लावली आणि आता आमच्या विकासाचे दिवस आल्यावर हेच लोक आम्हाला हवामान, वातावरण, नैसर्गिक संपत्ती इत्यादी गोष्टींचा बागुलबुवा करत विकासात विघ्न आणत आहेत, असा युक्तिवाद मांडत आहेत. दोघांचेही म्हणणे बरोबर आहे व म्हणूनच चिरंतन विकासाचा अर्थ व त्याकरिता समाजाला मोजायला लागणारी किंमत याची जाण सर्वच देशांना लवकरात लवकर येणे जरूरीचे आहे.

चिरंतन विकास म्हणजे समाजाच्या आजच्या गरजा पूर्ण करित असताना भविष्यातील पिढ्यांना त्याची किंमत मोजायला लागणार नाही, असा विकास आज जगातील सर्वच राज्यकर्ते हे त्या त्या देशातील आर्थिक विकास आणि सामाजिक व नैसर्गिक साधनसंपत्तीची मागणी यामध्ये सुवर्णमध्य कसा गाठायचा या विवंचनेत आहेत. चिरंतन विकासाची सामाजिक किंमत ही कमीत कमी नुकसानीत करायची असेल तर कोणत्याही अर्थव्यवस्थेने तीन स्तंभांची काळजी घेतली पाहिजे. हे तीन स्तंभ म्हणजेच निसर्ग, समाज आणि अर्थव्यवस्था. यातील निसर्गाबद्दल आज जगात खूपच जागरूकता आली आहे. हवामानातील बदल, विकासासाठी होणारी झाडांची कत्तल व त्यामुळे एके काळच्या जंगलांची झालेली वाळवंटे, प्रदूषण या सर्वच चिंतांच्या चर्चा सध्या जगभरात सुरू असलेल्या ऐकू येतात. नैसर्गिक साधनसंपत्तीची मात्र सर्वानाच जास्त काळजी आहे. एका अंदाजाप्रमाणे एका वर्षात मानव ५००० कोटी टन एवढी नैसर्गिक संपत्ती निसर्गाकडून ओरबाडून काढत असतो. विकासासाठी कोणत्याही अर्थव्यवस्थेला नैसर्गिक संपत्तीची गरज असली तरी ज्या गतीने माणूस ती ओरबाडत आहे ते पाहता शेवटी निसर्ग थकेल आणि हात वर करील. 'नासा'सारख्या अवकाश संघटनांना अशी आशा होती की, मंगळ, चंद्र अशा शेजाऱ्यांकडून ही नैसर्गिक संपत्ती आणता येईल, पण अशी आशा सध्या तरी अशक्य आहे. म्हणूनच विकास साधताना निसर्गाकडून हावरटपणे संपत्ती न ओरबाडता ती नियोजनबद्ध पद्धतीने घ्यावी. घेतलेल्या संपत्तीचा जास्तीत जास्त पुनर्वापर करण्याच्या पद्धती अमलात आणाव्यात. कोळसा, खनिज तेल अशा इंधनांना पर्याय लवकरात लवकर शोधावेत, म्हणजे चिरंतन विकासाचे निसर्ग, समाज आणि अर्थव्यवस्था हे स्तंभ टिकून राहतील. एकविसावे शतक सुरू होत असताना संयुक्त राष्ट्रांच्या माध्यमातून एक विशेष प्रयत्न सुरू झाला. जगातील सर्व लोकांचे जीवनमान सुधारावे, सगळ्या मानव जातीला किमान सोयी मिळाव्यात, आरोग्याचे प्रश्न कमी व्हावेत अशा उद्देशांनी सगळ्या देशांची मिळून 'सहस्रक विकास उद्दिष्टे' ठरवण्यात आली. सप्टेंबर २००० मधील संयुक्त राष्ट्रांच्या आमसभेत ही उद्दिष्टे सगळ्या जगाने स्वीकारली. सन २०१५ पर्यंत जगातील गरिबी व उपासमार संपवणे, सर्वाना प्राथमिक शिक्षण उपलब्ध करणे, महिला सक्षमीकरण, बालमृत्यू कमी करणे, माता आरोग्य सुधारणे, एड्स, मलेरिया, टी.बी. यासारख्या रोगांवर नियंत्रण

आणणे, पर्यावरण रक्षण आणि हे करण्यासाठी जागतिक सहकार्य व्यवस्था उभारणे अशी उद्दिष्टे ठेवण्यात आली. ही उद्दिष्टे मोजली जावी यासाठी त्याचे लक्ष्य ठरवण्यात आले. प्रत्येक देशानेसुद्धा स्वतःचे लक्ष्य ठरवले.

जागतिक पातळीवर मानवी विकासासंबंधीचा हा पहिलाच एकत्रित प्रयत्न होता. यातून मूलभूत प्रश्नाविषयी जागतिक मत तयार व्हायला ते सोडवण्यासाठी विकसनशील आणि अविकसित देशांना आर्थिक मदत मिळायला प्रश्नांच्या सोडवणुकीसाठी गरजेची माहिती गोळा करण्याच्या व्यवस्था तयार व्हायला मदत झाली. जागतिक पातळीवरून प्रश्न सोडवण्यासाठी दबाव तयार झाला. यातून प्रत्येक देशसुद्धा या प्रश्नांकडे नव्याने बघू लागला. नवनवीन उपाय करू लागला. याचाच परिणाम म्हणून

- १) १९९०च्या पातळीपेक्षा जागतिक गरिबी निम्म्याने कमी झाली आहे.
- २) कुपोषित मुलांचे प्रमाण १२%पर्यंत कमी झाले.
- ३) प्राथमिक शिक्षण सोई वाढल्या आहेत.
- ४) शेतीबाह्य कामामध्ये महिलांचा सहभाग वाढला आहे.
- ५) विविध देशांतील संसदेत महिलांचे प्रतिनिधित्व वाढले आहे.
- ६) ५ वर्षांखालील मुलांचा मृत्युदर ५०%नी कमी झाला आहे.
- ७) मलेरियासारख्या रोगाने होणारे लाखो मृत्यू रोखण्यात यश आले आहे.
- ८) नव्याने एड्स होण्याचे प्रमाण कमी झाले आहे.
- ९) ओझोन वायू कमी करणाऱ्या पदार्थांचा वापर पूर्णपणे थांबल्यामुळे भविष्यात ओझोन छिद्र बंद होणार आहे.

जगभर या कामातील अनुभव, त्यातून मिळालेली दिशा, तयार झालेल्या व्यवस्था याचा अभ्यास सुरू झाला. यातून कमी पडलेल्या गोष्टी लक्षात आल्या. त्याचबरोबर विकासाची उद्दिष्टे साध्य करत असताना शिक्षणातील गुणवत्तेचे महत्त्व, शेतीची चिरंतनता, आर्थिक विकास होताना लोकांना काम मिळणे व कामामध्ये सन्मान असणे, मानवी उपभोगाच्या मर्यादा, विकासाच्या कामात लोकांचा सक्रिय सहभाग असणे याचाही विचार केला पाहिजे, असे लक्षात आले. पृथ्वीवरील इतर प्राणिमात्रांचे रक्षण करणे, त्यासाठी गरजेच्या परिसंस्था वाचवणे याची निकडसुद्धा अधोरेखित झाली. विकासाची रूपरेखा आखताना, त्यासाठी गरजेची साधने, तंत्रज्ञान वापरताना त्याच्या भविष्यात होणाऱ्या परिणामांचा विचार करणे आणि ते विचारात घेऊन आपले कार्यक्रम, धोरणे ठरवणे गरजेचे आहे, हे सुद्धा लक्षात आले.

२०१०पासूनच सहस्रक उद्दिष्टे पूर्ण करण्यासाठीच्या अडचणींची चर्चा व्हायला लागली होती. कोलंबिया देशाने चिरंतन उद्दिष्टांची कल्पना २०११पासून मांडायला सुरुवात केली. हळूहळू या कल्पनेला अनेक देशांनी पाठिंबा दिला. भारताने यासंबंधी केलेली मदत महत्त्वाची ठरली. या प्रयत्नातून २०१२ सालच्या 'रिओ' या परिषदेत चिरंतन विकास उद्दिष्टांची संकल्पना २०१५नंतरच्या आपल्या एकत्रित वाटचालीस मार्गदर्शक असेल, यावर सर्व देशांनी शिक्कामोर्तब केले. यानंतर संयुक्त राष्ट्रांनी राजकीय व तांत्रिक अशा दोन्ही पातळ्यांवर या उद्दिष्टांची चर्चा सुरू केली. सर्व देशातील सरकारे, स्वयंसेवी संस्था, जागतिक पातळीवरील विविध संस्था, संघटना, उद्योग विश्व आदी विविध गटांची मते ऐकून घेण्यात आली. या प्रयत्नांतून २०३०पर्यंत काय साध्य केले पाहिजे, यासाठी कोणती तत्त्वे स्वीकारली पाहिजेत असे सांगणारा एक कार्यक्रम तयार झाला.

जागतिक चिरंतन विकासाची उद्दिष्टे

संयुक्त राष्ट्रसंघाने 'चिरंतन विकास उद्दिष्टे' सगळ्या जगासमोर मांडली. सप्टेंबर २०१५मध्ये संयुक्त राष्ट्रांच्या आमसभेत याला सर्व देशांच्या प्रमुखांनी मान्यता दिली. संयुक्त राष्ट्रांच्या ७० वर्षांच्या कार्यकाळात सर्वात जास्त देशांनी मान्यता दिलेला हा कार्यक्रम आहे. ही उद्दिष्टे स्वीकारताना, 'Living no one behind (कोणीच मागे राहता कामा नये)' या तत्त्वाचा स्वीकार करण्यात आला आहे. मानवी आयुष्याच्या सर्व अंगांचा विचार करून, तसेच पृथ्वीवरील विविध प्राणिमात्र आणि निसर्ग यांच्या संरक्षणासाठीचे महत्त्व लक्षात घेऊन या उद्दिष्टांची रचना करण्यात आली आहे.

- १) सर्व प्रकारच्या गरिबीचे निर्मूलन करणे.
- २) उपासमार संपवणे, अन्न सुरक्षा व सुधारित पोषणआहार उपलब्ध करून देणे आणि चिरंतन शेतीला प्राधान्य देणे.
- ३) आरोग्यपूर्ण आयुष्य सुनिश्चित करणे व सर्व वयोगटातील नागरिकांचे कल्याण साधणे.
- ४) सर्वसमावेशक व गुणवत्तापूर्ण शिक्षण उपलब्ध करणे.
- ५) लिंगभावाधिष्ठित समानता व महिला आणि मुलींचे सक्षमीकरण साधणे.
- ६) पाण्याची व स्वच्छतेच्या संसाधनाची उपलब्धता सुनिश्चित करणे.
- ७) सर्वांना अल्पखर्चीक विश्वासाह, चिरंतन आणि आधुनिक ऊर्जा साधने उपलब्ध करून देणे.
- ८) चिरंतन, सर्वसमावेशक आर्थिक वाढ आणि उत्पादक रोजगार उपलब्ध करणे.
- ९) पायाभूत सोयीसुविधांची निर्मिती करणे, सर्वसमावेशक आणि चिरंतन औद्योगिकीकरण करणे आणि कल्पकतेला वाव देणे.
- १०) विविध देशांमधील असमानता दूर करणे.
- ११) शहरे आणि मानवी वस्त्या, अधिक समावेशक, सुरक्षित, संवेदनशील आणि चिरंतन करणे.
- १२) उत्पादन आणि उपभोगाच्या पद्धती चिरंतन रूपात आणणे.
- १३) हवामान बदल आणि त्याच्या दुष्परिणामांना रोखण्यासाठी त्वरित उपाययोजना करणे.
- १४) महासागर व समूहांचे संवर्धन करणे तसेच त्यांच्याशी संबंधित संसाधनांचा चिरंतनपणे वापर करणे.
- १५) परिस्थितिकीय व्यवस्थांचा (Ecosystem) चिरंतन पद्धतीने वापर करणे. वनाचे चिरंतन व्यवस्थापन, वाळवंटीकरणाशी मुकाबला करणे, जमिनीचा कस कमी होण्याची प्रक्रिया आणि जैवविविधतेची हानी रोखणे.
- १६) शांततापूर्ण आणि सर्वसमावेशक समाजव्यवस्थांना प्रोत्साहन देणे. त्यांची चिरंतन विकासाच्या दिशेने वाटचाल निश्चित करणे, सर्वांची न्यायापर्यंत पोहोच स्थापित करण्यासाठी विविध पातळ्यांवर परिणामकारक, उत्तरदायी आणि सर्वसमावेशक संस्था उभ्या करणे.
- १७) चिरस्थायी विकासासाठी वैश्विक भागीदारी निर्माण व्हावी यासाठी अंमलबजावणीची साधने विकसित करणे.

ही चिरंतन विकासाची ध्येये निश्चित करण्यासाठी आंतरराष्ट्रीय स्तरावर ज्या चर्चा पार पडल्या त्यात विकसनशील देशांची भूमिका मांडण्यात आणि विकसित देशांचे उत्तरदायित्व स्पष्ट करण्यात भारताने प्रमुख भूमिका बजावली होती. या ध्येयांचा मसुदा बनवताना सुद्धा भौगोलिक आशा-आकांक्षा आणि उद्दिष्टांना प्राधान्य देत, भारताच्या मताचा प्रामुख्याने विचार करण्यात आला आहे. त्याचप्रमाणे हा जाहिरनामा आता जगातल्या सगळ्या देशांना लागू आहे. या उलट यापूर्वी संयुक्त राष्ट्रांची Millennium Development Goals विकसनशील देशांपुरतीच मर्यादित होती. पण आता संयुक्त राष्ट्रांची ही चिरंतन विकासाची भूमिका क्रांतिकारक रित्या बदलली आहे; ज्यात आता केवळ दक्षिणेकडेच्या देशांकडेच लक्ष केंद्रित केलेले नसून गरीब आणि श्रीमंत अशा सगळ्याच देशांचा त्यात समावेश आहे.

चिरंतन विकास ध्येये निश्चित करून त्या दृष्टीने पावले टाकण्याची ही पद्धत जरी क्रांतिकारक असली तरी त्यामध्ये काही मूलभूत त्रुटी राहून गेल्या आहेत. यातली उद्दिष्टे पूर्ण करणे बंधनकारक नसून स्वैच्छिक आहे. त्यामुळे

विकासाची ती परिमाणे सत्यात उतरवणे एक समस्याच आहे. त्यासाठी प्रत्येक देशाने, खास करून जे देश अधिक साधनसंपन्न आहेत त्यांनी त्या दिशेने निर्णायक पावले उचलली पाहिजेत. अशाप्रकारे जागतिक पातळीवर सगळ्यांनी सहकार्याची भूमिका स्वीकारली नाही तर हा चिरंतन विकास ध्येयांचा जाहिरनामा म्हणजे सत्यात उतरू न शकणारे एक स्वप्न बनून राहिल.

सारांश:-

अशा प्रकारचे जागतिक स्तरावरील करार प्रत्यक्षात येणे हे एक भगीरथ कार्य आहे. यासाठी विविध स्तरांवर निश्चित प्रयत्न करावे लागतात. यासाठी देशांची सरकारे, तेथील स्वयंसेवी संस्था, उद्योग क्षेत्र आणि सर्वसामान्य नागरिक या सगळ्यांना प्रयत्न करावे लागतात. यासाठी चिरंतन विकास उद्दिष्टांमध्ये विशेष भर देण्यात आला आहे. २०१५मध्ये ही उद्दिष्टे मान्य केली गेली. परंतु

- १) ही उद्दिष्टे साध्य होण्यासाठी जागतिक पातळीवर काय प्रकारचे प्रयत्न सुरू आहेत? २)यासाठीच्या आर्थिक गरजा कशा पूर्ण होणार आहेत?
- ३)विकसनशील आणि अविकसित देशांना यासाठी लागणारे विज्ञान-तंत्रज्ञान मिळावे यासाठी काय सुरूआहे?
- ४)२०२० साली या उद्दिष्टांच्या पूर्ततेमध्ये जग कुठे पोहोचले आहे ?
- ५) आपण कशा प्रकारच्या व्यवस्था तयार केलेल्या आहेत ?
- ६) कोविड महामारीचा या प्रयत्नांवर काय परिणाम होईल ?

यावर नियोजनबद्ध चिरंतन विकास हे उत्तम उत्तर आहे. नैसर्गिक साधनसंपत्तीचा कमीतकमी वापर करणे, अपारंपारिक ऊर्जास्रोतांचा वापर करणे, प्रदूषण नियंत्रणासह विकासयोजना आखणे व टाळता न येण्याजोग्या पर्यावरण हानीबद्दल भरपाई म्हणून पर्यावरण संवर्धनाची योजना प्रकल्प आराखड्यात समाविष्ट करणे या गोष्टी केल्या तर पर्यावरणाचा दर्जा आपण टिकवू शकू. गावपातळीपासून ते जागतिक पातळीपर्यंत विकासाचे नियोजन करतांना त्या भूभागावरील पर्यावरणाचे व नैसर्गिक साधनसंपत्तीची क्षमता विचारात घेणे आवश्यक आहे. तसेच हवा, पाणी, जमीन या घटकांची प्रदूषणे सामावून घेण्याची क्षमता ही मर्यादा धरली तर त्या धोकादायक मर्यादिपेक्षा खाली आपल्या आजच्या व भविष्याच्या विकासांमुळे होणाऱ्या प्रदूषणाचे प्रमाण राहिल अशी आपण काळजी घेतली पाहिजे. आपले जीवनदायी पर्यावरण हा पूर्वजांकडून मिळालेला मालकीहक्काचा वारसा नसून आपल्या पुढील पिढ्यांकडून उसना घेतलेला ठेवा आहे हे आपण ध्यानात घेतले पाहिजे. कर्ज जसे व्याजासह परत फेडावे लागते तसे हे पर्यावरण अधिक सुखदायी व सुरक्षित कसे करता येईल हे आपण पाहिले पाहिजे. असे पर्यावरण तयार केले तरच खऱ्या अर्थाने चिरंतन विकासाची उद्दिष्टे साध्य झाली असे म्हणता येईल

संदर्भ

- 1) चिरंतन विकास दत्ता वानखेडे पी.बी.डी.प्रकाशन पुणे.
- 2) पर्यावरणाचा चिरंतन विकास प्रकाश सावंत फडके प्रकाशन कोल्हापूर
- 3) चिरंतन विकास आणि पर्यावरण शिक्षणासाठीचे शिक्षण प्रा.डॉ.एस.भांगलेसक्सेस पब्लिकेशन पुणे.
- 4) What Next for Sustainable Development? (2019)Edward Elgar publishing Ltd.Cheltenham U.K.
- 5) Understanding Sustainable Development (2008) John Blewitt Earthscan publication U.K.
- 6) The Limits to Growth (1972) Donella H. Meadows, Dennis L. Meadows, Jørgen Randers, and William W. Behrens III Universe Books New York.
- 7) Agronomy for Sustainable Development Volume 41 Issue 3, June 2021
- 8) <http://www.sustainabledevelopemnt.com>

“लातूर जिल्हातील प्राण्यांच्या बाजारकेंद्राचे व्यापारक्षेत्र एक भौगोलिक विश्लेषण”

प्रा. डॉ. गोंड नामदेव संपतराव
(भूगोल विभाग) भाई किशनराव देवमुख महाविद्यालय, चाकूर जिल्हा- लातूर ४१३७१३
Email. Id- goundns2011@gmail.com

प्रस्तावना :-

लातूर अभ्यास क्षेत्रातील प्राण्यांच्या बाजारकेंद्राचे व्यापारक्षेत्र निश्चित करित असताना बाजारकेंद्राशी संबंधित अंतर्गत व बहिर्गत घटक महत्वाचे ठरतात अभ्यास क्षेत्रातील १३ बाजारकेंद्रे ही एकमेकापासून वेगळी आहेत. कार्य, आकार, अंतर, सेवा, प्राण्यांच्या जाती, आवक, जावक, विक्री, खरेदी, वाहतुकीच्या सुविधा इ. आहेत

व्यापार क्षेत्राच्या मर्यादा ठरविताना सैध्दांतिक पध्दत, अनुभवजन्य पध्दत वापरून बाजारकेंद्राचे व्यापारक्षेत्र निश्चित केलेली आहे.

उद्दिष्टे :- व्ही. एल. प्रकाशराव यांची व्यापारक्षेत्रानुसार वितरण पध्दत अभ्यासणे.

संशोधन पध्दती :- हा शोधनिबंध लिहिण्यासाठी प्राथमिक व द्वितीय स्वरूपाची माहिती उपलब्ध केलेली आहे. बाजारकेंद्राचे व्यापारक्षेत्र ठरविण्यासाठी ज्या अनेक पध्दती आहेत त्यापैकी अनुभवजन्य पध्दत ही तीव्र व्यापार क्षेत्रावर अवलंबून असती तरी त्यापासून मिळणारी माहिती खरी आहे

सदरील शोधनिबंध लिहिण्यासाठी व्ही. एल. प्रकाशरावची गणितीय समानता पध्दत पावल्ली आहेक

अभ्यास क्षेत्र :-

महाराष्ट्रातील मराठवाडा विभागातील लातूर हा एक महत्वाचा जिल्हा आहे. या जिल्ह्याची निर्मिती १६ ऑगस्ट १९८२ साली झाली असून याचा अक्षावृत्तीय विस्तार १८° १७' ते १९° १७' उत्तर आणि रेखावृत्तीय विस्तार ७३° २७' ते ७७° २७' पूर्व आहे. जिल्ह्याचे भौगोलिक क्षेत्रफळ ७३९१. ९० चौ. कि.मी. आहे. लातूर जिल्हाच्या प्राकृतिक रचनेचा विचार करता हा भाग पठारी स्वरूपाचा आहे. जिल्ह्यात १० तालूके आहेत. काही तालुक्याचा अपवाद वगळता सर्वच तालुक्यामध्ये पाळीव प्राण्यांच्या बाजारपेठा आहेत.

व्ही. एल. प्रकाशराव यांची (सैध्दांतिक) गणितीय समानता पध्दत :-

अभ्यास क्षेत्रातील प्राण्यांच्या बाजार केंद्राचे व्यापारक्षेत्र (सेवाक्षेत्र) ठरविण्यासाठी व्ही. एल. प्रकाशराव (१९७८) यांची गणितीय समानता पध्दत वापरण्यात आली आहे. या पध्दतीवरून अभ्यास क्षेत्रातील १३ बाजारकेंद्राचे सेवाक्षेत्र निश्चित करण्यात आली आहे. ग्रामिण बाजारकेंद्राचे सेवाक्षेत्र एकूण ग्रामिण लोकसंख्येवर अवलंबून असते आणि शहरी बाजारकेंद्राचे सेवाक्षेत्र ही एकूण लोकसंख्येवर अवलंबून असते. शहरी बाजारकेंद्राची मर्यादा ठरविण्यासाठी बाजारकेंद्राची एकूण लोकसंख्या विचारात घेतली गेली आहे पण एकूण लोकसंख्या विचारात घेतली असेल तर ठराविक बाजारकेंद्राचे व्यापारक्षेत्र व्यवस्थितरीत्या निश्चित करता येणार नाही कारण की, शहरी बाजारकेंद्राचे व्यापारक्षेत्र शहराच्या लोकसंख्येशी संबंधित नसते तर ते शहराच्या कार्यात्मक क्षेत्राशी संबंधित असते. शहराच्या लोकसंख्येचे मोजमाप करण्यासाठी पुढील सूत्राचा वापर केला आहे.

$$R = \sqrt{\frac{T \times A}{U}}$$

सुत्रासा :

A = ठराविक प्रदेशाचे एकूण क्षेत्र
U = अभ्यास क्षेत्र प्रदेशाचे एकूण ग्रामिण लोकसंख्या
T = शहराची लोकसंख्या
R = वर्तुळाची त्रिज्या

$$SI = \frac{Tc \times A}{C} \quad R = \sqrt{\frac{Tc \times A}{C}}$$

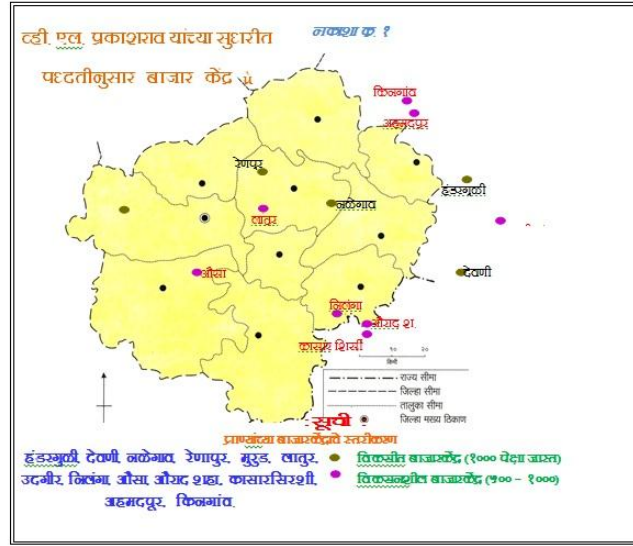
सुत्रासा :

SI = व्यापार क्षेत्र
Tc = बाजार केंद्राचे एकूण केंद्रीयता मूल्य
A = अभ्यास क्षेत्राचे एकूण क्षेत्रफळ
C = सर्व बाजार केंद्राची एकूण केंद्रीयता
R = वर्तुळाची त्रिज्या जी व्यापार क्षेत्र दर्शविते

व्ही. एल. प्रकाशराव यांच्या सुधरीत पध्दतीनुसार बाजार केंद्र -

वैद्रीयता श्रेणी	बाजारकेंद्राचे नाव	व्यापार क्षेत्र	R श्रेणी
1	हंडरगुली	1375.48	37.08
2	देवणी	1256.25	35.44
3	नळेगाव	1104.4	33.23
4	रेणपुर ५	1024.32	32.00
5	मुरूड +	1084.32	32.92
6	किनगांव	1003.40	31.60
7	लातूर	983.92	31.36
8	उदगीर ५	963.84	31.04
9	निलंगा	953.87	30.88
10	औसा	948.64	30.80
11	औराद शहाजनी	682.72	26.12
12	कासारशिर्सी	652.25	25.23
13	अहमदपूर ५	582.32	24.13

- स्रोत :- १) लातूर जिल्हा सेन्सस हॅडबुक २०११.
२) सामाजिक आणि आर्थिक समालोचन २००९ - २०१०.
३) क्षेत्र कार्यावर २००९ - २०१०



प्राण्यांच्या बाजारकेंद्रांच्या सेवाक्षेत्राचे (व्यापारक्षेत्राचे) वितरण :-

लातूर अभ्यासक्षेत्रातील प्राण्यांच्या बाजारकेंद्रांचे वितरण गणितीय मोजमाप पध्दतीद्वारे दर्शविण्यासाठी व्ही. एल. प्रकाशराव यांची पध्दत अभ्यासली आहे. अभ्यासक्षेत्रातील लातूर जिल्हा मांजरा, तेरणा, मन्याड नद्यांच्या खो-यात येतो. जिल्ह्यात सर्वात मोठी नदी मांजरा आहे. हांडरगुली, देवणी, नळेगाव, रेणपूर आणि मुरूड या भागात सूपीक मृदा, पाणीपुरवठा या सुविधा व्यापारक्षेत्राला पोषक आहेत.

टहमदपूर, किनगाव या भागात जमिनीची सुपिकता कमी आहे. अपु-या वाहतुकीच्या सुविधामुळे या भागातील बाजारकेंद्रांचे व्यापार क्षेत्र मर्यादित आहे.

निष्कर्ष :-

१. लातूर जिल्हात हांडरगुली हे बाजारकेंद्र व्यापार क्षेत्रात आघाडीवर आहे.
२. लातूर जिल्हात पाळीव प्राण्यांचे बाजारकेंद्रे १३ आहेत.
३. व्ही. एल. प्रकाशराव यांच्या पध्दतीनुसार व्यापारक्षेत्राची श्रेणी काढलेली आहे.
४. लातूर जिल्हातील सर्व बाजारांची व्यापारक्षेत्र भिन्न - भिन्न प्रकारची आहेत.
५. शहरी भागाच्या तुलनेत ग्रामिण बाजारपेठेत मोठा जनावरांचा बाजार भरतो.

संदर्भ :-

1. कृषी उत्पन्न बाजार समिती - लातूर
2. R.B. Singh - Research in Geography.
3. ukey K.A.(2001) - The cattle marketing system network Aurangabad District.

समाजाच्या जडणघडणीत साहित्याची भूमिका एक अभ्यास

प्रा.डॉ.बालाजी परबतराव खराबे

मराठी विभागप्रमुख, स्वामी विवेकानंद महाविद्यालय, मुक्रामबाद, ता.मुखेड जि.नांदेड

E-mail:kharabebalaji68@gmail.com

प्रस्तावना :-

साहित्याचा समाजाशी जो संबंध आहे तो बाह्य किंवा उपरा नसून ती एक अंतर्गत बाब आहे. साहित्यातून मानवी जीवनाचा बोध आणि सामाजिक वास्तवता जाणून घेता येते. साहित्यिक ज्या परिस्थितीत समाजात वावरतो त्याच परिस्थितीचे साहित्याद्वारे मांडत असतो. 19 व्या शतकात आधुनिक जाणीव व दृष्टिकोणातून साहित्य निर्मितीला, नवा आशय मांडण्याला सुरुवात झाली. त्यामुळे साहित्याद्वारे सामाजिक परिवर्तनाला आणि सामाजिक परिवर्तनाद्वारे साहित्य निर्मितीला चालना मिळाली. साहित्य आणि समाज यातील परस्पर संबंधाच्या अनुबंधाद्वारे समाजाचा समाजशास्त्रीय अभ्यास करण्याला मोठ्या प्रमाणात चालना मिळाली. त्यामुळे समाजशास्त्रात साहित्याचे 'समाजशास्त्र' (Sociology of Literature) ही ज्ञानशाखा उदयास आली. या संदर्भात पाश्चिमात्य समाजशास्त्रज्ञांचे विचार जाणून घेणे महत्त्वाचे ठरते. हंगेरीयन समाजशास्त्र जार्ज लुकासने सर्वप्रथम साहित्याचे 'समाजशास्त्र' ही संज्ञा उपयोगात आणली. ऑगस्ट कॉम्सने 'वैज्ञानिक' दृष्टिकोणातून साहित्याचे अध्ययन केले. विल्फ्रेड पॅरोटाने 'तार्किक अतार्किक' घटकास प्राधान्य देऊन साहित्याच्या बोधासाठी अवशेष सिद्धांत मांडला. मॅक्स वेबरने 'आदर्श प्रारूपाद्वारे' साहित्याचे विश्लेषण केले. तर एमिल डरखीमने साहित्य 'समाजाप्रमाणे तथ्य' आहे असे प्रतिपादन केले. साहित्य ही व्यक्तीमूलक घटना नसून ती 'सामुहिक चेतना' (collective consciousness) चा परिपाक आहे.

संशोधन समस्या :-

संशोधन समस्या ही संशोधनाची प्रथम पायरी आहे. त्यामुळे कोणतेही संशोधन कार्य हाती घेत असताना संशोधकाला संशोधनाची समस्या निश्चित करावी लागते. त्यामुळे प्रस्तुत संशोधनात समाजाच्या जडणघडणीत साहित्याची भूमिका एक अभ्यास ही संशोधनाची समस्या निवडली आहे.

संशोधनाची उद्दिष्टे :-

1. साहित्य आणि समाज यामधील परस्पर संबंध जाणून घेणे.
2. साहित्याद्वारे सामाजिक परिवर्तनाला चालना मिळते का? यांचा अभ्यास करणे.

संशोधन पद्धती :-

तथ्य संकलणाच्या अनेक पद्धती आहेत. परंतु मानव्यविद्या शाखेशी संबंधित असणारी ऐतिहासिक व विश्लेषणात्मक संशोधन पद्धतीचा प्रस्तुत संशोधनासाठी उपयोग करण्यात आला आहे.

साहित्याचा अर्थ :-

साहित्य म्हणजे समाजाशी निगडित एखाद्या विषयासंबंधी केलेले अथपूर्ण लिखाण म्हणजे साहित्य होय. समाजाच्या मुशीतून साहित्यिकाची वैचारिकता वैचारिक पार्श्वभूमी तयार होते. अँलन स्विगवूडच्या मते, सामाजिक दर्जा, अभिवृत्ती, बांधिलकी, जीवनात त्यांना आलेले यशापयश या सर्वांचा प्रत्यक्ष परिणाम त्यांच्या व्यक्तीमत्व यातूनच साहित्यिक उदयास येतात. साहित्य केवळ अमृत, काल्पनिक, भावनिक व चमत्कारीक ठरत नाही. तर वास्तविक ठरते

साहित्याद्वारे समाजातील विविध समुह, सामाजिक संस्था, सामाजिक संरचना, सामाजिक संबंध, सहकार्य, संघर्ष, प्रेरणा, अभिवृत्ती इत्यादी पैलूंची पायाभरणी साहित्यातून होते.

साहित्याचे प्रकार :-

साहित्याच्या प्रकाराची दोन भागात विभागणी केली जाते. कलावादी साहित्य आणि जीवनवादी साहित्य यांचे पुढील प्रमाणे विश्लेषण केले आहे.

1. कलावादी साहित्य

ना.सी. फडके, बा.सी.मर्डेकर, गंगाधर गाडगीळ, पु.शि.रेगे, माधव आचवल, डॉ.द.भि. कुलकर्णी इत्यादी साहित्यिक साहित्याला एक कलाकृती सौंदर्यकृती म्हणून पहातात. यांच्या मते, मानवी जीवन दुःख, कटु अनुभव, दाहकता इत्यादींनी व्यापले आहे. त्यातून मुक्त होण्यासाठी माणूस साहित्याकडे वळतो, तेव्हा साहित्याद्वारे पुन्हा माणसाला दुःख देणे अयोग्य ठरते असे कलावादी साहित्यिक मानतात.

2. जीवनवादी साहित्य

वि.स. खांडेकर, दि.के.बेडेकर, म.ना.वानखेडे, शरदचंद्र मुक्तीबोध, म.भी.चितणीस, रा.ग.जाधव, गं.भा. सरदार, भालचंद्र फडके, नरहर कुरंदकर, बाबुराव बागूल, रावसाहेब कसबे, यशवंत मनोहर इत्यादी साहित्यिकांनी साहित्याची मांडणी जीवनवादी दृष्टिकोनातून केली आहे. यांच्या मते, मनोरजन करणे हा साहित्याचा उद्देश नाही तर मानवी प्रश्न व दुःखाला वाचा फोडणे, समाज सुधारणा घडवून आणणे महत्वाचे ठरते, असे जीवनवादी साहित्यिक मानतात. जीवनवादी साहित्याची मानवी मूल्यांवर भक्कम श्रद्धा आहे. त्याला मानवी मूल्यांवर आरुढ झालेले समाज जीवन अभिप्रेत आहे. अलिकडील काळात या जीवनवादी साहित्याने समग्र समाज व्यवस्थाच ढवळून काढली आहे. या साहित्याला जीवनात व जगण्यात अर्थ वाटतो. त्यामुळे ते जीवन वास्तवाला सामोरे जाते. जीवनाची बुद्धीनिष्ठ चिकित्सा करते. समाजाचे प्रश्न समजून घेत या साहित्यातील जीवनभिमुखता हीच या साहित्याला शक्ती व सामर्थ्य देऊ शकते.

साहित्याची जडणघडण :-

'साहित्याची निर्मिती हस्तिदंती मनोन्यात किंवा समाज व्यवहारापासून दूर असलेल्या पोकळीत होत नाही आणि तशी ती झाली तरी या प्रकारचे साहित्य श्रेष्ठ दर्जाचे ठरत नाही. वाङ्मयनिर्मितीची पाळेमुळे समाजव्यवस्थेत रुजलेली असतात. लेखकाचा साहित्यिक पिंड घडवण्याला तत्कालीन सामाजिक परिस्थिती, विचारप्रणाली, वाङ्मयीन शैली मोठ्या प्रमाणात कारणीभूत असतात. लेखकाला तत्कालीन परिस्थितीमध्ये जे बरे-वाईट अनुभव, येतात तो जे निरीक्षण करतो ते आपल्या लेखणीद्वारे अभिव्यक्त करतो. लेखकाचे समाजातील स्थान कोणते यावरून त्याच्या साहित्याचित्रणाचे स्वरूप स्पष्ट होते'समाजाच्या स्थितिगतीशी व प्रतिभा शक्तीच्या प्रेरणेशी साहित्य निर्मिती निगडीत असते. साहित्य परिस्थितीजन्य, सांस्कृतिक, भावनिक, वैचारिक इत्यादी अविष्कारातून उदयास येते. कारण साहित्य स्वभावतःच समाजभिमुख असते. त्यात सामाजिक जाणिवेचे प्रतिबिंब उमटते, समाजाचे स्थितीचित्रण घडून येते. त्याहीपेक्षा त्यातून सामाजिक परिवर्तनाचे दर्शन घडते. समाजातील परस्परविरोधी घटकांचे संबंध व्दंदात्मक असतात. त्यातील अतिविरोधाची मूलगामी चिकित्सा केल्यास ते साहित्य श्रेष्ठ दर्जाचे ठरते. साहित्य हा संस्कृतीचा एक घटक असतो. याचा अर्थ साहित्यातून समाजाचे आणि संस्कृतीचे बाह्यरूपच नव्हे तर प्रेरणा, प्रवृत्ती, परंपरा यादेखील व्यक्त होतात असे जोसेफ रुसेक यांनी Sociology of Literature या ग्रंथात म्हटले आहे. साहित्यनिर्मिती साहित्यिकाच्या निर्मिती क्षमतेचा परिपाक दिसत असली तरी समाज व त्या समाजाची संस्कृती यांचा त्या साहित्य निर्मितीमध्ये महत्वाचा वाटा असतो हे विसरता येत नाही.

समाज व साहित्याचा परस्पर संबंध :-

साहित्य आणि समाजाचा परस्पर संबंध आहे किंवा साहित्य हा समाजाचा आरसा आहे असे म्हटले जाते. साहित्याच्या साहित्यकृतीत समाजाचा एक सदस्य म्हणून त्याला आलेले अनुभव, सामाजिक घटनेचे प्रत्यक्षीकरण, सामाजिक बोध यांचे यथार्थ चित्रण करण्याची क्षमता आणि इच्छा यांचा प्रभाव साहित्यावर पडतो. साहित्यिक समाजविघातक शक्तिविरुद्ध सामाजिक चेतना निर्माण करण्याचे कार्य करतो. त्याद्वारे परिवर्तनाच्या सक्रिय प्रयत्नांना प्रेरणा मिळते. या अर्थाने साहित्यिक श्रेणीजणांची भूमिका मांडतो. साहित्यिकाला परिवर्तनाच्या विविध प्रवाहाचे झालेले आकलन, समाज जीवनाबाबतची आलेली समज, त्याची वैचारिक बांधिलकी इत्यादींच्या बळावर तो नवसमाज निर्मितीचे चालणा देण्याचे काम करतो. समाजशास्त्रज्ञ आणि साहित्यिक यांच्यामध्ये मुलभूत फरक हा की, समाजशास्त्र वस्तुनिष्ठतेवर भर देऊन सामाजिक वास्तवतेचे चिकित्सक परिक्षण करतात तर साहित्यिक व्यक्तिनिष्ठ व संवेदनशील जाणिवेतून समाज जीवनाचे चित्रण करतात.

साहित्यांचे समाज आणि साहित्य याबद्दल मतांतरे :-

वेगवेगळ्या साहित्यांनी साहित्य आणि समाज यामधील अंतःसंबंधाचे विश्लेषण केले आहे. ते खालील प्रमाणे.

1. एच.डी.डंकन

यांनी साहित्यांचा आंतरक्रिया दृष्टिकोणाद्वारे एक स्वायत्त सामाजिक संस्था म्हणून विचार केला आहे. कोणत्याही साहित्याची समाजशास्त्रीय मिमांसा ही नेहमी साहित्यिक समीक्षक वाचक यांच्यात होणाऱ्या आंतरक्रियावर आधारीत असते. या तीन घटकात होणाऱ्या आंतरक्रियांची तीव्रता नेहमी सारखीच नसते. कधी वाचक व लेखक यांच्यात घनिष्टता तर कधी लेखक व समीक्षकात घनिष्टता प्रस्थापित होते. परिस्थितीनुसार त्यांच्यातील संबंधाचे स्वरूप बदलते. साहित्याचे मूल्यामापन, समर्पक गुण, पैलू, सामर्थ्य व मर्यादांची उकल करण्यामध्ये समीक्षकांची भूमिका महत्वाची ठरते. साहित्यातील भावविचार वास्तविक अर्थासह वाचकापर्यंत पाचवण्याचे कार्य समीक्षक करतो. क्लिष्ट समाजव्यवस्थेत समीक्षकाची चिकित्सक विचारदृष्टी अर्थपूर्ण ठरते. परंपरागत साध्या समाजव्यवस्थेत मात्र साहित्यिक आणि वाचक यांच्यात प्रत्यक्ष संवाद प्रस्थापित होऊ शकतो.

2. जॉर्ज हुको

या समाजशास्त्रज्ञाने सामाजिक संरचनात्मक दृष्टिकोणाद्वारे साहित्य आणि समाज यामधील परस्पर संबंधाचे विश्लेषण केले आहे. त्यांच्या मते सामाजिक संरचनेत निर्माण होणारे असंतुलन विशिष्ट प्रकारच्या सामाजिक व मानसिक तणावांना जन्म देते. त्याची अभिव्यक्ती त्या कालखंडात निर्माण होणाऱ्या साहित्यामधून व्यक्त होते. या दृष्टिकोणाद्वारे आपण साहित्याच्या माध्यमातून एखाद्या विशिष्ट कालखंडातील सामाजिक ताणतणाव व त्यामागील कारणांचे अध्ययन करू शकतो. पाश्चिमात्यीकरण, औद्योगिकीकरण, नागरीकरण इत्यादीमूळे कौटुंबिक, सामाजिक, आर्थिक जीवनात जो ताणतणाव व संघर्ष निर्माण झाला आहे. त्याचा प्रभाव आधुनिक साहित्यावर पडलेला दिसून येतो. त्यामुळे साहित्यिकास साहित्य निर्मिती करण्यास जी सामुहिक चेतना प्रवृत्त करते त्याअर्थाने व व्यापक दृष्टिकोणातून साहित्याचे आकलन होणे महत्वाचे ठरते.

3. कार्ल मार्क्स

कार्ल मार्क्स यांच्या मते, अर्थव्यवस्था ही मुलभूत संरचना तर साहित्य हे अधिसंरचनेचा भाग ठरते असे मानले आहे. परिस्थिती आणि वर्गीय जाणिवेला अनुसरून साहित्यिक आपल्या भावना प्रकट करतो. आर्थिक स्थिती, वर्ग, वर्गीय जाणिव, वर्गीय हितसंबंध, दारिद्र्य, दुरावा, वृद्ध आणि संघर्ष यासारख्या संकल्पनांना अनुसरून मार्क्सवादी साहित्यिक आपली भूमिका स्पष्ट करतात. यासंदर्भात वि.स.जॉंग म्हणतात, 'मार्क्सवाद समाज परिवर्तन घडविणारे साहित्य उत्कृष्ट

मानतो. नवे स्विकारण्याची प्रेरणा मार्क्स देतो म्हणून साहित्याने मार्क्सच्या प्रेरणेपासून दुर जाता कामा नये. मार्क्सनी भांडवलशाही समाज व्यवस्थेतील दोषांची जाणिव करुन देऊन शोषितांना मुक्त करणे हा असला तरी आर्थिक प्रश्नाबरोबरच सामाजिक, सांस्कृतिक आस्मिता, प्रतिष्ठा ही पण तितकीच महत्वाचे असल्याचे सांगितले. कारण आर्थिकदृष्ट्या संपन्नता आली तरी सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त होईलच असे नाही. भारतीय समाजात जातिव्यवस्था आहे. त्यामुळे येथे तंतोतपणे मार्क्सवाद लागम पडत नाही, असे काही साहित्याकांना वाटते. म्हणून डॉ. सदा क-हाडे सारखे साहित्यिक 'मार्क्स आणि आंबेडकरवादाच्या समन्वयानेच परिवर्तनाला गती येऊ शकते, यावर विश्वास ठेवतात. आंबेडकरी विचारातून निर्माण झालेली आस्मिता ज.वि.पवार यांना अस्वस्थ करुन टाकते. या संदर्भात ते म्हणतात की, रोज रात्री मार्क्स मला थोपटून झोपवतो तर आंबेडकर मात्र आतड्यांत लाव्हा भरुन खडबडवतो.

वरील प्रमाणे साहित्य आणि समाज यामधील अंतःसंबंधाची ग्रामीण साहित्याच्या आधारे समाजशास्त्रीय दृष्टीकोणातून उकल करण्याचा प्रयत्न केला आहे. ग्रामीण साहित्य हे प्रत्यक्ष जीवन अनुभवातून निर्माण झाले असून ते जीवननिष्ठ आहे. त्यामुळे ग्रामीणाचा समाज साहित्याशी प्रत्यक्ष घनिष्ठ संबंध आहे. या संदर्भात प्रा.डॉ. प्रकाश बोबडे म्हणतात. महात्मा ज्योतीबा फुले, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर गोपाळ गणेश आगरकर यांच्या लिखानात सामाजिक समतेच्या मूल्यांचे प्रतिबिंब पडलेले दिसते. या साहित्यिकांचे लिखाण आज देखील या मूल्यांच्या प्रसाराच्या दृष्टीने प्रेरणादायक आहे. स्वातंत्र्योत्तर काळातील ग्रामीण साहित्य चळवळींची बिजे याच लिखाणात शोधता येतील. त्या काळातील व आजही आढळून येणाऱ्या सामाजिक परिस्थितीचे प्रतिबिंब आपणास या साहित्यात दिसते. साहित्याकांनी सामाजिक जाणिवेतून आपले जीवनानुभव अभिव्यक्त केले आहेत. त्यामुळे त्यांची अभिव्यक्ती व्यक्तिकेंद्री नसून समूहकेंद्री रूप धारण करते. कष्टप्रद जीवन जगणारा, गावगाड्यात प्रत्यक्ष कृतिशील भूमिका पार पाडणारा ग्रामीण माणूस उपेक्षित राहिला? तो संवर्णाच्या दयेवर का अवलंबून आहे याचा ग्रामीण साहित्यिक शोध घेताना दिसून येतात. सांस्कृतिक कप्पे, दुभंगलेले सामाजिक जीवन, त्यांचे कौटुंबिक जीवन, जातीव्यवस्थेतील गट आणि चळवळी करणाऱ्या सक्रीय संघटना या सर्वांची वैचारिक प्रक्रीया, स्वाभाविक प्रतिक्रीया कशा होतात. या सर्वांच्याबद्दल सत्यावलोकनाची दृष्टी ग्रामीण साहित्यातून प्राप्त होऊ शकते. ग्रामीण साहित्यिक स्वतःच सामाजिक, सांस्कृतिक भेदाचे बळी ठरले आहेत. त्यामुळे त्यांनी आपल्या अपमानित जीवनाचे सुक्ष्म निरीक्षण करुन विश्लेषण केले आहे. सामाजिक संरचना, सामाजिक परंपरा, सामाजिक परिवर्तन, व्यक्ती आणि समाज याचा परस्पर संबंध, कुटुंबजीवन, समाजकार्य, समाजसेवा, समाजकल्याण, समाजव्यवस्था इत्यादी अनेक विषय सामाजिक विश्लेषणाचे अभ्यास विषय ग्रामीण साहित्याचे विषय राहिले आहेत.

निष्कर्ष :-

1. साहित्याद्वारे सामाजिक परिस्थितीचे यथार्थ आकलन करता येते. कारण साहित्यिक ज्या समाज व्यवस्थेत व संस्कृतीत रहातो. त्याचा प्रभाव त्याच्या विचारसरणीवर पडतो. त्यामुळे साहित्य आणि समाज यांचा परस्पर घनिष्ठ संबंध असतो.
2. पारंपरिक व आधुनिक साहित्यातून क्रियाशीलता व समाजभिमुखता विकसीत होत असल्याने सामाजिक परिवर्तनाला चालणा मिळत आहे.
3. समाजाला योग्य दिशा दाखविण्याचे काम साहित्य करीत असतात.
4. ज्या-ज्या वेळी देशावर संकटे आली तेव्हा-तेव्हा त्या संकटांचा सामाना करण्यासाठी साहित्यांनी महत्त्वपूर्ण भजावली आहे.

संदर्भग्रंथ :-

1. नगेन्द्र जाधव, साहित्य का समाजशास्त्र, नॅशनल पब्लिशिंग हाऊस, नयी दिल्ली, 1982
2. प्राचार्य नरहर कुरंदकर, निकाय, नागपूर, एप्रिल 1976
3. बालकृष्ण कवठेकर, वाङ्मय चर्चा आणि चिकित्सा, नवसाहित्य प्रकाशन, बेळगाव, 1978
4. रा.ग.जाधव, कला, साहित्य आणि संस्कृती, सुगंधा प्रकाशन, पुणे, 1986
5. दया पवार, माझे शब्द, कोंडवाडा, मागोवा प्रकाशन, पुणे, 1994
6. वि.स.जोग, मार्क्सवाद आणि दलित साहित्य, संबोधित प्रकाशन, मुंबई, 1985
7. अंजली सोमण, साहित्य आणि सामाजिक संदर्भ, प्रतिमा प्रकाशन, पुणे. 1982
8. रा.ग.जाधव, कला, साहित्य आणि संस्कृती, सुगंधा प्रकाशन, पुणे, 1986
9. प्रकाश बोबडे, साहित्य आणि समाज, अप्रकाशित शोधनिबंध, मराठी समाजशास्त्र परिषदेचे अधिवेशना, जळगाव दि. 7-9 नोव्हें. 1993
10. स.दा.कुन्हाडे, दलित साहित्याच्या निर्मित्ताने, अभिनव प्रकाशन, मुंबई, 1982
11. ज.वि.पवार, नाकेबंदी, मुक्तछंद प्रकाशन, मुंबई, 1976

लिंगभाव विरहित समाज रचना एक अभ्यास

पांचाळ नारायण हनमंतराव

स्वामी विवेकानंद महाविद्यालय, मुक्रामबाद, ता.मुखेड जि.नांदेड

E-mail:panchalnh@gmail.com

प्रस्तावना :-

मानवी जीवन जगत असताना निसर्गतः पुरुष व्यक्तीप्रमाणे स्त्री एक व्यक्ती आहे. परंतु व्यक्तीस असणाऱ्या निसर्गतः बुद्धी या घटकांमुळे व त्यांच्या वैचारिक जडणघडणीमुळे त्याने इतर सजीव प्राण्यांपेक्षा सर्व क्षेत्रात नेत्रदीपक प्रगती केली. परंतु ही प्रगती साध्य करत असताना शारीरिक, मानसिक व बौद्धिक दृष्टिकोनातून स्त्री ही आपल्यापेक्षा कनिष्ठ दर्जाची असून तीचे काम चूल आणि मूल सांभाळणे एवढ्यापुरते मर्यादित आहे, हा विचार समाज चाकोरीत रुजवला गेला. साहजिकच स्त्री ही पुरुषी वर्चस्व व दबावाखाली आपले जीवन व्यक्तीत करू लागली. अशा पद्धतीने सामाजिक जीवन जगण्याची पुरुषप्रधान व पुरुषसत्ताक व्यवस्था आजही प्रबळ असलेली दिसून येते. अर्थात या असमान स्त्री-पुरुष जीवन जगण्याच्या पद्धतीबाबत समाजसुधारक, विचारवंत यांनी स्त्री ही व्यक्ती आहे व ती पुरुषांप्रमाणे समान पातळीवर आपले जीवन जगू शकते ही विचारधारा समाजात विकसित करण्याचा सर्वप्रथम प्रयत्न केला.

संशोधन समस्या :-

समकालीन स्थितीमध्ये मानवाने नेत्रदीपक प्रगती करून जमीन, आकाश आणि समुद्र या तीन्ही पटलावर वर्चस्व निर्माण केले आहे. या सर्वच क्षेत्रात महिलांनीसुद्धा पुरुषांच्या खांद्याला खांदा लावून पुरुषाला लाजवेल अशी कामगिरी केली आहे. मग यामध्ये संरक्षण यंत्रणा असो, राजकारण असो, समाजकारण असो, प्रशासन, विज्ञान तंत्रज्ञान असो किंवा अंतराळ मोहीम असो या सर्वच क्षेत्रात महिला आघाडीवर आहेत. परंतु असे असतानासुद्धा पुरुषाने तीला समान दर्जा दिला नाही. त्यामुळे स्त्री व पुरुष यांच्यातील निसर्गतः काही भेदस्थळे आहे का? नसतील तर पुरुषांचा स्त्री बद्दलचा मानसिक दृष्टिकोन जाणून घेणे आणि लिंगभाव विरहित समाज रचनेला महत्त्व देण्यासाठी हा विषय निवडला आहे.

संशोधनाचे उद्दिष्टे :-

1. स्त्री-पुरुष असा भेदभाव करण्याच्या कारणांचा शोध घेणे.
2. स्त्री निसर्गतः अबला आहे का? हे जाणून घेणे.
3. लिंगभावात्त्वक भेदभाव योग्य का? हे जाणून घेणे.

संशोधन पद्धती :-

तथ्य संकलणाच्या अनेक पद्धती आहेत. परंतु मानव्यविद्या शाखेशी संबंधित असणारी ऐतिहासिक व विश्लेषणात्मक संशोधन पद्धतीचा प्रस्तुत संशोधनासाठी उपयोग करण्यात आला आहे.

लिंगभावाचा अर्थ :-

समकालीन स्थितीमध्ये 'लिंगभाव' या शब्दाला समाजशास्त्रीय अर्थाने पर्यायी 'जेंडर' हा शब्द प्रयोग केला जात आहे. या नवीन अर्थानुसार जेंडर या संज्ञेचा वापर स्त्री आणि पुरुषांची सामाजिक आणि सांस्कृतिक व्याख्या स्पष्ट करण्यासाठी करतात. मराठीत जेंडर या शब्दालाच लिंगभाव म्हणतात. स्त्री-पुरुषांचे स्थान व भूमिका यात

समाजात कसा भेद केला जातो, याचे या संज्ञेमुळे आकलन म्हणून ही संकल्पना उपयोगात आणली जाते. लिंगभाव ही संकल्पना सर्वप्रथम वापरणाऱ्या स्त्रीवाद्यांतील एक ज्येष्ठ विचारवंत अँन ओकले या म्हणतात की, "लिंगभाव ही एक सांस्कृतिक बाब आहे. त्यातून स्त्री व पुरुषांची बाईपणा व पुरुषपणात होणारी सामाजिक वर्गवारी सूचित होते. एखादी बाई किंवा पुरुष हे जैविक पुराव्याने ठरते. परंतु व्यक्तीचे बाईपण-पुरुषपण मात्र स्थळ आणि काळानुरूप बदलणाऱ्या सांस्कृतिक निकषांनी ठरते. म्हणजेच लिंग हे स्थिर असते तर लिंगभाव मात्र बदलत असतो. त्यामुळे लिंगभावाला जैविक मूळ नसते. म्हणजेच लिंग व लिंगभावातील संबंध नैसर्गिक अजिबा नाही. "

लिंगभाव :-

लिंगभाव हा सांस्कृतिक व मनुष्यनिर्मित आहे. लिंगभाव हा सामाजिक सांस्कृतिक असतो. तो भूमिका, गुण, वर्तनप्रकार व जबाबदाऱ्या इत्यादींची स्त्रियोचित आणि पुरुषोचित अशी विभागणी करतो. लॉडिया व्हॉन वेरलॉफ यांच्या मते, "इतिहासात कोणत्याच सामाजिक व्यवस्थेने नैसर्गिक लिंगभेदाचा वापर, विस्तार व विकृतीकरण आमच्या समाजव्यवस्थे इतके क्रूरपणे व सुव्यवस्थितपणे केला नसेल. या व्यवस्थेने प्रथम नैसर्गिक लिंगभेद कृत्रिमपणे सामाजिक लिंगभावात रूपांतरित केला. नरातून पुरुषत्व व मादीतून स्त्रीत्व निर्माण केले. खरे तर पुरुष नर म्हणजेच मानवजात आणि स्त्री म्हणजे केवळ मादीपण अशीच धारणा तयार केली आणि सर्वात शेवटी हे भेद निर्माण करून आता ही व्यवस्था त्यांना नैसर्गिक मानते. त्यामुळे स्त्रियांचे आर्थिक, सामाजिक शोषण करण्याची वाट मोकळी करून देते." प्रत्यक्षात नैसर्गिक आणि समाजनिर्मित असा फरक करणेच अवघड असते. जन्मानंतर लगेच कुटुंबाकडून आणि समाजाकडून मुलांवर लिंगभावात्मक संस्कार बिंबवण्यास सुरुवात होते. अनेक दक्षिण आशियाई देशांमध्ये मुलाचा जन्म झाला की आनंद साजरा केला जातो, तर मुलगी जन्मली की शोक करतात. मुलावर प्रेम, माया, कौतुक, योग्य आहार, आरोग्याची काळजी यांची खैरात असते आणि मुलीला मात्र यातील काहीच मिळत नाही. मुलाने शूरवीर, कर्तबगार असावे असे सांगितले जाते. तर मुलींनी प्रेमळ, लाजाळू, घरगुती असावे असे शिकवले जाते. मुलीच्या शरीरात असे काहीच नसते की ज्यामुळे त्या मुलांसारखे कपडे घालू शकत नाहीत की मुलांसारखे झाडावर चढणे अगर सायकल चालवणे या गोष्टी त्या करू शकत नाहीत. त्याचप्रमाणे मुले बाहुलीशी खेळू शकत नाहीत अस काही त्यांच्या शरीररचनेत नसते. मुलाने अमुकच केले पाहिजे किंवा मुलीने तमुकच केले पाहिजे यासारखे सर्व भेद समाजनिर्मित असल्याने लिंगभाव नैसर्गिक नाही. उदा.मध्यमवर्गीय कुटुंबातील मुलीचे विश्व घरापुरते किंवा शाळा, कॉलेजपुरते मर्यादित असते. तर आदिवासी मुलगी मात्र घर, शाळा-कॉलेज या व्यतिरिक्त घराबाहेरील शेतीतील कामे, गुरे राखणे, जंगलातील फळे-फुले, सरपण जमा करणे इत्यादी कामे करण्याचे तिला पूर्ण स्वातंत्र्य असते. दोन्ही मुली असून त्यांचे स्वप्न, विचार, कार्य, इच्छा- आकांक्षा यामध्ये विरोधाभास आहे. म्हणजेच लिंगभावाचे स्वरूप स्थिर नसून स्थळ-काळ, संस्कृती, कुटुंब इत्यादींवरून त्यात बदल होत असतो.

लिंगभाव न्याय :-

लिंगभाव न्यायास साधारण इंग्लिशमध्ये Gender Justice असे म्हणतात. लिंगभाव न्यायाच्या संकल्पनेशी निगडित लिंगभावावर आधारित हा लिंगभाव न्यायाची संकल्पना अभिप्रेत आहे. यासाठी न्याय व लिंगभाव या संकल्पनेचा अर्थ ज्ञात असला पाहिजे. मानवी समाजात प्रारंभापासून न्यायाच्या संकल्पनेस महत्त्व देण्यात आले आहे. न्याय हे समाजाचे एक मुख्य व अविभाज्य अंग आहे. न्यायामध्ये समाजवादी दृष्टिकोन अपेक्षित

असतो. नैसर्गिकदृष्ट्या, नैतिकदृष्ट्या, विवेकवादी भूमिकेतून योग्य असणे म्हणजे न्याय होय. न्याय या संकल्पनेसाठी इंग्रजीमध्ये 'Justice' शब्द वापरला जातो. जस्टिस हा शब्द 'जस्टिसीया' या ग्रीक शब्दापासून बनला आहे. त्याचा अर्थ जोडणे किंवा बंध निर्माण असा होतो. स्वातंत्र्य, समता, बंधुता या तीन तत्वांना जोडून न्याय प्रस्थापित करणे ही भूमिका यामध्ये येते. या ठिकाणी लिंगभाव न्याय प्रस्थापित न होण्यापाठीमागे काही प्रमुख कारणे खालील प्रमाणे सांगता येतील.

१. लैंगिक भेदाचा दृष्टिकोन

निसर्गतः स्त्री व पुरुष हे दोन्ही घटक, समाजविकास, पुनरूत्पादन यासाठी आवश्यक असले तरी सामाजिक पातळीवर स्त्री जन्माला आल्यानंतर किंवा एकंदरीत स्त्रीकडे शारीरिक, मानसिक, वैचारिक पातळीवर ती कमकुवत आहे, नाजूक आहे अशा भावनांनी तिच्याकडे पाहिले जाते. तिच्याकडे मादी, वस्तुरूपाने पाहिले जाते व त्यामुळे साहजिकच बघण्याची मानसिकता सामाजिक पातळीवर नव्हे तर लिंगभाव न्यायाच्या दृष्टीने ती दुर्बल ठरविली जाते.

२. धार्मिक व सांस्कृतिक दृष्टिकोन

विविध धर्म व समाजाच्या संस्कृतिचा अभ्यास केला तर त्यामध्ये स्त्रीत्वास कमी लेखले आहे. धार्मिक, सांस्कृतिक घटकांमध्ये स्त्रियांवर विविध प्रकारची बंधने, मर्यादा घातलेल्या आहेत. विविध संस्कृती, धर्माचा पगडा समाज जीवनावर वर्षानुवर्षे रूजला गेला असल्याने समाजातील अनिष्ट प्रथा, परंपरांना सहजा सहजी समाज विरोध करत नाही. त्यामुळे धार्मिक व सांस्कृतिक या गोष्टीमुळे लिंगभाव न्याय प्रस्थापित होताना दिसत नाही.

३. कौटुंबिक व सामाजिक दृष्टिकोन

लिंगभाव प्रत्यक्षात गर्भलिंग चाचणी करून स्त्रीगर्भ असेल तर तिची भ्रूणहत्या केली जाते. म्हणजेच कौटुंबिक पातळीवरच लिंगभाव न्याय नाकारलेला आपणास दिसतो. याच पद्धतीने समाज जीवनात ती जीवंत असताना तिच्याकडे एक व्यक्ती म्हणून पुरुषाप्रमाणे आहे असे न समजता तिला सामाजिक पातळीवर कमी लेखले जाते. पुरुषत्वाचे वर्चस्व रहावे यादृष्टीने तिच्याकडे पुरुष कौटुंबिक पातळीपासून ते सामाजिक पातळीपर्यंत तिला गौण ठरवतो. यामुळे लिंगभव न्याय कुटुंबापासून जोपासला जात नाही. मुलगा-मुलगी भेदभाव मग तो खाण्यापिण्याच्या बाबीत, हौसमजेच्या बाबीत, शिक्षणाच्या बाबीत, आवडीनिवडीच्या बाबीत, कुटुंबापासून समाजापर्यंत रूजला गेला असल्याने लिंगभाव न्याय प्रस्थापित होताना दिसत नाही.

४. राजकीय व आर्थिक दृष्टिकोन

स्त्रीचे पहिले कर्तव्य म्हणजे 'चूल व मूल' ही संकल्पना जोपर्यंत पुरुषांच्या किंबहुना समाजाच्या व व्यवहाराच्या विचारातून पूर्ण जात नाही तोपर्यंत लिंगभाव न्याय प्रस्थापित होणे अशक्य आहे. राजकीय पातळीवरसुद्धा स्त्रीने सत्ता हस्तगत केली किंवा आर्थिक पातळीवर ती जर कमवती स्त्री असली तरी तिच्याकडे वस्तूतः स्त्री म्हणून बघण्याचा दृष्टिकोन समाजमानसामध्ये रूजला असल्याने तिच्या कामाच्या ठिकाणी मानसिक, शारीरिक आणि लैंगिक शोषण होत असते. वेतनाच्या बाबतीत काम करूनही तिची आर्थिक लुबाडणूक करणे अशा अनेक गोष्टीमुळे लिंगभाव न्यायाची संकल्पना रूजणे किती आवश्यक आहे हे लक्षात येते. ज्याची आज तीव्र गरज आहे.

५. न्यायिक दृष्टिकोन

समाजाची मांडणी ही मुळातच पुरुषप्रधान आहे. येथील पोलीस, जेल, न्यायदान या सर्व व्यवस्था पुरुषप्रधान आहेत. स्वाभाविकच सगळी पुरुषी सत्ता असल्याने स्त्रीवर कोणत्याही प्रकारचा अन्याय झाल्यास त्याचे निराकरण करतानाही तिला विचार करावा लागतो. लैंगिक अत्याचार, बलात्कार, ॲसिड हल्ला, कौटुंबिक हिंसाचार अशा अनेक अत्याचाराबाबत ज्यावेळी न्याय मागण्यासाठी स्त्रिया न्याययंत्रणेकडे याचना करतात त्यावेळी तिथल्या एकूणच पुरुषी मानसिकतेपुढे स्त्रिया घाबरतात. न्याय मिळण्याच्या प्रतिक्रियेमध्ये तिथे होणाऱ्या मानसिक, शारीरिक छळाबाबत कुठेच दाद मागता येत नाही. त्यामुळे लिंगभाव न्यायाच्या बाबतीत स्त्रियांना न्याय मिळणाऱ्या यंत्रणेचाच तीव्रतेने विचार करावा लागतो.

साधारणपणे लिंगभाव न्यायास अनुसरून स्त्री-पुरुष समानतेविषयक कायदे अस्तित्वात आले. परंतु प्रत्यक्षात कायदे राबविणाऱ्या यंत्रणेमध्येच जर स्त्री-पुरुष असमानतादर्शक मानसिकता रूजली असल्याने लिंगभाव न्याय प्रत्यक्षात प्रस्थापित होणे अवघड आहे. यासाठी काही गोष्टी शासकीय पातळीवर व आंतरराष्ट्रीय पातळीवर राबविल्या गेल्या. स्त्री विकास, स्त्री संरक्षण अशा विविध दृष्टिकोनातून योजना राबविल्या जात आहेत. मात्र आणखीन काही गोष्टीचा विचार होणे आवश्यक आहे.

लिंगभाव विरहित समाज रचनेचे गुण किंवा महत्त्व

समाजात स्त्री-पुरुष यांच्यात असलेल्या न्यून गंडाच्या भावना कमी होण्यासाठी लिंगभाव विरहित समाज रचनेचे महत्त्व किंवा गुणांचा आढावा पुढीलप्रमाणे घेण्यात आला आहे.

१. कौटुंबिक मानसिकता बदलणे आवश्यक

लिंगभाव न्याय प्रस्थापित होण्याच्या दृष्टिकोनातून कौटुंबिक पातळीवर मुलगा व मुलगी हा भेदभाव पालकांनी करता कामा नये. पालकांनी या दृष्टीने स्वतःची मानसिकता परिपक्व करून समतोल राखणे महत्त्वाचे आहे. मुला-मुलींची लिंगभेदास अनुसरून भेदभाव करण्याची मानसिकता नाकारली गेली पाहिजे. मुलाप्रमाणेच मुलीला आरोग्य, शिक्षण, संधी, आवडीनिवडी, छंद या सर्व गोष्टी करण्याची समान भूमिका जर कुटुंबाने घेतली तर कुटुंबातील तरुण प्रौढ होणाऱ्या पुरुषाची मानसिकता स्त्री-पुरुष समानतेबाबत सकारात्मक होईल व समाजात तशी ती रूजली जाईल.

२. शिक्षणव्यवस्थेत लिंगभाव समानता आवश्यक

शिक्षण हे समाज परिवर्तन व समाजविकासाचे प्रभावी माध्यम आहे. परंतु शैक्षणिक वातावरणात स्त्री-पुरुष समानतेची तत्त्वे मुळापासून रूजणे आवश्यक आहे. स्त्री शिक्षणाबाबत खुप योजना राबविल्या जातात. परंतु त्याची प्रत्यक्षात अंमलबजावणी करताना येणाऱ्या अडचणी लक्षात घेऊन त्याबाबतीत निराकरण करणे गरजेचे आहे. आर्थिक असमानता, सामाजिक असमानता यामुळे मुलींच्या बाबतीत शाळांकडे बघण्याचा दृष्टिकोन वेगळा आहे. त्यामुळे शाळेतील मुलींच्या शिक्षणाबाबत असणारे वातावरण, शिक्षकांची भूमिका महत्त्वाची ठरते. याचबरोबर शैक्षणिक अभ्यासक्रमात लिंगभावाचे शिक्षण, लैंगिक शिक्षण यांचा अंतर्भाव झाला तरी त्याबाबतीतील निरपेक्ष व मोकळ्यापणाने शिक्षण देण्याची पद्धती या सर्व गोष्टी लिंगभाव न्याय रूजण्यासाठी व खऱ्या अर्थाने तो समजण्यासाठी शिक्षणव्यवस्थेत लिंगभाव समानता आणणे आवश्यक आहे.

३. कायद्याची जाणीव जागृती

हजारो वर्षांपासून स्त्रियांवर अन्याय-अत्याचारांचे प्रमाण सातत्याने चालू आहे. त्यांच्यावरील अन्याय-अत्याचार कमी करण्यासाठी परिस्थितीनुसार विविध कायद्याची निर्मितीसुद्धा करण्यात आली आहे. परंतु या कायद्याची समाजाला कोणत्याही प्रकारची माहिती नाही. त्यामुळे स्त्री-पुरुष समानता, स्वीसंरक्षाबाबत, स्वीविकासाबाबत असणाऱ्या विविध कायद्यांचे ज्ञान समाजाला होण्यासाठी कायद्यांची जाणीव जागृती होणे महत्त्वाचे आहे. लिंगभाव न्याय ही संकल्पना समाजात प्रथम रूजली तर कायद्याची समानता प्रस्थापित होईल.

४. अनिष्ट प्रथा-परंपरांना आळा

एकूणच स्त्रिया मासिक पाळी, वास्तुकाळ, प्रजनन, शारीरिक जडणघडण, क्षमता इत्यादीबाब चुकीच्या प्रथा-परंपरांना बळी पडतात. या गोष्टीबाबत मुली मोकळ्यापणाने बोलायला संकोचतात, लाजतात त्यामुळे ही स्त्रियांच्या बाबतीत असणारी नैसर्गिक प्रक्रियेचा भाग आहे व त्याबाबत उलट मुलीला योग्य पद्धतीने शास्त्रीय दृष्टीने माहिती देणे आवश्यक आहे. या अर्थाने ती स्वतःला कमकुवत समजू शकणार नाही तिची मानसिक जडणघडण ही खंबीरपणे होईल व ती सक्षमपणे उभी राहील. यास अनुसरून असणाऱ्या चुकीच्या प्रथा, परंपरांना ती बदलेल विरोध करेल किंबहुना याबाबत स्त्रीप्रमाणे पुरुषांचेही प्रबोधन, शिक्षण दिले गेले तर लिंगभाव न्याय प्रस्थापित होण्यास वेळ लागणार नाही.

निष्कर्ष :-

1. स्त्री-पुरुष असा निसर्गतः भेद आहे हे मान्य आहे. परंतु स्त्री ही लाजरी, बूजरी नाजूक, कमकुवत, विनयशील, मर्यादाशील असते असा आरोप पुरुषप्रधान समाजव्यवस्थेने स्त्रीवर करणे योग्य नाही.
2. स्त्रीत्व म्हणून जे गुणधर्म मानले जातात त्यांचा शारीरिक वा जैविक गुणांशी काही संबंध नसून ती सक्षम व्यक्ती आहे.
3. स्त्रियांच्या स्त्रीत्वावर अन्यायकारक बोट ठेवत पुरुषप्रधान समाजाने आपली राजकीय बाजू प्रबळ केली आणि ज्ञानाच्या विविध क्षेत्रातून लैंगिक राजकारण करून स्त्रियांवर नियंत्रण ठेवले जात आहे.
4. लिंगांचा संबंध हा स्त्री-पुरुषांशी निसर्गत आहे, परंतु लिंगभावाच्या आधारे स्त्री-पुरुष यांच्यात फरक करणे अनैसर्गिक आहे.
५. २१ व्या शतकात स्त्रिये शिक्षण, समाजकारण, राजकारण, पर्यावरण, अवकाश, संरक्षण इत्यादी क्षेत्रात नेत्रदीपक प्रगती केली आहे. त्यामुळे त्यांच्यात स्त्री-पुरुष असा भेद करणे योग्य दिसत नाही.

संदर्भग्रंथ :-

1. www.wikipedya.org
2. Anm Oakley, Sex, Gender and Society, England: Gower Publishing Company
3. Von Werlhof Claudia, The Proletarian is Daad: Long live the Housewife, in Maria Mies et al, Women: The last colony. New Delhi: Kail for women
4. डी.एन.गंजेगवार, स्त्री-पुरुष अभ्यासातील आव्हाने आणि उपाय, अपूर्वा पब्लिकेशन हाऊस, औरंगाबाद
5. बी.पो.सुरजे. लिंगभाव, शाळा आणि समाज, प्रशांत पब्लिकेशन, जळगांव
6. अशोक जोशी, आधुनिक समीक्षा सिद्धांत, मौज प्रकाशन गृह, मुंबई, मे २००७

7. रचना माने, स्त्रीवाद, अक्षर दालन, कोल्हापूर, डिसेंबर २०१३
8. Simone De Beauvoir, The Second Sex. London pan Book Ltd. १९८८, p. २९५
9. शोभा पाटील, स्त्रीवादी विचार आणि समीक्षेचा मागोवा, स्नेहवर्धन प्रकाशन, पुणे, मार्च २००७, पृ.क्र. ३०
10. वंदना महाजन, मराठी कादंबरीतील स्त्रीवाद, स्नेहवर्धन प्रकाशन, पुणे
11. सुमती लांडे, स्त्रीवाद, शब्दालय प्रकाशन, श्रीरामपूर, डिसेंबर २००७

दर्जेदार शिक्षण आणि वास्तव परिस्थिती

स.प्रा. भारतभूषण वामनराव बाळबुधे

सैनिक विज्ञान विभाग, स्वामी विवेकानंद महाविद्यालय, मुक्रामबाद, ता.मुखेड जि.नांदेड

E-mail:bharatbal20@gmail.com

प्रस्तावना :-

भारतामध्ये गेल्या काही वर्षांपासून सर्वच क्षेत्रांमध्ये खाजगीकरण झपाट्याने चालू आहे. यामध्ये शिक्षण क्षेत्रसुद्धा अपवाद नाही. एकीकडे 6 ते 14 वर्षांखालील मूलाला दर्जेदार शिक्षण देण्याची घोषणा करावयाची तर दुसरीकडे शिक्षणाचे झपाट्याने खाजगीकरण केले जात आहे. तसेच विद्यार्थ्यांची शाळेतील अल्प पट नोंदणी हे उदाहरण देऊन महाराष्ट्र शासनाने हजारो जि.प.शाळा बंद केल्या आहेत. तर खाजगी शिक्षण संस्थेचे पीक आले असून त्यामध्ये विद्यार्थ्यांना लाको रूपये फी भरून शिक्षण घ्यावे लागत आहे. शासन एकीकडे 6 ते 14 वर्षांपर्यंत मोफत व शक्तीच्या शिक्षणाची हमी देते तर दुसरीकडे जि.प.शाळा बंद केल्या जातात. अशी विचित्र परिस्थिती निर्माण झाल्यामुळे शिक्षण व्यवस्थेसमोर अनेक समस्या निर्माण झाल्या आहेत.

जागतिक स्तरावर प्राथमिक आणि पूर्व प्राथमिक स्तरावर शिक्षणाची सुरुवात कोणत्या वयापासून होते, याची दखल भारताने खरे तर शिक्षण हक्क अधिकार कायद्यात घेणे आवश्यक होते; परंतु कायदा तयार करताना यात वयाबरोबरच अनेक त्रुटी ठेवण्यात आल्या आहेत. सहा ते चौदा म्हणजेच पहिली ते आठवीपर्यंत शिक्षण दिले की, सरकारची जबाबदारी संपते, असा त्याचा थेट अर्थ होतो. यामुळेच गोंधळ निर्माण झाला आहे. अर्थाचा अनर्थ करून शिक्षणासाठीच्या निधीत केंद्र आणि त्यांच्या पावलावर पाऊल टाकणा-या राज्य सरकारनेही कोटयवधी रुपयांच्या निधीत कपात केली आहे. यामुळे यंदाच्या आर्थिक वर्षात शिक्षण विभागाला साधारणपणे एकूण उत्पन्नाच्या केवळ दोन अडीच टक्क्यांच्या दरम्यानच निधी मिळण्याची शक्यता असल्याने शैक्षणिक विकास आणि योजनांचे वाटोळे होणार आहे.

जागतिक स्तरावर प्राथमिक शिक्षणाला खूप महत्त्व दिले जाते, याचा गंधही आपल्याला नाही. फिनलँड, चीन, इंग्लंड, जर्मनी, सिंगापूर इत्यादी देशातील शिक्षण व्यवस्था एका वेगळ्या उंचीवर आहे. पूर्व प्राथमिक आणि प्राथमिकच्या शिक्षणासाठी निकष, त्यांच्याकडून पुरवण्यात येणा-या भौतिक, शैक्षणिक सुविधा आणि त्यांची संपन्नता जरी तपासून पाहिली तरी आपण कोसो मैल दूर असल्याचे दिसून येईल. युरोपीय देशात प्राथमिक शिक्षण मोफत आणि सक्तीचे आहे. या पार्श्वभूमीवर, सरकारकडून शिक्षण हक्क कायद्यात बदल करण्यासाठी जे प्रयत्न होणार आहेत, त्यासाठी युरोपीय देशातील बदलांकडे लक्ष देण्याची गरज आहे.

संशोधन समस्या :-

संशोधन समस्या ही संशोधनाची प्रथम पायरी आहे. त्यामुळे कोणतेही संशोधन कार्य हाती घेत असताना संशोधकाला संशोधनाची समस्या निश्चित करावी लागते. त्यामुळे प्रस्तुत संशोधनात समाजाच्या जडणघडणीत दर्जेदार शिक्षण ही संशोधनाची समस्या निवडली आहे.

संशोधनाची उद्दिष्टे :-

1. भारतीय शिक्षण व्यवस्थेचे स्वरूप जाणून घेणे.
2. दर्जेदार शिक्षणाची दिशा व दशा जाणून घेणे.
3. शिक्षण व्यवस्थेवर होणाऱ्या खर्चाचे स्वरूप जाणून घेणे.

संशोधन पद्धती :-

तथ्य संकलणाच्या अनेक पद्धती आहेत. परंतु मानव्यविद्या शाखेशी संबंधित असणारी ऐतिहासिक व विश्लेषणात्मक संशोधन पद्धतीचा प्रस्तुत संशोधनासाठी उपयोग करण्यात आला आहे.

पाश्चिमात्य व भारतीय शिक्षणातील तफावत :-

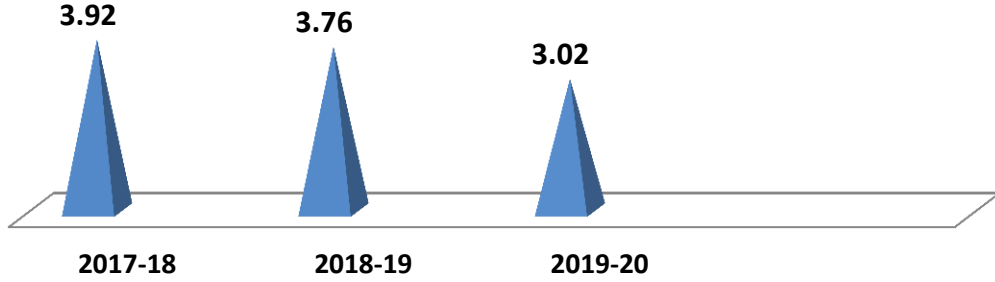
प्राथमिक शिक्षणासाठी युरोपीय देशांनी 70 व्या दशकात एक नवी रचना स्वीकारली. या रचनेनुसार, युरोपीय देशांत शिक्षणाची सुरुवात वयाच्या तिस-या वर्षापासून होते. तिस-या वर्षी फक्त भाषिक कौशल्यावर भर दिला जातो. तीन ते पाच वर्षांचा वयोगट हा पूर्व प्राथमिक स्तर म्हणून ओळखला जातो आणि प्राथमिक शिक्षण हे सहा ते अकरा या वर्षापासून सुरू होते तर पूर्व प्राथमिकचे शिक्षण हे १२ ते १६ या वर्षापर्यंत सुरू राहते आणि माध्यमिक शिक्षण हे १७ ते १९ या तीन वर्षापर्यंत सुरू राहते. पुढे २० ते २१ ही दोन वर्षे उच्च माध्यमिक आणि २२ ते २३ विद्यापीठीय व २४ ते २५ वर्षात संशोधन, प्रयोग, चिकित्सा करण्यासाठी विद्यार्थ्यांना शोध, संशोधनाचे शिक्षण दिले जाते. यात विशेष म्हणजे, विद्यापीठीय शिक्षण पूर्ण होईपर्यंत २० विद्यार्थ्यांमागे प्रत्येकी एक शिक्षक हे धोरण असते आणि या धोरणाचे काटेकोरपणे पालनही केले जाते. अशा परिस्थितीत आपल्याकडील सुरू असलेल्या शाळांच्या नावाखाली एका-एका वर्गात ६० ते १०० मुले कोंबून या शाळांनी कोंडवाडे बनवले आहेत. यामुळे अशा या कोंडवाड्यातून कोणती गुणवत्ता आणि विकास करत आहेत, याचा विचार करण्याची गरज आहे.

'कॅंग'नेही गुणवत्तेवर अनेक प्रश्न उपस्थित करून ३० हजार शिक्षकांच्या जागा रिक्त असल्याचे स्पष्ट केलेले आहे आणि राज्यातील हजारोंच्या संख्येने असलेल्या खासगी शाळांमध्ये एकही मान्यताप्राप्त आणि गुणवत्ताधारक शिक्षक नसताना त्याची थोडीही दखल शिक्षण विभाग घेत नाही. ज्या इंग्रजी शाळा पालकांकडून हजारो रुपयांचे शुल्क आकारतात, त्यातील शिक्षक हे कोणत्या दर्जाचे आहेत, यासाठी धोरण तर दूरच; पण साधी माहितीही घेतली जात नाही. अशा अवस्थेत केवळ शिक्षण हक्क अधिकार कायद्यात बदल करताना जर पूर्व प्राथमिक शिक्षणातील मुलांचीही सामाजिक जबाबदारी सरकारला घ्यावी लागेल. केवळ दर्जात सुधारणा करण्यासाठी इस्त्रायलसारख्या देशाशी करार करण्याऐवजी फिनलँड, सिंगापूर, जर्मनीमध्ये सुरू असलेल्या शिक्षण हक्काचा आणि मोफत शिक्षणाच्या रचनेचा विचार झाला तरच समाजातील प्रत्येक घटकाला दर्जेदार शिक्षण मिळण्याचा मार्ग मोकळा होईल. अन्यथा गुणवत्तेच्या नावाखाली केवळ सरकारी आणि अनुदानित शिक्षण बंद करण्याचा उद्योग तेजीत येईल आणि यातून भांडवदारी व्यवस्थेचेच चांगभले होईल.

शिक्षणावरील खर्च :-

2017 ते 2020 दरम्यान शिक्षणावरील खर्चाची तरतूद		
अ. क्र.	वर्ष	शिक्षणावरील खर्चाची तरतूद
	2017-18	3.92
	2018-19	3.76
	2019-20	3.02

2017 ते 2020 दरम्यान शिक्षणावरील खर्चाचे प्रमाण दर्शविणारा स्तंभालेख



वरील स्तंभालेखाचा अभ्यास केल्यानंतर असे दिसून येते की, 2017 नंतर प्रत्येक वर्षी केंद्र शासनाने शैक्षणिक खर्चात कपात केलेली दिसून येते. या संदर्भात शिक्षणतज्ज्ञ हेरंब कुलकर्णी म्हणाले की, "सरकारने सकल उत्पन्नाच्या किमान 6 टक्के जीडीपीच्या शिक्षणावर खर्च करण्याची घोषणा केली. मात्र, प्रत्यक्षात सरकारने बजेटमध्ये शिक्षणावरील खर्चात 6 टक्के कपात केली. नवीन शैक्षणिक धोरणात ज्या घोषणा केल्या त्यासाठी काहीच तरतूद केली नाही. यावरून शिक्षण धोरणाविषयी सरकार गंभीर नाही असं दिसतंय. 15000 आदर्श शाळा सुरू करण्याचे धोरण चुकीचे आहे. शिक्षणाची अशी केवळ बेटं उभारून शिक्षण सुधारत नाही, उलट संपूर्ण व्यवस्था सुधारण्यासाठी प्रयत्न करण्याची गरज आहे. शिक्षणतज्ज्ञ भाऊसाहेब चासकर यांच्या मते, "शिक्षणासारख्या अत्यंत महत्त्वाच्या विभागासाठीची तरतूद वर्षागणिक कमी कमी केली जात आहे. यातून सरकारी शिक्षण व्यवस्थेसमोर अनेक अडथळे उभे राहिले आहेत. सरकारी शाळा अनुदानित शाळा महाविद्यालये आर्थिक अडचणीत असताना त्यांना आर्थिक बळ देण्यासाठी प्रयत्न होत नाहीत. भरीव आर्थिक तरतूद केल्याशिवाय गरीब घरातली मुलं कशी शिकणार? शिक्षणाकडे दुर्लक्ष करून 'बेटी बचाव बेटी पढाव' ही घोषणा कृतीत कशी येईल? सरकारी शाळा तसेच अनुदानित शाळा महाविद्यालये यांच्यासाठी ही धोक्याची घंटा आहे. म्हणूनच ही गंभीर आणि त्याहून जास्त काळजीची गरज आहे." मानव विकास अहवाल दरवर्षी प्रसिद्ध होतो. मार्च २०१७ मध्ये प्रसिद्ध झालेल्या अहवालात भारताचा क्रमांक १८८ देशांत १३१ वा होता. त्याच्या आधीच्या वर्षी तो १३० वा होता. श्रीलंका, मालदीव यांसारखे देशही भारताच्या पुढे आहेत. मानव विकासाचा निर्देशांक आणि विषमता यांचा एकत्रित विचार केल्यास भारताची घसरण होत असल्याचे दिसते.

महाराष्ट्र हे देशात प्रगत मानले जाते. महात्मा फुले, गोपाळकृष्ण गोखले याना सक्तीच्या मोफत शिक्षणाचा उच्चार महाराष्ट्रातून केला असला आणि शाहू महाराजांनी फुले यांचे विचार अमलात आणले असले, तरी आज शिक्षणाच्या बाबतीत महाराष्ट्र मागे पडतो आहे. प्राथमिक शिक्षणाचा प्रसार हा आर्थिक व सामाजिक विकासाचा पाया आहे, हे सर्वमान्य तत्त्व आहे व या क्षेत्रात महाराष्ट्र कोठे आहे हे पाहणे उपयुक्त ठरेल! सन २०१३-१४ मध्ये केंद्र सरकारने सर्व राज्यांचा शिक्षण विकास निदर्शक जाहीर केला होता. त्यात महाराष्ट्राचा क्रमांक 13 वा होता. गुजरात, पंजाब, केरळ, कर्नाटक ही राज्ये आणि काही केंद्रशासित प्रदेश महाराष्ट्राच्या पुढे होती. या पार्श्वभूमीवर राज्याला शिक्षणाच्या बाबतीत पुढे नेण्यासाठी, भरीव गुंतवणूक करण्यासाठी अर्थसंकल्पात तरतूद होण्याची आवश्यकता होती. मात्र, तसे होताना दिसत नाही. २०१५-१६ मध्ये खेळ, शिक्षण यांसाठी ४०,०६३ कोटी रुपयांची तरतूद करण्यात आली होती. यंदा म्हणजे २०१८-१९ मध्ये राज्य सरकारने ही तरतूद ५१,५६५ कोटी रुपये इतकी केली आहे. २०१५-१६ पेक्षा ती २८ टक्क्यांनी,

तर आधीच्या म्हणजे २०१७-१८ पेक्षा ती केवळ ५.५ टक्क्यांनी अधिक आहे. महागाईचा वाढता दर लक्षात घेतल्यास वाढ झालेलीच नाही, असे म्हणावे लागेल. राज्याच्या एकूण उत्पन्नापैकी शिक्षणावरील खर्च २०१५-१६ मध्ये १.८५ टक्के होता, तर २०१८-१९ मध्ये तो १.८४ टक्के झाला. याचाच अर्थ सरकार शिक्षणावरील खर्च कमी करित आहे. अपुऱ्या शैक्षणिक सुविधा, अनुदान न देणे, शाळा बंद करणे, खासगी शिक्षक-शिक्षकेतरांची भरती न करणे, क्रीडा-चित्रकला शिक्षकांची पदे न भरणे या सर्व समस्या निर्माण झाल्या आहेत. त्यामुळेच अन्य राज्यांच्या तुलनेत महाराष्ट्राची शैक्षणिक कामगिरी खालावत चालली आहे.

राष्ट्रीय उत्पन्नाच्या प्रमाणात होणारा खर्च, दरडोई खर्च आणि शिक्षणाच्या विविध पातळींवर होणारा खर्च प्राथमिक, माध्यमिक, उच्चमाध्यमिक, महाविद्यालयीन तसेच व्यावसायिक उच्च शिक्षण. स्वातंत्र्य मिळून सत्तर वर्षे झाली तरीही अन्न, वस्त्र, निवारा, बिजली, सडक आणि पाणी हेच प्रश्न जर चघळले जात असतील तर शिक्षण आणि आरोग्य ह्या मुद्द्यांना प्राधान्य कसे मिळेल? शिक्षणावर केलेला खर्च जरी वाढत असेल तरी राष्ट्रीय उत्पन्नाच्या प्रमाणात बघितले तर विकसित देशांपेक्षा हा खर्च कमीच दिसेल. तसेच दरडोई खर्च बघितला तर तोसुद्धा कमी दिसेल. तरतूद जरी कमी असली तरी भारतात डोक्याचे इतकी आहेत आणि ती ज्या वेगाने वाढत आहेत त्याचा विचार करता दरडोई खर्च हा फारच कमी दिसतो. वस्तुस्थिती अशी आहे की प्राथमिक शिक्षणावर होणारा दरडोई खर्च आणि उच्च शिक्षणावर होणारा दरडोई खर्च ह्यात खूप तफावत आहे. प्राथमिक शिक्षणावर गरजेपेक्षा कमी खर्च केला जातो. याशिवाय जो निधी शिक्षणासाठी म्हणून खर्च केला म्हणून सांगितला जातो तो प्रत्यक्ष शिकणे आणि शिकवणे या कार्यांवर खर्च केला जात नाही. केंद्रसरकार मधून तांदूळ येणार आणि राज्यसरकार मीठ, हळद आणि मसाले यांचा खर्च करून मुलांना शाळेत जी खिचडी दिली जाते तो खर्च शिक्षणावर केला जातो असे म्हणणे योग्य वाटत नाही.

सारांश :-

एकंदरीत भारतामध्ये शिक्षणाचे झालेल्या बाजारीकरणामुळे शिक्षण क्षेत्र हे केवळ नफा बनविण्याचे साधन बनले आहे. कारण दर्जेदार शिक्षणाच्या नावाखाली वेगडी इंग्रजी माध्यमांच्या इमारती आणि खाजगी शिकवणी यांचे जोरदार पीक आले आहे. त्यामुळे शासन वर्षे निहाय शिक्षणावरील खर्चाची तरतूद कमी कमी करत आहे. दर्जेदार शिक्षणासाठी अर्थसंकल्पात निश्चित तरतूद व ध्येय-धोरण निश्चित केली नाहीत. त्यामुळे मोफत, सक्तीचे आणि दर्जेदार शिक्षण हे केवळ सामान्य नागरिकांच्या डोळ्यात धूळ फेकण्याचे प्रकार चालले आहेत.

निष्कर्ष :-

1. भारतीय शिक्षण व्यवस्थेचे स्वरूप पारंपरिक ते जागतिकीकरणाच्या दृष्टिकोनातून मागासलेले दिसून येते.
2. समकालीन स्थितीचा विचार करता दर्जेदार शिक्षणाच्या ध्येय-धोरणाची दिशाच चुकीची आहे.
3. इतर देशाचा शिक्षणावर होणाऱ्या खर्चाच्या प्रमाणात भारताचा शिक्षणावरील खर्च तुलनेने फार कमी आहे. तसेच शेजारील देशांपेक्षाही भारताचे स्थान खालचे आहे.

संदर्भग्रंथ:-

1. प्रभाकर वीरकर, प्रतिमा वीरकर (2007), जदयोन्मुख भारतीय समाजाचे शिक्षण व शिक्षक पुणे विद्यार्थी गृह प्रकाशन, पुणे
2. दत्तात्रेय तापकीर, निर्मला तापकीर (2002), शिक्षणाचे तांत्रिक व समाजशास्त्रीय अधिष्ठान, नित्य नूतन प्रकाशन, पुणे
3. विश्वंबर कुलकर्णी, विनायक रामचंद्र मिताडे (2007). भारतीय आधुनिक शिक्षण समस्या आणि उपाय, श्री विद्या प्रकाशन, पुणे

4. सुरेश करंदीकर, मीना मंगरूळकर, (2002). उदयोन्मुख भारतीय समाजातील शिक्षण, फडके प्रकाशन, कोल्हापूर
5. अरविंद दुनाखे (2007). उदयोन्मुख भारतातील समाज, शिक्षण व शिक्षक, नित्य नूतन प्रकाशन, पुणे
6. शांता मालेगावकर (2007). आजचे शिक्षण: एक वास्तव, विद्यार्थी साहाय्यक समिती, पुणे
7. बी. बी. पंडित, नलिनी पाटील, लता मोरे (2005), शिक्षक शिक्षण पिंपाळापुरे अँड के पब्लिशर्स, नागपूर

नैसर्गिक व मानवी संसाधने एक अभ्यास

प्रा.डॉ. भरत माधवराव मुस्कावाड

इतिहास विभागप्रमुख, स्वामी विवेकानंद महाविद्यालय, मुक्रामबाद, ता. मुखेड जि. नांदेड

E-mail: bharat12muskawad@gmail.com

प्रस्तावना :-

प्रस्तुत विषयामध्ये नैसर्गिक व मानवी संसाधने यांचा तुलनात्मक अभ्यास करण्यात आला आहे. निसर्गातील उपयुक्त असलेल्या घटकांना किंवा पदार्थांना नैसर्गिक संसाधने म्हणतात. नैसर्गिक संसाधनांमध्ये जमीन, पाणी, हवा, सूर्यप्रकाश इत्यादींचा समावेश होतो. तसेच स्थानिक पातळीवर उपलब्ध असलेली खनिजे, खनिज तेल, वनस्पती यांचाही समावेश नैसर्गिक संसाधनामध्ये होतो. जीवसृष्टीच्या अस्तित्वासाठी या वरील नैसर्गिक संसाधनांची महत्त्वाची गरज असते. तर मानव संसाधन ही एक संस्था किंवा कर्मचारी वर्ग असून त्या कंपनीच्या एकूण कर्मचाऱ्यांचा किंवा कर्मचाऱ्यांचा एका भागातील एकल कर्मचारी वर्ग म्हणजे मानवी संसाधन असे म्हणता येईल.

संशोधन समस्या :-

मानवी संसाधनाने जमीन, आकाश आणि समुद्र या तीन्ही पटलावर वर्चस्व निर्माण केले आहे. या अतिरेकी विकासासाठी नैसर्गिक संसाधनाचा मोठ्या प्रमाणात गैरवार झाला. परिणामी वारंवार पडणारे दुष्काळ, अतिवृष्टी, अवर्षणगस्त, भूकंप, त्सुनामी, चक्रीवादळे, ज्वालामुखी, तापमानात वाढ इत्यादी समस्या निर्माण होऊन निसर्गाचे संतुलन बिगडले आहे. त्यामुळेच **नैसर्गिक व मानवी संसाधने एक अभ्यास** हा विषय निवडण्यात आला.

संशोधनाचे उद्दिष्टे :- 1. नैसर्गिक व मानवी संसाधने यातील फरक समजून घेणे. 2. नैसर्गिक व मानवी संसाधनाचे महत्व व वास्तव परिस्थिती जाणून घेणे.

तथ्य संकलन व संशोधन पद्धती :-

तथ्य संकलन म्हणजे एक प्रकारचा दस्तऐवज असते. ज्यात प्रकाशित व अप्राशित लिखानाच्या सर्वेक्षणाबद्दल माहिती दिलेली असते. ग्रंथालयामध्ये माहितीच्या स्वरूपातील ग्रंथ, मासिके, वर्तमानपत्र, शोध निबंध या दुय्यम स्रोताद्वारे माहिती संकलीत केली आहे. प्रस्तुत संशोधनासाठी ऐतिहासिक व विश्लेषणात्मक संशोधन पद्धतीचा उपयोग करण्यात आला आहे.

नैसर्गिक व मानवी संसाधने म्हणजे काय? :-

मानवाला निसर्गातील उपयुक्त असलेल्या घटकांना किंवा पदार्थांना नैसर्गिक संसाधने म्हणतात. नैसर्गिक संसाधनांमध्ये जमीन, पाणी, हवा, सूर्यप्रकाश इत्यादींचा समावेश होतो. तसेच स्थानिक पातळीवर उपलब्ध असलेली खनिजे, खनिज तेल, वनस्पती यांचाही त्यामध्ये होतो. जीवसृष्टीच्या अस्तित्वासाठी या **संसाधनांची** गरज असते. मानवी संसाधने ही कंपनीच्या एकूण कार्यशैलीतील एक व्यक्ती असते, प्रत्येक व्यक्तीने आपले कौशल्य हे संस्थेला यशस्वी होण्यासाठी कार्य केले जाते. संस्था सुधारण्याच्या प्रयत्नात कोणतीही कामगार, ज्ञान किंवा भरपाईसाठी लागणाऱ्या वेळेवर व्यापार करण्यास तयार असलेली कोणतीही व्यक्ती मानवी संसाधन आहे. ते अर्धवेळ, पूर्णवेळ, स्वतंत्ररित्या काम करणारे किंवा कंत्राटी कर्मचारी असू शकतात. एकंदरीत मानवी संसाधने हे असे क्षेत्र आहे जे लोकांचे व्यवस्थापन आणि प्रशिक्षण देण्याचे काम करते.

नैसर्गिक संसाधने :-

मानवाला निसर्गातील उपयुक्त असलेल्या घटकांना किंवा पदार्थांना नैसर्गिक संसाधने म्हणतात. नैसर्गिक संसाधनांमध्ये जमीन, पाणी, हवा, सूर्यप्रकाश इत्यादींचा समावेश होतो. तसेच स्थानिक पातळीवर उपलब्ध असलेली खनिजे, खनिज तेल, वनस्पती यांचाही समावेश यामध्ये होतो. जीवसृष्टीच्या अस्तित्वासाठी या संसाधनांची गरज असते. नैसर्गिक संसाधनांचे वर्गीकरणच्या वेगवेगळ्या पद्धती आहेत. यानुसार नैसर्गिक संसाधनाचे तीन भागात वर्गीकरण केले जाते यामध्ये (१) संसाधनांचे स्रोत, (२) संसाधनांच्या विकासाचे टप्पे व (३) नूतनीक्षम या तिन्ही संसाधनांचे विश्लेषण पुढील प्रमाणे केले आहे.

अ. नैसर्गिक संसाधनांचे स्रोत :-

यांच्या उगमावरून त्यांचे जैव आणि अजैव असे प्रकार आहेत. जैव संसाधने ही जीवावरणातील घटकांपासून (उदा., वने, प्राणी, पक्षी इत्यादींपासून) प्राप्त होतात. यात कोळसा व जीवाश्म इंधन या जैव इंधनांचादेखील समावेश होतो. कारण ती सेंद्रिय पदार्थांच्या कुजण्यापासून तयार होतात. अजैव प्रकारात जमीन, पाणी, हवा, जड धातू (उदा., सोने, चांदी, तांबे, लोह इत्यादी) आणि वेगवेगळ्या खनिजांचा समावेश होतो.

ब. नैसर्गिक संसाधनांच्या विकासाचे टप्पे :-

(१) संभाव्य संसाधने

विशिष्ट क्षेत्रात उपलब्ध असून भविष्यात त्यांचा उपयोग होऊ शकतो. उदा., भारतात अनेक ठिकाणी खनिज तेलाचे साठे आहेत. परंतु जोपर्यंत त्यातून खनिज तेल काढले जात नाही तोपर्यंत त्यांना संभाव्य संसाधन असे म्हणतात

(२) प्रत्यक्ष संसाधने

ज्या संसाधनांचे सर्वेक्षण होऊन त्यांची गुणवत्ता आणि प्रमाण निश्चित केलेले आहे आणि त्यांचा सद्यस्थितीत उपयोग केला जात आहे, अशा संसाधनांना प्रत्यक्ष संसाधने म्हणतात.

(३) आरक्षित संसाधने

प्रत्यक्ष संसाधनांचा आरक्षित केलेला भाग व त्यांचा भविष्यात लाभकारी उपयोग करता येईल, अशा संसाधनांना आरक्षित संसाधने म्हणतात.

(४) संग्रहित संसाधने

सर्वेक्षण झालेले आहे, परंतु तंत्रज्ञान उपलब्ध नसल्यामुळे वापर करता येत नाही अशा संसाधनांना संग्रहित संसाधने म्हणतात. उदा., हायड्रोजन वायू.

क. नूतनीक्षम संसाधने :-

काही संसाधने नूतनीक्षम किंवा अनूतनीक्षम असतात. यामध्ये पाणी, सूर्यप्रकाश, हवा इत्यादी हे संसाधने कधीही संपणारी नाहीत, म्हणून त्यांना नूतनीक्षम संसाधने म्हणतात. जी संसाधने संपुष्टात येणारी आहेत, ज्या संसाधनांची उपलब्धता मर्यादित आहे त्यांना अनूतनीक्षम संसाधने म्हणतात. उदा., खनिजे, जैवइंधने इत्यादी.

(१) नूतनीक्षम संसाधने

नैसर्गिकरीत्या ज्या संसाधनांची पुनर्निर्मिती होऊ शकते अशा संसाधनांना नूतनीक्षम संसाधने म्हणतात. यात सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा इत्यादींचा समावेश होतो. ही संसाधने मुबलक प्रमाणात आणि निरंतर उपलब्ध असतात. मानवी वापरामुळे त्यांच्या प्रमाणावर होणारी घट नगण्य असते.

(२) अनूतनीक्षम संसाधने

ज्या संसाधनांच्या निर्मितीचा वेग अतिशय मंद आहे तसेच नैसर्गिकरीत्या ज्या संसाधनांची निर्मिती होत नाही, अशा संसाधनांना अनूतनीक्षम संसाधने म्हणतात. मानवी दृष्टिकोनातून अनूतनीक्षम संसाधने म्हणजे ज्यांच्या खपाचा वेग अधिक आहे आणि त्यामानाने त्यांची पुनर्निर्मिती मंद गतीने होते, अशी संसाधनांमध्ये (उदा., जीवाश्म इंधन). जीवाश्म इंधनांच्या निर्मितीला कोट्यावधी वर्षे लागतात. त्यामुळे ती अनूतनीक्षम संसाधने ठरतात. धातूंची खनिजे पूर्णप्रक्रिया करून वापरता येतात. मात्र, कोळसा व पेट्रोलियमचे पुनर्चक्रीकरण करता येत नाही. अनूतनीक्षम नैसर्गिक संसाधनांची उपलब्धता मर्यादित असते आणि मोठ्या प्रमाणावर त्यांची पुनर्निर्मिती व पुनर्वापर करता येत नाही. अशी संसाधने संपुष्टात आली की त्यांची पुनर्निर्मिती करता येत नाही. या संसाधनांच्या मागणीचा वेग हा त्यांच्या उत्पादनाच्या वेगापेक्षा नेहमीच अधिक असतो. पृथ्वीवर उपलब्ध असलेली नैसर्गिक संसाधने मर्यादित आहेत. त्यांचा वापर ज्या वेगाने होत आहे तो पाहता पुढील काही दशकात अनेक संसाधने संपुष्टात येऊ शकतात. त्यांच्या अतिवापरामुळे निसर्गाची अपरिमित हानी होते. तसेच प्रदूषण, जैवविविधतेचा ह्रास, नूतनीक्षम संसाधनांच्या उपलब्धतेत घट इत्यादी परिणाम दिसून येतात. नैसर्गिक संसाधनांचा वापर उचित झाला तरच पर्यावरणाचा समतोल कायम राहिल. अनेक पारिस्थितिकी तज्ज्ञांनी असे दाखवून दिले आहे की, मानवाच्या अनिर्वध वापरामुळे नैसर्गिक संसाधनांचा ह्रास असाच चालू राहिला तर सजीवसृष्टीतील अनेक घटकांना अस्तित्वास धोका पोहोचेल, मानवाचे अस्तित्त्व त्यामुळे धोक्यात येईल.

मानवी संसाधने :-

एखाद्या कंपनीकडे सामान्यतः बऱ्याच प्रकारच्या मालमत्ता असतात यामध्ये भांडवल, उपकरणे, पुरवठा किंवा सुविधा, उदाहरणार्थ तिचे लोक त्याची सर्वात महत्वाची संपत्ती असतात. कर्मचाऱ्यांना कामावर घेणे, समाधानी करणे, प्रवृत्त करणे, विकसित करणे आणि टिकवून ठेवले पाहिजे. मनुष्यबळ विभाग हा एक विभाग आहे जो कंपनीच्या मानव संसाधनांचे व्यवस्थापन करतो. मानवांना इतर स्त्रोतांपेक्षा अधिक व्यवस्थापन आणि वेगळ्या दृष्टिकोनाची आवश्यकता असते, म्हणूनच संपूर्ण विभाग त्यांना समर्पित करणे उपयुक्त आहे. परस्पर विवादाचे मध्यस्थी करित असेल किंवा सेवानिवृत्तीची योजना आखत असो, मानव संसाधन विभाग हे हाताळण्यासाठी प्रशिक्षित आहे.

मानवी संसाधनाची कार्यपद्धती :-

कंपनीचे लोक अधिक प्रभावीपणे वापरणे हे मानवी संसाधनांचे उद्दीष्ट आहे. मानवी संसाधने यासारख्या समस्यांना सामोरे जाऊ शकतात. यामध्ये नुकसान भरपाई आणि फायदे, कर्मचाऱ्यांची भरती व नेमणूक करणे, ऑनबोर्डिंग करणे, कामगिरी व्यवस्थापन करणे, संघटना विकास व संस्कृतीचे जतन आणि प्रशिक्षण देणे इत्यादी कार्ये पार पाडले जातात.

वरील क्षेत्रे प्रत्येक कर्मचाऱ्यांच्या समाधानास आणि कामगिरीला हातभार लावतात. या भिन्न समस्यांना उपस्थित राहून, मानवी संसाधने उच्च-कार्यक्षम आणि प्रभावी कार्यबल सुनिश्चित करू शकतात, ज्यामुळे कंपनीला त्यांचे लक्ष्य आणि उद्दीष्टे अधिक कार्यक्षमतेने पोहोचण्यास मदत होते. मानव संसाधन विभाग देखील हे सुनिश्चित करते की कंपनी कामगार नियमांचे पालन करित आहे व वातावरण वर्गाला त्रास देण्यापासून आणि इतर अडथळांपासून मुक्त ठेवण्याचे कार्य करते. मानव संसाधन कर्मचारी कामाची जागा धोरणे तयार करण्यास आणि अंमलात आणण्यास मदत करतात, जसे की सुट्टीतील धोरणे किंवा ट्रेस कोड या धोरणामुळे कर्मचाऱ्यांमधील नियमांची योग्य आणि सुसंगत अंमलबजावणी होते. उदाहरणार्थ, कल्पना करा की टाटा ही कंपनीची विक्री प्रतिनिधी आहे. टाटा कंपनीच्या मानव संसाधनांपैकी एक आहे. एक कर्मचारी. टाटाला तिच्या कर्मचाऱ्यांच्या फायद्यांबद्दल किंवा नावनोंदणी फॉर्मबद्दल काही प्रश्न असल्यास, ती मदत करण्यासाठी मानव संसाधन विभागाशी संपर्क साधेल. टाटा कंपनी मधील आणि दुसरा कर्मचारी

व्यवस्थापकामध्ये मतभेद असल्यास, मानव संसाधन विभाग तोडगा काढण्यात मदत करू शकेल. विभाग याची खात्री करतो की टाटा आणि तिच्या कार्यसंघाच्या इतर सदस्यांनी योग्य ते प्रशिक्षण घेत आहेत जेणेकरून ते आपली कर्तव्ये कुशलतेने पार पाडू शकतील.

मानवी संसाधनांना पर्याय :-

मानवी संसाधनाची बरीच कामे काही मानवी-संसाधनांद्वारे अंमलात आणली जाऊ शकतात. दुसऱ्या शब्दात कधीकधी रोबोट्स किंवा संगणक मानवी कर्मचार्यांची जागा घेतात, विशेषतः धोकादायक परिस्थितीत किंवा पुनरावृत्ती कार्यासाठी याला ऑटोमेशन असे म्हणतात. यामुळे कार्यक्षमतेत मोठ्या प्रमाणात सुधारणा होऊ शकते. उदाहरणार्थ, आपल्याला बऱ्याचदा उत्पादन रेषांवर रोबोट्स आढळतात, जसे की कारसाठी. उत्पादनाचे काही भाग स्वयंचलितपणे उत्पादन गती वाढवू शकते, परंतु मानवांना अद्याप काही कामांसाठी आवश्यकता असते. मानव संसाधन कार्ये देखील विशिष्ट विभाग किंवा कर्मचारी अंमलात आणू शकतात. सामान्य मानव संसाधन व्यवस्थापकाऐवजी, नुकसान भरपाई आणि लाभ व्यवस्थापक, प्रशिक्षण पर्यवेक्षक किंवा कर्मचारी भरती तज्ञ असू शकतात. अशा विशिष्टतेमुळे जास्त कार्यक्षमता आणि बऱ्याचदा सुधारित नफा मिळू शकतात.

मानवी संसाधनाचे उद्दिष्टे :-

१) व्यक्तिगत उद्दिष्टे

व्यवसाय संघटनेत विविध पातळीवर काम करणाऱ्या कर्मचाऱ्यांच्या व्यक्तिगत विकासाला आणि व्यक्तिगत उद्दिष्टाला मदत करणे हे मानवी संसाधन व्यवस्थापनाचे उद्दिष्ट आहे.

२) कार्यात्मक उद्दिष्ट

व्यवसाय संघटनेच्या कामकाजात सुसूत्रता व समन्वय कायम ठेवणे तसेच कार्य मूल्यमापन, मूल्यांकन करून किमान खर्चात महत्तम परिणाम साध्य करणे हे मानवी संसाधन व्यवस्थापनाचे उद्दिष्ट असते.

३) संघटनात्मक उद्दिष्ट

व्यवस्थापनाचे मूलभूत उद्दिष्ट साध्य करण्यासाठी सक्षम यंत्रणा निर्माण करण्याचे कार्य मानवी संसाधन व्यवस्थापनाला करावे लागते. त्यासाठी मनुष्यबळ नियोजन करून त्यांचे प्रशिक्षण व विकासाच्या माध्यमातून व्यवसाय संघटनेला पूरक कार्य करण्याचे उद्दिष्ट मानवी संसाधन व्यवस्थापनाचे असते.

४) सामाजिक उद्दिष्ट

व्यवसायाला सामाजिक जबाबदाऱ्या पाळाव्या लागतात. शासनाने व्यवसाय संस्थेला लागू केलेले कायदे नियम यांचे कटाक्षाने पालन करणे आणि समाजकार्यात योगदान देणे हे मानवी संसाधन व्यवस्थापनाचे

निष्कर्ष :-

1. नैसर्गिक संसाधने हे निर्जिव स्वरूपात असून त्यांचे साठे काही कालावधी नंतर संपणारे आहेत. तर मानवी संसाधने सजीव असून त्यांचे अस्तित्व अनादी काळापर्यंत राहणारे आहे.
2. मानवी संसाधनाच्या अतिरेकीपणामुळे नैसर्गिक संसाधने संपण्याच्या मार्गावर आहेत. त्यामुळे वेळीच मानवाने पर्यायी साधनाचा वापर नाही केला तर त्यांचे परिणाम मानवाला भोगावे लागणार आहेत.
3. नैसर्गिक संसाधनाचे योग्य ते संरक्षण व पूर्नरवसन करण्यासाठी शासनाने कायद्याची निर्मिती करून त्यांची प्रभावी अंमलबजावणी करणे काळाची गरज बनली आहे.

संदर्भग्रंथ :-

1. लीना कांडलकर, मानवी विकास, विद्या प्रकाशन नागपूर
2. एम.एस.लिमण, मानवी साधनसंपत्ती व्यवस्थापण, शेठ प्रकाशन मुंबई
3. विजय कुमार तिवारी, पर्यावरण अध्ययन, हिमालय पब्लिकेशन, मुंबई
4. लईक फतेअली, आपले पर्यावरण, अनुवाद रा.वि.सोवनी, नॅशनल बुक, नव्वी दिल्ली
5. श्रीपाद देशमुख, जलप्रदूषण, अक्षय प्रकाश पुणे,
6. साईराम भट, नॅचरल रिसोर्सेस कॉन्झर्व्हेशन लॉ. प्रकाशक: सेज पब्लिकेशन्स, नवी दिल्ली
7. प्रा.के.एम.खतीब, साधनसंपत्ती भूगोल, मेहता बुकसेलर्स, कोल्हापूर
8. विठ्ठल घारापूरे, भारताचा भूगोल, पिंपळापूरे अॅण्ड कंपनी, नागपूर
9. विजय शिंदे, द मेगा स्टेट महाराष्ट्र, निराली प्रकाशन

शाश्वत विकासात जलसंवर्धनामध्ये 'आभासी पाणी' संकल्पनेचे महत्त्व

डॉ. नागनाथ माधवराव फड

भूगोल विभाग प्रमुख, कै. बाबुराव पाटील कला व विज्ञान महाविद्यालय, हिंगोली

Email ID:- nagnathphad2@gmail.com

सारांश :-

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम अनुसार 2030 मध्ये जगाची लोकसंख्या ही आजच्या तुलनेत 40 टक्के वाढ होऊन याचा परिणाम पाण्याच्या मागणीत वाढ होऊन पाण्याची समस्या फार गंभीर असेल. या समस्यांची झळ विकसनशील देशांना जास्त पडेल, त्यात भारताचाही समावेश असेल. भारतामध्ये संपूर्ण देशात दरवर्षी भूजल स्तर पातळी सरासरी एक मीटर इतकी घटत आहे. पाण्याची कमतरता ही चिंतेची बाब आहे. एका अभ्यासानुसार 1 अब्ज 40 कोटी घनमीटर पृथ्वीवर पाणी उपलब्ध आहे. यापैकी 97.5 टक्के पाणी समुद्रात असून ते खरे आहे. 1.5 टक्के पाणी बर्फाच्या स्वरूपात ध्रुवीय प्रदेशात आहे. उर्वरित फक्त 1 टक्के पाणी वापरासाठी उपलब्ध आहे. त्यापाण्यापैकी 60 टक्के पाणी शेती व औद्योगिक उपयोगात आणले जाते. उर्वरित 40 टक्के पाणी मानव दैनंदिन कार्यासाठी म्हणजे साफसफाई, स्वयंपाक, पशुपालनासाठी वापरतो. आज वाढती लोकसंख्या, औद्योगिक क्रांती व वाढत्या तंत्रज्ञानाचा वापर यामुळे मोठ्या प्रमाणात जलसंकट निर्माण होत आहे. या जल संकटाला सामोरे जाण्यासाठी जलसंवर्धनाची आवश्यकता आहे. पाणी म्हणजे जीवन आहे. 'जल है तो कल है' या म्हणीनुसार शाश्वत विकास जर करायचा असेल तर जलसंवर्धना शिवाय तो शक्य नाही.

प्रस्तावना :-

आपल्या देशात दरवर्षी भौगोलिक स्थितीप्रमाणे विविध प्रांतात कमी - जास्त पाऊस पडतो . अशा परिस्थितीत पाण्याचे नियोजन करणे हे भविष्याच्या दृष्टीने फार गरजेचे आहे . पाण्याला आपण जलसंपदा म्हणतो . पाणी हे जीवन आहे . धरतीवरील जीवन फुलविते . त्याची किंमत प्रत्येकाला कळायला हवी . जो पाण्याचा अपव्यय करेल तो उपाशी मरेल . पाणी वाचविणे म्हणजे पाण्याचे पुनर्निर्माण होय . पाण्याची गरज व वापर यातील हिशोबीपणा काटेकोरपणे सांभाळले पाहिजे . आपल्या घरी आलेल्या पाहुण्यांना गरज नसताना ग्लासभर पाणी देणे व त्यांनी घोटभर पिऊन फेकून देणे यातील उधळपट्टी थांबली पाहिजे . आपला विचार व आपले आचार इतक्या बारकाईने प्रत्येकाने तपासून त्याचा हिशोब ठेवणे आवश्यक आहे . वाढत्या लोकसंख्येमुळे पाण्याचा वाढता वापर , कारखानदारीचा विस्तार , कृषी विकास , वातानुकूलित यंत्रणा , घरगुती वापर , कालवे खोदाई यामुळे पाण्याचा दरडोई खप वेगाने वाढला आहे . पाण्याचा वापर करताना अजिबात काळजी घेतली जात नाही . व्यवस्थापनात या गोष्टी नियंत्रित केल्या पाहिजेत . जल वापराच्या बाबतीत (दरडोई वापर) जगात भारताचा नववा क्रमांक लागतो . पाण्याच्या अकार्यक्षम व्यवस्थापनामुळे पाण्याची मोठ्या प्रमाणावर गळती व अपव्यय होतो. तो रोखणे व मलनिस्सारण व्यवस्था असलेल्या नागरी केंद्रातील सांडपाणी नदीत न सोडता योग्य प्रक्रिया करून सिंचनासाठी वापरले पाहिजे . त्यादृष्टीने केंद्रानजीक हरित पट्टे आरक्षित करून सांडपाण्याचा पर्याप्त वापर केला पाहिजे . साखर व अन्य कारखान्यातील प्रदूषित पाण्यावर प्रक्रिया करून त्याचा यथायोग्य पद्धतीने पुनर्वापर केला पाहिजे . त्यायोगे ५०-७० टक्के पाणी वाचेल . उर्वरित जे पाणी बाहेर सोडले जाईल प्रदूषित असणार नाही . यासाठी कडक नियंत्रण व्यवस्थेची गरज आहे . आपल्याला पाणी मिळण्याचे खात्रीशीर स्रोत म्हणजे पाऊस . त्याच्या लहरीपणावर आपले जीवन अवलंबून आहे . म्हणून जमिनीवर पडणाऱ्या पावसाचा प्रत्येक थेंब अडवणे व जिरवणे गरजेचे आहे . त्यासाठी जलपुनर्भरण आवश्यक आहे .

उद्दिष्टे : १ शाश्वत विकास संकल्पना अभ्यासणे . २.शाश्वत विकास व जलसंवर्धनात 'आभासी पाणी' संकल्पनेचा अभ्यास करणे .

माहिती स्रोत व अभ्यासपध्दती :

मासिके , वृत्तपत्रे , विविध वेबसाईट , संशोधन पेपर , संदर्भ ग्रंथ आणि प्रत्यक्ष निरीक्षणातून आकडेवारी जमा करून तीचे पृथक्करण करून प्रस्तुत शोध निबंधांत शासनाचे विविध अहवाल , विविध पुस्तके या माध्यमातून शोधनिबंध प्रस्तुत करण्याचा प्रयत्न केला आहे. **अभ्यासाच्या मर्यादा :**

प्रस्तुत शोध निबंधात शाश्वत विकास म्हणजे काय? व जलसंवर्धन या घटकाचा अभ्यास केला आहे .

विषय विवेचन:-

अ) शाश्वत विकास म्हणजे काय ?

शाश्वत विकाससंकल्पनेच्या व्याख्या :-

(1) " शाश्वत विकास म्हणजे असा विकास की , जो भविष्यकालीन पिढ्यांच्या स्वतः च्या गरजा पूर्ण करण्याच्या सामर्थ्याचे तडजोडीशिवाय वर्तमानकालीन गरजांची पूर्तता करणे होय . " -ब्रंटलँड अहवाल ,1987 " Sustainable development is development that meets the needs of the present without compromising the ability of future generation to meet their own needs . " - Bruntland Report , 1987

(2) " भावी पिढ्यांच्या गरजा भागविण्याच्या निसर्गातील क्षमतेला कोणताही धोका न पत्करता लोकांच्या वर्तमानकालीन गरजा पूर्ण करणे म्हणजे शाश्वत विकास होय . "

(3) " शाश्वत विकास - विकास असा असतो की , मानवी गरजांचे चिरकाल टिकणारे साधन आणि मानवी जीवनाच्या दर्जात सुधारणा साध्य करणारा असतो . " -रॉबर्ट ॲलन

वरील व्याख्यांवरून असे स्पष्ट होते की , वर्तमानकालीन विकास व भविष्यकालीन विकास यांच्याशी शाश्वत विकासाचा दुवा संबंधित असतो .

ब)शाश्वत विकासात जलसंवर्धनामध्ये 'आभासी पाणी'अभ्यासाची आवश्यकता;-

अंदाजानुसार संपूर्ण पृथ्वीवर केवळ 2 टक्के शुद्ध पाणी उपलब्ध आहे ,स्वच्छ पिण्याचे पाणी अशा अत्यल्प प्रमाणात उपलब्ध आहे की ते आपल्या अनिवार्य गरजा पूर्ण करीत नाही. या संदर्भात 'व्हर्च्युअल वॉटर' नावाची नवीन संकल्पना उपलब्ध आहे, जी पाणी व्यवस्थापनात खूप मदत करू शकते.

आभासी पाणी म्हणजे काय?

वॉटर मॅनेजमेंट या क्षेत्रात 'व्हर्च्युअल वॉटर' ही एक नाविन्यपूर्ण संकल्पना आहे, ही उत्पत्ति लंडनच्या किंगसे कॉलेजच्या प्रोफेसर जॉन टोनी एलन यांनी केली आहे. 'व्हर्च्युअल वॉटर' म्हणजे अदृश्य पाणी. प्रो. एलनच्या मते, 'अदृश्य पाणी' हे असे पाणी आहे जे वनस्पती वाढण्यास, तयार करण्यासाठी किंवा उत्पादनासाठी वापरले जाते. उदाहरणार्थ, एक टन गहू वाढण्यास सुमारे एक हजार घन लिटर पाणी लागते. एक कप कॉफी बनवण्याच्या मागे 140 लिटर पाणी वापरले जाते.

एका लिटर दुधामागे सुमारे एक हजार लिटर पाणी वापरले जाते. प्रो. एलनच्या म्हणण्यानुसार मांसाहारी पदार्थ शिजवताना शाकाहारी पदार्थ बनवण्यापेक्षा जास्त पाणी लागते. त्यांच्या मते, आशियामध्ये राहणारा प्रत्येक माणूस दररोज सरासरी 1400 लिटर अदृश्य पाणी खर्च करतो, तर अमेरिका आणि युरोपियन लोक दररोज सरासरी 4000 लिटर अदृश्य पाणी खर्च करतात आणि त्यांना याची जाणीवही नसते.

एका अभ्यासानुसार, सुमारे 2000 वर्षांपूर्वी, जगातील लोकसंख्या सध्याच्या जगाच्या लोकसंख्येपैकी फक्त 3 टक्के होती, जी 2050 पर्यंत सुमारे 9 अब्ज होण्याची अपेक्षा आहे. तर संपूर्ण जगामध्ये पाण्याचे एकूण प्रमाण फक्त

2000 वर्षापूर्वी इतकेच आहे. अशा प्रकारे पाण्याचा वापर सातत्याने वाढत आहे. त्यामुळे या वाढत्या लोकसंख्येला पाणी देण्याच्या समस्येचा अंदाज बांधणे कठीण आहे. अशा प्रकारे पाण्याच्या प्रत्येक थेंबाचे स्वतःचे मूल्य असते. म्हणूनच हे स्पष्ट आहे की प्रत्येक परिस्थितीत पाण्याच्या वापरावर प्रभावीपणे नियंत्रण ठेवण्यासाठी आपल्याला ठोस पावले उचलणे आवश्यक आहे.

असा अंदाज आहे की एखाद्या व्यक्तीला सरासरी चार ते पाच लिटर पाणी पिण्याची गरज असते. या व्यतिरिक्त एखाद्या व्यक्तीला आंघोळ, कपडे धुणे, स्वयंपाक करणे, दररोजच्या कामांसाठी कमीत कमी 50 लिटर पाण्याची आवश्यकता असते. दुसऱ्या शब्दांत असे म्हणता येईल की, आपल्या पाण्याचा दररोज वापरल्या जाणाऱ्या 35 टक्के पाणी आंघोळीसाठी, शौचालयात 30 टक्के इत्यादी, 20 टक्के कपडे धुण्यासाठी, स्वयंपाक आणि पिण्यासाठी 10 टक्के आणि उर्वरित 5 टक्के खर्च केला जाईल. स्वच्छता इ. ही आपली अत्यावश्यक गरज आहे. जी कोणत्याही प्रकारे कमी करता येणार नाही. म्हणून, हे स्पष्ट आहे की, पाण्याच्या प्रत्येक थेंबाचे स्वतःचे मूल्य असते. प्रो. एलन यांच्या म्हणण्यानुसार आपण जर शेती, औद्योगिक उत्पादन आणि दैनंदिन कामकाजात पाण्याचे व्यवस्थापन केले तर सध्याच्या पाण्याच्या संकटाची समस्या बऱ्याच प्रमाणात कमी होऊ शकते.

विविध उत्पादनांमध्ये आभासी पाण्याची स्थिती

प्रो. एलन यांनी केलेल्या अभ्यासानुसार प्रत्येक वस्तू किंवा सेवेच्या मागे 'अदृश्य पाणी' ही महत्वाची भूमिका असते. एखाद्या वस्तूच्या मागे दडलेल्या पाण्याचे प्रमाण थेट पाहिले जाऊ शकत नाही, म्हणूनच त्याला अदृश्य पाणी किंवा 'आभासी पाणी' म्हटले जाते. एका केळीमध्ये 160 लिटर, टोमॅटोमध्ये 13 लिटर, बटाटामध्ये 25 लिटर आणि 78 लिटर 'अदृश्य पाणी' एक ग्लास दुधात लपलेले असते. जे तयार होत असतानाही ते आपल्याला दिसत नाही.

एका अभ्यासानुसार असे दिसून आले आहे की मांसाहारी भोजनामध्ये पाण्याचे प्रमाण जास्त असते. तर तांदूळ, सोयाबीन आणि गहू इत्यादी शाकाहारी पदार्थांमध्ये अदृश्य पाण्याचा कमी वापर होतो.

पाण्याचा प्रत्येक थेंब अमूल्य आहे

पाणी व्यवस्थापन क्षेत्रात काम करणाऱ्या व्यक्तीने योजना बनविताना आभासी पाण्याच्या वास्तवाकडे दुर्लक्ष करू नये. या पाण्याची चिंता करणारी स्थिती काय आहे? याचा गांभीर्याने विचार करणे गरजेचे आहे. कारण जर वेळेत प्रभावी पावले उचलली गेली नाहीत तर भविष्यात ही परिस्थिती आटोक्यात येण्याची शक्यता नाही. आपण निसर्गाने निर्माण केलेल्या अमूल्य पाण्याचे शोषण थांबविणे गरजेचे आहे. त्याचा अपव्यय थांबवून हे अमूल्य पाणी पुढील पिढीसाठी जतन करणे आवश्यक आहे.

1992 पासून, जागतिक जल संकटाची समस्या सोडविण्यासाठी संयुक्त राष्ट्र संघ पाण्याशी संबंधित सर्व सूक्ष्म पातळीवरील सर्व बाबींवर विचार करीत आहे आणि जागतिक जल दिन, 22 मार्च या वर्षी संयुक्त राष्ट्रांनी जाहीर केलेल्या पाण्याच्या विषयावर विचारमंथन आणि संबंधित क्रिया केली गेली आहे. २०११-2013 हे वर्षदेखील भारत सरकारने जलसंधारण वर्ष म्हणून जाहीर केले आहे.

या संपूर्ण जगात ते झाडं, झाडे, माणसे, सूक्ष्म किंवा प्रचंड जीव असोत, पाणी ही ऊर्जा आहे जी सर्वांना इंधन सारखी सतत ऊर्जा पुरवते. वस्तुतः पाण्याला वास्तवात जीवनाचे नाव दिले गेले आहे. पाणी हे विश्वाचे मूळ आहे आणि पाणी ब्रह्म आहे. सध्याच्या 21 व्या शतकात मानवी निसर्गाच्या या अनमोल देणगीची वाढती कमतरता पाहून 'पाणी' केवळ चिंताजनकच नाही तर भयावह आहे. वाढत्या जागतिक लोकसंख्येच्या गरजा भागविण्यासाठी, जगभरात पाण्याची मागणी देखील सतत वाढत आहे, परिणामी, मनुष्य अत्यंत मौल्यवान पाण्याचे शोषण करीत आहे. निसर्गाच्या पाण्याचे दान हे मानव अंधत्वपणे शोषण आणि प्रदूषण करीत आहे ही विडंबना आहे.

आश्चर्यकारक वितरण

पाण्याचे म्हणजे निसर्गामध्ये पाणी वाटप करण्याची आश्चर्यकारक प्रक्रिया. संपूर्ण जगात सुमारे दोन तृतीयांश पाणी समुद्रात आणि एक तृतीयांश पृथ्वीवर आहे. पृथ्वीवरील शुद्ध पाण्याचे दोन तृतीयांश पाणी बर्फ आणि हिमनदींच्या स्वरूपात आहे आणि उर्वरित एक तृतीयांश पाणी स्वरूपात आहे. जर आपण पृष्ठभागावर उपलब्ध पाण्याचा वापर पाहतो तर सुमारे दोन तृतीयांश पाणी शेतीत वापरला जातो आणि एक तृतीयांश उद्योग आणि इतर घरगुती कामांमध्ये वापरला जातो. सध्या लोकसंख्येच्या जवळजवळ दोन तृतीयांश लोक त्यांच्या घरगुती गरजा भागविण्यासाठी पाण्याचा वापर करतात. जगातील पाण्याच्या वितरणाची खालीलप्रमाणे आहे -

स्त्रोत	समुद्र	हिमाव रण	भूजल	गोड्या पाण्याची सरोवरे	भूअंतर्गत समुद्र	मृदा आर्द्रता	नदीतील पाणी	एकूण पाणी
टक्केवारी	97.24	2.14	0.16	0.09	0.008	0.005	0.0001	100.0 0

भारतातील पावसाच्या पाण्याची स्थिती पाहिल्यास पावसाच्या एकूण पाण्याचे दोन तृतीयांश पाणी समुद्रात वाहते. आणि जवळजवळ एक तृतीयांश पाणी मातीने शोषले जाते किंवा तलावामध्ये साठवले जाते. भारतातील नदीप्रवाहानुसार, प्रवाह क्षेत्रातील सुमारे दोन तृतीयांश भाग गंगा-ब्रह्मपुत्र आणि मेघना व त्यांच्या उपनद्यांच्या अंतर्गत येतो आणि उर्वरित एक तृतीयांश भाग देशाच्या अन्य नद्यांच्या अंतर्गत आहे. जर आपण देशातील पूरग्रस्त क्षेत्राकडे पाहिले तर पूरग्रस्त क्षेत्रातील सुमारे दोन तृतीयांश भाग वर नमूद केलेल्या तीन नद्या व त्यांच्या उपनद्यांच्या अंतर्गत येतो. आपल्या शरीराचे सुमारे दोन तृतीयांश पाणी पाणी आणि एक तृतीयांश भाग घन आहे. सराव मध्ये, जगातील एकूण पाणीपुरवठा फक्त 0.03 टक्के मानवी दैनंदिन वापरासाठी सहज उपलब्ध आहे.

शिफारसी:-

- 1) शाश्वत विकास करण्यासाठी जास्तीत जास्त पाणी अडवून ते जिरवणे गरजेचे आहे.
- 2) आभासी पाणी संकल्पना सत्यात आणि उपयुक्त पाणी समुद्रात जाऊ न देता त्याचे अन्नधान्यात रूपांतर करून इतर देशांना अन्नधान्य निर्यात करणे गरजेचे आहे. त्यातून अर्थव्यवस्था सुधारेल.
- 3) आभासी पाण्याचा योग्य वापर केल्यास अन्नसुरक्षा प्रश्न मिटवण्यासाठी उपयोग होईल.
- 4) ज्या प्रदेशात पाण्याचे दुर्भिक्ष आहे. अशा प्रदेशात कमीत कमी पाण्यावर येणारी पिके घेणे गरजेचे आहे. उदाहरणार्थ मराठवाड्यात पाणी कमी असूनही उसाचे पीक घेतले जाते त्या ठिकाणी कमी पाण्यावर येणारी पिके घेतली पाहिजेत.
- 5) उपलब्ध पाण्याचे योग्य नियोजन करून त्याचा उपयोग करून घेण्यासाठी जनसामान्यापर्यंत जनजागृती करणे आवश्यक आहे.

संदर्भसूची

- 1) पर्यावरण भूगोल - डॉ. रविंद्र सिंह ,प्रयाग पुस्तक भवन अलाहाबाद.
- 2) आपले पर्यावरण - डॉ. सवदी व डॉ. कोळेकर, निराली प्रकाशन कोल्हापूर.
- 3) टाइम्स ऑफ इंडिया - 10 फेब्रुवारी डी. चंद्रशेखरम
- 4) Virtual water Wikipedia
- 5) The Concept of Virtual Water - by Tony Allan 20th march 2020.
- 6) जलग्रहण प्रबंधन - सतत एवं समग्र विकास, अवधारणा महत्त्व एवं सिद्धांत- के .एस. परमार

प्राथमिक व माध्यमिक विद्यार्थ्यांचा भाषाविकास

कदम गणेश पुंडलिकराव¹ प्रा.डॉ.वैजयंता ना.पाटील²

¹संशोधक, शिक्षणशास्त्र संकुल, स्वा.रा.ती.म.वि.नांदेड.

²मार्गदर्शक, शिक्षणशास्त्र संकुल, स्वा.रा.ती.म.वि.नांदेड.

सारांश :-

प्राथमिक स्तरावरील विद्यार्थी हे कुटुंबातून बाहेर आलेले व शाळेत एकरस झालेले विद्यार्थी असतात. कुटुंबातील संस्कार, भाषा, गुण, व स्वभाव हे त्यांच्या वर्तनातून दिसून येते. कुटुंबातील गुण व संस्कारातून शाळेत ते ससरस होण्याचा प्रयत्न करताना दिसतात त्यांच्या कुटुंबात त्यांच्यावर जसे संस्कार घडलेत त्याप्रमाणेच शाळेत वावरताना दिसतात. आपल्या कुटुंबातील व्यवृतीप्रमाणे एखादी व्यवृती दिसत असेल तर त्यांच्यासोबत जास्त जवळीक साधतात. त्यामध्ये वडीलांप्रमाणे शिक्षक, आईप्रमाणे शिक्षिका व भावंडांप्रमाणे मित्र-उचयमैत्रीणी. दिसण्याच्या पलीकडे जातून त्यांच्या आवाजात एकता किंवा चालणे, बोलणे, दिसणे, इत्यादी बाबतीत ते शोध घेत असतात. त्यामध्ये एकता, समानता दिसून आली तर ते त्यांच्यात प्रमाणापेक्षा जास्त समरस होतात, त्यांची भिती वाटत नाही. माध्यमिक स्तरावरील विद्यार्थी हे प्राथमिक स्तरावर ज्याप्रमाणे शिक्षण भेटते त्याप्रमाणे ते वर्तन करत असतात. प्राथमिक स्तरावरील शिस्त, निर्भय, जबाबदारपणा त्यांच्या माध्यमिक स्तर व

भविष्यकालीन दिसून येतात. सर्वप्रथम कुटुंब ही संस्था मूलांच्यावर संस्कार करण्याचे कार्य करते, त्यानंतर शाळा, कुटुंबातील संस्कार व प्राथमिक स्तरावरील शिस्त व संस्कार त्यांच्या आयुष्याची शिदोरी असते. या काळात बालमनावर जसे संस्कार होतील तसे गुणप्रदर्शन पु-सजयील काळात दिसून येते. त्यासाठी शाळेपेक्षा कुटुंबामध्ये दिले जाणारे संस्कार, शिस्त व शिक्षण महत्वाचे मानले जाते. दैनंदिन दिनचर्या कोणत्या घटकापासून सुरु होते व शेवट कोणत्या घटकाने किंवा कृतीने होतो यावर मुलांचे भविष्य अवलंबून असते. घरातील वडील-उचयधारे व्यवृती, भाऊ, इतर यांचे कळत-उचय नकळतपणे आदर्श समोर ठेवूनच वर्तन करत असतात. सकाळच्या सत्रात मोठा भाऊ व्यायाम करणे, वृत्तपत्रे अभ्यासणे, अभ्यास, सामाजिक कार्य यातील घटक करत असतील तर त्यांचे आपोआपच छोट्या बालकावर संस्कार होत आसतात. याउलट घरातील वडीलधारी व्यवृती जर सकाळच्या आठ वाजेपर्यंत अंथरुणात राहत असतील तर साहजिकच लहान मुलेदेखील नऊ वाजेपर्यंत नवकीच अंथरुणात दिसतील. या गोष्टी भौतिकरित्या किंवा मौखिकरित्या बालकांना सांगण्याची आवश्यकता नसते, तर ते

पाहून आपल्या आचरणात अनुकरण करत असतात. ज्या पालकांचे आई -उचय वडील, मोठा भाऊ-उचय बहीण दररोज सकाळी लवकर उठून योगा करत असतील किंवा अभ्यास करत असतील तर लहान मुले ही आपोआपच योगा करतात किंवा अभ्यासाला बसतात. यावरून असे लक्षात येते की, कुटुंबातील संस्कार व शाळेतील शिस्त या गोष्टी विद्यार्थ्यांचे भविष्य घडविण्यात मोलाचा वाटा उचलतात. शाळेपेक्षा कुटुंब व समाज यांच्या सानिध्यात जास्त वेळ राहत असल्याने त्या समाजातील गुण बालमनावर जोडले जातात व त्याचा वर्तनातून ते आपणास दिसून येतात.

मुख्य संज्ञा : प्राथमिक, माध्यमिक, भाषाविकास.

प्रस्तावना :

मराठीतील भाषा हा शब्द मूल संस्कृत भाषेतील भाष् बोलणे या धातूवरून तयार -हजयलेला तत्सम शब्द आहे. भाष्य, भाषक, भाषण, अशी शब्द तयार -हजयली. भाषा ही मानवाला मिळालेली बहुमूल्य देणगी आहे. भाषेच्या माध्यमातून प्रत्येक माणूस आपापसात संवाद सांधतात. भाषेमुळे एकमेकांचे सुख, दुःख समजते. भाष्य, भाषक, भाषण, संभाषण, भाषीय, हे या भाष् धातूपासून निर्माण होणारे भाषेशी निगडीत विविध संकल्पना सूचित करणारे शब्द आहेत. सर्वससाधारण व्यवहारात भाषा ही संज्ञा वापरत असतात. केवळ बोलणे

म्हणजे भाषा नव्हे, तर भाषा ही व्यापक आहे भाषा ही विविध प्रकारांनी मानवी जीवनाच्या सर्व अंगांना व्यापून असलेली ही गोष्ट असल्याने तिच्याकडे पाहण्याच्या विविध रीती आणि दृष्टीकोन आहेत. भाषा ही अलंकारीत शोभून दिसते. त्यामुळे ज्या त्या भाषेतील कवी, नाटककार, लेखक इत्यादी भाषेचा व्यापक व सखोल अभ्यास करून भाषेचा अधिक विकास करण्याचा प्रयत्न केला आहे. भाषेवर खूप कमी लोकांचे प्रभुत्व असते. ज्यांना भाषेवर प्रभुत्व प्राप्त -हजयलेले असते अशा व्यक्ती समाजात वेगळीच छाप उमटवत असतात. सामाजिक बांधिलकी जपताना भाषेचा योग्य वापर करताना दिसतात. आशय व्यक्त करण्यासाठी, विचार मांडण्यासाठी भाषेचा वापर केला जातो. वक्त्या हा बोलताना भाषेतील अलंकाराचा वापर करतो त्यामुळे त्याचे भाषण हे अलंकारीत होऊन ऐकण्यासारखे होते. मराठी भाषेचे जतन व संवर्धन करण्याचे काम विविध शासकिय संस्था करताना दिसतात. विविध मराठी भाषा विभाग हा विभाग स्वतंत्रपणे निर्माण केला गेला राज्याच्या भाषा सल्लागार मंडळाने तयार केलेला मराठी भाषा धोरणाचा मसुदा शासनाच्या संकेतस्थळावर उपलब्ध करून देण्यात आला जोपर्यंत खेडी जिवंत आहेत तोपर्यंत मराठी भाषेला मरण नाही असे काही लोक म्हणतात. कारण ग्रामीण भागात सर्वात जास्त किंवा फक्त मराठी भाषेचाच वापर केला जातो. मराठी भाषेला अभिजात भाषेचा दर्जा देण्याचा प्रयत्न सरकार करत आहे. परंतु मराठी भाषेवर सद्दयास्थिती पाहता वाईट परिस्थिती आलेली बातमी वर्तमानपत्रातून वाचायला मिळते. अनेक मराठी शाळा बंद पडताना दिसत आहेत. यामागची नेमकी कारणे कोणती हे शोधणे महत्वाचे आहे. मराठी शाळा बंद पडल्या तर मराठी भाषा कायमची नष्ट होईल. असे होणार नाही परंतु मराठी शाळा बंद पडून त्या ठिकाणी इंग्रजी माध्यमाच्या शाळा सुरु करण्यात आल्या व त्या शाळेत विद्यार्थी जास्त प्रमाणात प्रवेश घेत आहेत. अशी परिस्थिती घडताना राज्यात सरकार हे प्राथमिक किंवा माध्यमिक पर्यंतचे शिक्षण हे मातृभाषेतच -हजयले पाहिजे असे कायदे करत आहे. भाषाविकास हे सरकारचे काम नाही, लोकांचे आहे असे मानणारा एक वर्ग आहे. रस्ते, वीज, पाणी यांचा अभाव असते तर आपण सरकारला जाब विचारतो, पण भाषेचा विकास -हजयला नाही तर सामुदायिकपणे आगपाखड करून घेतो. त्यामुळे नाकर्त्या राज्यकर्त्यांचे फावते. मराठीच्या विकासाला कोणी कोणाला उत्तरदारी नाही, अशी अभूषपूर्व परिस्थिती गेल्या कांही दशकांत राज्यांत निर्माण -हजयली आहे. इंग्रजी भाषेच्या वा-सजयत्या प्रभावामुळे आज सर्वसामान्य मराठी भाषकांमध्ये मराठी बाबत न्युनगंड दिसतो, तर राजकारण्यांमध्ये अपराधगंड जात, धर्म, प्रांत यांच्याबरोबर भाषेचीही मोट बांधून समाजात भाषेवरून भांडणे नकोत म्हणून भाषानिरपेक्ष किंवा तटस्थ राहणे पसंत करणे महत्वाचे आहे. शाहू-उच्यफुले आंबेडकर यांच्या राज्यात भाषावाद चालणे अशी दुसरी शोकांतिका असू शकत नाही. मराठी भाषेमुळे खूप लोकांचे संसार चालत आलेले आहेत. रेजी-उच्यरेटी भाषेवर अवलंबून असलेले संशोधकांचे पाहिलेले आहे. त्यामुळे समाजातील काही कंटकांनी भाषा संपवण्याचा विडा उचलला असला तरी असे होणे शक्य नाही. कारण मराठी ही मातृभाषा आहे. दितसभर इंग्रजी बोलण्याचा सराव केला किंवा अस्खलित इंग्रजी बोलल्यास रात्री -हजयोपल्यानंतर स्वप्न ही मातृभाषेत म्हणजे मराठीतच पडतात. भाषेचा वापर म्हणजे भाषाव्यवहार. भाषाव्यवहार हा तीन प्रकारचा : बोलणारा व लिहिणारा अर्थ प्रेषण करतो तर ऐकणारा व वाचणारा अर्थग्रहण करतो, परंतु काहीवेळा एकच व्यक्ती प्रथम अर्थग्रहण करून नंतर त्याला अनुसरून अनुप्रेषण करते. ते अर्थाकडे लक्ष न देता केले म्हणजे अनुप्रस्तुती होते भाषांतराचे व्यवहारीक संदर्भ निरनिराळे असू शकतात भाषांतर हे मौखिक वा लेखी असेल त्वरीत किंवा सातकाश केलेले असेल. जेव्हा दोन भिन्न भाषिय व्यक्ती भेटतात, किंवा भिन्न भाषियांची सभा भरते तेव्हा दुभाषक उपस्थित करावा लागतो. तो तात्काळ तोंडी भाषांतर करतो. भाषांतराबद्दल सामान्य माणसाची धारणा असते की, भाषांतर म्हणजे मजकूर तोच ठेवायचा, फक्त एका भाषेचा पोषाख उतरवून ठेवायचा आणि दुसऱ्या भाषेचा पोषाख परिधान करायचा पण भाषांतरकार्यातील अडचणी आणि धोके दिसून भाषांतरकर्ता हा नुसता भारवाही नसून अवघड आणि जबाबदारीचे काम करणारा कलाकार आहे. हे जेव्हा ध्यानात येते

तेव्हा दुसऱ्या टोकाला जातून खरे भाषांतर अशक्य आहे असे म्हणण्याची वृत्ती होते. एखादा लोकप्रिय नेता जेव्हा एखाद्या प्रदेशात जातून तेथील स्थानिक भाषेने भाषणाची सुरुवात करतो तेव्हा स्थानिकांना गर्व निर्माण होतो. असाच गर्व महाराष्ट्रीयन लोकांना निर्माण होतून मराठी विषयी आदर निर्माण होणे महत्वाचे आहे, मराठी भाषेवर प्रेम करणारा खूप मोठा वर्ग महाराष्ट्रात आहे परंतु दिखावा करणारे लोक खूप प्रमाणात आहेत. स्वतः

सरकारी कर्मचारी आहेत किंवा स्वतः जि.प. शाळेत शिक्षक आहेत मात्र स्वतःची पाल्ये इंग्रजी माध्यमाच्या शाळेत दाखल आहेत. अशा घटना खूप घडलेल्या आहेत तेव्हा सरकारी कर्मचारी व शिक्षकांसाठी नवीन नियमावली तयार करण्यात आली आहे. मराठी भाषाविकास महत्वाचा आहे व त्याअगोदर मराठी भाषेविषयी जाणीव जागृती करणे महत्वाचे आहे. प्राथमिक व माध्यमिक स्तरावरील विद्यार्थ्यांच्या भाषाविकासासाठी खालील उपाय करता येतील.

१) भाषिक खेळ :

बोलीभाषा मातृभाषा सुधार घडविण्यासाठी विद्यार्थ्यांना आवड असलेल्या भागातून त्यांना ज्ञान दिले जावे. यासाठी भाषिक खेळ खूप मोठे योगदान देतात. यामध्ये विविध प्रकारचे खेळ घेवून त्यामाध्यमातून ज्ञान समृद्ध करणे सोपे जाते.

२) शब्दभेडी :

सर्वश्रुत असलेला हा खेळ यामधून देखील मराठी भाषेचा विकास साधला जातो. शब्दांची माहिती किंवा शब्दांचा साठा वा-सजयविण्यासाठी प्रत्येक भाषेत ही कला वापरली जाते विद्यार्थी-उचयविद्यार्थी गटात स्पर्धा निर्माण करून त्यांच्यात भाषिक कौशल्य विकसित करण्याचे सोपे माध्यम आहे.

३) स्मरण -

विस्मरण : शाळेत किंवा एखाद्या स्पर्धेच्यावेळी विद्यार्थी-उचयविद्यार्थी गटात स्पर्धा लावून एखाद्या खोलीमध्ये वस्तू ठेवायच्या व त्यांना न पाहता बाहेर येवून यादी करावयाची त्यासाठी त्यांना वेळ देणे गरजेचे आहे.

४) बौद्धिक खेळ :-

शब्दसंग्रह पाहण्याच्या दृष्टीने वाडमयीन शब्द किंवा फक्त लेखकांची नावे व त्यांचे प्रकाशित पुस्तके किंवा लेखक आणि त्यांचे पाठ अशी स्पर्धा घेता येते.

५) प्रकटवाचन -

प्रकटवाचनासारखी स्पर्धा घेवून अस्खलीत व व्याकरणीयदृष्ट्या अचूक बोलणारे विद्यार्थीयादी तयार करून ती वर्गात लावावे व त्यांना बक्षिसे द्यावी.

६) पत्रव्यवहार -

सध्याच्या जे जे चव च्या जगात पत्रव्यवहार बंद -हजयलेला आहे परंतु पत्राचा विषय, मारना इत्यादी महत्वाचा बाबी लक्षात आणून देणे महत्वाचे आहे.

७) अर्ज -

वेगवेगळ्या स्तरावर अर्ज कसे करतात ते शिकवणे महत्वाचे आहे, कारण प्राथमिक किंवा माध्यमिक स्तरावरील विद्यार्थी फक्त मुख्याधिकांना अर्ज करणे व वर्ग शिक्षक यांना अर्ज करण्याच्या पलीकडे दुसरे अर्ज केलेले नसतात. त्यासाठी त्यांना उपयोगी पडतात अशा कार्यालयाची माहिती व ती अर्ज करण्याची पद्धत शिकवणे महत्वाचे आहे. एखादी भाषा संवर्धित करताना त्या भाषेचा अधिकाधिक वापर कसा करता येईल याकडे लक्ष देणे गरजेचे असते. मराठी भाषिकांचे संख्या ही अधिक असली तरी मराठी भाषा बोलणाऱ्यांची संख्या कमी होत चालली आहे. आपली भाषा मराठी ही मातृभाषा आहे, आपल्या मातृभाषेचा अभिमान असणारी पि-सजरी लोप पावून व्यावहारिक भाषा इंग्रजीचा पगडा सर्व सामान्यांवर -हजयलेला दिसतो. अनेक क्षेत्रांमध्ये काम करत असताना इंग्रजी भाषेच्या ज्ञानावर तुमच्यातील बौद्धिक पातळी तपासली जाते. यावरून एक गोष्ट लक्षात येते की भारतात मराठी भाषक लोकांची संख्या सर्वाधिक असूनही त्यांचा व्यावहारिक उपयोग व्हावा, यासाठी प्रयत्न कमी करताना दिसून येते. मराठी भाषेचे संवर्धन करण्यासाठी प्रत्येक प्रांतीय भाषेचा विकास -हजयला पाहिजे. केवळ मराठी भाषा जपण्याऐवजी आपल्या अनेक बोलीभाषाही जपणे तितकेच गरजेचे आहे. मराठीचे संवर्धन व्हायचे असेल तर या प्रत्येक भाषेचा विकास -हजयला पाहिजे आजच्या पि-सजरीतील तरुणांनी आपल्या बोलीभाषेची लाज न बाळगता त्याचा अभिमान बाळगणे हीसुद्धा भाषेच्या संवर्धनाची एक पायरी आहे. चारचौघात गप्पा मारत असताना मी खूप हुशार आहे हे सिद्ध करताना काहीजण चार शब्द इंग्रजीमध्ये बोलतात, त्यावरून त्यांना दाखवायचे असते की मला इंग्रजी येते परंतु अशा

व्यवतीना काही इंग्रजी शब्दांचा मराठीतून अर्थ माहिती नसतो तरी ते फक्त बोलायचे असते किंवा बोलतात म्हणून बोलतात. भाषविकास करण्यासाठी योग्य ते पाऊल हे फक्त प्राथमिक स्तरावरूनच उचलले गेले पाहिजे, कारण भाषेला शिस्त, तळण ही प्राथमिक स्तरावरूनच लागली जाते, माध्यमिक स्तरावर विद्यार्थी भाषेच्या बाबतीत परिपक्व बनलेले असतात. विविध उपाय, खेळ, स्पर्धा, वादक, भाषण, वाचन, फिल्म, इत्यादींच्या माध्यमातून विद्यार्थ्यांचा भाषाविकास घडवून आणणे हे महत्वाचे कार्य जास्तीत जास्त प्रमाणात प्राथमिक स्तरावर करायला पाहिजे व त्यानंतर माध्यमिक स्तरावर त्या गुणांना खतपाणी दिले गेले पाहिजे. वयोमानानुसार प्राथमिक स्तरावरील विद्यार्थी नवीन कौशल्य आत्मसात करण्याच्या तयारीत असतात. मानसशास्त्रानुसार प्राथमिक व माध्यमिक स्तरावरील विद्यार्थी नवनवीन कौशल्य आत्मसात करणे, नवनवनीन कलागुण अंगीकारणे या गोष्टींवर लक्ष केंद्रीत करतात. त्यासाठी त्यांना वयाच्या विचाराने विविध कौशल्य आत्मसात करण्यासाठी मदत करण्याचे बहुमोल कार्य बालकाच्या कुटुंब, समाज व शाळांमधून होणे अनिवार्य आहे. शाळेतील शिक्षक हे कुटुंबातील व्यवतीपेक्षा साक्षर व प्रशिक्षित असतात. कुटुंबातील आई-उचयवडील, आजी-उचयआजोबा, किंवा काका-उचयकाकू पैकी कोणीही शिक्षक असतील तर त्यांचे घरातील बालक समजून घेत नाहीत किंवा त्यांनी जे सांगतात त्यावर त्यांचा विश्वास नसतो परंतु शाळेतील शिक्षक-उचयशिक्षिकेने सांगितलेल्या प्रत्येक गोष्टीवर दृ-सजय विश्वास असतो. त्यामुळे प्रमाणित उदाहरणे व दाखले शिक्षकांकडून देणे अपेक्षित आहे. प्राथमिक व माध्यमिक स्तरावरील मूले ही खेळणारी व बागडणारी असतात त्यामुळे त्यांना ज्या गोष्टीत रस आहे त्या गोष्टीच्या माध्यमातून त्यांना अध्यापन करावे. खेळाच्या माध्यमातून कथा-उचयगोष्टी, कविता, नाटक इत्यादीमध्ये मूले जास्त अवधान/लक्ष देतात. त्यासाठी एखादी गोष्ट वर्गात शिकवताना नवरसाचा वापर करणे गरजेचे आहे. या स्तरावरील विद्यार्थी कृतीशील व सर्जनशील असतात त्यामुळे यांच्यासमोर कंटाळवाणे व पुराणकथा मांडु नयेत. त्यामुळे यांच्यात असणारा शिक्षणाचा रस कमी होतो व शिक्षणाची आवड, जिद्द कमी होते. अध्ययन-उचयअध्यापनामध्ये विद्यार्थी -उचयशिक्षक आंतरक्रिया करून विद्यार्थी बोलके करणे गरजेचे आहे. एकतर्फी अध्यापनाने विद्यार्थी कंटाळतात आणि त्यांची शिक्षणाविषयी असलेले प्रेम, आवड, कमी होते. त्याच बरोबर भाषाविकास करण्यासाठी यांना नवीन नवीन प्रयोग, गृहपाठ, देताना त्यांना त्यांची आवड कल पाहून व वयाचा विचार करून देण्यात यावा. वाचनासाठी अभ्यासेतर साहित्याची यादी द्यावी वर्तमानपत्राचे कात्रण व पत्रांचे एकत्रीकरण असे विविध कार्य करण्यासाठी त्यांना कृतीशील बनवावे. वयोमानानुसार वेगवेगळी उपक्रम राबवावेत व त्यामध्ये त्यांचा कृतीयुक्त सहभाग घ्यावा. उपक्रम राबविल्याने विद्यार्थ्यांना नवीन ज्ञानाची माहिती होते. त्यानुसार भाषाविकासाची असलेले शालेय प्रयोग, उपक्रम पूर्ण करून घेण्यात यावेत. सर्वसाधारण 'भाषा' ही संज्ञा वापरण्यात काही चुकीचे नसले तरी तिचा सखोल अभ्यास करायचा असेल तर मात्र आपण नेमका कशाचा अभ्यास करणार आहोत, हे स्पष्ट असावे लागते. भाषाविज्ञान ही ज्ञानशाखा त्यामुळे भाषेची अधिक नेमकेपणाने व्याख्या करते. भाषेचे स्वरूप नेमकेपणाने उलगडण्यासाठी ते आवश्यक आहे त्यादृष्टीने पाहता, केवळ बोलणे म्हणजे भाषा नव्हे तर भाषा ही त्याच्याही पहीकडे अधिक व्यापक आहे. भाषा ही विविध प्रकारांनी मानवी जीवनाच्या सर्व अंगांना व्यापून गोष्ट असल्याने तिच्याकडे विविध रीती आणि दृष्टिकोन संभवतात. मानवी मुखयंत्रणेतून निर्माण -हजयलेली, ध्वनीचिन्हांनीयुक्त असलेली यादृष्टीक संकेतव्यवस्था म्हणजे भाषा होय जन्माला

आलेले बालक हळुहळु पाहून भाषा आत्मसात करण्याचा प्रयत्न करते. तो सुरुवातीला पाहून हसणे, भुक् लागली की रडणे अशा गोष्टी करत असतो. परंतु त्याच्या कानावर जसा ध्वनी पडतो तशाप्रकारे तो बोलण्याचा प्रयत्न करत असतो. सुरुवातीला तो फक्त एकेरी शब्दच बोलतो मग जोडशब्दाचा उच्चार करण्याचा प्रयत्न करतो. त्याच्या कानावर ज्या शब्दांची वाळ पडते तो उच्चार करण्याचा प्रयत्न केला जातो. आई त्याला बाबा, मामा, काका, असे सोपे शब्द शिकवते अशी भाषिक प्रगती बालकामध्ये दिसून येते. कुटुंब, समाज व शाळा या घटकांमध्ये त्याची प्रगती होत असते. या काळात त्याच्यावर असे संस्कार होतात तशीच प्रगती त्याच्याकडून होत असते. अध्ययन -उचय अध्यापन करताना प्रमाणित भाषेचा वापर करणे अनिवार्य आहे. विद्यार्थी समाजातील कोणत्या घटकांमधून भागामधून येतात त्याच्यावर त्यांची भाषा अवलंबून असते. ग्रामीण भाग व शहरी भाग यांच्यात भाषेचा खूप फरक असतो. शहरी भागातील व ग्रामिण भागातील

विद्यार्थी सारखाच अभ्यासक्रम शिकत असले तरी त्यांच्या अनुभूतीवरून शिक्षणातील जास्त शिक्षण-उचयअनुभव घेत असतात. शेती हा घटक शहरी भागातील विद्यार्थी पाठ्यक्रमाच्या सहाय्याने व इतर अनुभवाने शिकतात तर ग्रामीण भागातील विद्यार्थी शाळेतून बाहेर पडले की शेतीच त्यांचे शिक्षण असते. औद्योगिकीकरण, शहरीकरण या घटकांची माहिती शहरी भागातील विद्यार्थ्यांना कारखानदारी हे घटक शिकवण्यासाठी क्षेत्रभेटीसारखे उपक्रम राबवून त्यांना प्रत्यक्ष अनुभव देण्याचा प्रयत्न केला जातो. त्यासाठी अध्यापनामध्ये विद्यार्थ्यांचे तय व समाजाचा विचार करणे गरजेचे असते. एखादा विद्यार्थी बालसुधारगृहातून शाळेत शिकण्यासाठी येतो तर एखादा विद्यार्थी संस्कारपूर्ण कुटूंबातून शिकण्यासाठी येतो तेव्हा या प्रकारच्या विद्यार्थ्यांमध्ये खूप मोठा विचारशैलीचा भाग वेगळा असतो. किंवा बालकाश्रमातून काही विद्यार्थी स्वतःची स्वतः कामे करून शिकण्यासाठी शाळेत येतात, अशा वेगवेगळ्या विद्यार्थ्यांचा शिकण्याचा कल लक्षात घेवून भाषाविकास करणे महत्वाचे आहे. वरीलप्रमाणे विद्यार्थी एकाच वर्गात सामावून घेणे, दोन्ही थरांना समजेल अशा भाषेत अध्यापनाचे कार्य करणे महत्वाचे आहे. भाषिक खेळ, शाब्दिक खेळ, व्याकरणाचा भाग रूपक, अलंकार इत्यादी घटकांचा पूर्णपणे अभ्यास करून विद्यार्थ्यांना प्रमाणिक भाषेचा वापर करणे अनिवार्य करावे, सेमिनार, चर्चा, परीसंवाद इत्यादीचे आयोजन करून विद्यार्थ्यांना भाषाविकास करणे महत्वाचे आहे.

समाप्ते :-

प्राथमिक व माध्यमिक स्तरावरील विद्यार्थी शैक्षणिकदृष्ट्या अनभिज्ञ असतात किंवा साक्षर नसतात. त्यांची शिकण्याची आवड निर्माण होण्याचा काळ तयार -हजयलेला असतो. अशा परिस्थितीत त्यांना योग्य मार्गदर्शनाची गरज असते. एखादा विद्यार्थी अभ्यासक्रमाच्यापेक्षा वेगळे साहित्य वाचून स्वतः पुस्तक लिहिणे, कविता करणे कथा लिहिणे असे काही गुण आत्मसात करण्याचा प्रयत्न करतात तेव्हा त्यांना त्यांच्या चुका लक्षात आणून देवून त्या सुधारण्यास मदत करून प्रोत्साहन केले असता तो विद्यार्थी भविष्यकाळात लेखन, साहित्यामध्ये नावलौकिक करू शकतो. या स्तरावरील विद्यार्थी खेळात सहभागी होवून एखाद्या स्पर्धेच्या माध्यमातून स्वतःची कौशल्ये विकसित करू शकतो तेव्हा अशा प्रकारच्या विद्यार्थ्यांना योग्य मार्गदर्शन करून त्यांच्यात उपजत असलेल्या कलागुणांना वाव देवून त्यांचा विकास करणे गरजेचे आहे. कुटूंबातील व्यवृती आपल्या पाल्याच्या बाबतीत अनभिज्ञ असतात परंतु शिक्षक विद्यार्थी कोणत्या क्षेत्रात प्रगती करू शकतो. तेव्हा अशा विद्यार्थ्यांना योग्य मार्गदर्शनाची गरज असते. या स्तरावरील विद्यार्थ्यांच्या योग्य कलागुणांची पारख करून त्यांना योग्य वेळी योग्य मदत व मार्गदर्शन केल्याने लोखंडाचे परीसाच्या साहाय्याने सोने होण्यास फारसा वेळ लागणार नाही. त्यासाठी योग्य वेळी योग्य मार्गदर्शन खूप महत्वाचे असते. त्यामुळे प्राथमिक व माध्यमिक स्तरावरील विद्यार्थ्यांचा भाषाविकास करण्यासाठी योग्य उपाययोजना करून विद्यार्थ्यांचा विकास करणे हे मुख्य ध्येय ठेवून अध्यापन -उचय अध्यापन करणे संशोधकास योग्य वाटते.

संदर्भग्रंथसूची :-

- १) 'महाराष्ट्रटार्डम्स' वर्तमानपत्र -उचय जानेवारी ते फेब्रुवारी २०२१
- २) 'लोकसत्ता' वर्तमानपत्र -उचय २७ ते २८ फेब्रुवारी २०२१
- ३) भाषा वाङ्मय -उचय श्रीधर आपटे
- ४) मराठी भाषाविकास -उचय ना. सी. कुलकर्णी

दुर्बल घटकांचे सबलीकरण ग्रामीण विकासाचा मार्ग (ग्रामीण विकास विभाग)

डॉ. संजय भास्कर तायडे

श्री.स.ह.केळकर कला,वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, देवगड

भारतीय जीवनात खेड्याला महत्वपूर्ण स्थान आहे. ग्रामीण समाज म्हणजे खेड्यात राहणाऱ्या व्यक्तींचा समूह होय. ग्रामीण भागात शेती व पूरक व्यवसायांना महत्वाचे स्थान आहे. भारतातील सर्वच खेड्यांची लक्षणे वरवर पाहता सारखीच दिसत असली तरीसुद्धा त्यांची राहण्याची पध्दत, रूढी, प्रथा, परंपरा अंतर्गत रचना यामध्ये तफावत आढळते.

ग्रामीण भागात विविध जाती, धर्मांचे, पंथाचे लोक वास्तव्य करीत असतात. ग्रामीण भागात अनुसूचित जाती, जमाती, महिला, भूमिहीन, शेतमजूर, अल्पभूधारक कुटुंबाचे प्रमाण बरेच मोठे आहे. ग्रामीण समुदायातील या दुर्बल घटकाचा विकास झाल्याशिवाय विकासाची प्रक्रिया पुढे जाणार नाही.

सबलीकरणाचा अर्थ :-

सबलीकरण म्हणजे स्वतःबद्दल व दुसऱ्याबद्दल सकारात्मक भूमिका.

सबलीकरणात पुढील घटकाचा समावेश होतो.

१. समाजातील संसाधनांचा उपयोग करण्याकरिता अनुसूचित जाती, अनुसूचित जमाती व महिलांना समान संधी. २. विचार व प्रत्यक्ष कृती करताना लिंगभेदभाव न करणे. ३. आर्थिक स्वातंत्र्य.

कोणत्याही देशाचा विकास करायचा असेल तर विविध घटकाला विकासाची संधी प्राप्त झाली पाहिजे. दर्जा सुधारण्यासाठी सबलीकरणाचे सर्वांगीण प्रयत्न होणे आवश्यक आहे. समाजातील अनुसूचित जाती, अनुसूचित जमाती, इतर मागास वर्ग व महिला यांच्या संतुलित विकासानेच देशाचा विकास करता येईल. सबलीकरण हे सामाजिक न्याय व समानता यांच्याशी जोडले गेले आहे. समाजामध्ये दुर्बल घटकाला समान वागणूक मिळणे ही सबलीकरणाकरिता प्रमुख गरज आहे. राष्ट्र बांधणीसाठी सबलीकरण आवश्यक आहे.

सबलीकरणाची उद्दिष्ट्ये :-

१. सकारात्मक आर्थिक धोरणाद्वारे अनुसूचित जाती, अनुसूचित जमाती व महिलांचा पूर्णपणे विकास होईल.

२. दुर्बल घटकांना सामाजिक व राजकीय हक्कांद्वारे सबलीकरण. ३. शिक्षण व आरोग्य सेवा यात संधी

वरील सबलीकरणाची उद्दिष्ट्ये साध्य झालेली आहे की नाही याचे विश्लेषण खालील प्रमाणे करता येते.

अ) शासकीय योजना :-

पहिल्या पंचवार्षिक योजनेपासून केंद्र शासनाने अनेक योजना दुर्बल घटकांकरिता राबविल्या.

१. सुवर्ण जयंती ग्राम स्वयंरोजगार योजना :- या योजनेची सुरुवात १ एप्रिल १९९९ पासून झाली.

योजनेची ठळक वैशिष्ट्ये :-

१. ग्रामीण भागातील अतिलहान उद्योगांच्या विकासातून दारिद्र्यरेषेखालील ग्रामीण कुटुंबांच्या उत्पन्नात वाढ करणे. २. व्यवसायानुरूप गटाची निर्मिती व तांत्रिक माहिती देणे. ३. स्वयंसहाय्यता गटांना तो चालविण्यासाठी खेळते भांडवल व बँकेकडून आवश्यक कर्ज. ४. ग्रामीण लोकांच्या कौशल्यात वाढ करणे. ५. ग्रामीण लोकांना संधी व त्यांच्यातील नेतृत्व विकसित करणे.

स्वयंसहाय्यता गट :- व्याख्या- निश्चित स्वरूपाचे सामुदायिक उद्दिष्ट घेऊन स्वच्छेने एकत्र आलेल्या लोकांचा समुह होय.

गटांचे प्रकार :-

१. फक्त महिलांचे गट (५०%) २. फक्त पुरुषांचे गट ३. पुरुष व महिलांचे संमिश्र गट ४. अपंगांचे गट (३%)

गटाचा दर्जा ठरविणे :-

१. जिल्हा ग्रामीण विकास यंत्रणा, स्वयंसेवी संस्था २. स्वतंत्र व्यावसायिक संस्था व बँक

बचत गटांना खालीलप्रमाणे वाटा दिला जातो. केंद्रशासनाचा वाटा :- ७५%, राज्य शासन :- २५%

गटाचे उपटप्पे :-

१. १० ते २० सदस्य गटात असावेत. २. सदस्य दारिद्र्यरेषेखालील कुटुंबातील असावेत. ३. गटाची नियमावली असावी.

४. सर्वानुमते निर्णय प्रक्रिया असावी.

ब) सामाजिक विकासाद्वारे सबलीकरण :-

महिला सबलीकरण ही एक मानसिक अवस्था असून त्यामध्ये महिलांची कार्यक्षमता वाढावी याकरिता २० मार्च २००१ साली केंद्रशासनाने महिला विकास धोरण जाहीर केले.

सबलीकरणाच्या विकासात्मक योजना खालीलप्रमाणे

१. अंगणवाडी विशेषविमा योजना
२. आशा योजना
३. महिला उद्योजकांसाठी कर्ज
४. मुलींसाठी विशेष निवासी विद्यालय
५. एकात्मिक बालविकास योजना
६. एकुलती एक कन्या शिष्यवृत्ती योजना
७. जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम
८. जिल्हा परिषदांमध्ये महिला व बालकल्याण समित्या

क) राजकीय हक्कांद्वारे अनुसूचित जाती, अनुसूचित जमाती व महिलांचे सबलीकरण

महाराष्ट्र राज्यात सन २०११ मध्ये स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये ५० टक्के महिलांसाठी आरक्षणाची तरतूद करण्यात आली आहे. अनुसूचित जाती व अनुसूचित जमातींना लोकसंख्येच्या प्रमाणात आरक्षणाची तरतूद करण्यात आली आहे.

ड) स्त्री व पुरुष समानता :-

स्त्री व पुरुष हे दोघेही मानव असून दोघांना मिळणाऱ्या संधी, दर्जा याकरिता भारतीय राज्यघटनेत विविध कायद्याद्वारे प्रयत्न केलेले दिसून येतात.

१. वारसा हक्क अधिनियम १९८०
२. मजुरी दर अधिनियम १९४८
३. नोंदणी विवाह कायदा १९५४
४. हिंदू विवाह कायदा १९५५
५. समान वेतन कायदा १९७६
६. कौटुंबिक हिंसाचारासंबंधीचा कायदा
७. शिक्षण हक्कासंबंधीचा कायदा
८. हुंडाबळी बंदी कायदा १९६१ दुरुस्ती (१९८६)

महाराष्ट्र राज्यातील पंचायतराजमध्ये खालीलप्रमाणे आरक्षण ठेवण्यात आले आहे.

अ.क्र.	एकूण जिल्हापरिषदा	महिला आरक्षित जिल्हा परिषद अध्यक्ष	एकूण पंचायत समित्या	आरक्षित पंचायत समिती सभापती	एकूण ग्रामपंचायती	महिला आरक्षित सरपंच
१	३६	१८	२९८	४९	२८८१३	१४४१६

प्रस्तुत शोधनिबंध लिहिण्यासाठी दुय्यम तथ्य संकलन पध्दतीचा अवलंब करण्यात आला आहे.

वरील माहिती वरून असे अधोरेखित होते ही पंचायत राजमध्ये अनुसूचित जाती, जमाती, इतर मागासवर्गीय महिलांना सत्तेत सहभाग मिळण्यास मदत झाली आहे.

वरील सर्व विवेचनावरून खालील निष्कर्ष काढता येतात.

१. सुवर्णजयंती ग्रामस्वरोजगार योजनेमुळे महिलांचा व दुर्बल घटकांचा आर्थिक व सामाजिक विकास होण्यास फार मोठी मदत झाली आहे.
२. एसजीएसवाय योजनेमुळे व्यक्तीगत गुण, संघटन कौशल्य निर्णय घेणे, जबाबदारीची भावना, सहकार्याची भावना, अशा गुणांना वाव मिळालेला दिसून येतो.
३. विविध प्रकारच्या शासकीय योजनांमुळे ग्रामीण भागातील लहान मुले महिला यांना आरोग्याच्या सुविधा मिळण्यास मदत झाली आहे.
४. केंद्र व राज्य शासनाच्या विविध अभियाने व योजनांमध्ये लोकसहभाग वाढला आहे.
५. कोविड-१९ च्या महामारीमध्ये डॉक्टर, नर्स, शिक्षक, प्राथमिक शिक्षक, सरपंच, उपसरपंच,

अंगणवाडी सेविका, मदतनिस, आशा वर्कस यांचे योगदान मोठे आहे.

६. महाराष्ट्र राज्याचा पंचायत राजचा विचार करता स्थानिक स्वराज्य संस्थांमध्ये ५० टक्के आरक्षणाची तरतूद केल्याने अनुसूचित जाती, जमाती, इतर मागास वर्ग, महिला यांना पंचायत राजमध्ये सत्तेत आपला वाटा मिळाला.

७. समाजातील बंचित घटकाला नेतृत्व विकासाची संधी मिळाली आहे.

८. केंद्र शासनाने केलेल्या कायद्याची अंमलबजावणी प्रभावीपणे केली जावी.

उपाययोजना :-

१. ग्रामीण भागात दुर्बल घटकांचे सबलीकरण व्हावे याकरिता शासकीय योजनांमध्ये नवीन तंत्रज्ञानाचा वापर वाढला पाहिजे.

२. गावाच्या गरजांचा विचार करून क्रम ठरवून योजनांची अंमलबजावणी करावी.

३. समाजातील पुरुषांचा स्त्रियांकडे बघण्याचा दृष्टीकोन बदलला पाहिजे.

४. स्थानिक पातळीवरील शासकीय कर्मचाऱ्यांचे संरक्षण केले पाहिजे.

वरील शोधनिबंधाकरिता खालील संदर्भग्रंथाची मदत झाली.

१. प्रा. वा. भा. पाटील :- महाराष्ट्र प्रशासन प्रशांत पब्लिकेशन पृष्ठ क्र. २९८ ते ३०५

२. डॉ. भालबा विभुते :- पंचायत राज व्यवस्था मनोविकास प्रकाशन, मुंबईपृष्ठ क्र. २१ ते २७

३. डॉ. उज्वला वैरागडे व प्रा. विघुलता मुळे :- सामुदायिक विकास, विस्तार शिक्षण व महिला सबलीकरण विद्या बुक्स पब्लिशर्स औरंगाबाद पृष्ठ क्र. ३१२ ते ३८०

४. स्टडी सर्कल :- सामान्य अध्ययन (मनुष्यबळ, मानवी हक्क व समुदाय विकास) पृष्ठ क्र. २५७ ते २६७

५. काटले रविंद्र म.:- महिला बचत गट :- गोडवा कृषी प्रकाशन, पुणे पृष्ठ क्र. १४ ते २५

६. डॉ. विष्णू रामदास गुंजाळ :- पंचायत राज अथर्व प्रकाशन, जळगाव पृष्ठ क्र. ३९ ते ४४

भारत : शाश्वत वाढ आणि विकास

डॉ. हरी साधू वाघमारे

भूगोल विभाग प्रमुख, संभाजी कॉलेज (Arts, Com. & Sci.), मुरुड, ता.जि. लातूर-413520

ईमेल : hariwaghmare68@gmail.com

प्रस्तावना (Introduction):

आर्थिक विकास आणि पर्यावरण यांचो नाते तसे पाहता नवीन नाही. सन 1960 ते 1970 दरम्यान अर्थशास्त्रज्ञांनी पर्यावरणीय अवनती आणि आर्थिक विकास यांच्या गृहीत विरोधावर लक्ष केंद्रित केलेले होते. जसीजशी पर्यावरणीय अवनती आणि आर्थिक किर्या यांच्यामधील आकलनाची उकल होत गेली तसतशी पर्यावरण मार्गाने मैत्रीपूर्ण आर्थिक विकास प्राप्त होण्याच्या दृष्टीने चर्चेवर भर देण्यात येत आहे. पर्यावरणीय संरक्षण आणि मानवी वंशाचे कल्याणकारी जीवन एकमेकांच्या विरोधात नाही तर एकमेकास पूरक आहे याची जाणीव होऊ लागली. मानव आणि त्याच्या सभोवतालच्या पर्यावरणाचे एकात्मिकरण असते. म्हणजेच एकाचे दुसऱ्यावर अवलंबून असते. उत्पन्न आणि आर्थिक विकासाच्या गती खेरीज पर्यावरणाचे संरक्षण होऊ शकणार नाही तर पर्यावरण संरक्षणाविना आर्थिक विकास हळूहळू क्षीण होईल. अशा मोजक्या शब्दात मानवी चेहऱ्याचे वर्णन करण्याची निकड आहे. मानवी वंशाला पर्यावरणीय अवनतीपासून होणारा धोका हा आनेक मनुष्यहानीसारख्याच मोठा असणार. म्हणून औद्योगिकरण किंवा विकास कोणाही थांबवू शकणार नाही. साहजिकच, आपण 'शाश्वत विकास' म्हणजे मध्यम मार्ग अनुसरला पाहिजे.

उद्देश (objective):

- आर्थिक समतोल आर्थिक वाढ करणे.
- पर्यावरणीय पर्यावरण सुरक्षित ठेवणे.
- सामाजिक समाजातील प्रत्येक घटकाला संसाधनांचा वापर करण्यासाठी समाविष्ट करणे.

शाश्वत विकास संकल्पना (concept of Sustainable Development) :

साधनसंपत्तीच्या वापराचे निर्णय वर्तमान पिढीच्या गरजेनुसार होत असतात परंतु शाश्वत विकास संकल्पनेत भविष्यकालीन पिढ्यांच्या गरजांचा ही विचार केला जातो. संयुक्त राष्ट्र संघाने 1987 साली नॉर्वेचे भूतपूर्व-पंतप्रधान आणि जागतिक आरोग्य संघटनेचे संचालक जी. एच. ब्रंटलँड यांच्या अध्यक्षतेखाली जागतिक पर्यावरण व विकास' आयोगाची स्थापना केली. या समितीने शाश्वत विकासाची संकल्पना प्रथमच मांडली.

शाश्वत विकास म्हणजे काय? (What is sustainable Development)

वर्तमानकालीन गरजा भागविताना भविष्यकालीन पिढ्यांच्या स्वतःच्या गरजा पूर्ण करताना त्यांच्या क्षमतेबाबत कोणतीही तडजोड न करणाऱ्या विकासाला शाश्वत विकास असे म्हणतात.

पर्यावरण आणि विकास, जागतिक आयोग ब्रंटलँड आयोग, 1987

सुनिश्चित नियोजित प्रदेशात काही निवडक विकासाच्या क्षेत्रात साधनसंपत्ती उपभोग आणि त्याच्या पादार्थाची विल्हेवाट यांचा कमाल दर निरंतरणणे अमर्याद काळा पर्यंत होत राहिल याची खात्री देणे. त्याच बरोबर जैवउत्पादकता आणि पारिस्थितीय एकतेची हानी होऊ न देणे याला शाश्वत विकास असे म्हणतात.

“आर्थिक विकासाला अडथळा न आणता पर्यावरणीय संवर्धन गतिमान करते. सध्याच्या आणि भविष्यकालीन पिढ्यांच्या गरजा भागविताना साधनसंपत्तीचा निरंतर व याथायोग्य उपयोग करताना पर्यावरण धोका प्राप्त होणार नाही. याची विकास योजनांनी खात्री करून घ्यावयास हवी. आपल्या जीवनाधार प्रणालीस आणखी नुकसान होण्यापासून वाचविणे दीर्घकाळ अन्न संरक्षणासाठी जैवविविधता, जनुक संचय आणि इतर साधनसंपत्तीचे संवर्धन व संगोपन करणे याला शाश्वत विकास असे म्हणतात.”

पर्यावरण अहवाल, 1999; पर्यावरण व वनमंत्रालय, भारत सरकार “जागतिक स्तरावर दीर्घकालीन टिकणारे आणि निश्चित उपजीविकेचे साधन उपलब्ध केल्यास संपूर्ण गरिबामध्ये घट होईल की, ज्यामुळे साधनसंपत्तीचा अपक्षय, पर्यावरण अवनती, सांस्कृतिक विस्कळीतपणा आणि सामाजिक आस्थिरता कमी होईल असे शाश्वत विकासाचे प्राथमिक उद्दिष्ट आहे.

- ई. बारबियर, 'निरंतर आर्थिक विकासाची संकल्पना', पर्यावरण संवर्धन, 1987

अ-शाश्वत विकास (Un-Sustainable Development)

पर्यावरणीय अवनती अ-शाश्वत विकास झालेला आहे, याची कारणे पुढीलप्रमाणे आहेत.

i) वाढत्या लोकसंख्या प्रभाव :

मानवी लोकसंख्येची वाढ अतिशय वेगाने होते. आहे. बऱ्याच आशावादी लोकांचा असा अंदाज आहे की, आधीच गर्दी असणाऱ्या आपल्या ग्राहकावर या शतकामध्ये दुप्पट लोकसंख्या देखील पैलू शकेत, परंतु लोकसंख्येच्या दबावाचा प्रभाव पर्यावरणीय ज्हासाला कारणीभूत असेल.

ii) नैसर्गिक साधनसंपत्तीच्या उपभोग वेग :

गेल्या काही दशकात नैसर्गिक साधनसंपत्तीच्या उपभोगाचा वेग वाढलेला आहे. ब-याच वेळा अकार्यक्षम आणि अयोग्य योजनेद्वारा त्याचा उपयोग झालेला आहे, पुनर्नूतनीकरण साधनसंपत्तीकरिता आवश्यक असणारा तेवढा वेळही दिला जात नाही.

iii) वाढती लोकसंख्या साधनसंपत्तीचा नासाडीयुक्त उपभोग :

पर्यावरणाच्या अवनतीचा वेग वाढण्यास वाढत्या लोकसंख्या व साधनसंपत्तीचा नासाडीयुक्त उपभोग जबाबदार आहे. विकसनशिला देशात वाढत्या लोकसंख्येत प्रामुख्याने गरीब लोकांची भर पडते. की, अशा लोकांना अन्न निवार, वस्त्र, अरोग्य आणि शिक्षण यांसारख्या सुविधांची वानवा असते. लोकसंख्येच्या वाढीमुळे कृषीयुक्त शुष्क प्रदेशाचे रुपांतर वालुकामय प्रदेशात, वनांचे गवताळ प्रदेशात, गोड्या पाण्याच्या जलाशयांचे रुपांतर खाऱ्या पाण्यावर, सागरातील संपन्न प्रवाहभित्तीचे रुपांतर निष्प्राण पट्ट्यांमध्ये होत आहे.

iv) परिसंस्थेची अवनती :

परिसंस्थांच्या अवनतीमुळे जैवविविधता आणि जननिक साधनसंपत्तीचा विनाश होत आहे. अनेक पर्यावरणीय काल प्रतिचक्रांचा असल्याने विनाश कायम स्वरूपाचा असतो.

v) प्रदूषण :

साधनसंपत्तीचा अति वापर आणि दुरुपयोगामुळे हवा, जल, मृदा, प्रदूषण झालेले आहे. असे प्रदूषित द्रव्य दार्धकाळापर्यंत अस्तित्वात असते. असा स्त्रोतांची वाढती संख्या आणि प्रदूषणाच्या स्वरूपामुळे ही प्रक्रिया आधीकच गतिमान होत आहे. हवामान आणि हवेच्या चक्रीय प्रणालीमधील बदल हे सर्वात जटिल आणि सर्वात धोकादायक आहेत. एकाच प्रदेशात गरिब असणारी श्रीमंत व औद्योगिक राष्ट्र आणि तीन-चतुर्थात भागात असणारी विकसनशील व अविकसित राष्ट्रे यांच्या दरम्यान मोठ्या प्रमाणात असंतुलन निर्माण होत आहे.

शाश्वत विकासाची मार्गदर्शक तत्वे (Guidelines Principles of Sustainable Development)

i) अंत : उत्पादनातील असमानता :

तांत्रिक विकासावर भर देण्यात येतो. यामुळे गरिब राष्ट्रांच्या आर्थिक विकासाला चालना मिळते. राष्ट्री-राष्ट्रामधील सांपत्तिक दरी कमी होण्यास मदत होते. तांत्रिक विकासाचे उद्दिष्ट विकसनशील देशातील समस्यांचे निराकरण होईल असे असले पाहिजे; (उदाहरणार्थ, संसर्गजन्य, रोगावरील प्रतिबंधात्मक लसी, घरगुती औद्योगिक वापरासाठी निर्भळ इंधन, अनिश्चित हवामान प्रदेशातील अवर्षण कीड प्रतिबंधात्मक पिकांच्या जाती) यामुळे गरिब राष्ट्रांच्या आर्थिक विकासाला मदत होईल. त्यांच्यातील सांपत्तिक दरी कमी होऊन शाश्वत विकासाकडे वाटचाल होईल.

ii) आंतर-उत्पादनातील समानता:

साधनसंपत्तीची अतिरिक्त लयलुट थांबविली जाते. त्याज्य पदार्थ वा वायुचे प्रमाण कमी केले जाते. पारिस्थितिके संतुलन राखण्याचा प्रयत्न केला जातो. यामुळे सुरक्षित आरोग्याकारक आणि साधनसंपत्तीचे परिपूर्ण पर्यावरण भविष्यकालीन पिढीच्या हाती देण्यास मदत होते.

- I. सांस्कृतिक व जैविक विविधता आणि पारिस्थितिकीय एकात्मता यांचे जतन संवर्धन करणे.
- II. नैसर्गिक भांडवल मुलद्रव्य आणि शाश्वत उत्पन्न स्थिर ठेवणे.

- III. साधनसंपत्तीच्या वापराबाबत पूर्वानुकालित व अत्यंत काळजीपूर्वक असा धोरणांचा स्विकार करणे.
- IV. साधनसंपत्तीची समाजता व सामाजिक न्याय या पद्धतीने वापर करणे यामुळे सामाजिक संघर्ष व अडथळे नष्ट होतील.
- V. नैसर्गिक साधनसंपत्तीचा वापर पर्यावरणाच्या साधनसंपत्तीच्या नाविकरण पुनर्निर्माण क्षमतेइतके करणे.
- VI. मानवी साधनसंपत्तीचा संध्यात्मकपेक्षा गुणात्मक विकास घडवून आणणे.
- VII. पर्यावरण विवाद प्रादेशिक किंवा राष्ट्रीय पातळीवरून न पाहता वैश्विक स्तरावरून यथार्थता / वास्तववादी दृष्टीने हताळणे.
- VIII. सर्व समाजाने साधनसंपत्तीचा कार्यक्षमतेने आणि डोळसपणे वापर करावा.
- IX. परिस्थितिकीय शाश्वत धोरणाच्या संक्रमजासाठी व्यक्तिगत तसेच सामुदायिक सहभाग वाढविले.

शाश्वत विकासाचे घटक : (Elements of Sustainable Development)

i) नैसर्गिक साधनसंपत्तीचा कार्यक्षम वापर :

आर्थिक विकासासाठी साधनसंपत्तीचा वापर अनिवार्य असतो. परंतु साधनसंपत्तीचा डोळसपणे वापर महत्वाचा असतो. शाश्वत विकास संकल्पना देखील साधनसंपत्तीच्या वापरावर पूर्णपणे निर्बंध असा अर्थ अपेक्षित नाही तर नैसर्गिक साधनसंपत्तीचा व पर्यावरणाचा वापर अधिक कार्यक्षमतेने करणे की ज्यामुळे दीर्घकालीन लाभ मिळविता येतील. वर्तमानकालीन व भविष्यकालीन पिढ्यांसाठी याचा फायदा होईल.

ii) भविष्यकालीन पिढ्यांचे गुणात्मक जीवनमान :

शाश्वत विकास संकल्पनेचे उद्दिष्ट नैसर्गिक साधनसंपत्ती व पर्यावरणाचा वापर वर्तमानकालीन पिढीच्या जीवनस्तर उंचावण्याबरोबरच भविष्यकालीन पिढ्यांचे गुणात्मक जीवनमान खालावले जाणार नाही असे असते. नैसर्गिक साधनसंपत्तीचा शाश्वत वापर म्हणजे भविष्यकालीन पिढ्यांच्या गरजांचा विचार करून वर्तमानकालीन गरजा पूर्ण केल्या जातात.

iii) प्रदूषण कमी करणे :

शाश्वत विकास संकल्पनात पर्यावरणाचे प्रदूषण कमी करण्याचा प्रयत्न केले जातात. स्वच्छ, सुंदर, आरोग्यदायी पर्यावरण एका पिढीकडून दुसऱ्या पिढीकडे संक्रमित करण्याचा प्रयत्न केला जातो. पर्यावरणाचे वाढते प्रदूषण म्हणजे भविष्यकालीन पिढ्यांचा जीवनस्तर खालावणे होय. यासाठी प्रदूषण नियंत्रणाचे मार्ग अवलंबविले जातात.

iv) आर्थिक विकास :

शाश्वत विकास म्हणजे आर्थिक विकासाला मर्यादा घालणे असा त्याचा अर्थ नाही. नैसर्गिक साधनसंपत्ती व पर्यावरण यांचा अशा प्रकारे वापर केला जातो वर्तमान आणि भविष्यकालीन आर्थिक विकासाचा वेग यामध्ये समन्वय साधला जातो.

शाश्वत विकास प्रक्रिया संपादन (Acquirement of Process of Sustainable Development)

शाश्वत विकास संपादन करण्यासाठी आर्थिक, सामाजिक व पर्यावरणीय गरजामेध्य सतुलन साधने आवश्यक आहे. या प्रक्रियेत या पुढिल घटक महत्त्वचे ठरतात.

- I. शाश्वत पर्यावरणाशी उत्पादनाच्या व उपभोगाच्या पध्दती सुसंगत व्हाव्यात यासाठी आपला दृष्टीकोन व मूल्याप्रणीत उचित बदल अपेक्षित आहे.
- II. परंपरेने लाभलेल्या चांगल्या किंबहुना अधिक चांगल्या पर्यावरणाशी नैतिक व आर्थिक कारणासाठी आपणच जबाबदार असतो
- III. भविष्यकालीन पिढ्यांच्या सुरक्षित व उज्वल भवितव्याची जबाबदारी आपल्यावरच आहे.
- IV. विस्तार जाणाऱ्या अर्थव्यवस्थेच्या लाभाची पुनर्गुंतवणूक आवश्यक आहे.
- V. निसर्गापासून आपणास जे मिळते ते त्याला परत दिले तर साधनसंपत्तीच्या पुनर्निर्मितीची प्रक्रिया अव्याहतपणे चालू राहिल की ज्यामुळे मानवी गरजांची अखंडपणे परिपूर्ण होईल.
- VI. या दृष्टीकोनामुळे पर्यावरणीय साधनसंपत्तीचे मूल्य आणि काही आवश्यक परिस्थितिकी प्रजातीच्या संवर्धनाकडे लक्ष देण्यास मदत होईल.

- VII. अर्थव्यवस्थेच्या पुनर्रचना प्रक्रियेतून जर समृद्धी संवादित झाली तर पर्यावरणाची किंमत व मूल्य प्रतिबिंबत करता येईल.
- VIII. सर्व क्षेत्रातील उत्पादने व सेवा की, ज्यामध्ये संगणकापासून ते पर्यटनापर्यंत सर्व क्रिया पर्यावरणाचा एक भाग बनलेला आहे. यासाठी पर्यावरण संवर्धनाच्या पारंपारिक पद्धती अपुऱ्या पडू लागलेल्या आहेत. यासाठी शाश्वत विकास प्रक्रियेतील अडथळे कमी केले पाहिजेत.
- IX. शाश्वत विकास म्हणजे केवळ उत्पादन व उपभोगाच्या पद्धतीत बदल नाही तर आपला दृष्टीकोन व जीवनमुल्यातील बदल अपेक्षित आहे.
- X. पर्यावरण संरक्षणासाठी कल्याणकारी शाश्वत विकासावर भेर देणे आवश्यक आहे. यासाठी विकासाचा पाया व पर्यावरणीय धोरणांचे स्थूल अर्थशास्त्रीय दृष्टीकोनातून सर्व खर्च व लाभाचे विश्लेषण करणे आवश्यक आहे, यालाच 'पर्यावरणीय जबाबदार विकास' म्हणता येईल.
- XI. पर्यावरणीय अवनतीतून भावी पिढ्यां शापित होती अशा आपल्या प्रत्येक कृतीवर निर्बंध घातले पाहिजेत.
- XII. नैसर्गिक साधनसंपत्तीवरील अतिदबावामुळे या विश्वातील आपल्या सुंदर वसुधवरील भावी पिढ्यांना स्वच्छ ताजी हवा, तजेलदार पाण्याचे थेंब, हरित पृथ्वीपासून वंचित व्हावे लागणार आहे. यासाठी शाश्वत विकास हवा.
- XIII. शाश्वत विकास म्हणजे पिढ्यानपिढ्या टिकणारा विकस यासाठी उद्याचे दीर्घकालीन लाभ होण्यासाठी वर्तमान स्थितीत काही बाबतीत तडजोड हवीच.

शाश्वत विकासासाठी उपायोजना (Measures for Sustainable Development)

शाश्वत विकासासाठी काही महत्वाच्या उपाययोजना पुढीलप्रमाणे आहेत:

i) योग्य तंत्रज्ञानाचा वापर :

स्थानिकदृष्ट्या अनुकूल, पाशिवस्थितिकीय मैत्री, कार्यक्षम साधनसंपत्ती आणि सांस्कृतिक दृष्टी अनुरूप याला 'योग्य तंत्रज्ञानाचा वापर' असे म्हणतात.

स्थानिक किंवा एतद्वेशीय किंवा मुळचे तंत्रज्ञान हे अधिक उपयुक्त खर्चाच्या दृष्टीने परवडणारे आणि निरंतर असते. आदर्श नमुना म्हणून निसर्गाकडे पाहिले पाहिजे की, ज्यामध्ये प्रदेशामधील नैसर्गिक गोष्टी हेच त्याचे घटक असतात. या संकल्पनेला 'निसर्गानुरूप आकृतीबंध' असे संबोधले जाते.

ii) साधनसंपत्तीचा उपभोगत घट, पुन्हा: पुन्हा वापर आणि पुनर्चक्र, एक 3-4 दृष्टिकोन

दृष्टीकोन असा सल्ला देत की, साधनसंपत्तीचा कमीतकमी उपभोग घ्या प्रवाहात त्याज्य पदार्थ टाकण्याऐवजी त्याचा पुन्हा-पुन्हा वापर करा. प्रदीर्घ काळापर्यंत पदार्थाचे पुनर्चक्र करून निरंतरतेचे उद्दिष्ट गाठणे यामुळे आपल्या साधनसंपत्तीवरील ताण कमी होतो. त्याचप्रमाणे त्याच पदार्थाची निर्मिती आणि प्रदूषणही कमी होण्यास मदत होते.

iii) पर्यावरणीय शिक्षण आणि पर्यावरणीय जाणीव-जागृतीसाठी प्रोत्साहन :

सर्व शिक्षण च्या प्राक्रियेत पर्यावरणीय शिक्षणाची केंद्र उभारल्यास आपली पृथ्वी व पर्यावरण, लोकांची विचार करण्याची दिशा आणि दृष्टिकोन बदलण्यास बरिच मदत होईल. शाळेत अगदी सुरुवातीपासून विषयास प्रारंभ केल्यास लहान मुलामध्ये पृथ्वी आपली आहे ही भावना मनात रूजविली जाईल. आपल्या विचारसरणीत आणि कृतीमध्ये 'पृथ्वी विचारसरणी' ची बिंबविली जाईल की, ज्यामुळे आपल्या जीवनमान पद्धतीमध्ये 'निरंतर परिवर्तन' होईल.

iv) वहनक्षमतेनुसार साधनसंपत्तीचे उपयोजन :

कोणतीही प्रणाली प्रदीर्घ काळापर्यंत मर्यादित संख्याच्या जीवाचा भार सहन करू शकते, याला 'वहन क्षमता' असे म्हणतात.

मानवाच्या बाबतीत 'वहनक्षमता' ही संकल्पना आधिक्य जटील असते. अन्या प्राणीमात्रासारखे मानवास जगण्यासाठी फक्त अन्नाची गरज असते असे नाही तर दर्जेदार जीवनमाणासाठी त्याला अनेक गोष्टींची आवश्यकता असते.

निष्कर्ष (Conclusion)

सध्यास्थितीपर्यंत मानवकेंद्रित विकास झालेला आहे. हा विकास प्रामुख्याने काही विकसित देशातच दिसून येत आहे. वैज्ञानिक व तांत्रिक प्रगतीमुळे हवा, पाणी, ध्वनी मृदा अन्न यामधील प्रदूषण वाढत आहे. साधनसंपत्तीचा अतिरिक्त वापर होत आहे. याच पध्दतीने विकासाची प्रक्रिया सुरु राहिली तर आपणास लवकरच 'विनाशाच्या दिवसाला तोंड द्यावे लागेल. यासाठी सामाजिक घटकांचा विकास आणि पर्यावरण प्रक्रियेशी समन्वय साधने आवश्यक आहे.

शाश्वत विकासावर भर देण्याची गरज केवढी आर्थिक विकासासाठी नाही तर पर्यावरणीय व सामाजिक समस्याकेडे लक्ष देणे आवश्यक आहे. जोपर्यंत समाज आणि पर्यावरण व्यवस्थापनाची आर्थिक विकासाबरोबर योग्य सांगड घातली जात नाही किंवा योग्य पध्दतीने संक्रमण होत नाही तोपर्यंत विकास हा आपणास दीर्घकाळपर्यंत संकटात टाकणार आहे. आधिक, सामाजिक आणि पर्यावरणीय गरजादरम्यान संतुलन साधल्या वरच शाश्वत विकास साध्य होऊ शकेल.

दारिद्र्या निर्मूलन, संपत्तीमधील गरिब-श्रीमंतीमधील दरी कमी करणे, पर्यावरण प्रदूषण व पर्यावरण अवनती, मृदा भूमी अवनतीवर निर्बंध घालणे, नैसर्गिक साधना संपत्ती व जैवविविधतेचे संवर्धन करणे इत्यादी साठी व सातत्याने शाश्वत विकासाची आवश्यकता आहे.

संदर्भ ग्रंथ (Bibliography) ;

1. भारताचा समग्र भूगोल – सवदी- कोळीकर सर
2. भूगोल (UPSC-MPSC) - डॉ. अमोल सावनी
3. संपूर्ण भूगोल जग+भारत- राहूल पाटील, प्रशांत अहिरे, विकास गिरासे

“पर्यावरण संवर्धन काळाची गरज - एक चिकित्सक भौगोलिक अभ्यास”.

प्रा.डॉ. भाऊसाहेब सोनाजी देवकर

संत रामदास महाविद्यालय, घनसावंगी, भूगोल विभाग ता. घनसावंगी जि. जालना.

Email. bhausdevkar@gmail.com,

प्रस्तावना : (Abstract)

पर्यावरण संवर्धनासाठी मानवी दृष्टिकोनातून फार महत्त्वाची भूमिका आज जगासमोर उभी राहिलेली आहे. नैसर्गिक साधन संपदा व लोकसंख्या यांचा अन्योन्य संबंध असून कोणत्याही राष्ट्रातील लोकसंख्या ही उत्पादनाच्या दृष्टीने त्या राष्ट्रातील नैसर्गिक साधन संपत्तीचा एक महत्त्वाचा घटक मानण्यात येते. मानव आपल्या हव्यासापोटी भविष्याचा विचार न करता स्वतःच्या स्वार्थाकरिता नैसर्गिक साधन संपत्तीचा ऱ्हास मोठ्या प्रमाणावर करत आहे. या परिस्थितीत अल्पकालीन फायद्यासाठी होणारी नैसर्गिक संपत्तीची हानी याकडे दुर्लक्ष करतो, याचा परिणाम असा होतो की, नैसर्गिक वनस्पती, जलसंपदा, जमीन, प्राणी या सर्व संपदावर मानवाचे आक्रमण हा पर्यावरण शास्त्राच्या दृष्टीने अतिशय चिंतेचा विषय झालेला आहे.

मानवी हस्तक्षेपामुळे भूजलाचा अनियंत्रित व प्रमाणाबाहेर उपसा झाला, वाढती लोकसंख्या मुळे वाढणारे शहरीकरण, मानवाचा अतिस्वार्थ व अनिर्बंधपणे प्राण्याचा सर्वत्र होणारा छळ, त्यांची हत्या, निसर्गातील घटकांचा पारंपारिक समतोल हादेखील मानवाने त्या ठिकाणी ठेवलेला नाही. म्हणून नैसर्गिक साधनसंपत्तीच्या विनाश होत आहे. म्हणून साधनसंपदा चा अनिर्बंध वापर झाल्यामुळे मानवाला पर्यावरणात्मक समस्येला सामोरे जाण्यास भाग पडले आहे. आज जगासमोर पर्यावरण संरक्षण व नैसर्गिक साधन संपत्ती जतन करण्याची समस्या उभी असल्याचे दिसून येते. म्हणून दैनंदिन जीवनात साधन संपत्ती चे महत्त्व कायम राखण्याकरिता विविध गोष्टी समजणे गरजेचे आहे.

बीज सज्ञा (key Words) : वृक्षसंपत्ती, नैसर्गिक साधन सामग्री, ऊर्जेचे स्रोत, रसायनांचा वापर, वाहतूक साधने, पर्यावरण संरक्षण व नैसर्गिक साधन संपत्ती.

प्रस्तावना (Introduction) :

पर्यावरण जोपासण्यासाठी मानवी दृष्टिकोनातून जलद गतीने होणाऱ्या आधुनिकीकरणावर नियंत्रण करणे गरजेचे आहे. याबरोबरच वाढते शहरीकरण यांचे योग्य नियोजन व रचना करून शहरीकरणामुळे उद्भवणाऱ्या समस्या नियंत्रित करणे गरजेचे आहे. वाढती लोकसंख्या व उपलब्ध साधन संपत्ती यांच्यातील असमतोल निर्माण झाल्याने नैसर्गिक साधन संपत्तीचा ऱ्हास होऊन वनक्षेत्राचा भाग कमी होणे, साधन सामुग्रीवर पडणारा भार, अन्नधान्याचा तुटवडा, राहण्याची व्यवस्था व उपलब्ध नसणारी जागा विषयक समस्या व मानवी दृष्टिकोनातून अत्यावश्यक असणाऱ्या गरजा यामध्ये असंतुलन निर्माण झालेली आहे. म्हणूनच नैसर्गिक साधनसंपत्तीवर लक्ष केंद्रित करून पारंपारिक ऊर्जा निर्मितीवर भर देणे. शाश्वत विकास ही संकल्पना राबविणे. व वैयक्तिक समृद्धीच्या वाढीवर मानवाने नियंत्रण करणे गरजेचे आहे. म्हणून पर्यावरण संवर्धनासाठी पर्यावरणाचे जसे प्रमुख घटक जमीन, भूपृष्ठ, पाणी वातावरण, जंगले, नैसर्गिक वनस्पती, प्राणीसंपदा, नैसर्गिक साधन संपत्ती यामध्ये खनिजे, उर्जा इत्यादी घटकांबरोबरच यांचा जास्त वापर झाल्याने निसर्गात बिघाड झाला आहे. व निसर्गाचा समतोल जेव्हा बिघडतो तेव्हा प्रदूषणास सामोरे जावे लागते. म्हणून पृथ्वीच्या वातावरणात होणाऱ्या विविध प्रकारच्या बदलास मानवी क्रिया ही कारणीभूत ठरतात.

मानवाच्या वाढत्या हव्यासापोटी विविध देशांमध्ये आर्थिक विकास व तांत्रिक प्रगती वेगाने होत आहे.

त्याचबरोबर मानवी जीवन सुखी राहिल या उद्देशाने त्या ठिकाणी पर्यावरण हानी होण्यास सुरवात झालेली दिसून येते. औद्योगिकीकरणामुळे पर्यावरणीय संपदाच्या वापराला प्रचंड गती मिळाली आणि औद्योगिक क्रांतीनंतर मानव आणि पर्यावरण यांच्यातील प्रस्थापित सुसंवाद नष्ट होण्यास सुरवात झाली.

अभ्यास क्षेत्र (Study Area) :

प्रस्तुत शोधनिबंधाच्या अभ्यासा करिता अभ्यास क्षेत्र म्हणून संपूर्ण भारत देशाचा विचार करण्यात आलेला आहे. भारतातील मुख्य भूप्रदेशाचा अक्षवृत्तीय विस्तार 8°4' 28" उत्तर ते 37°6'53' उत्तर असा आहे. भारताचा अक्षवृत्तीय विस्तार 29°2' 25" इतका आहे. भारताचा रेखावृत्तीय विस्तार 68°7'33" पूर्व ते 97°24' 47" पूर्व इतका आहे. त्यानुसार भारताचा रेखावृत्तीय विस्तार 29° 17' 14" इतका आहे.

संशोधनाची उद्दिष्टे(Objectives) :

1. वर्तमान स्थितीमध्ये साधनसंपदाचा अनिर्वंध वापर झाल्यामुळे मानवाला पर्यावरणात्मक समस्येला सामोरे जाण्यास भाग पडत आहे. या समस्येवर उपाय शोधण्यासाठी प्रस्तुत शोधनिबंधामध्ये अभ्यास करण्यात आलेला आहे.
2. पर्यावरणाचे प्रमुख घटक जमीन, भूपृष्ठ, पाणी वातावरण, जंगले, नैसर्गिक वनस्पती, प्राणीसंपदा, नैसर्गिक साधन संपत्ती यामध्ये खनिजे, उर्जा इत्यादी घटकांबरोबरच यांचा जास्त वापर झाल्याने निसर्गात बिघाड झाला आहे. यांचा अभ्यास करणे.
3. औद्योगिकीकरणामुळे शहरीकरण वाढून त्याठिकाणी मानवाच्या हव्यासामुळे निसर्गाचा असमतोल होत आहे. म्हणून भारतातील शहरे प्रदूषित होण्यामागच्या कारणांचा शोध घेत प्रदूषण कमी कसे होईल ? यांचा अभ्यास करणे.

गृहितके : (Hypothesis)

1. औद्योगिकीकरणामुळे शहरीकरण वाढून त्याठिकाणी पर्यावरणीय प्रदूषणास चालना मिळाल्याचे दिसून येते हे लोकसंख्या प्रचंड प्रमाणात वाढल्याने लोकसंख्येचा विस्फोट झाल्याने धान्य उत्पादन वाढविणे गरजेचे असते.
2. धान्य उत्पादनासाठी शेती समृद्ध करून त्या ठिकाणी जलसिंचन, रासायनिक खते, कीटकनाशके व जंतुनाशके यांचाही वापर जास्त प्रमाणात करण्यात आलेला आहे. या सर्व मानवी व्यवहार यामुळे घातक रोग मूलद्रव्यांचे असंख्य कण हवा, पाणी, जमीन यात मिसळले जातात. हे द्रव घटक पर्यावरणातील मूळ घटक नाहीत परंतु ते उपद्रवकारक असतात त्यांच्यामुळे पर्यावरण दूषित होते.

माहिती स्रोत व संशोधन पद्धती (Research Methodology) :

प्रस्तुत शोध निबंधा करिता प्राथमिक व दुय्यम साधनसामग्री वर आधारित माहिती संकलित केलेली आहे. दुय्यम साधन सामग्री प्रकाशित अहवाल, संदर्भ पुस्तके, विविध लेख, नियतकालिके व दर्जेदार मासिकात प्रसिद्ध झालेले लेख. वार्षिक शासकीय अहवाल, वेब जाळे (संकेत स्थल) इत्यादींचा संदर्भ साहित्य म्हणून वापर केलेला आहे. द्वितीयक सामग्रीच्या आधारित प्रस्तुत संशोधन निबंधात विश्लेषण करण्यात आलेले आहे. संशोधनातील निष्कर्ष हे उद्दिष्टावर आधारित, विश्लेषण व निष्कर्ष यावरच काढलेले आहेत व त्यानुसार शिफारशी दिलेल्या आहेत.

विषय विवेचन (Subject Analysis) :-

पर्यावरण संवर्धनासाठी मानवी दृष्टिकोनातून फार महत्वाची भूमिका आज जगासमोर उभी राहिलेली आहे. नैसर्गिक साधन संपदा व लोकसंख्या यांचा अन्योन्य संबंध असून कोणत्याही राष्ट्रातील लोकसंख्या ही उत्पादनाच्या दृष्टीने त्या राष्ट्रातील नैसर्गिक साधन संपत्तीचा एक महत्वाचा घटक मानण्यात येते. मानव आपल्या हव्यासापोटी भविष्याचा विचार न करता स्वतःच्या स्वार्थाकरिता नैसर्गिक साधन संपत्तीचा ऱ्हास मोठ्या प्रमाणावर करत आहे. या परिस्थितीत अल्पकालीन फायद्यासाठी होणारी नैसर्गिक संपत्तीची हानी याकडे दुर्लक्ष करतो, याचा परिणाम असा होतो की, नैसर्गिक वनस्पती, जलसंपदा, जमीन, प्राणी या सर्व संपदावर मानवाचे आक्रमण हा पर्यावरण शास्त्राच्या दृष्टीने अतिशय चिंतेचा विषय झालेला आहे

औद्योगिकीकरण संबंधी झालेले बद्दल :

विकसनशील देशातील समस्यांमध्ये वाढती लोकसंख्या आणि नैसर्गिक आपत्ती यांचा सहसंबंध असून बहुतांशी लोकांच्या अन्नधान्य, इंधन, पशु चारा या सर्व गरजा निसर्गावरच अवलंबून आहेत .पृथ्वीच्या पृष्ठभागावरती विविध प्रकारच्या हालचाली घडत असताना त्या हालचालीचा अभ्यास करण्याचे काम भूगोल विषय करतो. म्हणून भूगोलाच्या संबंधित असणारे, पर्यावरण शास्त्राच्या दृष्टीने सर्व ज्ञान प्राप्त करण्यासाठी पृथ्वीचा अभ्यास करणे महत्त्वाचे आहे. या भूगोल विषयाची व्याप्ती पाहता भूगोलामध्ये ब्राह्मंडा पासून तर पृथ्वीवरील विविध खंडातील घटकांचा अभ्यास केला जातो. म्हणून भूगोल ही सर्व विषयाची जननी आहे असे मानले जाते.

पर्यावरण शास्त्राच्या दृष्टीने विचार करता शहरे वाढू लागली म्हणून विकासाच्या योजना सुरू करण्यात आलेल्या आहेत. परिणामी उपलब्ध आसणारी साधनसंपत्ती यामध्ये पर्यावरणातील जमीन, पाणी, प्राणी, हवा, मृदा, वनस्पती इत्यादी संपदावर अतिरिक्त ताण वाढत गेला. याचा परिणाम असा झाला की, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण यामुळे हवा, पाणी, जमीन इत्यादी मध्ये अनेक रासायनिक द्रव्यांचे प्रमाण वाढून प्रदूषण ही गंभीर समस्या निर्माण झाली.

ठोक राष्ट्रीय उत्पादनासारख्या (जीडीपी) संकल्पनांनी अधिकाधिक वस्तुचे उत्पादन हेच आपले उद्दिष्ट मानले. त्यावर अर्थशास्त्र आधारले आहे. जीडीपीचा दर वाढता ठेवणे म्हणजे विकास अशी कल्पना रूढ झाली. मागणी- पुरवठा, विनिमयाचे दर, चलनफुगवटा, निर्देशांकातील चढउतार, अशा गोष्टींनी मनाचा ताबा घेतला. जीडीपीची वाढ ही खऱ्या अर्थाने निर्मिती वा सृजन नसून विनाश आहे. परंतु अत्यंत छोट्या कालखंडातील केवळ विनिमयाच्या साधनाभोवती म्हणजे चलन- पैशांभोवती घोटालणाऱ्या विचारांवर आधारलेल्या अर्थशास्त्राने, कोट्यावधी वर्षांच्या निसर्गाच्या प्रक्रियांकडे दुर्लक्ष केले.

कृषि संबंधी झालेले बदल :

आज भारतात शेतजमिनीचे पिढी दर पिढी विभाजन होत आहे. यामुळे सलग जमिनीचे खंड पडत आहेत. त्यातच गेल्या काही वर्षांपासून बदलत्या हवामानामुळे पारंपरिक शेती शाश्वत राहिली नाही. अशा परिस्थितीत कमी जागेत कमाल शाश्वत उत्पादन काढण्यासाठी नियंत्रित शेती अर्थात पॉलीहाऊस, शेडनेट यांचा मोठा आधार ठरत आहे. या प्रकारची शेती वेगाने वाढत असली तरी जगभरातील काही प्रगत देशातील शेतकऱ्यांनी तंत्रज्ञानाचा वापर करून शाश्वत शेती पद्धतीत अजून एक पाऊल पुढे टाकले आहे. ग्रीहनेट, क्रॉपेक्स आणि अँक्रापोनिक तंत्राने नियंत्रित शेती केली जात आहे.

जागतिक हवामान संबंधी झालेले बदल :

जागतिक हवामान बदलामुळे शेतीपद्धतीत लक्षणीय बदल होत आहे. हवामान बदलामुळे युरोप खंडात शेतीचे अनेक नवे प्रकार उदयास येत आहे. अमेरिकेतील ऑस्टीन प्रांतात वराह पालन, टोमॅटो लागवड व भाजीपाला लागवड असा शेतीचा पॅटर्न आहे. या पारंपरिक शेतीच्या पॅटर्नमध्ये आता समुद्री शेवाळाच्या शेतीची भर पडली आहे. ऑस्टीन प्रांताच्या दक्षिणभागात जॅक वेट यांचा 'अँक्राडल्स' शेती फार्म आहे. याच फार्म मध्ये जॅक यांनी समुद्री शेवाळाची शेती करण्यास सुरवात केली आहे. युरोपमध्ये समुद्री शेवाळाला 'ओगोनोरी' असे संबोधले जाते. ओगो म्हणजे पॅसिफिक महासागरातील समुद्रीशेवाळाचा प्रकार व नोरी या शब्दाचा अर्थ समुद्री शेवाळ असा होतो.

नैसर्गिक आपत्ती संबंधी झालेले बदल :

" ज्या घटनांचा मानवी जीवनावर प्रतिकूल परिणाम होतो त्यास नैसर्गिक आपत्ती असे म्हणतात". यामध्ये भूकंप ,ज्वालामुखी उद्रेक, सागरी लाटा ,सुनामी लाटा, अवर्षण ,दुष्काळ, महापूर, चक्रीय वादळे , मृदा क्षरण, हिमवृष्टी यासारख्या विषयांचा समावेश होतो.

नैसर्गिक आपत्तीचे प्रकार : याचे दोन प्रकार पडतात -

1) भूपृष्ठीय आपत्ती :- यामध्ये

A) भूकंप B) ज्वालामुखी उद्रेक C) दरडी कोसळणे D) सागरी लाटा यांचा समावेश होतो

2) वातावरणीय आपत्ती:-

A) चक्रीवादळे B) विजाचमकणे C) हिमवृष्टी E) गारपीट F) महापूर G) दुष्काळ H) शितलहरी व उष्णलहरी .

(2) मानव निर्मित आपत्ती:- मानव निर्मित आपत्तीचे तीन प्रकार पडतात

A) प्राकृतिक आपत्ती :भूमिपात व मृदा क्षरण B) रासायनिक आपत्ती:- a)विषारी रासायनिक द्रव्य.b) रासायनिक खते
c) जंतुनाशके d) अणुऊर्जा e) औद्योगिक दुर्घटना

C) जैविक आपत्ती:-1) लोकसंख्या विस्फोट 2) युद्ध-3) दहशतवाद 4) सायबर हल्ले .

घरातील वायुप्रदूषणा संबंधी झालेले बदल व दुष्परिणाम :

घरातील वायुप्रदूषकांचे परिणाम अल्प मुदतीच्या प्रभावापासून- उदा. डोळे व घशात जळजळ होणे, ते दीर्घकालीन प्रभावापर्यंत म्हणजे श्वसनसंस्थेच्या रोगांपासून ते कर्करोगापर्यंत जाऊन पोहोचतात. कार्बन मोनोऑक्साइड सारख्या काही प्रदूषकांच्या उच्च पातळीमुळे व्यक्तीचा त्वरित मृत्यू देखील संभवतो. एकूणच घरातील हवेचे प्रदूषण मुलांच्या, प्रौढांच्या नव्हे सर्वांच्याच आरोग्यावर विपरीत परिणाम करते. प्रदूषण करणाऱ्या इंधनांवर आणि उपकरणांवर अवलंबून असणाऱ्या घरांतील सदस्यांना आगीमुळे होणारे परिणाम, विषबाधा, स्नायूंच्या दुखापती आणि अपघात होण्याचा धोका जास्त असतो. 'ईटीएस' म्हणजे (एव्हायन्मेंटल टोबॅको स्मोक) ला बऱ्याचदा 'सेकंडहॅन्ड स्मोकिंग' किंवा निष्क्रिय धूम्रपान म्हणून संबोधले जाते. परंतु सर्वसाधारणपणे, लहान मुलांची फुफ्फुसे अधिक संवेदनाक्षम असल्याने त्यांना याचा धोका फार मोठा असतो. त्यामुळे न्यूमोनिया, ब्रॉकायटिस, दमा तसेच फुफ्फुसाचा कर्करोग होण्याची शक्यता नाकारता येत नाही.

सारांश (Conclusion) :

भारतात सत्तर मागील वर्षांमध्ये लोकसंख्येत प्रचंड प्रमाणात वाढ होत आहे.औद्योगिकीकरण आणि शहरीकरणाच्या वाढत्या प्रमाणामुळे अनेक प्रकारच्या नैसर्गिक साधनसंपत्तीत फेरफार होत आहे. औद्योगिकीकरणामुळे शहरीकरण वाढून त्याठिकाणी पर्यावरणीय प्रदूषणास चालना मिळाल्याचे दिसून येते.

मानवाच्या विकासाबरोबरच मानवाने केलेल्या औद्योगिकीकरणामुळे शहरीकरण वाढून त्याठिकाणी पर्यावरणीय प्रदूषणास चालना मिळाल्याचे दिसून येते. लोकसंख्या प्रचंड प्रमाणात वाढल्याने लोकसंख्येचा विस्फोट झाल्याने धान्य उत्पादन वाढविणे गरजेचे असते. धान्य उत्पादनासाठी शेती समृद्ध करून त्या ठिकाणी जलसिंचन, रासायनिक खते, कीटकनाशके व जंतुनाशके यांचाही वापर जास्त प्रमाणात करण्यात आलेला आहे. या सर्व मानवी व्यवहार यामुळे घातक रोग मूलद्रव्यांचे असंख्य कण हवा, पाणी, जमीन यात मिसळले जातात. हे द्रव घटक पर्यावरणातील मूळ घटक नाहीत परंतु ते उपद्रवकारक असतात त्यांच्यामुळे पर्यावरण दूषित होते.

मानवाच्या प्रतिकूल क्रिया-प्रक्रिया मुळे पर्यावरणातील घटक मोठ्या प्रमाणात अवनत होतात .पर्यावरणीय आपत्ती व ज्या घटनांचा मानवी जीवनावर प्रतिकूल परिणाम होतो त्या नैसर्गिक आपत्तीचा परिणाम परिस्थितीकीवर होऊन परिसंस्था व त्यांच्यातील विविधता नष्ट होत आहे.

औद्योगिकी क्रांतीमुळे विसाव्या शतकाच्या मध्यानंतर व 21 व्या शतकाच्या सुरुवातीस या पन्नास ते सत्तर वर्षांच्या कालावधीत औद्योगिकीकरणामुळे अँटिमनी आर्सेनिक, कोबाल्ट, निकेल इत्यादी विषारी मूलद्रव्यांचे वातावरणातील प्रमाण खूपच वाढले आहे. याबरोबरच दगडी कोळसा, खनिज तेल व इतर जीवाश्म इंधनाच्या ज्वलनामुळे ऑक्सिजन वायूचे प्रमाण कमी झाले आणि कार्बन डायॉक्साईडचे प्रमाण वाढले. या बरोबरच मानवाने उपयोगात आणण्यासाठी काही वस्तू जशा की, प्लास्टिक वस्तू ,भांडी, पिशव्या, बाटल्या, डबे, काचेची तावदाने इत्यादी वापरलेल्या वस्तू टाकून दिल्या होत्या. या वस्तु परिसरामध्ये फेकतो तेव्हा त्यांच्यापासून पर्यावरणीय प्रदूषण फार मोठ्या प्रमाणात घडून येते. उपद्रवी कीटक निर्माण होतात, यामुळे वनस्पतीचा नाश होतो त्याचे पदार्थ व मलमूत्र यामुळे पिण्याचे पाणी प्रदूषित होते अथवा शेतीसाठी लागणारे पाणी आणि हे त्या ठिकाणी प्रदूषित झाल्याची दिसून येते हे

ओझोन वायू क्षय झाल्याने हवामानात फार मोठ्या प्रमाणात बदल होतो, परिणामी वातावरणातील तापमान वाढते. यामुळे पर्यावरणीय प्रदूषण रोखण्याकरिता, मानवी जीवन सुखकर करण्याकरिता, निसर्गाने उपलब्ध करून दिलेली साधनसंपत्ती अथवा नैसर्गिक वनस्पती ह्या प्राचीन काळापासून जशा आपण आपल्या सुरक्षेकरिता वरदान मानलेल्या आहेत. त्या तशाच प्रमाणात याठिकाणीही आज मानण्याची गरज उद्भवलेली दिसून येते.

शिफारशी (Recommendation):-

1. भारतात लोकसंख्या प्रचंड प्रमाणात वाढल्याने लोकसंख्येचा विस्फोट झाल्याने धान्य उत्पादन वाढविणे गरजेचे आहे .या धान्य उत्पादनासाठी शेती समृद्ध करून त्या ठिकाणी जलसिंचन रासायनिक खते कीटकनाशके व जंतुनाशके यांचाही वापर जास्त प्रमाणात करण्यात आलेला आहे या सर्व मानवी व्यवहार यामुळे घातक रोग मूलद्रव्यांचे असंख्य कण, हवा, पाणी, जमीन यात मिसळले जातात हे द्रव घटक पर्यावरणातील मूळ घटक नाहीत परंतु ते उपद्रवकारक असतात त्यांच्यामुळे पर्यावरणीय दूषित होते.म्हणून सेंद्रिय शेती करणे गरजेचे आहे.
2. भारतात काही प्रमुख शहरात पाणी, हवा, जमीन, दूषित झाल्यामुळे वातावरणातील त्याज्य पदार्थ, अथवा घटक समुहामुळे वनस्पती व प्राणी जीवनास अपायकारक ठरलेले पर्यावरण प्रदूषण आणि नैसर्गिक साधन संपत्ती उपद्रवकारक घटकामुळे पर्यावरण दूषित होते.यावर प्रदूषण मंडळाचे नियंत्रण आसवे.
3. अनावश्यक वस्तुनिर्मितीच्या समर्थनासाठी आधुनिक बदलत्या जीवनशैलीची सबब पुढे केली जाते .परंतु जरी जीवनशैली बदलली तरी मानवी शरीर आणि निसर्गातील नाते ठरविणारे अनेक ज्ञात, अज्ञात नियम व तत्वे बदलत नाहीत .जैविक घडामोडी तर रूढ अर्थशास्त्राच्या आवाक्यात कधीच नव्हत्या .त्याची जाणीव पर्यावरण शिक्षणात करून द्यावी.
4. मानवाच्या प्रतिकूल क्रिया-प्रक्रिया मुळे पर्यावरणातील घटक मोठ्या प्रमाणात अवनत होतात .पर्यावरणीय आपत्ती व ज्या घटनांचा मानवी जीवनावर प्रतिकूल परिणाम होतो त्या नैसर्गिक आपत्तीचा परिणाम परिस्थितीकीवर होऊन परिसंस्था व त्यांच्यातील विविधता नष्ट होत आहे. तसेच घर, उद्योग, कृषी आणि परिवहन आदी ठिकाणी होणारा ऊर्जेचा अधिक वापर सर्वाधिक प्रदूषणास कारणीभूत आहे.
5. भारतातील सर्वाधिक प्रदूषित शहरांच्या यादीत फरीदाबाद, गया, आग्रा, पटना, मुझफ्फरपूर, श्रीनगर, गुडगाव, जयपूर, पटियाला आणि जोधपूरचा समावेश आहे .त्यावेळी जगातील सर्वाधिक प्रदूषित शहरांमध्ये भारतातून केवळ आग्राचा समावेश होता .त्यामुळे दिल्लीतील तज्ज्ञही चक्रावून गेले असून एवढ्या मोठ्या प्रमाणावर भारतातील शहरे प्रदूषित होण्यामागच्या कारणांचा ते शोध घेत आहेत.

संदर्भ (Reference):

1. Dr. Singh R.L.: India (A Regional Geography)
2. WWW.maharashtra.gov.in
3. Prof. Majid Husain: Physical Geography
4. Prof. Majid Husain: Human Geography
5. Prof. Majid Husain: Paryavaran Evam ParisthithikiG.K.Publication
6. H.M Saxena Economic Geography - Publisher : Rawat Publications (1 January 2007)
7. Environmental Geography : Dr. Savindra Singh, Pravalika Publications; 1ST edition (1 January 2015) Allhabad
8. डॉ .अरुण कुंभार - कृषी भूगोल ,पायल पब्लिकेशन ,986 सदाशिव पेठ ,पुणे 30 .
9. डॉ .विठ्ठल घारापुरे :जैविक भूगोल शास्त्र .पिंपळापुरे अँड कंपनी पब्लिशर्स नागपूर
10. सामाजिक संशोधन पद्धती - डॉ.प्रदीप आगलावे, विद्या प्रकाशन, नागपूर

मोहोळ तालुका पर्जन्य विचलता- एक भौगोलिक अभ्यास

श्री. हनुमंत शंकर हेळकर¹ प्रा. डॉ. डी. जी. शिंदे²

एम. ए. (भूगोलशास्त्र) भाग-2, देशभक्त संभाजीराव गरड महाविद्यालय, मोहोळ.

संशोधन मार्गदर्शक, भूगोल विभाग, देशभक्त संभाजीराव गरड महाविद्यालय, मोहोळ.

सारांश –

मोहोळ तालुका हा आर्थिकदृष्ट्या एक महत्वाचा तालुका आहे. हवामानाच्या दृष्टीने संपूर्ण मोहोळ तालुका हा कमी पर्जन्यछायेच्या प्रदेशात येतो. त्यामुळे तालुक्यात कमी प्रमाणात पर्जन्य पडते. लहरी व तुटपुंज्या पर्जन्यामुळे दुष्काळजन्य परिस्थिती असल्याचे दिसून येते. सन 2011 ते 2017 या सात वर्षांतील मोहोळ तालुक्यातील पर्जन्य विचलतेचा अभ्यास “मोहोळ तालुका पर्जन्य विचलता -एक भौगोलिक अभ्यास” या शीर्षकाखाली प्रस्तुत शोधनिबंधाच्या माध्यमातून करण्यात आला आहे.

बीज संज्ञा - पर्जन्य विचलता.

प्रस्तावना -

मोहोळ तालुका हा एक आर्थिकदृष्ट्या महत्वाचा तालुका असून सोलापूर जिल्ह्यात प्रामुख्याने दुष्काळी भागात येतो. हा भाग हवामानाच्या दृष्टीने कमी पर्जन्यछायेचा प्रदेशात येतो. त्यामुळे मोहोळ तालुक्यात कमी प्रमाणात पाऊस पडतो तसेच तालुक्यात बारमाही एकही नदी वाहत नसल्याने एकंदरीत मोहोळ तालुका हा दुष्काळग्रस्त तालुका म्हणून ओळखला जातो. पारदासानी समिती 1957, दुसऱ्या केंद्रीय जलसिंचन आयोग 1962, सुकथनकर समिती 1973 अशा वेगवेगळ्या समित्यांनी सर्वेक्षण करून सोलापूर जिल्ह्यातील 11 तालुके हे अवर्षण प्रवण क्षेत्र म्हणून केंद्र शासनाने जाहीर केले. त्याचबरोबर महाराष्ट्र शासनाने मान्यता दिली. सोलापूर जिल्ह्यातील अवर्षण प्रवण क्षेत्रातील 11 तालुक्यांपैकी मोहोळ तालुकाचा सुद्धा दुष्काळग्रस्त भागात समावेश होतो. मोहोळ तालुका हा अवर्षणग्रस्त भाग असला, तरी सोलापूर जिल्ह्याची जीवनदायिनी असलेल्या उजनी पाणलोट क्षेत्राची निर्मिती झाल्यानंतर थोड्याफार प्रमाणात मोहोळ तालुक्यात ज्या भागात उजनी पाणलोट क्षेत्राचा विस्तार झाला आहे म्हणजेच उजनी धरणाचे पाणी पोहोचले आहे, तेथे शेतीचा विकास थोड्याफार प्रमाणात होत असलेला दिसून येतो. आणि ज्या भागात अजूनही उजनी पाणलोट क्षेत्राचा विस्तार झालेला नाही, त्या ठिकाणी मात्र आजही पाण्याची टंचाई उद्भवत असल्याचे दिसून येते. त्यामुळे शेतीचा विकास कमी प्रमाणात झालेला दिसतो. उजनी पाणलोट क्षेत्राची निर्मिती मोहोळ तालुक्यासाठी वरदानच ठरली आहे, त्यामुळे पावसावर अवलंबून असणारी शेती ही थोड्याफार प्रमाणात उजनी धरणातून पाण्याचा पुरवठा होत असल्याने शेती फुलत असल्याचे दिसून येते.

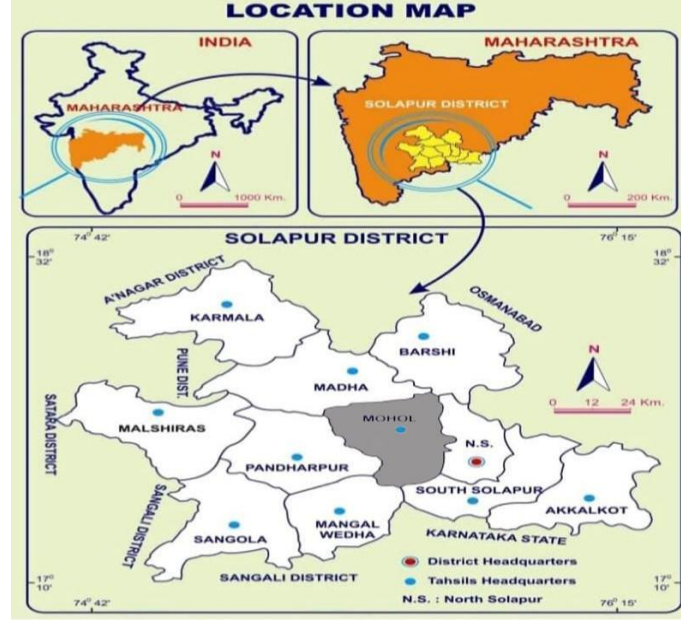
मोहोळ तालुक्यातील कृषी क्षेत्र हे उजनी धरणा व्यतिरिक्त कृषी क्षेत्राचा भाग हे मोसमी पावसावर अवलंबून आहे. लहरी आणि तुटपुंज्या पावसामुळे शेती करणे अवघड होते, कृषी क्षेत्रावर अवलंबून असणारे उद्योगधंदे, पिण्याच्या पाण्याचा पुरवठा व त्याचे नियोजन करणे या अनेकविध घटकांवर पर्जन्य विचलतेचा परिणाम झालेला दिसून येतो.

अभ्यास क्षेत्र -

मोहोळ तालुका हा सोलापूर जिल्ह्यातील एक महत्वाचा तालुका असून जिल्ह्याच्या मध्यभागी वसलेला आहे. त्याचा अक्षवृत्तीय विस्तार 17°32' उत्तर ते 17°60' उत्तर अक्षवृत्त, तर रेखावृत्तीय विस्तार 74°15' पूर्व ते 74°45' पूर्व रेखावृत्त आहे. अभ्यास क्षेत्राचे एकूण भौगोलिक क्षेत्रफळ 1408.40 चौ. कि. मी. आहे. मोहोळ तालुक्याच्या उत्तरेस माढा

व बार्शी, पूर्वेस उत्तर सोलापूर, दक्षिणेस मंगळवेढा व दक्षिण सोलापूर आणि पश्चिमेस पंढरपूर या सहा तालुक्यांच्या सीमा मोहोळ तालुक्यास स्पर्श होतात. मोहोळ तालुका हा दख्खनचा पठारी प्रदेशात मोडतो त्यामुळे हा प्रदेश कमी पर्जन्यच्छायेचा असून येथील हवामान उष्ण व कोरडे प्रकारचे आहे. मोहोळ तालुक्यात एकूण 104 गावं (खेडी) आहेत. सन 2011 च्या जणगणनेनुसार मोहोळ तालुक्याची लोकसंख्या 276920 इतकी आहे.

मोहोळ तालुक्याचा स्थान दर्शक नकाशा



उद्दिष्टे -

- 1) मोहोळ तालुक्यात पडणाऱ्या पर्जन्य विचलतेचा अभ्यास करणे.
- 2) सात वर्षांतील मोहोळ तालुक्यातील बदलते पर्जन्य मापनाचा अभ्यास करणे.
- 3) पर्जन्य विचलतेचा हवामानावर होणारा परिणाम अभ्यास करणे.

माहिती स्रोत -

प्रस्तुत शोधनिबंधासाठी द्वितीयक स्वरूपाच्या माहितीचा उपयोग केला आहे. जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालोचन-सोलापूर, विविध पुस्तके, इंटरनेटच्या साहाय्याने माहिती मिळवली, माहितीचे विश्लेषण करण्यासाठी तक्त्यांचा वापर केला आहे.

तक्ता क्र.-1. सोलापूर जिल्ह्यातील सरासरी पर्जन्य (मि. मी.मध्ये) सन-2011 ते 2017.

अ. क्र.	तालुके	2011	2012	2013	2014	2015	2016	2017
1	उ.सोलापूर	610.2	472.8	534.7	393.9	272.98	547.94	410.68
2	द.सोलापूर	610.2	472.8	502.4	387.6	228.17	534.86	454.13
3	अक्कलकोट	618	556.3	601.4	433.3	246.86	456.67	379.62
4	बार्शी	505.6	551.6	540.1	392.2	238.58	593.68	769.47

5	पंढरपूर	395.8	361.8	566.2	371.3	278.33	375.01	511.36
6	मंगळवेढा	309	287.5	437.9	373	227.93	310.04	446.68
7	सांगोला	330.1	393.8	463.5	492.9	272.46	448.09	568.43
8	माळशिरस	436.8	350	589.5	326	215.29	436.7	530.52
9	माढा	389.5	434.5	591.3	340.4	289.97	535.47	613.4
10	मोहोळ	508.6	318.1	527	335	230.16	318.28	518.93
11	करमाळा	538.9	258.7	510	384.6	262.26	419.62	567.45
12	एकूण	5252.7	4457.8	5863.8	4230.1	2763	4976.4	5770.7
13	सरासरी	477.5	405.3	533.1	384.6	251.18	452.4	524.61

Source - <https://solapur.gov.in/en/reinfall/>

तक्ता क्र.2, मोहोळ तालुक्यातील सरासरी पर्जन्य (मि. मी.मध्ये) सन-2011 ते 2017.

अ. क्र.	वर्ष	सरासरी पर्जन्य
1	2011	508.6
2	2012	318.1
3	2013	527
4	2014	335
5	2015	230.2
6	2016	318.3
7	2017	518.9
8	सरासरी	393.7

Source - <https://solapur.gov.in/en/reinfall/>

विषय विवेचन-

प्रस्तुत शोधप्रबंधात मोहोळ तालुक्यातील पर्जन्य विचलता अभ्यासण्यासाठी सन 2011 ते 2017 या प्रत्येक वर्षांच्या दरम्यान पडलेल्या सरासरी पर्जन्याची पुढील पाच विभागात विभागणी केलेली आहे.

तक्ता क्र.-3, वार्षिक सरासरी पर्जन्य (मि. मी. मध्ये.)

अ. क्र.	सरासरी पर्जन्य (मि. मी. मध्ये)	विभागणी
1	500 पेक्षा कमी	अति कमी
2	500-550	कमी
3	550-600	मध्यम
4	600-650	जास्त

5	650 पेक्षा जास्त	अति जास्त
---	------------------	-----------

तक्ता क्र. 2 मध्ये दर्शविल्याप्रमाणे सन 2011 ते 2017 या सात वर्षांच्या दरम्यान मोहोळ तालुक्यात एकूण सरासरी पर्जन्य 393.72 मि. मी. पडल्याचे दिसून येते. हे पडलेले पर्जन्याचे प्रमाण अति कमी असल्याचे दिसून येते. त्यामुळे तालुक्यात दुष्काळजन्य परिस्थिती असल्याचे दिसून येते.

500 मि. मी. पेक्षा कमी पर्जन्य 2012, 2014, 2015 व 2016 या वर्षात अनुक्रमे 318.1 मि. मी., 335.0 मि. मी., 230.16 मि. मी., व 318.28 मि. मी. पडल्याचे दिसून येते, हे प्रमाण अति कमी असल्याचे दिसून येते. 500 ते 550 मि. मी. च्या दरम्यान पर्जन्य 2011, 2013, 2017 या तीन वेगवेगळ्या वर्षात पडल्याचे दिसून येते. ते 2011 मध्ये 508.6 मि. मी., 2013 मध्ये 527.0 मि. मी., आणि 2017 मध्ये 518.93 मि. मी. पर्जन्य पडल्याचे दिसून येते. हे पर्जन्याचे प्रमाण कमी असल्याचे दिसून येते. त्यामुळे या सात वर्षांच्या कालावधीत अभ्यासक्षेत्रातील भू-गर्भ पाणीपातळीत घट झाल्याचे आढळून येते.

सन 2011 ते 2017 या वर्षांच्या दरम्यान 550 ते 600 मि. मी., 600 ते 650 मि. मी., आणि 650 मि. मी. पेक्षा जास्त म्हणजेच अनुक्रमे मध्यम, जास्त आणि अति जास्त या प्रमाणात मोहोळ तालुक्यात पर्जन्य पडल्याचे आढळून येत नाही.

ज्या वर्षामध्ये पर्जन्याचे प्रमाण अधिक आहे, त्या वर्षी तापमान कमी आणि आर्द्रता जास्त असल्याचे आढळून येते. त्यामुळे भूगर्भ पाणीपातळीत वाढ झाल्याचे दिसून येते, या उलट ज्या वर्षात पर्जन्याचे प्रमाण कमी आहे, त्या वर्षी तापमान अधिक आणि आर्द्रता कमी असल्याचे आढळून येते. त्यामुळे अभ्यासक्षेत्रातील भूगर्भ पाणीपातळीत घट झाल्याचे आढळून येते.

निष्कर्ष –

- 1) अभ्यास क्षेत्रात अति कमी (500 मि. मी. पेक्षा कमी) व कमी (500 ते 550 मि. मी. च्या दरम्यान) प्रमाणात पर्जन्य पडल्याचे आढळून येते.
- 2) अभ्यास क्षेत्रात सन 2011 ते 2017 या वर्षांच्या कालावधीत अति कमी पर्जन्य 2015 मध्ये (230.16 मि. मी.) पडल्याचे आढळून येते.
- 3) अभ्यास क्षेत्रात सन 2011 ते 2017 या कालावधी दरम्यान मध्यम, जास्त व अति जास्त स्वरूपात पर्जन्य पडल्याचे दिसून येत नाही; त्यामुळे अभ्यास क्षेत्रात दुष्काळजन्य परिस्थिती असल्याचे दिसून येते.

संदर्भसूची –

- 1) डॉ. विठ्ठल घारपुरे. 2012. हवामानशास्त्र. नागपूर : मनोहर पिंपळापुरे पिंपळापुरे अँड कं. पब्लिशर्स.
- 2) D. S. Lal. 2020. Climatology. Prayagraj : Sharda Pustak Bhawan Publishers & Distributors.
- 3) जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालोचन- सोलापूर, 2019.
- 4) District Survey Report- Solapur, 2018.
- 5) <https://solapur.gov.in/en/reinfall/>

भारत मे सतत विकास लक्ष्य-चुनोतीया एवं सम्भावनाये प्रो.विकास वर्मा

सहायक प्राध्यापक, श्रीनीलकण्ठेश्वर शास.स्नात.महाविद्यालय-खंडवा

प्रस्तावना

वर्तमान युग आर्थिक विकास का है। विश्व की समस्त अर्थव्यवस्था अधिकतम वृद्धि के भाव से समृद्ध एवं विकसित राष्ट्र की कल्पना करते हैं। इस दिशा में प्रत्येक राष्ट्र निरंतर प्रयास करते हैं। आर्थिक समृद्धि निरंतर एवं दीर्घकालीन चलने वाली एक प्रक्रिया है, जो देश के नागरिकों के जीवन स्तर में वृद्धि के साथ-साथ माननीय विकास को बढ़ाता है। देश में प्रति व्यक्ति आय एवं राष्ट्रीय आय में निरंतर वृद्धि को ही विकास की संज्ञा दी जाती है। विकास की प्रक्रिया खुशहाली तथा संतुष्टि के भाव को जागृत करती है। इस प्रकार आर्थिक विकास देश को मजबूती की दिशा में ले जाकर समृद्धि, प्रशंसा एवं कल्याण में वृद्धि करती है। वर्तमान भौतिकवादी युग में देश का प्रत्येक नागरिक स्वयं को विकसित कर राष्ट्र निर्माण में सहयोग प्रदान करता है। आर्थिक समृद्धि का संबंध सकल राष्ट्रीय उत्पाद, सकल घरेलू उत्पाद तथा प्रति व्यक्ति आय से होता है। अतः इसका क्षेत्र सीमित है, जबकि आर्थिक विकास सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक गुणात्मक तथा परिमाणात्मक सभी परिवर्तनों से संबंधित है। आर्थिक विकास मानव जीवन के स्तर से संबंधित है, जिसके अंतर्गत मानवीय विकास के पहलू जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, जीवन-प्रत्याशा, पोषण का स्तर, स्वास्थ्य सेवाएं, उपभोग आदि से वर्तमान परिस्थितियों में आर्थिक विकास की वास्तविक स्थिति समावेशी विकास के माध्यम से ही हो सकती है। समावेशी विकास समाज के सभी वर्गों को समान अवसर प्रदान कर, देश के विकास की मुख्यधारा में लाने का प्रयास करता है। भारत के संदर्भ में अवधारणा नवीन नहीं है। प्राचीन समय से ही भारतीय धर्म ग्रंथों में सर्वे भवन्तु सुखिनः को महत्ता प्रदान की गई है। समावेशी विकास से रोजगार के अवसर पैदा होते हैं, जो कि देश में व्याप्त गरीबी एवं भूखमरी को कम करता है। समावेशी विकास अवसरों की समानता प्रदान करता है, जिससे शिक्षा, स्वास्थ्य, कौशल विकास बढ़ता है, जो कि नवीन आर्थिक अवसरों की खोज करता है। जिससे लोगों के जीवन स्तर में सुधार होकर राष्ट्रीय आय, पूंजी निर्माण, तकनीकी विकास क्षेत्र का विस्तार होता है। विकास देश में अनिवार्य एक बुनियादी सुविधाओं, शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, परिवहन, औद्योगिक स्वच्छता के साथ जीवन जीने के लिए समान अवसर प्रदान करता है। इस वैश्वीकरण एवं विकास को अधिक बल मिला है। इस नीति के कारण विभिन्न देशों के साथ अंतरराष्ट्रीय व्यापार के लिए वैश्विक अर्थव्यवस्था को एक दूसरे से जुड़ कर विकास करना होता है। विदित है कि आर्थिक विकास की गति पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। टिकाऊ विकास की अवधारणा एक और देश के आर्थिक विकास की जबकि दूसरी ओर प्रकृति और पर्यावरण पर न्यूनतम विपरीत प्रभाव पड़ेगा इस बात की व्याख्या करती है। टिकाऊ विकास के द्वारा ही देश का विकास कैसे करना है दूसरी ओर प्रकृति तथा पर्यावरण पर न्यूनतम प्रभाव पड़े इस ओर ध्यान देती है। समावेशी विकास के द्वारा ही देश का वास्तविक विकास कैसे करना तथा समानता का अवसर प्रदान कर निम्न तथा पिछड़े वर्गों के लोगों को समाज की मुख्यधारा में लाकर बुनियादी सुविधाएं प्रदान करता है, जिससे कि पर्यावरण का संरक्षण भावी पीढ़ी के लिए भी होता है।

समावेशी विकास लक्ष्य -आर्थिक विकास की अवधारणा आर्थिक समृद्धि की धारणा से अधिक व्यापक है। समृद्धि उत्पादन की वृद्धि से संबंधित है, जबकि आर्थिक विकास सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, गुणात्मक एवं परिमाणात्मक सभी परिवर्तनों से संबंधित है। अतः आर्थिक विकास में आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा सामाजिक संस्थाओं के स्वरूप में शिक्षा, स्वास्थ्य, साक्षरता दर, जीवन-प्रत्याशा, पोषण स्तर आदि शामिल है। समावेशी विकास आर्थिक विकास की गति एवं विकास की नीतियों के मध्य अंतरसंबंधों को इंगित करती है। समावेशन एक ऐसी धारणा है, जिसका समानता, क्षमता तथा रोजगार वृद्धि की अवधि में संरक्षण की नीति से संबंधित है। वैश्वीकरण एवं उदारीकरण की नीतियों ने ओर अधिक विकास के मंत्र को बल दिया। वर्तमान में विश्व की प्रत्येक अर्थव्यवस्थाओं का अंतिम लक्ष्य अत्यधिक विकास करना है। विकास की इस आधारभूत प्रक्रिया ने पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी तंत्र के मध्य असमानता उत्पन्न कर दी है, जबकि मानव जाति का संपूर्ण विकास प्रकृति एवं पर्यावरण के सामंजस्य से ही है। इसलिए **टिकाऊ विकास** की अवधारणा महत्वपूर्ण होती है। टिकाऊ विकास का अर्थ-एक ऐसा विकास करना जिससे वर्तमान की आवश्यकता पूर्ति कर सके तथा भविष्य की आने वाली पीढ़ी को भी इन सुविधाओं का उपभोग

प्राप्त हो ,जिससे परितंत्र सुरक्षित एवं स्वस्थ अवस्था में बना रहे ।पर्यावरण के छरण ,प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन जैसे समस्याओ का समाधान सतत विकास हे। पोषणीय विकास के रूप सर्वप्रथम प्रयास 1972 संयुक्त राष्ट्र संघ का मानव विकास संबंधी अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में किया गया। इसमें बताया कि प्रकृति की सभी वस्तुएं आपस में संबंधित है ।इसके पश्चात संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 1982 की जनरल असेंबली में प्रस्ताव पारित किया। इसके बाद ब्रण्टलैंड महोदय ने अपनी रिपोर्ट **अवर कामन फ्यूचर** में सतत विकास की अवधारणा प्रस्तुत की ।इस में सरकार को नागरिकों की समान सहभागिता के साथ कार्य करने,उत्पादन को बढ़ाने तथा तकनीकी विकास, पारिस्थितिकी तंत्र का संतुलन को ध्यान में रखकर योजनाओं का क्रियान्वयन करने पर विशेष बल दिया ।इस रिपोर्ट में सतत विकास, सतत विश्व ,सतत मानव विकास, सतत शांति एवं विकास, सतत उपभोक्ता ,तकनीकी आदि बिंदुओं पर योजना क्रियान्वयन करने पर ध्यान दिया गया। इस दिशा में वैश्विक रूप से अत्यधिक प्रयास किए गए। विकसित तथा विकासशील देशों ने संयुक्त रूप से सतत विकास की अवधारणा को स्वीकार करते हुए अनेक सम्मेलनों ,मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल, बेसल कन्वेंशन, जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता कन्वेंशन, पृथ्वी सम्मेलन ,विश्व सम्मेलन सतत विकास के संबंध में आदि । आर्थिक गतिविधियों के कारण औद्योगिकरण की प्रवृत्ति में वृद्धि हुई है। इसी कारण वर्तमान में जैव विविधता ,जलवायु परिवर्तन ,ग्लोबल वार्मिंग, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन ,ठोस अपशिष्ट प्रबंधन, पारिस्थितिकी सुरक्षा की आवश्यकता है। प्राकृतिक संसाधनों को इस प्रकार उपयोग करना है कि इसका प्रतिकूल प्रभाव ना हो ।आर्थिक विकास हेतु नवीन तकनीको का ऐसा विकास करना हे की नवीनीकृत संसाधनों का संरक्षण हो। नवीनीकृत संसाधनों के प्रयोग हेतु विशेष नवीन नीति बनाई जाए ।सतत विकास पर्यावरण के संरक्षण के साथ देश के वास्तविक विकास की नीति का निर्माण करती है। सतत विकास की अवधारणा प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग,जैविक विविधता संरक्षण, सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण, पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनों से सतत आय, संसाधनों का पुनरुपयोग, मानव का गुणात्मक विकास आदि करता है।सतत विकास संसाधनों के उपयोग के संदर्भ एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण करता है ,जिससे वर्तमान की आवश्यकता तो पूर्ण हो जाए साथ ही भावी पीढ़ी को भी उपयोग से वंचित न किया जा सके। देश के नागरिकों को समान अवसर प्रदान कर उनका गुणात्मक विकास करता है ।यह विश्व के सभी व्यक्ति एवं समाजों की सबल भागीदारी को सुनिश्चित करता है।

सतत विकास लक्ष्य:एजेंडा 2030

क्रमांक	सतत विकास के लक्ष्य
लक्ष्य-1	गरीबी के सभी रूपों को पूरे विश्व से समाप्ती
लक्ष्य-2	भूखमरी समाप्त करना,खाद्य सुरक्षा तथा बेहतर पोषण और टिकाऊ वृद्धि
लक्ष्य-3	स्वस्थ जीवन सुनिश्चित करना
लक्ष्य-4	समावेशी तथा न्यायसंगत गुणवत्ता युक्त शिक्षा एवं सीखने का अवसर देना
लक्ष्य-5	लैंगिक समानता तथा महिलाओं एवं लड़कियों को सशक्त करना
लक्ष्य-6	स्वच्छता एवं शुद्ध जल प्रबंधन कि उपलब्धता सुनिश्चित करना
लक्ष्य-7	किफ़ायती,विश्वसनीय,आधुनिक ऊर्जा सेवाएं सुनिश्चित करना
लक्ष्य-8	सतत,समावेशी और संधारणीय आर्थिक विकास,पूर्ण और लाभकारी रोजगार एवं उचित कार्य को बढ़ावा देना
लक्ष्य-9	उद्योग,नवाचार और बुनियादी ढांचे का विकास को बढ़ावा देना
लक्ष्य-10	राष्ट्रों के अंदर और उनके बीच असमानता को कम करते हुये आय कि विसमताओ को कम करना
लक्ष्य-11	शहरो एवं मानव बस्तियों का समावेशी,सुरक्षित एवं संधारणीय विका सुनिश्चित करना
लक्ष्य-12	स्थायी खपत एवं उत्पादन पेटर्न सुनिश्चित करना
लक्ष्य-13	जलवायु परिवर्तन एवं इसके प्रभावों से निपटने के लिए तात्कालिक कार्यवाही करना
लक्ष्य-14	महासागरो,समुद्रोतथा समुद्रीय संसाधनों का संरक्षण करना एवं इनका संधारणीय तरीके से उपयोग करना
लक्ष्य-15	प्राकृतिक संसाधनों एवं स्थलीय परिस्थितिकी तंत्रों का संरक्षण तथा इनके सतत उपयोग को बढ़ावा देना
लक्ष्य-16	सभी को पर्याप्त सुरक्षा एवं न्याय व्यवस्था उपलब्ध कराना
लक्ष्य-17	सतत विकास के लिए वैश्विक भागीदारी को पुनर्जीवित करने के लिए अतिरिक्त कार्यान्वयन के संसाधनों को मजबूत करना

स्रोत:-www.un.org/sustainabledevelopment/sustainable-development-goals/

सतत विकास लक्ष्य-भारत मे स्थिति

सतत विकास संपूर्ण विश्व के लिए एक महत्वपूर्ण गतिविधि बन गया है। अत्यधिक एवं तीव्र आर्थिक विकास की चाह ने आर्थिक विकास एवं पर्यावरण के मध्य असंतुलन उत्पन्न कर दिया है। विकसित देशों की अर्थव्यवस्था को मजबूत हो गई, किंतु प्राकृतिक संसाधनों, जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, प्रदूषण की समस्या बढ़ गई है। सतत विकास की अवधारणा प्राकृतिक संसाधनों के उचित दोहन, आर्थिक विकास एवं पर्यावरण के संतुलन, पारिस्थितिकी तंत्र के साथ संतुलन एवं सामंजस्य को प्रकट करती है। वर्तमान में विश्व में मानव जीवन को सुरक्षित रखकर भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना अति आवश्यक हो गया है। सतत विकास एक ऐसी प्रक्रिया है, जो प्राकृतिक संसाधनों के कायम रहते हुए भावी पीढ़ी को बिना किसी बाधा के पारित किया जाए। **ट्रांसफॉर्मिंग वर्ल्ड एजेंडा फॉर डेवलपमेंट** सतत विकास लक्ष्य के नाम से जाना जाता है, जिसे भारत सहित विश्व के 193 देशों ने सितंबर 2015 में संयुक्त राष्ट्र महासभा की उच्च स्तरीय बैठक में स्वीकार किया गया था। इसे जनवरी 2016 में संपूर्ण विश्व में एक साथ लागू किया गया। सतत विकास को समानता, न्याय, संगत, सुरक्षित, शांतिपूर्ण एवं रहने योग्य विश्व का निर्माण करना तथा विकास के तीनों पहलुओं अर्थ, सामाजिक, समावेशी आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण को व्यापक रूप से समाविष्ट करना है। भारत सतत विकास के मार्ग पर लंबेअरसे से आगे बढ़ने का प्रयास कर रहा है। इसके सिद्धांतों को देश कि विकास नीति में सामील किया जा रहा है। शासन के द्वारा अनेक मोर्चों पर कार्य किया जा रहा है, ताकि पर्यावरण कि रक्षा के साथ देसवासियों कि इच्छा के अनुरूप सुखद जीवन जिया जाए। शासन के आर द्वारा सतत विकास के लक्ष्यो को ध्यान मे रखते हुये अनेक कार्यक्रम जैसे-मेक इन इंडिया, स्वच्छ भारत अभियान, बेंटी पढाओ-बेंटी बचाओ, राष्ट्रिय ग्रामीण पेयजल कार्यक्रम, प्रधानमंत्री आवास योजना, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, डिजिटल इंडिया, स्किल इंडिया आदि। टिकाऊ विकास का मुख्य उद्देश्य 2030 तक विश्व से गरीबी को खत्म कर सभी लोगों का एक समान सुरक्षित और खुश जीवन देना है। विश्व स्तर पर इस बड़े उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए इन 17 लक्ष्यों में विभाजित किया गया है, जो कि संयुक्त राष्ट्र संघ सदस्य 193 राष्ट्रों की सहमति से तैयार किए गए हैं। भारत में इन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए केंद्र, राज्य, नागरिकों, अनेक एगेंसियों, संगठनों आदि को जवाबदेही दी गई है। इन निर्धारित लक्ष्यो मे से ऐसे हैं जिनको 2030 से पूर्व पूर्ण करना है। इन लक्ष्यों की सफलताओं को मापने के लिए 169 उद्देश्य तथा 300 से अधिक स्कोर का भी निर्धारण किया गया है।

सतत विकास की चुनौतियां एवं नीतिगत सुझाव

सतत विकास न केवल आर्थिक विकास से जबकि यह एक सामाजिक एवं नैतिक अनिवार्यता भी है। सतत विकास के अभाव में विश्व अर्थव्यवस्था पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो सकी। इसी के द्वारा समानता का अवसर उत्पन्न होता है, जिसे पिछड़े लोगों को समाज की मुख्यधारा में लाया जाता है। आर्थिक विकास की प्रक्रिया होने पारिस्थितिकी असंतुलन को उत्पन्न किया है। भारत एक विशाल देश है बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्यान्न की उपलब्धता गरीबी भुखमरी जैसी उत्पन्न हुई है। सतत विकास के लक्ष्यों का 2030 तक भारत में पूर्ण करने के लिए अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। देश के अनेक राज्यों में रोजगार के अवसरों की कमी एवं शिक्षा की कमी के कारण गरीबी का सामना करना होता है। बढ़ती जनसंख्या भुखमरी की स्थिति निर्मित कर रही है। स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी जीवन स्तर तथा जीवन प्रत्याशा को कम कर रही है। सतत विकास लक्ष्य 1 जनवरी 2016 को प्रभावी हुए हैं। भारत में शताब्दी विकास लक्ष्यों में बुनियादी सार्वभौमिक शिक्षा, लैंगिक समानता तथा वैश्विक आर्थिक विकास में प्रगति की है, किंतु मृत्यु दर, योग्यता और पर्यावरणीय कारकों में सुधार की गति धीमी रही है। भारत में इन लक्ष्य को पूर्ण करने में प्रमुख समस्या बढ़ती हुई जनसंख्या एवं उनकी आकांक्षाओं की पूर्ति करना है। देश में गरीबी निरंतर बढ़ रही है, जो कि अनेक समस्याएं उत्पन्न करती है। पर्यावरण के प्रदूषण की समस्या बढ़ती आर्थिक विकास के साथ वृद्धि कर रही है। लक्ष्यों की पूर्ति करने हेतु पर्याप्त वित्त की आवश्यकता होती है, जिसका देश में अभाव है। साथ ही इन लक्ष्यों के निर्धारण हेतु किन सूचको को चिन्हित किया जाए, यह भी एक समस्या है। केंद्र और राज्य सरकारों को सतत विकास लक्ष्यों के क्रियान्वयन में आने वाली विभिन्न चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए मिलकर काम करने की आवश्यकता है। भारत के एजेंडा 2030 में कई लक्ष्यों को प्राप्त करना है तो इस प्रकार की नीति बनानी होगी जो सभी क्षेत्रों में

क्रियान्वित नीतियों से सामंजस्य स्थापित करती हो, साथ ही प्रशासनिक स्तर पर इन नीतियों के क्रियान्वयन हेतु सामंजस्य तथा भागीदारी पर ध्यान देना होगा। सतत विकास के लक्ष्यों को यदि हम 2030 तक प्राप्त कर लेते हैं, तो भारत एक विकसित तथा समृद्ध राष्ट्र बन सकता है। अतः विकास द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण कर भावी पीढ़ी को भी उपभोग से वंचित न किया जाए सुनिश्चित करना है किंतु यह कार्य समाज की भागीदारी के बगैर नहीं किया जा सकता है। वर्तमान बदलते सामाजिक, राजनीतिक सांस्कृतिक, तकनीकी और पारिस्थितिकी हालात प्राकृतिक संसाधनों पर विपरीत प्रभाव डाल रहे हैं, जिससे इनका विदोहन निरंतर हो रहा है। देश की सरकार को सतत विकास लक्ष्य के क्रियान्वयन, निगरानी तथा प्रगति को मापने के लिए प्रभावी तरीकों को विकसित करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. चोधरी, सज्जन-अ रिसर्च आन सस्टेनेबल डेवलपमेंट इन इण्डिया-इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसेंट टेक्नालजी एंड इंजीन्यरिंग वाल-8, इशू-253, जुलाई 2019. पेज-1210-1215.
2. पंडा, राजेश- सस्टेनेबल डेवलपमेंट गोल्स एंड इण्डिया-ए क्रॉस सेक्शन एनालिसिस
https://papers.ssrn.com/sol3/papers.cfm?abstract_id=3308074
3. मोहनदास प्रभाकर- सस्टेनेबल डेवलपमेंट गोल्स: चैलेंजस फार इण्डिया-
https://www.researchgate.net/publication/324200471_Sustainable_Development_Goals_SD_Gs-Challenges_for_India
4. सस्टेनेबल डेवलपमेंट गोल्स -नेशनल इंडिकेटर फ्रेमवर्क
http://mospi.nic.in/sites/default/files/publication_reports/SDG-NIF-Progress2021_March%2031.pdf
5. गिरी पुरुषोत्तम-कोविड-19 एंड सस्टेनेबल डेवलपमेंट गोल्स
<https://ihrjournal.com/ihrj/article/view/1>
6. मेनसाह, जस्टिस- सस्टेनेबल डेवलपमेंट-मीनिंग, हिस्ट्री, प्रिन्सिपल, पिल्लर्स एंड इम्प्लीकेसन फॉर ह्यूमन एक्शन-
कोगेन्त सोशल साइन्सेस, वाल-5, इशू-1
<https://www.tandfonline.com/doi/full/10.1080/23311886.2019.1653531>

अहमदपुर तालुक्यातील पाझर तलाव जलसिंचन स्त्रोताचा भौगोलिक अभ्यास

प्रा डॉ.राजेश बी.एस.

सहा.प्राध्यापक, भूगोल विभाग प्रमुख, संभाजीराव केंद्रे महाविद्यालय, ता.जळकोट जि.लातूर महाराष्ट्र

प्रस्तावना :-

मानवी जीवनामध्ये पाणी हा घटक महत्वाचा आहे.पाणी अक्षय संसाधन आहे. पाण्याला जीवसृष्टीचा आत्मा म्हटले जाते. वाळवंटी प्रदेशात पाण्याची टंचाई असल्यामुळे या प्रदेशात सजीवांची संख्या कमी प्रमाणात आढळते.पाण्याशिवाय वनस्पतीची देखील वाढ होवू शकत नाही व वनस्पतीशिवाय पाणी आपले अन्न प्राप्त करू शकत नाही. निसर्गात कार्यान्वित असणा-या चक्रामुळे पाण्याचे पुनर्निर्मिती व शुद्धीकरण होते. पृथ्वीच्या एकूण पृष्ठभागाच्या 2/3 भाग जलव्याप्त आहे. परंतु त्यापैकी केवळ 3% पाणी पिण्यायोग्य आहे. उर्वरित पाणी समुद्राच्या खा-या पाण्याच्या स्वरूपात आढळते. मानवी शरीरात पाणी हे खूप महत्वाचे आहे. आवश्यकतेच्या पेक्षा पाणी कमी झाले तर मानव दगावण्याची दाट शक्यता असते. पाण्याचा उपयोग मानवाला पिण्यासाठी घरगुती वापरासाठी तर होतोच त्याशिवाय पशुपालन,जलसिंचन,कारखाने,जलवाहतूक,मासेमारी इत्यादी कार्यासाठी पाण्याचा उपयोग होतो. अभ्यास क्षेत्र :-

अहमदपुर तालुक्याचे पूर्वीचे नाव राजूर होते. परंतु मुस्लिमांच्या प्रभावामुळे अहमदपूर पडले. आज हेच नाव परिचित आहे. अहमदपूर शहरातील प्राचीन वास्तूचा विचार केला तर नागेंद्र भारती यांचा मठ त्यात अवकलकोटी स्वामीचे गुरु स्वामी चंचल भारती यांची समाधी आहे. या मठातील बांधकाम हे ऐतिहासिक आहे. म्हणजेचे ते दगडाचे बांधले आहे. स्वामी चंचल भारती यांच्या समाधी मंदिरातील गाभा-यामध्ये त्याचे तौलचित्र व त्यानी केलेली ग्रंथरचना ठेवलेली आहे. मंदिराच्या प्रवेशद्वाराच्या उजवीकडे नागेंद्र भारती व डावीकडे शिष्य गजेंद्र भारती यांची समाधी आहे. उद्दिष्टे:-

- 1- अहमदपूर तालुक्यातील मंडळनिहाय पाझर तलावाचे वितरण अभ्यासपणे.
 - 2- अहमदपूर तालुक्यातील पाझर तलावामध्ये झालेला बदल अभ्यासपणे.
- अभ्यास पध्दती :-

अहमदपूर तालुक्यातील इ.स. 2008-2013 या वर्षातील जलसिंचनाची साधने त्यात पाझर तलाव कुपनलिका यांचे वितरण दाखवण्यासाठी सांख्यिकीय व नकाशाशास्त्रीय पध्दतीचा उपयोग केला आहे. तसेच टिंब पध्दती व आलेख पध्दतीचाही वापर केला आहे.

टक्केवारीविशिष्ट घटकांची संख्या $\times 100$

एकूण घटकांची संख्या

भौगोलिक स्थान व विस्तार :-

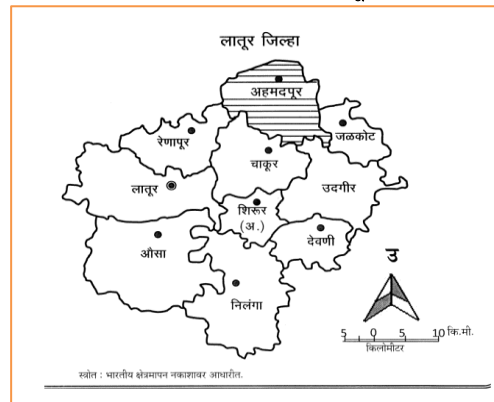
स्थान :- अभ्यास क्षेत्र लातूर जिल्हातील तालुक्याचे ठिकाण असून लातूर-नांदेड एस.एच.3 या महामार्गावर लातूर पासून 60 कि.मी.अंतरावर वसलेले आहे.

विस्तार :- अहमदपूर तालुक्याचा अक्षावृत्तीय $18^{\circ} 17'$ ते $18^{\circ} 50'$ उत्तर अक्षावृत्त व रेखावृत्तीय विस्तार $76^{\circ} 23'$ पूर्व ते $76^{\circ} 66'$ पूर्व रेखावृत्ताच्या दरम्यान आहे. अभ्यास क्षेत्राची पूर्व - पश्चिम लांबी 45 कि.मी.असून दक्षिण - उत्तर 38 कि.मी.आहे.

सीमा :- अभ्यास क्षेत्राच्या पूर्वेस नांदेड जिल्हा, पश्चिमेस - बीड जिल्हा, उत्तरेस - परभणी जिल्हा आहे. तसेच क्षेत्राला चाकूर, उदगीर,जळकोट,रेणापूर इत्यादी तालुक्याच्या सीमा लागलेल्या आहेत.

लातूर जिल्हा नकाशा

नकाशा क्र.1लातूर



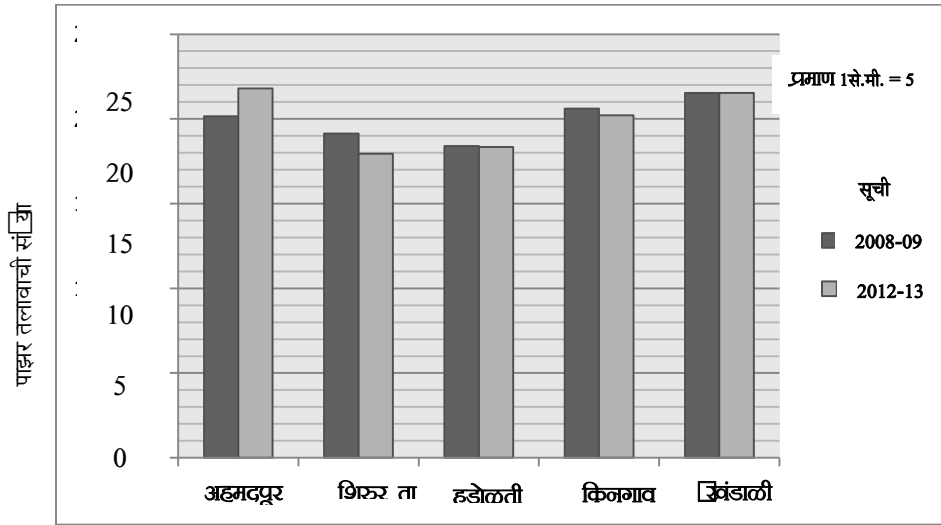
विषय विवेचन :-

**अहमदपूर तालुक्यातील पाझर तलावाचे वितरण
2008-09 ते 2012-13**

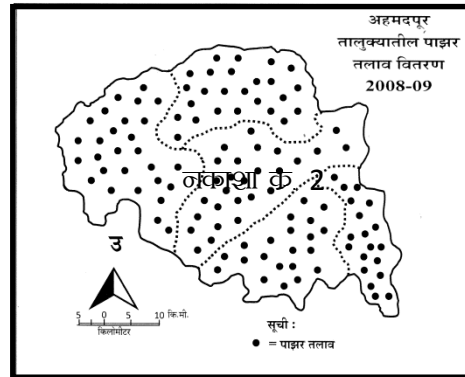
मंडळ	संख्या 2008-2009	टक्केवारी	संख्या 2012-2013	टक्केवारी
अहमदपूर	27	22-50	31	21-52
शिरूर ताजबंद	21	17-50	23	15-97
हडोलती	19	15-83	25	17-36
किनगाव	28	23-33	34	23-61
खंडाळी	25	20-83	31	21-52
एकूण	120	99-99	144	99-98

आधार :- 1 उपविभागीय अभियंता लघु सिंचन उपविभाग, अहमदपूर
2 कृषी अधिकारी कार्यालय, अहमदपूर

आकृती क .1 अहमदपूर तालुका मंडळनिहाय पाझर तलावाच्या वितरणाचा आलेख

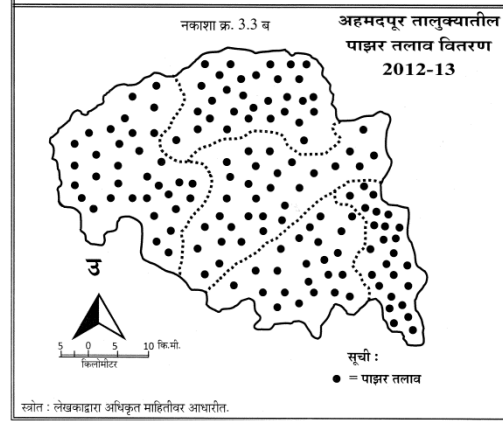


**अहमदपूर तालुक्यातील पाझर तलावाचे वितरण
2008 - 09**



स्रोत :- लेखकाद्वारे अधिकृत माहितीवर आधारित

अहमदपूर तालूक्यातील पाझर तलावाचे वितरण 2012-13



स्रोत :- लेखकाद्वारे अधिकृत माहितीवर आधारित

इ.स.2008-09 नुसार अहमदपूर तालूक्यामध्ये एकूण 120 पाझर तलाव होते. सर्वात अधिक पाझर तलावाची संख्या 28 असून ती किनगाव मंडळात आहे. आणि एकूण तालूक्याच्या 23.33% एवढी आहे. तर सर्वात कमी हडोळती मंडळात असून ती 19 एवढी आहे. एकूण 15.83% एवढी आहे. इ.स.2012-13 नुसार अहमदपूर तालूक्यामध्ये एकूण 144 पाझर तलाव होते. सर्वात अधिक पाझर तलावाची संख्या किनगाव मंडळात असून ती 34 एवढी आहे. तर एकूण तालूक्याच्या 23.61% एवढी आहे. तर सर्वात कमी शिरूर ताजवंद मंडळात असून ती 23 एवढी आहे. एकूण तालूक्याच्या 15.97% एवढी आहे. इ.स.2008-2009 च्या तुलनेत 2012-13 मध्ये पाझर तलावात वाढ होवून ती संख्या 24 ने वाढलेली आहे.

निष्कर्ष :-

- 1) इ.स. 2008-09 नुसार सर्वाधिक पाझर तलावाची संख्या किनगाव मंडळात 28 एवढी आहे.
- 2) इ.स. 2012-13 च्या तुलनेत 2012 ते 2013 मध्ये पाझर तलावाची संख्या 34 ने वाढलेली आहे.
- 3) इ.स.2008-09 च्या तुलनेत 2012 ते 2013 मध्ये पाझर तलावाची संख्या 24 ने वाढलेली आहे.

संदर्भ :-

- 1) सामाजिक व आर्थिक समालोचन लातूर जिल्हा 2008-2013
- 2) लातूर जिल्हा भूगोल पुस्तक इयत्ता 3 री
- 3) भूमी अभिलेख कार्यालय,लातूर.
- 4) कृषी भूगोल-डॉ.सुरेश फुले,विद्या भारती प्रकाशन,लातूर
- 5) www.apeda.com
- 6) लातूर जिल्हा गॅझेटिअर,पहिली आवृत्ती ऑगस्ट 2008.

कंधार तालुक्यातील ग्रामीण वस्तीतील सेवा केंद्राचा चिकित्सक अभ्यास

केंद्रे गणपत गंगाधर¹ प्रा. डॉ. मानकरी एम. पी.²

¹संशोधक विद्यार्थी, भूगोल विभाग, महाराष्ट्र उदयगिरी महाविद्यालय, उदगीर

²भूगोल विभाग प्रमुख, महाराष्ट्र उदयगिरी महाविद्यालय, उदगीर

प्रस्तावना:

मानव हा समाजशील प्राणी असून अनादिकाळापासून त्याची समुह करून राहण्याची प्रवृत्ती आजतायागत अव्याहत सुरू आहे. हजारो वर्ष आदिम अवस्थेत राहिल्यानंतर सुमारे दहा हजार वर्षापूर्वी शेतीची कला मानवाला अवगत झाली. सुरुवातीच्या काळात ग्रामीण वस्तीमध्ये वनसंकलन, लाकूडतोड, मासेमारी, शेती यासारखे प्राथमिक व्यवसाय केले जातात. सांस्कृतिक व भौगोलिक घटकांच्या अनुकूलतेमुळे काही ग्रामीण वस्त्याचा विकास झपाट्याने झाला. वस्त्याचे कार्य बदलत गेले व बहुतांश ग्रामीण वस्त्यांचे रूपांतर मोठ्या वस्त्यामध्ये झाले.

मानवी संस्कृतीचे वैशिष्ट्यपूर्ण प्रतिक म्हणून वस्त्यांना ओळखले जाते. वस्तीमध्ये वास्त्यव्यकरणे जिवाशी व तेथे निर्माण झालेल्या विविध सेवासुविधांचे अतुट नाते निर्माण होते. मानवाच्या विविध गरजांची पूर्तता वस्तीमध्ये केली जाते. वस्तीतील रहिवाशी व परिसरातील इतर वस्त्यांसाठी सेवासुविधा पुरविणे हे ग्रामीण सेवा केंद्राचे काम आहे.

भारतीय भूगोलतज्ञांनी ग्रामीण सेवा केंद्राचे विश्लेषण ग्रामीण वस्तीमध्ये असलेल्या विविध कार्यावरून केले आहे. गोपाळकृष्णा आणि चंदना (1977) यांच्या मते, 'जी ग्रामीण वस्ती एक किंवा अनेक सेवा सभोवतालच्या ग्रामीण वस्तींना उपलब्ध करून देते. अशा ग्रामीण वस्तीला ग्रामीण सेवा केंद्र असे म्हणतात.' या भूगोलतज्ञांनी रेशन दुकार, पोष्ट कार्यालय, शाळा, डिस्पेंसरी आणि पशुवैद्यकीय सेवा कार्याच्या आधारे ग्रामीण सेवा केंद्राचा अभ्यास केला आहे.

प्रस्तुत शोध निबंधात कंधार तालुक्यातील ग्रामीण वस्तीतील प्राथमिक व द्वितीयक सेवाकेंद्राच्या आकडेवारीवरून सेवा केंद्राच्या कार्याचा अभ्यास करण्याचा प्रयत्न केलेला आहे.

उद्दिष्ट्ये:

1. कंधार तालुक्यातील ग्रामीण वस्तीतील प्राथमिक सेवा सुविधांचा अभ्यास करणे.
2. कंधार तालुक्यातील ग्रामीण वस्तीतील द्वितीयक सेवा सुविधांचा अभ्यास करणे.

हे प्रमुख उद्दिष्ट्ये डोळ्यासमोर ठेवून हा शोधनिबंध तयार करण्यात आलेला आहे.

अभ्यासक्षेत्र:

प्रस्तुत शोधनिबंधासाठी नांदेड जिल्ह्यातील कंधार तालुका निवडलेला आहे. कंधार तालुक्याचा अक्षवृत्तीय विस्तार 18° 38' 17" उत्तर ते 18° 58' 43" उत्तर अक्षवृत्त आणि रेखावृत्तीय विस्तार 77° 00' 57" पूर्व ते 77° 25' 43" पूर्व रेखावृत्त आहे. सन 2011 च्या जनगणनेनुसार कंधार तालुक्याचे क्षेत्रफळ 810.29 चौ. कि. मी. आहे. तालुक्याची लोकसंख्या 221881 इतकी आहे. यातील 95749 एवढी लोकसंख्या नागरी असून 126132 एवढी लोकसंख्या ग्रामीण लोकसंख्येची घनता दर चौ. कि. मी. 273 एवढी आहे. आणि कंधार तालुक्यात एकूण 6 मंडळ आणि 126 गावे आहेत.

माहिती संकलन आणि अभ्यासपद्धती:

प्रस्तुत शोध निबंधासाठी दुय्यम स्वरूपाची आकडेवारी वापरली आहे. ती नांदेड जिल्हा सासाजिक आर्थिक समालोचन आणि जनगणना पुस्तिकेतून (जनगणना 2001 व 2011) घेतलेली आहे. ग्रामीण सेवा-सुविधांची उपलब्धता खालील सुत्राच्या सहाय्याने काढण्यात आलेली आहे.

$$Xie = \text{सेवा सुविधांची अपेक्षित संख्या}$$

Pi = एकुण ग्रामीण लोकसंख्या

MP = प्रति एक सेवा सुविधावर अवलंबून असलेली लोकसंख्या

$$MP \frac{P}{Fi}$$

P = एकुण लोकसंख्या

Fi = प्रत्येक एक सेवा सुविधांची एकुण संख्या

विषय विवेचन:

ग्रामीण भागातील सेवा केंद्र हे त्या समुदायाचे नाभिय केंद्र आहेत आणि हेच नाभिय केंद्र ग्रामीण समुदायाला योग्य सेवा कार्य पुरवितात. ग्रामीण सेवा केंद्राकडून आर्थिक, सामाजिक, प्रशासकीय, सांस्कृतिक पुनर्निर्मितीच्या सेवा आणि कार्य त्यांच्या प्रभाव क्षेत्रातील ग्रामीण वस्तीला उपलब्ध होतात. (सुंदरम 1977)

अभ्यास क्षेत्रातील ग्रामीण केंद्राचा अभ्यास करतेवेळेस काही मुख्य कसोट्याचा पदानुक्रम लक्षात घेऊन प्राथमिक, द्वितीयक सेवाकेंद्राचा पदानुक्रम ठरविताना आरोग्यसेवा, संदेशवहन, शैक्षणिक, व्यावसायिक, वाहतूक, व्यावसायिक संवाचा पदानुक्रम पुढील तक्त्याद्वारे स्पष्ट करण्यात आलेला आहे.

ग्रामीण सेवा केंद्राच्या श्रेणी निश्चितीचे घटक:

अ.क्र.	श्रेणी निश्चितीचे घटक	I	II	III
		प्रथम सेवा केंद्राचे घटक	द्वितीय सेवा केंद्राचे घटक	तृतीय सेवा केंद्राचे घटक
1	वैद्यकीय सेवा	ग्रामीण आरोग्य केंद्र	डिस्पेंसरी	हॉस्पिटल
2	दळणवळण	पोष्ट कार्यालय	पोष्ट आणि तार कार्यालय	पोस्ट आणि दुरध्वनी
3	वाहतुक सेवा	बवस्थानक	रेल्वे कार्यालय	रेल्वे जंक्शन
4	शैक्षणिक सेवा	उच्च प्राथमिक शाळा	माध्यमिक शाळा	महाविद्यालय
5	व्यावसायिक सेवा	आठवडी बाजार	आठवडी बाजार आणि बँक	दैनिक बाजार आणि विमा कंपनी

प्राथमिक सेवा केंद्र समावेश होण्यासाठी प्राथमिक सेवा केंद्राच्या श्रेणी निश्चितीच्या गटातील कोणतेही तीन कार्य उपलब्ध असणे आवश्यक आहे. द्वितीय सेवा केंद्र म्हणून समावेश होण्यासाठी द्वितीय सेवा केंद्राच्या श्रेणी निश्चितीमधील कोणतेही तीन सेवा सुविधा उपलब्ध असणे आवश्यक आहे. कंधार तालुक्यात एकही तृतीयक सेवा केंद्र आढळून येत नाही त्याचा तक्ता पुढीलप्रमाणे.

कंधार तालुक्यातील प्राथमिक व द्वितीयक सेवा केंद्राचे मंडळनिहाय विवरण

अ.क्र.	मंडळ	प्राथमिक सेवा केंद्र	द्वितीयक सेवा केंद्र
1	कंधार	11	03
2	कुरुळा	09	04
3	फुलवळ	08	03
4	पेठवडज	07	02
5	बारूळ	09	01
6	उस्माननगर	06	02
7	एकुण तालुका	50	15

वरील तक्त्यावरून असे निदर्शनास येते की, प्राथमिक सेवा केंद्र हे कंधार मंडळामध्ये 11 आहेत. त्याखालोखाल कुरुळा मंडळामध्ये 09, फुलवळ मंडळामध्ये 08, पेठवडज मंडळामध्ये 07, बारूळ मंडळामध्ये 09 आणि उस्माननगर मंडळामध्ये 06 प्राथमिक सेवा केंद्र असल्याचे आढळून येते.

वरील तक्त्यामध्ये द्वितीयक सेवा केंद्राची सर्वात जास्त संख्या कुरूळा मंडळामध्ये 04 आणि त्याखालोखाल फुलवळ व कंधार मंडळामध्ये प्रत्येकी 03, पेठवडज व उस्माननगर मंडळामध्ये प्रत्येकी 02 आणि बारूळ मंडळामध्ये 01 द्वितीयक सेवा केंद्र असल्याचे आढळते.

सेवा सुविधाची क्षमता:

ग्रामीण वस्तीमध्ये उपलब्ध असलेल्या प्राथमिक शिक्षण, माध्यमिक शिक्षण, आरोग्य केंद्र, डाक कार्यालय, बँक सुविधा याचा विचार केला आहे. दुरध्वनी केंद्र व आठवडी बाजार, पशु चिकित्सालय, मनोरंजनाची सुविधा, खत आणि किटकनाशके सुविधांना माहिती उपलब्ध नसल्याने त्यांना ग्राह्य धरले नाही.

सेवा सुविधांची स्थिती सांगतेवेळी चार गट केले आहे:

उच्च सेवा, मध्यम सेवा, निम्न सेवा व असमाधानकारक सेवा प्राथमिक शाळांचा विचार केल्यास कंधार मंडळामध्ये 33, कुरूळा मंडळामध्ये 22, फुलवळ मंडळामध्ये 18, पेठवडज मंडळामध्ये 16, बारूळ मंडळामध्ये 21, आणि उस्माननगर मंडळामध्ये 17 एवढ्या प्राथमिक शाळा आहेत. कंधार मंडळामध्ये ग्रामीण वस्तीमध्ये प्राथमिक शिक्षणाची सुविधा उच्च असल्याचे आढळून येते. कुरूळा आणि पेठवडज या अभ्यास मंडळामध्ये प्राथमिक शिक्षणाची सुविधा निम्न स्वरूपाची असल्याचे आढळते तर बारूळ व उस्माननगर या दोन्ही मंडळामध्ये प्राथमिक शिक्षणाची सुविधा असमाधानकारक स्वरूपाची असल्याचे दिसून येते.

माध्यमिक शिक्षणाच्या सुविधेचा विचार केल्यास माध्यमिक शाळेच्या संख्येपैकी सर्वात जास्त संख्या कंधार मंडळामध्ये 23 एवढी आढळून येते. त्याखालोखाल कुरूळा मंडळामध्ये 16, फुलवळ मंडळामध्ये 12, पेठवडज मंडळामध्ये 09, बारूळ मंडळामध्ये 07 आणि उस्माननगर मंडळामध्ये 05 एवढी असल्याचे आढळते. कंधार व फुलवळ मंडळामध्ये माध्यमिक शिक्षणाची सुविधा उच्च स्वरूपाची असल्याचे दिसून येते. कुरूळा आणि उस्माननगर मंडळामध्ये माध्यमिक शिक्षणाची सुविधा निम्न स्वरूपाची आढळते तर बारूळ या मंडळामध्ये माध्यमिक शिक्षणाची सुविधा मध्यम स्वरूपाची आढळते आणि पेठवडज या मंडळामध्ये माध्यमिक शिक्षणाची सुविधा असमाधानकारक स्वरूपाची असलेली पहावयास मिळते.

आरोग्य सुविधांचा विचार केल्यास फुलवळ मंडळामध्ये एकुण ग्रामीण वस्तीमध्ये 09 आरोग्य केंद्राची सुविधा उपलब्ध असल्याचे आढळते. त्याखालोखाल कंधार मंडळामध्ये 07, कुरूळा आणि पेठवडज मंडळामध्ये प्रत्येकी 05, बारूळ मंडळामध्ये 03 व उस्माननगर मंडळामध्ये 02 आरोग्य सेवा असल्याचे आढळून येते. फुलवळ आणि पेठवडज या मंडळामध्ये आरोग्य केंद्राची सुविधा उच्च स्वरूपाची आढळते. कुरूळा आणि उस्माननगर या मंडळामध्ये आरोग्य केंद्राची सुविधा मध्यम स्वरूपाची दिसून येते तर बारूळ या मंडळामध्ये आरोग्य केंद्राची सुविधा निम्न स्वरूपाची आढळते. कंधार या मंडळामध्ये आरोग्य केंद्राची सुविधा असमाधानकारक असल्याचे आढळून येते.

पोस्ट ऑफिसची सुविधेचा विचार केल्यास पोस्ट ऑफिसच्या संख्येपैकी सर्वात जास्त कंधार मंडळामध्ये 12 व त्याखालोखाल कुरूळा 07, फुलवळ 06, पेठवडज 05, बारूळ 04 आणि उस्माननगर 05 एवढी असल्याचे आढळते. कंधार, फुलवळ व पेठवडज या मंडळामध्ये पोस्ट ऑफिसची सुविधा लोकसंख्येच्या तुलनेने चांगली आहे. उस्माननगर या मंडळामध्ये डाक कार्यालयाची सुविधा मध्यम स्वरूपाची असलेली आढळते. कुरूळा मंडळामध्ये डाक कार्यालयाची सुविधा असमाधानकारक स्वरूपाची असलेली आढळून येते.

निष्कर्ष:

अभ्यास क्षेत्रातील ग्रामीण लोकसंख्येला अनुसरून कंधार तालुक्यातील प्राथमिक शाळेची उपलब्ध संख्या बारूळ आणि उस्माननगर या मंडळामध्ये प्राथमिक शाळेची उपलब्ध संख्या अनुक्रमे 21 आणि 17 तर अपेक्षित संख्या अनुक्रमे 22 आणि 18 एवढी आहे. यावरून येथे ग्रामीण लोकसंख्येला अनुसरून अनुक्रमे बारूळ 01 आणि उस्माननगर 01 प्राथमिक शाळा वाढविणे आवश्यक आहे. तर कंधार मंडळामध्ये प्राथमिक

शाळांची अपेक्षित संख्या 29 इतकी आहे. परंतु या मंडळामध्ये एकुण ग्रामीण वस्तीमध्ये प्राथमिक शाळांची उपलब्ध संख्या 33 एवढी आहे. यावरून येथील प्राथमिक सेवा उच्च असल्याचे स्पष्ट होते.

कंधार तालुक्यातील माध्यमिक शिक्षणाची उपलब्ध संख्या पेठवडज या मंडळामध्ये अपेक्षित माध्यमिक शाळांची संख्या 12 एवढी असणे अपेक्षित आहे. परंतु या मंडळामध्ये उपलब्ध माध्यमिक शाळांची संख्या 09 एवढी आहे. यावरून माध्यमिक शिक्षणाची सुविधा असमाधानकारक स्वरूपाची असल्याचे दिसून येते एकुण ग्रामीण लोकसंख्येला अनुसरून पेठवडज मंडळात 03 माध्यमिक शाळा वाढविणे आवश्यक आहे. कंधार आणि फुलवळ मंडळामत अपेक्षित माध्यमिक शाळांची संख्या अनुक्रमे 19 आणि 09 एवढी असणे गरजेचे आहे. परंतु या मंडळामध्ये माध्यमिक शाळेची उपलब्ध संख्या अनुक्रमे 23 आणि 12 एवढी आहे. यावरून असे स्पष्ट होते की, अपेक्षित माध्यमिक शाळांची संख्या ही जासत असल्याचे दिसून येते. म्हणून या मंडळातील ग्रामीण वस्तीमध्ये माध्यमिक शिक्षणाची सुविधा उच्च स्वरूपाची असल्याचे दिसून येते.

अभ्यास क्षेत्रातील मंडळनिहाय प्राथमिक आरोग्य सुविधाचा अभ्यास केला असता कंधार मंडळामध्ये एकुण ग्रामीण लोकसंख्येला अनुसरून 15 प्राथमिक केंद्र वाढविण्याची गरज आहे.

कंधार तालुक्यातील डाक सेवेची उपलब्ध संख्या बारूळ या मंडळात 03 तर अपेक्षित संख्या 04 म्हणजे जास्त आहे. यावरून येथे असमाधानकारक सेवा आढळते. एकुण ग्रामीण लोकसंख्येला अनुसरून बारूळ मंडळात 01 डाक कार्यालय वाढविणे आवश्यक आहे. कंधार, फुलवळ व पेठवडज या मंडळामध्ये डाक कार्यालयाची सुविधा उच्च प्रतिची असल्याचे निश्चित होते.

अभ्यास क्षेत्रातील मंडळनिहाय बँक सुविधाचा विचार केल्यास कंधार मंडळामध्ये एकुण ग्रामीण लोकसंख्येला अनुसरून 02 बँक वाढविणे आवश्यक आहे. बारूळ मंडळामध्ये एकुण ग्रामीण लोकसंख्येला अनुसरून 02 बँक वाढविण्याची आवश्यकता आहे.

संदर्भ:

1. अहिरराव वा. र. (1997): अधिवास भूविज्ञान, निराली प्रकाशन, पुणे
2. कळसकर एस. एन. (2011) परभणी जिल्ह्यातील ग्रामीण वस्तीचा अभ्यास, अप्रकाशित पीएच.डी. प्रबंध स्वा. रा. ती. मराठवाडा विद्यापीठ, नांदेड
3. भारतीय जनगणना अहवाल 2001, 2011
4. नागरगोजे ए. यु. (2014): उदगीर तालुक्यातील ग्रामीण वस्त्यांचा भौगोलिक अभ्यास, पीएच. डी. शोध प्रबंध
5. बंसल एस. सी. (2003): ग्रामीण वस्ती भूगोल रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, पृष्ठ क्र. 115
6. नांदेड जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालोचन 2013, 2014, 2015, 2016
7. Kankure K. B. (1986): Marathwada A Study in Settlement Geography, Unpublished Ph.D. Thesis P. 114-126
8. Berry B. J. L. and W.L. Garreson (1958): The Functional Based of the central place Hierarchy, Economic Geography, P. 145-154
9. Kumbhar A. P. (1988): A Study of Rural Habit in Nira Valley, Ph.D. Thesis, Shivaji University, Kolhapur, P. 127-134

भारतीय शेती व्यवसायात प्रधानमंत्री पिक विमा योजनेचे योगदान

प्रा.डॉ.एम.डी.कच्छवे

प्रोफेसर व वाणिज्य विभाग प्रमुख, संशोधन मार्गदर्शक, कै.रमेश वरपूडकर महाविद्यालय, सोनपेठ जि.परभणी

Email: mkachave@gmail.com

प्रस्तावना (Introduction):

भारत हा कृषीप्रधान देश असून शेती हेच उपजीविकेचे मुख्य साधन आहे. कृषी उत्पन्न वाढीसाठी अनेक प्रकारच्या योजना व धोरणे शासनाकडून आखल्या जातात. दुष्काळ, पूर, गारपीट, अतिवृष्टी, आणि वातावरणातील बदलांमुळे शेती व्यवसायासमोर मोठ्या प्रमाणात आव्हाने निर्माण झाली आहेत. प्रत्येक देशाच्या अर्थव्यवस्थेत शेती, उद्योग आणि विपणन ही तीन महत्त्वपूर्ण क्षेत्रे असतात. देशांतर्गत घडण्याच्या घटना, परिवर्तन, युद्ध प्रसंग, नैसर्गिक संकटे इत्यादीमुळे या तिन्ही क्षेत्रात अनिश्चितता निर्माण होते. पूर, दुष्काळ, गारपीट आणि इतर कारणामुळे शेतीतील उभी पिके नष्ट होतात. त्यामुळे शेतकऱ्यांचे मोठ्या प्रमाणात नुकसान होते. शेतकरी आपल्या जवळील सर्व भांडवल गुंतवून पेरणी करतात. पिके वाढवून कापणी होईपर्यंत व्यस्थितीत राहतील याची शाश्वती कोणालाही देता येत नाही. भारतीय शेतीचे भवितव्य हे पावसावर अवलंबून आहे. पाऊस चांगला आणि योग्य प्रमाणात पडल्यावरच शेतीतून उत्पादन चांगल्या प्रकारचे येते. आसाममध्ये चेरापुंजी येथे वार्षिक सरासरी 11:419 मिली मिटर पाऊस पडतो. राजस्थानमध्ये 09 ते 10 इंच पाऊस पडतो. येणारा पाऊस नियमित पडेल हे सांगता येत नाही. भारताच्या कोणत्याना कोणत्या भागात मोठ्या प्रमाणात पाऊस पडतो, पुरामुळे पिकांचे नुकसान होते शेतकऱ्यांना मोठ्या प्रमाणात आर्थिक हानी सहन करावी लागते. शेतकरी हा गरीब आणि कर्जबाजारी असल्यामुळे आणि दरवर्षी कोणत्याना कोणत्या पिकाचे नुकसान होत असल्यामुळे त्यांच्यावरील कर्जाचा भार वाढतच जातो. त्यामुळे त्यांची आर्थिक स्थिती खालावते. अशाप्रकारे देशाचा अन्नदाता दारिद्र्याच्या दुष्ट चक्रात अडकलेलाच असतो. पिक विमा योजनेमुळे पिकांचे जरी नुकसान झाले तरी शेतकऱ्यांना कांही प्रमाणात नुकसान भरपाई मिळते त्यामुळे शेतकरी पूर्वी घेतलेल्या कर्जाची परतफेड करूनच नवीन कर्ज पुन्हा घेतात. आपत्तीनां तोंड देण्यासाठी पिक विमा योजनेमुळे अन्नदात्यांना मोठ्या मानसीक आधार मिळू शकतो.

स्वातंत्र्यानंतर भारतीय शेतीत मोठ्या प्रमाणात आधुनिक तंत्रज्ञानाचा वापर करण्यात येत आहे. पाणी पुरवठ्याचा सोयीचा विस्तार झाला. कमी कालावधीत जास्तीत जास्त उत्पादन देणाऱ्या सुधारित बियाणांचा शोध लागला. शेतीला कर्जपुरवठा करणाऱ्या पतसंस्था निर्माण झाल्या. रासायनिक खते व किटकनाशकांचा शोध लागला. पिके नष्ट होण्याची प्रक्रिया सातत्याने सुरू असल्यास लहान शेतकऱ्यांना याचा फटका बसतो. परंतु पिकविम्याचा योजनेमुळे कांही प्रमाणात शेतकऱ्यांना नुकसान भरपाई मिळते त्यामुळे त्यांच्या कुटुंबाचे जीवनमान टिकून राहण्यास मदत होते.

❖ संशोधनाचे उद्देश:-

संशोधनाची खालीलप्रमाणे उद्देश निश्चित करण्यात आलेली आहेत.

- 01.प्रधानमंत्री पिक विमा योजनेचे अर्थ समजून घेणे.
- 02.प्रधानमंत्री पिक विमा योजनेचे इतिहास पाहणे.
- 03.प्रधानमंत्री पिक विमा योजनेचे फायदे पाहणे.
- 04.प्रधानमंत्री पिक विमा योजनेचे येणाऱ्या अडचणी शोधणे.
- 05.निष्कर्ष काढणे.

❖ संशोधनाची गृहितके:-

सदर संशोधनाची खालील प्रमाणे गृहितके निश्चित करण्यात आलेले आहेत.

01.भारतातील लोकांचा मुख्य व्यवसाय शेती असून ही शेती निर्सगावर अवलंबून आहे.

02.प्रधानमंत्री पिक विमा योजनेमुळे शेतकऱ्यांना थोड्याफार प्रमाणात नुकसान भरपाई मिळते.

❖ **अभ्यास पध्दती:-**

सदर शोध निबंधासाठी दुय्यम साधनसामग्रीचा वापर केला असून त्यात संदर्भ ग्रंथ, मासिके, दैनिक वर्तमानपत्रातील लेख, इंटरनेट इत्यादीचा वापर करून निश्चित उद्देशानुसार शोधनिबंध तयार करण्यात आलेला आहे.

प्रधानमंत्री पिक योजनेचा इतिहास:-

भारतातील साधन संपत्तीची माहिती गोळा करून भविष्यकालीन विकासाचा आराखडा तयार करण्यासाठी राष्ट्रीय नियोजन समितीची स्थापना इ.स.1938 मध्ये राष्ट्रीय काँग्रेसचे अध्यक्ष नेताजी सुभाष चंद्र बोस यांनी केली. इ.स.1939 मध्ये जमिन विषयक धोरण, शेतमजूर आणि विमा या बाबींचा विचार करण्यासाठी एक उपसमिती नेमण्यात आली. मध्य प्रदेशातील देवास या संस्थानात इ.स.1943 मध्ये पिक विम्याचा पहिला प्रयोग करण्यात आला. श्री नारायण नायडू यांनी इ.स.1946 मध्ये चेन्नई प्रांतातील शेतकऱ्यांच्या कर्जबाजारीपणाची पाहणी केली. चेन्नई प्रांतातील शेतकऱ्यांच्या उत्पन्नात स्थिरता आणण्यासाठी तांदूळ आणि अन्नधान्ये पिकविणाऱ्या भागात अमेरिकेतील पिक विमा योजनेसारखी योजना सुरू करण्यात यावी अशी शिफारस केली. सहकारी नियोजन समितीने शासनाने पुढाकार घेऊन देशात पिक विमा योजना सुरू करावी अशी शिफारस केली. इ.स.1947 मध्ये केंद्रीय विधी मंडळाच्या अंदाजपत्रक अधिवेशनात पिक विमा योजनेच्या अमलबजाणीत सरकार प्रयत्न करील असे आश्वासन देण्यात आले होते.

इ.स.1948 मध्ये शेतकी आणि अन्न मंत्रालयाने श्री.बी.पी.प्रियोळकर या अधिकाऱ्याला पिक विमा योजना तयार करण्याची जबाबदारी दिली. त्यांनी पिक विम्याची योजना प्रायोगिक स्वरूपाची असावी आणि ती तांदूळ, गहू, कापूस आणि ऊस या पिकपुरतीच मर्यादित असावी असे सुचविले. या योजनेचे भौगोलिक क्षेत्र चेन्नई मध्ये तांदूळ व कापूस यासाठी, मुंबई मध्ये कापूस यासाठी, मध्यप्रदेश मध्ये कापूस, गहू आणि तांदूळ यासाठी आणि उत्तर प्रदेशमध्ये गहू, तांदूळ आणि ऊस या पिकासाठी सीमित असावे असे सुचविले होते. इ.स.1960-61 मध्ये पिक विम्याची योजना पंजाब सरकारने शेतकऱ्यांचे हितसंबंध सुरक्षित ठेवण्याच्या दृष्टीकोनातून केली.

भारतात इ.स.1972 मध्ये पिक विमा योजनेची प्रायोगिक तत्वावर सुरुवात करण्यात आली. त्यानंतर इ.स.1979 मध्ये भारतीय विमा महामंडळाने राज्य सरकारांच्या सहकार्याने पिक विमा योजनेचे कार्यक्षेत्र आणि व्याप्ती वाढविली. इ.स.1985 मध्ये केंद्र सरकारने पिक विमा योजनेत तांदूळ, गहू, बाजरी, तीळ, भुईमुग, दाळी या पिकांचे समावेश केला. पिक विमा योजनेतील विशिष्ट पिकांचे उत्पादन हे हमी उत्पादनापेक्षा कमी असल्यास शेतकऱ्यांना नुकसान भरपाई मिळू शकेल.

महाराष्ट्रात इ.स.1980-81 मध्ये नागपूर, चंद्रपूर, वर्धा, नांदेड व परभणी या पाच जिल्हामध्ये प्रायोजिक तत्वावर सुरू करण्यात आली. या योजनेला शेतकऱ्यांनी प्रतिसाद दिला नाही. इ.स.1981-82 मध्ये पिक विमा योजनेतून वर्धा, नांदेड व परभणी हे तीन जिल्हे वगळून त्याऐवजी कोल्हापूर, सातारा, रायगड, जळगाव आणि सांगली या जिल्हांचा समावेश करण्यात आला. महाराष्ट्रातील पिक विमा योजना जनरल इन्शुरन्स कंपनीच्या सहकार्याने कार्यान्वित आहे.

पिक विमा योजनेचे फायदे:-

01.शेतकऱ्यांना आधार मिळतो:

भारतीय लोकांचा मुख्य व्यवसाय शेती असून ही शेती निसर्गावर अवलंबून आहे. बहुतांश शेतकरी आर्थिक दृष्ट्या कमकुवत असतात. शेतीत आपला सर्व पैसा लावल्यानंतर नैसर्गिक आपत्त्यामुळे त्याचे नुकसान झाल्यास दुबार पेरणी करण्याची त्याची उमेद संपते, पिक विमा योजनेमुळे त्यांना आधार मिळतो.

02. नैसर्गिक संकटापासून रक्षण मिळते:

भारतीय शेतकरी हा आपल्या शेतीत पाऊस पडताच पेरणी करतो. नैसर्गिक आपत्तीमुळे शेतीतील उत्पादन कमी होत त्यामुळे शेतकऱ्यांचे मोठ्या प्रमाणात नुकसान होते. पिक विमा योजनेमुळे अवर्षण, टोळधाड, वादळ, पूर, अशा विविध नैसर्गिक आपत्तीमुळे शेतमालाचे नुकसान भरून काढता येते.

03. कर्जबाजारीपणा कमी होणे.

भारतीय शेतकरी कर्जात जन्मतो, कर्जात वाढतो आणि कर्जातच मरतो असे म्हटल्या जाते. बहुतांश शेतकरी बरीच असल्यामुळे ते कर्जातच जीवन जगतात. नैसर्गिक आपत्तीमुळे होणारे आर्थिक नुकसान लहान शेतकरी सहन करून शकत नाहीत. त्यामुळे अशा कमकुवत असणाऱ्या शेतकऱ्यांचा कर्जात वाढ होत जाते. त्यामुळे त्यांच्या जीवनमानाची पातळी दिवसेंदिवस खालावत जाते. दारिद्र्य, कर्ज या चक्रात शेतकरी अडकला आहे. पिक विमा योजनेमुळे उत्पादनाचे झालेले नुकसान भरून घालणाऱ्या या चक्राला कांही प्रमाणात पायबंद बसू शकतो.

04. शेतकऱ्यांच्या दृष्टीकोनात बदल:

परंपरागत गरीबी, कर्जबाजारीपणा, अनिष्ट प्रथा, समाजव्यवस्था, नैसर्गिक आपत्ती, इत्यादी करणामुळे अनेक शेतकरी व्यवसायाबाबत उदासीन झाले आहेत. पिक विमा योजनेमुळे शेतकऱ्यांच्या जीवनातील उदासीनता जाऊन त्यांच्या नवीन दृष्टीकोन विकसीत होऊ शकतो.

05. शेतीकडे पाहण्याचा दृष्टीकोन बदलतो:

भारतीय शेती म्हणजे मानसूनचा जुगार होय असे म्हटले जाते. हा जुगारच सर्वसामान्य शेतकऱ्यांची जीवनपध्दती बनला आहे. पिक विमा योजनेमुळे शेतकरी आर्थिक नुकसान भरून काढू शकतो. त्यामुळे त्याचा शेती व्यवसायाकडे पाहण्याचा दृष्टीकोन बदलतो.

06. नवनवीन आव्हाने स्वीकारतो:

नैसर्गिक आपत्ती ही शेतकऱ्यांना सांगून येत नाही. त्यामुळे तो पिक विमा भरतो. नैसर्गिक आपत्तीमुळे होणारे नुकसान पिक विमा योजनेमुळे भरून निघू शकते.

07. आधुनिक तंत्रज्ञानाचा वापर:

निसर्गाचा लहरीपणा आणि उत्पन्ना मिळण्याची अनिश्चिता यामुळे अनेक शेतकरी शेतीच्या आधुनिक पध्दतीचा आणि उपकरणांचा वापर करित आर्थिक पिक विमा योजनेमुळे शेतकऱ्यांचे मोठ्या प्रमाणात नुकसान झाले तरी पिक विम्यापोटी नुकसान भरपाई मिळू शकते. त्यामुळे लहान लहान शेतकरी आधुनिक पध्दतीचा वापर करण्याना दिसतात.

08. शेतकऱ्यांच्या उत्पन्नात स्थिरता येते:

नैसर्गिक आपत्तीमुळे शेतकऱ्यांचे आर्थिक नुकसान होते. त्याचे देशाच्या अर्थव्यवस्थेवर विपरीत परिणाम होतात. पिकाचे नुकसान झाल्यास शेतकऱ्यांच्या उत्पन्नात घट होते. त्यामुळे त्यांची क्रय शक्ती कमी होते. पिका विमा योजनेमुळे शेतकऱ्यांच्या उत्पन्नात स्थिरता येते.

पिक विमा योजनेतील अडथळे:-

हरित क्रांतीमुळे अन्नधान्याच्या बाबतीत भारत स्वयंपूर्ण झाला आहे. दरवर्षी देशाच्या कोणत्याना कोणत्या भागात कधी कमी पावसाने तरी कधी जास्त पावसाने पिकांचे अतोनात नुकसान होते. परंतु शेतकरी पिक विमा काढण्यास सहजासहजी तयार होत नाहीत याची प्रमुख कारणे खालीलप्रमाणे सांगता येतील.

01. आकडेवारीचा अभाव:

पिक विम्यामध्ये विम्याची प्रव्याजी आणि नुकसान भरपाई ठरविणे हे अत्यंत कठिण काम असते. निरनिराळ्या वेगवेगळ्या पिकांचे उत्पादन घेतले जाते. विविध प्रकारच्या आपत्तीमुळे झालेले नुकसान याबाबत आकडेवारी उपलब्ध असणे आवश्यक आहे. या आकडेवारीवरून तुलना करून निष्कर्ष काढता आले पाहिजेत.

02. शेतकऱ्यांचे दारिद्र्य:

भारतातील बहुसंख्य शेतकरी गरीब आहेत. त्यांच्याजवळ स्वतःच्या उदरनिर्वाहासाठी पुरेशा प्रमाणात पैसा नसतो. त्यांच्यावर कर्जाचा डोंगर असतो. अशा परिस्थितीत पिक विमा तो भरूच शकत नाहीत.

03. शेतकऱ्यांचे अज्ञान:

भारतातील ग्रामीण भागात पर्यायी व्यवसाय नसल्यामुळे लहान-मोठ्या शेतावर कोणत्याही प्रकारे धोका न पत्करता पूर्वजांनी घालून दिलेल्या रूढीप्रमाणे शेती करण्यात येते. परंतु अलिकडे शेती क्षेत्राचे यंत्रिकीकरण व आधुनिकीकरण होत आहे. शेतीत विविध प्रकारची नवनवी साधने वापरली जात आहेत. परंतु नवीन तंत्रज्ञानाबद्दल त्यांचे कमालीचे अज्ञान आहे. त्यांची प्रवृत्ती ही दैववादी असते. त्यामुळे आपल्या शेतीत नवीन सुधारणा करण्यास हे शेतकरी तयार नसतात. त्यामुळे शेतकरी पिक विम्याचा लाभ घेऊ शकत नाहीत.

04. शासनाचे असहकार्य:

पिक विम्याची योजना कार्यान्वीत करण्यासाठी वेळावेळी सरकारी पातळीवरून विविध प्रयत्न करण्यात येतात. पिक विमा हा साधारणपणे खरीप व रब्बी हंगामातील पिकाला लावण्यात येतो. परंतु अजूनही शेतकऱ्यांकडून या योजनेला मोठ्या प्रमाणात प्रतिसाद मिळत नाही. खरीप हंगामाचा पिक विमा भरण्याचा कालावधी जून जुलै असतो. हा महिना शेतकऱ्यांच्या अडचणीचा असतो. पैसे हातात नसल्यामुळे तो विमा भरूच शकत नाही.

05. वादग्रस्त मालकी हक्क: कोणत्याही प्रकारच्या विम्यात विमा हित तत्व अत्यंत महत्वाचे असते. स्वातंत्र्या प्राप्तीनंतर शेतकऱ्यांवरील अत्याचार कमी करण्यासाठी सरकारने जमीनदारी पध्दती संपुष्टात आणली. जमीनदाराकडील हजारों एकर जमीन सरकारने आपल्या ताब्यात घेवून ती भूमिहिन शेतमजूराना वाटली.

सारांश:

अवर्षण, पूर, तुफान व वादळ, टोळघाट इत्यादी कारणामुळे कृषीक्षेत्रात फार मोठ्या प्रमाणात चढ-उतार होण्याचा जास्त संभव असतो. शेती क्षेत्रावर निसर्गाच्या लहरीपणाचा फार परिणाम होत असतो. धोक्यांना यशस्वीरीत्या तोंड देण्याच्या दृष्टीने त्यांच्यासंबंधी विमा उतरविणे शक्य आहे. विविध पिकांचा योग्य तेवढा विमा उतरविल्यास विम्यांच्या हस्त्यांच्या मोबदल्यात शेतकऱ्याला किमान उत्पनाची हमी मिळते आणि त्याचे नैसर्गिक व इतर आपत्तीपासून संरक्षण होते.

संदर्भ ग्रंथ सुची

01. डॉ. मेधा कानेटकर: भारतीय अर्थशास्त्र श्री साईनाथ प्रकाशन नागपूर.

02. डॉ. स. श्री. मु. देसाई व इतर: कृषी अर्थशास्त्र आणि भारतीय शेती व्यवसाय निराली प्रकाशन पुणे.

03. इंटरनेट.

जागतिक लोकशाही निर्देशांक आणि भारत

प्रा.डॉ.आंधळे बी.व्ही.

राज्यशास्त्र विभाग, कै.रमेश वरपुडकर महाविद्यालय सोनपेठ, जि.परभणी

email:- bvandhale@gmail.com

प्रस्तावना :- सध्याचे युग हे तांत्रिक कुशलता व शास्त्रीयता यांचे आहे.आत्याधिक तांत्रिक पध्दतीचा परिणाम इतर सामाजिक शास्त्रावर सुध्दा पडला आहे.यामुळे कोणत्याही सामाजिक संकल्पनेचे मूल्यमापन वास्तविक होण्यावर भर दिला जात आहे.भौतिकशास्त्रातील तंतोतंतपणा व शास्त्रीयता सामाजिक संकल्पनांमध्ये आनुण आज त्यांचे मूल्यमापन केले जात आहे.मग ते इतिहास, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र असो किंवा राज्यशास्त्रीय संकल्पना असो.जागतिक मानव विकास निर्देशांकाच्या(World Human development index)आधारे जगातील विविध क्षेत्रातील मानव विकासाचे मोजमाप करण्यात येत आहे.आणि त्यानुसार देशाचा आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक विकास अभ्यासला जात आहे.जागतिक मानव विकास निर्देशांकाप्रमाणेच सध्या जागतिक लोकशाही निर्देशांक (World democracy index)काढून राजकीय व्यवस्थेचे सांख्यिक (Statistics) मूल्यमापन करण्यात येत आहे.जगातील देशांच्या राजकीय व्यवस्थांचे मूल्यमापन करून त्यांचे चार घटकांत वर्गीकरण केले जात आहे.यामुळे प्रत्येक देशाच्या राजकीय व्यवस्थेचे सैद्धांतिक व व्यावहारिक स्वरूप लक्षात येत आहे.कोणतीही राजकीय व्यवस्था चांगली अथवा वाईट असत नाही तर ती चालविणारे लोक कसे आहेत हे महत्वाचे असते.म्हणून इतर व्यवस्थांच्या मूल्यमापनावरोबरच राजकीय व्यवस्थेचे जागतिक मूल्यमापन आज महत्वाचे वाटते.

लोकशाही म्हटले की, आपणाला अब्राहम लिंकन यांची लोकशाहीची व्याख्या आठवते.लोकांचे,लोकांनी ,लोकांसाठी चालविलेले शासन म्हणजे लोकशाही होय.परंतु लोकशाहीत येवढेच अपेक्षित नाही.तर लोकशाही आज जागतिक अधिमान्य शासन व्यवस्था म्हणून जशी पुढे आली आहे त्याप्रमाणे ती एक मानव जीवन पध्दती म्हणून पुढे येत आहे.लोकशाही मानवी जीवनाचा अविभाज्य भाग बनली आहे.म्हणून तिचे मूल्यमापन होणे योग्यच आहे.त्याशिवाय लोकशाही शासन प्रकार कितपत चांगला किंवा वाईट हे आपल्या लक्षात येणार नाही.

इंग्लंड हा देश लोकशाहीची जननी मानला जातो .आधुनिक लोकशाहीचा विकास इंग्लंडमध्ये झाला.पुढे अमेरिका,फ्रान्स, जपान, जर्मनी,दक्षिण आफ्रिका व भारत आदी देशांनी तिचा स्वीकार केला.आज जगातील बहुतांश देशांनी लोकशाही शासन प्रकार स्वीकारला आहे.भारताने संसदीय लोकशाही स्वीकारून आज जगातील सर्वात मोठी लोकशाही म्हणून मान मिळविला आहे.भारताने लोकशाही शासन व्यवस्था स्वीकारून आज जवळपास सत्तर वर्षे होत आहेत. या सत्तर वर्षांच्या कालखंड भारतीय लोकशाहीने कितपत विकास केला आहे ? याचे जागतिक पातळीवर मूल्यमापन करणे स्वाभाविक आहे.येवढेच नाही तर ते आपण होऊन करणे योग्य ठरेल. कारण की,भारतीय लोकशाहीने एका विसंगत परिस्थितीत वाटचाल सुरू केली.गरिबी,उपासमार, निरक्षरता याबरोबरच धार्मिकता,जातीयता,प्रांतवाद व घराणेशाही या समस्या होत्या.किंबहुना आजही काहीप्रमाणात त्या आहेत असे म्हणता येईल. जगाच्या तुलनेत भारतीय लोकशाहीची सध्याची वाटचाल कशी आहे हे जागतिक लोकशाही निर्देशांकाच्या आकडेवारीवरून काहीप्रमाणात लक्षात येते.म्हणून प्रस्तुत शोधनिबंधात जागतिक लोकशाही निर्देशांक आणि भारत याचा अभ्यास करण्यात येणार आहे.

जागतिक लोकशाही निर्देशांक :- सन 2006 सालापासून 'द इकॉनॉमिस्ट ' ने जगातील विविध देशांतील राजवटींचा जागतिक लोकशाही निर्देशांक जाहीर करण्यास सुरुवात केली.जगातील विविध क्षेत्रातील तीन हजार तज्ज्ञ व्यक्तीकडून हा अहवाल तयार करण्यात येतो.यात जगातील जवळपास 167 देशांच्या राजकीय व्यवस्थांचा अभ्यास केला आहे.हा अभ्यास करताना देशाची निवडणूक प्रक्रिया,सरकारी कामकाज, राजकीय भागीदारी,राजकीय संस्कृती व नागरी स्वातंत्र्य या घटकांचा आधार घेण्यात आला आहे.तसेच जागतिक लोकशाही निर्देशांक काढताना 0 ते 10

असे गुण दिले जातात. यामध्ये जो देश 0 ते 3 गुण प्राप्त करील तो हुकुमशाही राजवट आसलेला देश असेल तर 4 ते 6 गुण मिळवणारा देश मिश्र राजवट आसलेला देश असेल, 6 ते 8 गुण प्राप्त करणारा देश दोष पुर्ण लोकशाही आसलेला देश मानला जाईल आणि 8 ते 10 गुण प्राप्त करणारा देश संपूर्ण लोकशाही आसणारा देश मानला जाईल. एकुणच सर्व देशांना गुण देऊन चार गटात विभागले आहे.

याशिवाय जागतिक लोकशाही निर्देशांक ठरविण्यासाठी साधारणपणे चार प्रश्न विचारण्यात आले.

- 1) देशातील निवडणूका स्वायत्तपणे व न्यायोचित होतात का?
- 2) देशातील मतदार सुरक्षित आहे का ?
- 3) विदेशी महासत्तांचा राष्ट्रीय सरकारवर अंमल आहे का ?
- 4) धोरणे लागू करण्याचे अधिकार सरकारी कर्मचाऱ्यांना (Civil Servant) आहेत का ?

वरील प्रश्नांच्या आधारे जगातील राजकीय व्यवस्थांचे मूल्यमापन करण्याचे काम ' इकॉनॉमिस्ट इंटेलिजन्स युनिट ' (EIU) ने केले आहे.सन 2020 चा जागतिक लोकशाही निर्देशांक बनविताना 169 देशांचे चार गटात वर्गीकरण केले आहे.यात 23 देश संपूर्ण लोकशाही असलेले देश आहेत. 52 देश दोष पुर्ण लोकशाही आसलेले देश आहेत. 35 देश असे आहेत की तिथे मिश्र राजवट आहे.आणि 57 देश असे आहेत की तिथे हुकुमशाही राजवट आहे. यात नॉर्वे या देशाने संपूर्ण लोकशाही असण्याचे प्रथम स्थान मिळविले आहे.तर त्या खालोखाल आइसलँड,स्वीडन, न्यूझीलंड आणि कॅनडा यांचा क्रम आहे.तर अमेरिका ,ब्राझील, बेल्जियम, फ्रान्स व भारत या देशांनी दोष पुर्ण लोकशाही गटात स्थान पटकावले आहे.यावरून एक म्हणता येईल की ,जागतिक लोकशाही निर्देशांक ठरविताना लोकशाहीची परिपक्वता व विकास महत्त्वाचा आहे.

भारतीय लोकशाही निर्देशांक:- भारतीय लोकशाही जगातील सर्वात मोठी लोकशाही म्हणून ओळखली जाते.याचे कारण म्हणजे भारतीय लोकशाहीतील निवडणूकीत सहभागी होणारा मतदार हे आहे.भारताच्या लोकसभेच्या सार्वत्रिक निवडणुकीत जवळपास नव्वद कोटी मतदार आहेत. त्यातील साठ ते सत्तर कोटी मतदार प्रत्यक्ष मतदान प्रक्रियेत सहभाग घेतात.येवढ्या मोठ्या मतदारांकडून मतदान करून घेण्याचे कार्य भारतीय निवडणूक आयोग करतो आहे.भारतीय लोकशाहीचा इतिहास पाहता तो जेमतेम सत्तर वर्षांचा आहे.इंग्लंड, फ्रान्स, अमेरिका या देशांच्या तुलनेत तो नगण्य असाच आहे.म्हणून तिचे जागतिक पातळीवर मूल्यमापन करायचे नाही किंवा ते तेवढे गांभीर्याने घ्यायचे नाही.पण जे देश आपल्या बरोबर लोकशाही शासन प्रकार स्वीकारून वाटचाल करीत आहेत त्यांच्या तुलनेत आपण आपल्या लोकशाहीत सुधारणा करणे आवश्यक आहे.परंतू आज हे होताना दिसत नाही.याऊलट भारतीय लोकशाही निर्देशांक वाढण्या ऐवजी तो खाली घसरत आहे.गेल्या तेरा वर्षांतील भारतीय लोकशाही निर्देशांकाचा आढावा घेतला तर ती बाब दिसून येते.प्रस्तुत निर्देशांक दर्शविणारा तक्ता पुढील प्रमाणे आहे.

भारतीय लोकशाही निर्देशांक (Indian Democracy Index)

अनुक्रमांक	वर्ष	प्राप्त गुण
1	2006	7.68
2	2008	7.8
3	2010	7.28
4	2011	7.3
5	2012	7.52
6	2013	7.69
7	2014	7.92
8	2015	7.74
9	2016	7.81
10	2017	7.23
11	2018	7.23
12	2019	6.9
13	2020	6.61

वरिल तकत्यावरून असे दिसून येते की,सन 2019,2020 या वर्षात भारतीय लोकशाही निर्देशांकात मोठी घसरण झाली आहे.विशेषतः भारतीय नागरिकांचे नागरी स्वातंत्र्य 0.75 वरून घसरून ते 0.59 पर्यंत खाली आले.अभिव्यक्ती स्वातंत्र्यात 0.87 वरून 0.51 येवढी घट झाली .भारताचा इलेक्टोरल डेमॉक्रशी इंडेक्स 89 व्या स्थानावर आहे.तर उदारमतवादी घटकाच्या सुचित 93 वे स्थान आहे.तसेच समतावादी सुचित 122 तर लोकशाही प्रक्रियेतील सहभाग या घटकात 105 वे स्थान मिळाले आहे.एकुणच या दोन वर्षात भारतीय लोकशाही निर्देशांकात दहा अंकाची घसरण पहायला मिळते.सध्या भारत जागतिक लोकशाही निर्देशांकाच्या यादीत 53 व्या स्थानी आहे.

भारतीय लोकशाही निर्देशांक घसरण होण्यास सध्याच्या सरकारची ध्येय धोरणे कारणीभूत आहेत असे दिसून येते.यामध्ये भारतीय नागरिकत्व दुरुस्ती कायदा व एनआरसी वरून सुरुवात झालेले शाहीणबाग आंदोलन दडपणे, जम्मू काश्मीर मधील 370 कलम हाटविणे,तीन शेतकरी विरोधी कायदे,जेएनयू आंदोलन याशिवाय नागरी स्वातंत्र्यचा संकोच ,राजकीय नेतृत्वाचा वाढता हस्तक्षेप व राजकीय संस्कृतीचे नैतिक अधःपतन ही सर्व कारणीभूत आहेत. सध्या केंद्रात असलेले नरेंद्र मोदी यांच्या नेतृत्वाखालील सरकार लोकशाही मूल्य जोपासण्यात अपयशी ठरत आहे.सरकारच्या विरोधात आंदोलन करणे, घोषणा देणे किंवा टिका करणे हा प्रत्येक नागरीकाचा अधिकार आहे.परंतु प्रत्यक्षात सरकार प्रत्येक आंदोलन आपल्या सत्तेच्या जोरावर दाबु पहात आहे.मग ते शाहीनबाग आंदोलन, जेएनयू विद्यापीठातील विद्यार्थी आंदोलन आणि सध्या सुरू असलेले कृषि कायद्याच्या विरोधात चाललेले किसान आंदोलन यामध्ये सरकारची भूमिका दडशाहीची राहिली आहे.

आंदोलकांबरोबर चर्चा करण्याऐवजी सरकार वेळखाऊपणाची भूमिका घेत आहे.किंवा आंदोलकांवर देशद्रोहाचे आरोप करून त्यांना देश विरोधी ठरवत आहे.त्यांच्यावर देशद्रोहाचे खटले दाखल केले आहेत. फ्रीडम हाऊस या लोकशाही व मानवी हक्क यावर लक्ष ठेवणाऱ्या एका आंतरराष्ट्रीय संस्थेने भारताचा दर्जा Free Country वरून बदलून Partly Free म्हणजे ' काही प्रमाणात स्वातंत्र्य देणारा देश ' असे म्हटले आहे .यावरून एक दिसून येते की, भारतीय लोकशाही आपल्या मूल्यांपासून कुठेतरी दुर जात आहे.आणि हे देशाच्या शाश्वत विकासाला मारक आहे.

समारोप:- कोणत्याही देशाचा शाश्वत विकास होण्यासाठी तेथील राजकीय व्यवस्था महत्त्वाची भूमिका बजावत असते.कोणती राजकीय व्यवस्था चांगली हे महत्त्वाचे नसून ती राबविणारे लोक चांगले पाहिजेत. लोक जर आपल्या देशा प्रती प्रामाणिक, एकनिष्ठ व नैतिक असतील तर तो देश आपली सर्वांगीण प्रगती करतो.जपान, जर्मनी,ऑस्ट्रेलिया,न्यूझीलंड या देशानी जो विकास केला आहे त्याला तेथील परिपक्व लोकशाही कारणीभूत आहे.लोकशाही शासन व्यवस्था आज सर्वमान्य झाली आहे.म्हणून ती शुद्ध आहे असे होत नाही.लोकशाहीच्या वुरख्याआडून आपली एकाधिकारशाही निर्माण करणारे राजकारणी जोपर्यंत नष्ट केले जाणार नाहीत तोपर्यंत लोकशाही शासन व्यवस्था सक्षम होणार नाही.

डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर घटना समितीला उद्देशून बोलताना म्हणाले होते की,जरी आपण एक मत एक मुल्य ही व्यवस्था स्वीकारली असली तरी जोपर्यंत देशातील सामाजिक आर्थिक विषमता संपणार नाही तोपर्यंत राजकीय लोकशाहीला काही महत्व असणार नाही.आज भारतीय संसदेत 2019 च्या लोकसभा निवडणुकीत 542 खासदारांपैकी 475 करोडपती आहेत तर 411 खासदार हे गंभीर गुन्हे दाखल असलेले आहेत त्यामुळे भारतीय लोकशाही अशा लोकप्रतिनिधींच्या हातात गेली आहे .तेव्हा अशा लोकप्रतिनिधींकडून नैतिक, सद्गुणी व संपूर्ण लोकशाही प्रस्थापित करण्याची अपेक्षा कशी करता येईल? तेव्हा भारतीय मतदारांनी योग्य लोक प्रतिनिधी निवडून दिले पाहिजेत. म्हणून येणाऱ्या काळात भारतात संपूर्ण लोकशाही राष्ट्राचा दर्जा मिळवायचा असेल तर तसे लोकप्रतिनिधी संसदेत पाठवावे लागतील.

संदर्भ सूची:-

- 1) भारतीय लोकशाही शोध आणि आव्हाने – अरुण सारथी
- 2) लोकशाही जिंदाबाद- सुहास पळशीकर
- 3) www.loksatta.com
- 4) www.bbc.com
- 5) www.wikipedia
- 6) www.maharashtrataimce.com

सशस्त्र बलों में लैंगिक समानता : एक अध्ययन

श्री. मंगेश भगवंतराव कुलकर्णी

प्रा. डॉ. सौ संपदा सुधाकरराव कुलकर्णी

शिक्षक – प्राध्यापक

mangkul78@gmail.com

सारांश :

भारतीय संस्कृति में महिलाओं को अत्यंत गौरवशाली व महत्वपूर्ण स्थान दीया है। भारत एक मात्र देश है जहां महिलाओं के नाम के साथ देवी शब्द का प्रयोग किया जाता है। यहां नारी को शक्ति स्वरूपा, भारतीय संस्कृति की संवाहक, जीवन मूल्यों की संरक्षक, त्याग, दया, क्षमा, प्रेम, और बलिदान के प्रतीक के रूप में स्थापित किया गया है। संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस और चीन के बाद भारत को दुनिया की चौथी सबसे शक्तिशाली सैन्य शक्ति का दर्जा दिया गया है, और इसमें कोई संदेह नहीं है और भारत के पास अत्यधिक सक्षम सैन्य शक्ति है। लेकिन सशस्त्र बलों में लैंगिक समानता एक चुनौती रही है। महिलाएं अपने काम के प्रती सजग राहती है सहकारी को शक्ति, जानकारी साझा करती हैं, और फिर भी जब स्थिति की मांग होती है तो वे कठोर होती हैं, तब वह दुर्गा का रूप धारण कर लेती है। यह स्वाभाविक रूप से उनके लिए अपने सहयोगियों के आत्म-मूल्य को बढ़ाने और उनमें से कार्य सर्वश्रेष्ठ प्राप्त करने के लिए आता है, एक अच्छे नेता में एक दुर्लभ लेकिन बहुत अधिक मांग वाला गुण। हमारे सशस्त्र बल बहुत हिचकिचाते हुए महिलाओं के लिए दरवाजे खोल रहे हैं। उनकी भूमिका को और व्यापक बनाया जाना चाहिए।

बीज शब्द : भारतीय सशस्त्र बल, भारतीय महिला अधिकारी, सशस्त्र बलों में महिलाओं की भूमिका, महिला अधिकारी की प्रेरणा, लैंगिक समानता।

उद्देश्य :

1. सशस्त्र बलों में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन करना।
2. भारतीय सशस्त्र बलों में महिलाओं की भूमिका का अध्ययन करना।
3. सशस्त्र बलों में महिलाओं के संघर्ष का अध्ययन करना
4. सशस्त्र बलों में लैंगिक समानता के लिए महिलाओं के संघर्ष के बारे में जानकारी प्राप्त करना।
5. सशस्त्र बलो मे महिलाओ की सक्षमता,साक्षरता , और सबलता का आदर्श और प्रेरणा का अध्ययन करना ।

प्रस्तावना :

आधुनिक दुनिया में, काम का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जिसमें महिलाओं ने प्रवेश नहीं किया है। महिलाओं को समायोजित करने के लिए अध्यक्ष और कैमरामैन जैसे शब्दों को चेयरपर्सन और कैमरापर्सन के रूप में दोहराया गया है। कई पुरुष प्रधान कार्यस्थल महिला की शक्ति – उनका आत्मसन्मान और ऊर्जा पुरुष प्रधान होने के कारण अंदर ही अंदर दब गई हैं।

भारतीय सशस्त्र बल, जिसे काफी लंबे समय तक पुरुष प्रधान कार्यस्थल माना जाता था, अब उसमें आत्मविश्वासी, साहसी महिलाएं हैं, जो हर भूमिका में ढलती हैं और सभी के लिए एक उदाहरण स्थापित करती हैं। लेफ्टिनेंट जनरल पुनीता अरोड़ा, आर्मी मेडिकल कोर की एक महिला अधिकारी, पुणे में प्रतिष्ठित रक्षा संस्थान, सशस्त्र बल मेडिकल कॉलेज (AFMC) की प्रमुख हैं। रजिया सुल्ताना और झांसी की रानी की भूमि में, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि महिलाएं सशस्त्र बलों में अपनी पहचान बनाती हैं।

सशस्त्र बलों में लड़ाकू भूमिका में महिलाओं पर बहस नियमित अंतराल पर सामने आती है, हालांकि पहले भी अन्य देशों में महिलाएं ऐसी भूमिकाओं में रही हैं। इतिहास इस बात का गवाह है कि ब्रिटेन, जर्मनी और अमेरिका की हजारों महिलाएं, गुरिल्ला लड़ाकों को छोड़कर और शासकों के खिलाफ विद्रोह में भाग लेने वाली, जो एक लड़ाकू सैनिक की सख्त परिभाषा में शामिल नहीं हो सकती हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध 1943 तक, सोवियत संघ की सेना ने एक लाख से अधिक लड़ाकू महिलाओं को आपनी सेना में सामील किया था। जैसेकी फाइटर एविएशन रेजिमेंट, बॉम्बर एविएशन रेजिमेंट और सोवियत वायु सेना की नाइट बॉम्बर रेजिमेंट पायलटों और एयरक्राफ्ट इंजीनियरों की सभी महिला इकाइयां थीं।

भारतीय संदर्भ में, गुरु गोविंद सिंह की महिला योद्धाओं और झांसी की रानी की लड़ाई की प्रेरक कथा को कौन भूल सकता है? ऐसा माना जाता है कि सुभाष चंद्र बोस ने एक अंग्रेज का एक लेख पढ़ा था, जिसने 1857 में स्वतंत्रता के पहले युद्ध के बाद लिखा था, "अगर रानी जैसी एक हजार महिलाएं होतीं, तो हम कभी भी भारत पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते थे।" रानी झांसी रेजीमेंट (आरजेआर) की कमांडर दिवंगत कैप्टन लक्ष्मी सहगल के अनुसार नेताजी ने उस लेख को पढ़ने के बाद महिला लड़ाकू सैनिकों की रेजीमेंट के लिए यह नाम चुना। भारतीय राष्ट्रीय सेना (आईएनए) के (आरजेआर) में लगभग ५००० महिला सैनिक संख्या थी, लड़ाकू भूमिका में महिलाओं के साहस और दृढ़ संकल्प का काफी रोचक इतिहास है।

यदि हम एक अच्छे पेशेवर सैनिक के लिए आवश्यक गुणों की जांच करें और उन्हें (गुणोंको) पुरुषों और महिलाओं के साथ जोड़कर पता करें कि वे उस पैमाने पर बराबर हैं या नहीं, तो शायद महिलाएं कुछ बेहतर प्रदर्शन करेंगी। व्यावसायिक क्षमता जिसके लिए निश्चित रूप से एक निश्चित स्तर की शारीरिक फिटनेस की आवश्यकता होती है, वह सबसे महत्वपूर्ण कारक है।

सशस्त्र बलों में महिलाओं की भूमिका लंबे समय तक चिकित्सा पेशे (Medical Corps) यानी डॉक्टरों और नर्सों तक ही सीमित थी। 1992 में, विमानन (Aviation), रसद (Supply), कानून (Law), इंजीनियरिंग और कार्यकारी (Administration) कोर में नियमित अधिकारियों के रूप में महिलाओं के प्रवेश के लिए दरवाजे खोल दिए गए थे। हजारों युवतियों ने विज्ञापनों के खिलाफ आवेदन किया और यह उनके जीवन का एक महत्वपूर्ण मोड़ था। वर्तमान में, गैर-चिकित्सा कोर में महिलाएं शॉर्ट सर्विस कमीशन (SSC) अधिकारियों के रूप में कार्य करती हैं। इस प्रकार के कमीशन के तहत, वे सशस्त्र बलों में 5-14 साल की अवधि के लिए सेवा कर सकते हैं।

कई विकसित देशों में लड़ाकू पायलट के रूप में महिलाएं हैं, वे जहाजों की कमान संभालती हैं और सभी हथियारों और सेवाओं में काम करती हैं। अमेरिका ने इस दिशा में पहल की है। युद्ध की भूमिका में महिलाओं के खिलाफ बोलने वालों का सबसे महत्वपूर्ण तर्क यह है कि महिलाएं युद्ध की कैदी बन जाती हैं और दुश्मन सैनिकों के हाथों अत्याचार का शिकार होती हैं।

इतिहासकार बेरा हिल्डेब्रांड ने अपनी पुस्तक, वीमेन एट वॉर (2016) में लिखा है, "आरजेआर, सैन्य इतिहास में पहली महिला पैदल सेना से लड़ने वाली इकाई, जुलाई 1943 में सिंगापुर में भारतीय स्वाधीनता सेनानी सुभाष चंद्र बोस द्वारा ब्रिटिश कानून से भारत को मुक्त करने के लिए बनाई गई थी।", इन महिला सैनिकों को द्वितीय विश्व युद्ध के अंतिम दो वर्षों के दौरान बर्मा के भाप से भरे जंगलों के चुनौतिपूर्ण इलाके में तैनाती के लिए प्रशिक्षित किया गया था, जो किसी भी सैनिक के लिए एक चुनौतीपूर्ण काम था। यह अलग बात है कि वे वास्तव में दुश्मन का सामना नहीं कर सके। हाल ही में, IAF की तीन महिला फाइटर पायलटों के पहले बैच ने एक तरह का इतिहास रच दिया है। गरुड़ कमांडो फोर्स, पैरा कमांडो आदि जैसे लड़ाकू विशेषज्ञ बलों के अलावा महिलाओं को लड़ाकू इकाइयों जैसे पैदल सेना, Armoured Corps और Mechanized पैदल सेना में सेवा करने की अनुमति नहीं है। लेकिन वर्षों से महिलाओं को सेना, नौसेना, वायु सेना तीनों सेवाओं की विभिन्न शाखाओं में शामिल किया गया है।

भारत जैसे देश में, जो भविष्य में एक उभरती हुई महाशक्ति बनने की आकांक्षा रखता है, सशस्त्र बलों में लिंग के आधार पर भेदभाव निश्चित रूप से देश के लिए एक बैकलॉग होगा। महिलाओं को लगभग हर पहलू में पुरुषों के बराबर माना जाना चाहिए। स्थानान्तरण और मातृत्व अवकाश जैसी संस्थागत और प्रशासनिक नीतियों को संरक्षित किया जाना चाहिए और समय-समय पर ध्यान दिया जाना चाहिए। महिलाओं के प्रति भारत के दृष्टिकोण में सुधार करना होगा, जो समग्र आर्थिक विकास, महिला सशक्तिकरण में मदद करेगा और वैश्विक क्षेत्र में भारत को सकारात्मक रोशनी में प्रदर्शित करेगा।

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट द्वारा मार्च 2020 एक महत्वपूर्ण फैसले के साथ, महिलाओं को पदोन्नति, रैंक और पेंशन के मामले में पुरुष समकक्षों की तरह ही समान अवसर और लाभ मिलेंगे और उन्हें लंबे कार्यकाल के लिए सेवा करने की अनुमति दी जाएगी। इस फैसले के दरम्यान केंद्र शासन और सुप्रीम कोर्ट के बीच हुए बहस में कुछ प्रमुख बातें

समाजिक धारणाओं के आधार पर महिलाओं को समान मौक़े न मिलना परेशान करने वाला और अस्वीकार्य है।

महिला सैन्य अधिकारियों को परमानेंट कमीशन न देना सरकार के पूर्वाग्रह को दिखाता है। केंद्र सरकार को महिलाओं के बारे में मानसिकता बदलनी होगी और सेना में समानता लानी होगी।

महिलाओं का कमांड पोस्ट पर प्रतिबंध अतार्किक है और समानता के खिलाफ़ है।

लेकिन सुप्रीम कोर्ट ने अपना फैसला सुनाकर इतिहास बदल दिया | केंद्र सरकार के रक्षा मंत्रालयने फैसला लिया है की सुप्रीम कोर्ट के फैसले को मानते हुए महिला सैन्य अधिकारी को पूर्ण रूप से अधिकार प्रदान करे| सरकार के इस आदेश से निश्चित रूप से सैन्य बलों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ेगी और महिला सशक्तीकरण को समाज में स्थापित करने में मदद मिलेगी।

महिला सशक्तीकरण, लैंगिक समानता और देश की राष्ट्रीय सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए समाज में एक सकारात्मक परिवर्तन की आवश्यकता है, जो निश्चित रूप से एक बेहतर भारत के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करेगा।

सशस्त्र बलों में महिलाओं को अपनी सेवा के दौरान कुछ प्रमुख मुद्दों का सामना करना पड़ रहा है। जैसा कि कहा जाता है कि सशस्त्र बल सेवा करने के लिए एक पुरुष प्रधान स्थान है। लेकिन महिलाएं इस फोर्स में एक गौरव सेवा के रूप में शामिल हो रही हैं। ताकि वे कुछ प्रमुख मुद्दों का सामना कर रहे हैं,

निकर्ष :

भारतीय स्त्री जिसे गृहलक्ष्मी की मान्यता दी गई, परंतु कालांतर में इन धारणाओं में परिवर्तन होने लगे और समाज में स्त्री की स्थिति कमजोर हो गई। वह अशिक्षा, लैंगिक भेदभाव, गैरप्रथाओं और पुरुष प्रधान सोच के कारण घर की दहलीज तक सीमित होकर रह गई। अब स्थितियां बदल रही हैं।

आधुनिक समय में युद्ध की परिसीमा बदल गई है, इलेक्ट्रॉनिक युद्ध के आधुनिक समय में, यह शारीरिक युद्ध की तुलना में युद्ध में तनाव पर काबू पाना काफी मुश्किल है। यह वैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुका है कि महिलाएं तनाव को बेहतर तरीके से संभालती हैं और मानसिक रूप से भी मजबूत होती हैं। शारीरिक प्रशिक्षण में भी महिलाओं ने बहुत अच्छा प्रदर्शन किया है। सशस्त्र बलों के प्रशिक्षण अकादमियों में पहले कुछ वर्गों में महिलाओं ने अधिक धीरज दिखाया और कुछ ने अपने पुरुष समकक्षों को क्रॉस-कंट्री रन और लंबी दूरी की मार्च में भी पीछे छोड़ दिया। वे इस परंपरा को निभाते हैं और नए-नए कीर्तिमान स्थापित करते रहते हैं।

भारतीय सशस्त्र बलों में महिलाओं की भागीदारी में सकारात्मक बदलाव आया है, हालांकि उनके पुरुष समकक्षों की तुलना में अभी भी बहुत बड़ा अंतर है। हालांकि महिलाओं को अब सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सशस्त्र बलों में स्थायी कमीशन दिया गया है, लेकिन उनके लिए लड़ाकू भूमिकाएं अभी भी बंद हैं।

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि जिन महिलाओं ने सेना में सेवा करने का फैसला किया है, उन्होंने एक कठिन रास्ता चुना है। यह उनका फैसला बुलंद भारत का निर्माण करने में मदद करेगा इस का विश्वास हर भारतवासी को है |

सन्दर्भ सुचि :

1. डॉ. ए रणजितकुमार, (2020). : समकालीन भारतातील जाती आणि लिंग समानता, कल्पझ पब्लिकेशन, नवी दिल्ली.
2. कर्नल चीमा डी एस निवृत्त. (2021). Women Deserve a Biggest role in Armed Forces ई-पेपर चंदीगड.
3. जसवीरसिंग मिन्हास, निलेश अरोरा. (2020). Combating Gender inequality and shortage in Indian Armed Forces. International Journal of Business and Globalisation, २०२० खंड २६ नंबर ०४, पान क्रमांक ३७९- ३८९.
४. खुशबू रुपाणी, मनवाणी नीता. (2020): लैंगिक समानता. पहिली आवृत्ती, नॅशनल प्रेस. नवी दिल्ली.
५. डॉ. लालनेह्रिजोवी, (२०१८): लिंग समानता आणि टिकाऊ विकास. मित्तल पब्लिकेशन नवी दिल्ली.
६. ममता महरोत्र, (2013). भारतात लैंगिक असमानता. प्रभात प्रकाशन. नवी दिल्ली.
७. मिश्रा आर सी. (२०१३): भारतातील महिला लैंगिक समानतेच्या दिशेने. ऑथर प्रेस. नवी दिल्ली.

शाश्वत विकासाची ध्येये: संकल्पना आणि स्वरूप

श्रद्धा मोहन पवार

लोकप्रशासन विभाग, स्वामी रामानंद तीर्थ महाविद्यालय, अंबाजोगाई.

shraddha7790@gmail.com

सार :

शाश्वत विकास हा प्रत्येक व्यक्ती किंवा राष्ट्रासाठी अतिशय महत्त्वाचा आहे. पर्यावरण, समाज आणि अर्थव्यवस्था यांच्या योग्य समन्वयातून शाश्वत विकास साध्य करणे शक्य आहे. आज जागतिक हवामान बदलामुळे, प्रदूषणामुळे आणि पर्यावरणाच्या ऱ्हासामुळे शाश्वत विकासाला अनन्य साधारण महत्त्व प्राप्त झाले आहे. आज जगात ज्या वेगाने आर्थिक विकास होत आहे तो चिरकाल टिकण्यासाठी शाश्वत विकासाशिवाय पर्याय नाही. मानवाच्या गरजा व इच्छा भागविणे हा विकासाचा सर्वात महत्त्वाचा उद्देश आहे. विकसनशील देशांतील सामान्य लोकांच्या अन्न, वस्त्र, निवारा आणि रोजगार या मूलभूत गरजा पूर्ण होत नाहीत. त्यासाठी जगातील केवळ विकसनशील देशांनीच नव्हे तर विकसित देशांनी देखील शाश्वत विकासाची संकल्पना स्वीकारली आहे. शाश्वत विकास हा प्रत्येकाला चांगले जीवन जगण्यासाठी आपल्या मूलभूत गरजा व इच्छा पूर्ण करण्यावर भर देतो. म्हणूनच शाश्वत विकास ही संकल्पना पर्यावरण व मानवी भविष्य संरक्षणाच्या दृष्टीने महत्त्वाची आहे. आजची एकूण जागतिक पर्यावरण व मानवी विकासाची स्थिती पाहता शाश्वत विकास हे ध्येय मानून जगातील सर्व राष्ट्रांनी त्याची पूर्तता करणे क्रमप्राप्त ठरत आहे. त्यासाठी जागतिक स्तरावर प्रयत्न केले जात आहेत, त्यापैकीच एक म्हणजे २५ सप्टेंबर २०१५ रोजी संयुक्त राष्ट्र संघाच्या (UNO) आमसभेने इ.स.२०३० पर्यंत साध्य करण्याची शाश्वत विकासाची ध्येये स्वीकारली आहेत. शाश्वत विकासाची ही ध्येये कोणती आहेत, त्यांचे स्वरूप याची सविस्तर माहिती घेण्यासाठी प्रस्तुत शोधनिबंधाचे लेखन करण्यात आले आहे.

सांकल्पनिक संज्ञा :

शाश्वत विकास संकल्पना, शाश्वत विकास अर्थ व व्याख्या, शाश्वत विकास ध्येयांची पार्श्वभूमी, सहस्रकातील विकासाची ध्येये (MDG), शाश्वत विकासाची ध्येये (SDG).

उद्दिष्टे :

- १) शाश्वत विकासाची संकल्पना अभ्यासणे.
- २) शाश्वत विकासाची उद्दिष्टे व त्यातील घटकांची माहिती घेणे.
- ३) शाश्वत विकास ध्येये जाणून घेणे.

संशोधन पद्धती :

प्रस्तुत शोध निबंधाचे लेखन करण्यासाठी संशोधनाच्या विश्लेषणात्मक पद्धतीचा वापर करण्यात आला आहे. तसेच माहिती संकलनाच्या द्वितीयक स्रोतांचा वापर करून माहितीचे संकलन करण्यात आले आहे. ज्यात पुस्तके, वर्तमान पत्रातील लेख, मासिके व विविध संकेतस्थळांचा समावेश करण्यात आला आहे.

प्रस्तावना :

मानवाने जीवसृष्टीत जीवन जगण्यासाठी केलेली पहिली क्रिया ही विकासाची सुरुवातच होती. निसर्गाने मोठ्या प्रमाणावर भौतिक संसाधने मानवाला उपलब्ध करून दिली आहेत, जी मानवाला आपले जीवन जगण्यास व विकासासाठी उपयुक्त ठरतात. परंतु मानवाने आपल्या गरजा भागविण्यासाठी आणि विकासासाठी नैसर्गिक साधनसंपत्तीचा अतिरेकी वापर केलेला दिसून येतो. मानव आपल्या भविष्याचा प्राधान्याने विचार करतो; परंतु अमर्यादित वापराने कमी होणाऱ्या संसाधनाचा भविष्यावर काय दुष्परिणाम होईल याचा सारासार विचार मानव करीत नाही. आवश्यकतेपेक्षा अधिक नैसर्गिक संसाधनांच्या वापराने नैसर्गिक साधने भविष्यात अपुरी होऊन मानवाचा विकास खंडित होण्याचा धोका व्यक्त करण्यात येत आहे. विकास मानवाची सर्वात मोठी गरज आहे; परंतु हा विकास शाश्वत किंवा चिरंतन असला पाहिजे. पर्यावरणाचा उपयोग करण्यासोबतच पर्यावरणाची अभिवृद्धी करणे महत्त्वाचे आहे. परंतु आज पर्यावरणाच्या संवर्धनासाठी व अभिवृद्धीसाठी पुरेसे प्रयत्न केले जात नाहीत. विकासाच्या उद्देशांमध्ये व विकास कार्याच्या व्यवस्थापनामध्ये चिरंतन विकासाबाबत नियोजन करणे महत्त्वाचे आहे.

शाश्वत विकास :

शाश्वतता म्हणजे एखादी अवस्था जी थोड्या किंवा अनंत काळापासून टिकून राहते. Sustainable हा शब्द sustainere या लॅटिन शब्दापासून तयार झाला आहे. sustainere म्हणजे धरून ठेवणे, सहाय्य करणे, टिकवून ठेवणे. एखाद्या समाजाची सांस्कृतिक व आर्थिक अवस्था टिकून राहणे यालाही शाश्वतता म्हणतात किंवा पृथ्वीवरील नैसर्गिक स्रोतांचे (पर्यावरण ज्हासापासून) संरक्षण व संवर्धन करणे यालाही शाश्वतता म्हणतात. शाश्वत विकास ही सातत्याने चालणारी परिवर्तनाची प्रक्रिया आहे. शाश्वत विकासामध्ये साधन संपत्तीचा आवश्यकतेप्रमाणे पूर्ण उपयोग, तांत्रिक विकासाची अभिमुखता व संघटनात्मक बदल या सर्वात अनुरूपता असणे व मानवी गरजा आणि महत्वाकांक्षा पूर्ण करण्यासाठी सध्याचे व भविष्यातील सामर्थ्य वाढविणे यांचा समावेश होतो.

व्याख्या:

- १) **ब्रुटलँड आयोग** : भावी पिढीच्या गरजा पूर्ण करण्याच्या क्षमतेची तडजोड न करता वर्तमान पिढीच्या गरजा पूर्ण करणे म्हणजे शाश्वत विकास होय.
- २) **जागतिक पर्यावरण व विकास आयोग** : शाश्वत विकास म्हणजे देशाच्या नैसर्गिक संसाधनांचा नाश न करता आर्थिक व सामाजिक विकास करणे होय.
- ३) **IUCN (International Union for Conservation of Nature and Natural Resources)** संस्थेने १९९१ मध्ये जाहीर केलेल्या शाश्वत जीविताच्या धोरणात शाश्वततेची व्याख्या पुढीलप्रमाणे केली आहे. 'शाश्वतता म्हणजे सजीव, परिस्थिती किंवा नैसर्गिक स्रोतांचा असा वापर करणे जो भरून काढला जाईल'.

वरील व्याख्यांवरून असे लक्षात येते की, शाश्वत विकास या संकल्पनेत निसर्ग व विकास यामध्ये समतोल राखण्याचा प्रयत्न केला आहे. शाश्वत विकास म्हणजे विकासाची निर्धारित पातळी गाठण्याची तसेच स्वतःच्या गरजा भागविण्याची क्षमता व गरजा वाढल्यास त्या गरजा भागविण्यासाठी क्षमतेत वाढ करणे होय. विकासाचा उद्देश साध्य करण्यासाठी हे प्रयत्न करताना नैसर्गिक संसाधनाचा अपव्यय होऊ नये, संसाधनाच्या दीर्घकालीन उत्पादन क्षमतेला व आवश्यक परिस्थितीला हानी पोहचू नये याची खबरदारी घेणे, वर्तमान परिस्थितीत केलेला विकास भविष्यात संसाधनांच्या अभावाने खंडित होऊ नये तर भावी पिढी त्या विकासाच्या त्यांच्या गरजेनुसार विस्तार करू शकेल ही क्षमता अबाधित राखणे होय. शाश्वत विकासामध्ये दूरदृष्टीवर भर देण्यात आला आहे. शाश्वत विकास ही संकल्पना आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरण विषयक पैलूंनी निगडित आहे. यात उद्दिष्टांना महत्व दिले आहे. ज्यात, संसाधनात वाढ, शैक्षणिक सुधारणा, आरोग्य व पोषण, उत्पन्नात वाढ, मूलभूत स्वातंत्र्य, वितरणात समानता यांचा समावेश होतो.

शाश्वत विकास : पार्श्वभूमी

पर्यावरणाची हानी न करता आपल्या साधनसंपत्तीचा वापर चालू ठेवणे म्हणजेच साधनसंपत्तीचा चिरंतन किंवा शाश्वत वापर होय. साधन संपत्तीचा शाश्वत वापर भारतीयांना नवीन नाही वैदिक काळातही पाणी, वन, प्राणी, जमीन व इतर अनेक प्रकारच्या सजीव व निर्जीव घटकांचा चिरंतन वापर कसा करावा याबद्दलचे संदर्भ उपलब्ध आहेत. जगभरात झालेल्या औद्योगिकीकरणामुळे चिरंतन विकासाचे महत्व अधोरेखित झाले आहे. सर्व देशांना याचे महत्व पटले असून त्यांनी त्यांच्या नियोजनात शाश्वत विकासाचा समावेश केला आहे. आंतरराष्ट्रीय स्तरावरील याबाबतचा पहिला अहवाल 'क्लब ऑफ रोम' ने तयार केला व तो 'वाढीच्या मर्यादा' (Limits of Growth) या नावाने प्रसिद्ध झाला. या अहवालात साधनसंपत्तीच्या अतिरिक्त वापरामुळे आपले भविष्य कसे अंधःकारमय, समस्यायुक्त होऊ शकते यावर प्रकाश टाकण्यात आला आहे. संयुक्त राष्ट्र संघटनेच्या पर्यावरण कार्यक्रमातून (UNEP) जागतिक संवर्धन व धोरणाचा आराखडा तयार करण्यात आला. त्याचप्रमाणे World Wide Fund for Nature (WWF) व International Union for Conservation of Nature (IUNC) या कार्यक्रम प्रकल्पाद्वारेही शाश्वत विकासाला जगभर चालना मिळाली.

शाश्वत विकास या संकल्पनेचा विकास हा १९७२ ते १९९२ या कालखंडात अनेक आंतरराष्ट्रीय परिषदांच्या पुढाकाराने होत गेला. संसाधनांच्या नियोजित वापराने सातत्यपूर्ण विकास ही गरज ओळखून अमेरिकेत १९६९ मध्ये राष्ट्रीय पर्यावरण धोरणाने शाश्वत विकासाची सुरुवात झाली. १९७० मध्ये जागतिक संघटनेच्या स्टॉकहोम येथे झालेल्या परिषदेत विकसित राष्ट्रांनी विकासाचा पर्यावरणावर होणाऱ्या अनिष्ट परिणामांवर चिंता व्यक्त केली तर विकसनशील राष्ट्रांनी औद्योगिक विकासात सातत्याची गरज प्रतिपादित केली. यातूनच शाश्वत विकास संकल्पना पुढे आली.

१८ सप्टेंबर २००० मध्ये १८९ देशांच्या प्रतिनिधींनी संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या (UNO) मुख्यालयात (न्यूयॉर्क) 'सहस्रकातील विकासाची ध्येये' (Millennium Development Goals - MDG) या जाहीरनाम्यावर स्वाक्षरी केली. सप्टेंबर २००० मध्ये न्यूयॉर्क येथे सहस्रक शिखर परिषद (Millennium Summit) पार पडली. जागतिक स्तरावर विकासाची समान व्याख्या, स्वरूप निश्चित करणे व त्या संदर्भात सदस्य राष्ट्रांना कार्य करण्यासाठी प्रेरित करणे, जेणेकरून जागतिक स्तरावर लोकांना किमान सोयी सुविधा उपलब्ध होतील तसेच त्यांना उत्तम जीवन जगता येईल, या हेतूने संयुक्तराष्ट्र संघाने जागतिक स्तरावर ज्या काही सामुहिक समस्या आहेत त्यांच्या विरोधात एकत्र लढा देण्याचे ठरवले. जागतिक स्तरावर या समस्यांविषयी एकमत घडवून आणण्यासाठीचे क्रांतिकारी पाऊल म्हणजे म्हणून MDG कडे पाहिले जाते.

या समस्यांमध्ये दारिद्र्य, उपासमार, प्राथमिक शिक्षणाचा अभाव, आरोग्य, पर्यावरणाचा ऱ्हास इत्यादी समस्यांचा समावेश होतो. या समस्यांचा जागतिक स्तरावर एकत्रितपणे सामना करण्याच्या हेतूने राष्ट्रसंघाने ८ ध्येये निर्धारित केली होती. ही ध्येये इ.स. २००० ते इ.स. २०१५ या काळात साध्य करणे अपेक्षित होते. MDG अंतर्गत पुढील आठ ध्येये निर्धारित केली होती.

- १) आत्यंतिक गरिबी व उपासमार निर्मूलन. (Eradicate Extreme Poverty & Hunger)
- २) प्राथमिक शिक्षणाचे सार्वत्रिकीकरण करणे. (Achieve Universal Primary Education)
- ३) लिंगभावात्मक समानता व महिला सबलीकरणासाठी प्रोत्साहन. (Promote Gender Equality & Empower Women)
- ४) बालमृत्यू दर कमी करणे. (Reduce Child Mortality)
- ५) माता आरोग्य सुधारणे. (Improve Maternal Health)
- ६) एचआयव्ही /एड्स, मलेरिया व इतर रोगांचा सामना करणे. (Combating HIV/AIDS, Malaria & Other Disease)
- ७) पर्यावरणीय शाश्वततेची खात्री देणे. (Ensure Environmental Sustainability)
- ८) विकासाच्या मुद्द्यावर जागतिक सहमती घडवून आणणे. (Develop a Global Partnership for Development)

या सर्व निर्धारित ध्येयांच्या फलप्राप्ती बाबत इ.स. २०१५ मध्ये आढावा घेण्यात आला. ज्यात असे दिसून आले की, जागतिक स्तरावर निर्धारित 'MDG' ध्येये काही प्रमाणातच साध्य झाली असली तरी त्या ध्येयांचे वितरण असमान आहे. आफ्रिका व आशिया या खंडातील अपयश हे चिंताजनक आहे. तसेच आर्थिक विकासाच्या तुलनेत सामाजिक सुरक्षा व पर्यावरणीय शाश्वततेकडे दुर्लक्ष झाल्याचे जाणवते. याचाच अर्थ असा की, निर्धारित ध्येये साध्य करण्यामध्ये जागतिक नेतृत्व अपयशी ठरले आहे किंवा अंशतः यशस्वी ठरले आहे. अशावेळी पुन्हा नव्याने सर्व राष्ट्रांना एकत्र आणून जागतिक विकास साध्य करण्यासाठी इ.स. २०३० पर्यंत प्राप्त करावयाची 'शाश्वत विकासाची ध्येये' ठरविण्यासाठी प्रयत्न सुरू झाले.

शाश्वत विकास ध्येयांचे (Sustainable Development Goals - SDG) नियोजन करताना संयुक्त राष्ट्रसंघाने MDG अंतर्गत निर्धारित ध्येयांची अंमलबजावणी करताना आलेल्या अनुभवाचा उपयोग केला. १३ ते २२ जून २०१२ दरम्यान रिओ दि जेनेरो येथे संयुक्त राष्ट्र संघाची शाश्वत विकास परिषद (United Nations Conference on Sustainable Development) पार पडली. आणि याच परिषदेच्या माध्यमातून शाश्वत विकास ध्येय निर्धारित ध्येयाचा मसुदा तयार करण्यास सुरुवात झाली.

शाश्वत विकासाची ध्येये (Sustainable Development Goals - SDG) :

१९ जुलै २०१४ रोजी संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या मुक्त कार्यकारी गटाने (Open Working Group) १७ ध्येये (१६९ लक्ष्यांसहित) असलेला मसुदा तयार केला. या विषयपत्रिकेचा मथळा (Agenda) हा 'Transforming our world: The 2030 Agenda for Sustainable Development' असा आहे. हा मसुदा २५ ते २७ सप्टेंबर २०१५ रोजी झालेल्या संयुक्त राष्ट्र संघाच्या आमसभेच्या अधिवेशनात मंजुरीकरिता सादर करण्यात आला. सर्व सदस्य देशांनी (१९३) या अहवालास मंजुरी दिली. शाश्वत विकासाची ही १७ ध्येये साध्य करण्याचा नियोजित कालावधी पंधरा वर्षांचा (२०१५ ते २०३०) असेल. असे ठरविण्यात आले. संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या मुख्य कार्यकारी गटाने निश्चित केलेली १७ ध्येये पुढील प्रमाणे आहेत –

- १) जागतिक स्तरावरील सर्व स्वरूपातील दारिद्र्य संपुष्टात आणणे.
- २) उपासमार संपुष्टात आणणे, अन्नसुरक्षा साध्य करणे, आहारातील पोषणमूल्य वाढविणे तसेच शाश्वत शेतीसाठी प्रोत्साहन देणे.
- ३) निरोगी जीवनाची खात्री देणे आणि सर्व वयोगटातील सर्व लोकांच्या कल्याणाची खात्री देणे.
- ४) सर्वसमावेशक व न्यायसंगत दर्जेदार शिक्षणाची खात्री देणे व सर्वांसाठी निरंतर शिक्षणाची संधी उपलब्ध करून देणे.
- ५) लिंग भावात्मक समानता प्रस्थापित करणे आणि महिला व मुलींचे सक्षमीकरण करणे.
- ६) सर्वांसाठी पाण्याची उपलब्धता व स्वच्छतेचे शाश्वत व्यवस्थापन होईल याची खात्री देणे.
- ७) परवडण्या योग्य, विश्वसनीय, शाश्वत आणि आधुनिक स्वरूपातील ऊर्जा पुरवठा सर्वांना होईल, याची काळजी घेणे.
- ८) सर्वसमावेशक आणि शाश्वत आर्थिक वाढीसाठी प्रोत्साहन देणे, पूर्ण व उत्पादक रोजगार पुरविणे आणि सर्वांना काम मिळवून देणे.
- ९) संवेदनक्षम पायाभूत सुविधा उभारणी, सर्वसमावेशक व शाश्वत औद्योगिकीकरण तसेच नवोन्मेष संवर्धनासाठी प्रोत्साहन देणे.
- १०) देशांतर्गत व जागतिक स्तरावर असमानता कमी करणे.
- ११) शहरे व मानवी वसाहती सुरक्षित, संवेदनक्षम सर्वसमावेशक व शाश्वत बनवणे.
- १२) शाश्वत उत्पादन व उपभोग प्रारूपाची खात्री देणे.
- १३) जागतिक हवामान बदल व त्याच्या परिणामास संबंधी त्वरित कार्यवाही करणे.
- १४) सागरी संसाधने, समुद्र व महासागरांचे संरक्षण करणे व त्यांचा शाश्वत विकासाच्या दृष्टिकोनातून वापर करणे.
- १५) जैवविविधतेचा ज्ञास थांबविणे, जमिनीची धूप थांबवणे, जमिनीचे वाळवंटीकरण रोखणे, शाश्वत व्यवस्थापनाच्या माध्यमातून वनसंवर्धन करणे, परिस्थितीकीच्या शाश्वत वापराच्या हेतूने संरक्षणास, पुनर्स्थापनास प्रोत्साहन देणे.
- १६) शाश्वत विकासाकरिता शांततापूर्ण व सर्वसमावेशक समाजाच्या निर्मितीस प्रोत्साहन देणे, सर्वांना न्याय मिळेल अशी व्यवस्था स्थापन करणे. सर्व स्तरावर जबाबदार, प्रभावी आणि संवेदनक्षम अशा सर्वसमावेशक संस्थांची उभारणी करणे.
- १७) शाश्वत विकासाच्या दृष्टीने अंमलबजावणीकरिता जागतिक स्तरावर भागीदारी व संसाधनाचे बळकटीकरण करणे. अशाप्रकारे ही शाश्वत विकासाची १७ ध्येये जगातील सर्व राष्ट्रांसाठी, व्यक्तींच्या विकासासाठी, पर्यावरणातील घटकांच्या संवर्धन व रक्षणाच्या दृष्टीने महत्वाची व उपयोगाची ठरणारी आहेत.

निष्कर्ष :

- १) शाश्वत विकासाचे उद्देश हे मानव विकास आणि निसर्ग (पर्यावरण) संरक्षण व संवर्धन यांच्याशी निगडीत असतात.
- २) शाश्वत विकास ही संकल्पना मानवाच्या आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक आणि पर्यावरण विषयक पैलूंवर आधारित आहे.
- ३) पर्यावरणाकडून मिळणाऱ्या घटकांचा शाश्वत विकासामध्ये प्राधान्याने विचार केला जातो.
- ४) विकसित व विकसनशील देशांमध्ये समन्वय प्रस्थापित करून विकासासाठी सर्व देशांत जागतिक पातळीवर सहकार्य प्रस्थापित करण्याच्या दृष्टिकोनातून शाश्वत विकासाची ध्येये महत्त्वपूर्ण आहेत.
- ५) शाश्वत विकासाची ध्येये ही वैश्विक, एकात्मिक व परिवर्तनकारी स्वरूपाची आहेत.

समारोप :

शाश्वत विकास ध्येये ही जगातील सर्व प्रकारची गरीबी निर्मूलन करण्यासाठी व एक समान न्याय्य आणि सर्व व्यक्तींसाठी व पृथ्वीवर सुबत्ता आणणाऱ्या जगाच्या निर्मितीसाठी दूरदर्शी व वैश्विक मान्यतेची तत्वे आहेत. आंतरराष्ट्रीय स्तरावरचा एक महत्वाकांक्षी जाहिरनामा म्हणून या शाश्वत विकासाच्या ध्येयांकडे पाहता येईल. त्याचप्रमाणे जगातल्या प्रत्येक मानवाला कायदेशीररित्या स्वतःची ओळख मिळावी आणि प्रत्येकाला समान न्याय मिळावा हे देखील उद्दिष्ट त्यात समाविष्ट आहे. या ध्येयांचा मसुदा बनवताना भौगोलिक आशा आकांक्षा-प्राधान्य उद्दिष्टांना आणि देण्यात आले आहे. शाश्वत विकासाची ही ध्येये जगातील सर्व देशांना लागू आहेत म्हणून स्थानिक पातळीवरील शेवटच्या स्तरापर्यंत विकासाचा एक प्रवाह या शाश्वत विकासाच्या ध्येयांच्या

माध्यमातून पोहचेल अशी आशा बाळगता येईल. संयुक्त राष्ट्रांची ही शाश्वत विकासाची भूमिका आणि ध्येये एक प्रकारे जगातील सर्व देशांच्या सर्वांगीण विकासाच्या दृष्टीने क्रांतिकारक बदल घडवून आणण्यासाठी नक्कीच उपयोगी ठरणार आहेत.

संदर्भ :

- 1) Mahender Reddy G, Role of NGOs in Sustainable Development & Nature Conservation: A Case Study on Society to Save Rocks, Hyderabad, India, Journal of Aquatic Biology & Fisheries, Vol.2/2014.
- 2) दत्ता वानखेडे, शाश्वत विकास- योजना, ध्येय-धोरणे, संस्था आणि संघटना, PBD Publication
- 3) डॉ. सतीश ठोंबरे, डॉ.सुधीर दिंडे, सार्वजनिक धोरण आणि विकास, कैलास पब्लिकेशन, औरंगपुरा, औरंगाबाद.
- 4) कायापालट आपल्या जगाचा – २०३० अजेंडा शाश्वत विकासाचा, बुलेटीन ऑफ युनिक अकॅडमी, दिवाळी विशेषांक, नोव्हेंबर २०१५.
- 5) <https://sdgs.un.org/goals>
- 6) <https://www.agrowon.com/agriculture-news-marathi-structure-sustainable-development-30042>

शाश्वत शेती संकल्पना: आव्हाने आणि संभावना

प्रा. सुकुमार दत्ता पाटील¹ प्रा. डॉ. एल. एच. पाटील²

¹डॉ. सी. डी. देशमुख वाणिज्य व सौ., के. जी. ताम्हाणे कला महाविद्यालय, रोहा - रायगड

²उपप्राचार्य आणि अर्थशास्त्र विभाग प्रमुख व संशोधन मार्गदर्शक शिवाजी महाविद्यालय उदगीर, लातूर

गोषवारा :- सर्वसाधारणपणे दुसऱ्या महायुद्धापासून शेती व्यवसायामध्ये नाट्यमय बदल झाले आहेत. नवीन तंत्रज्ञान, यांत्रिकीकरण, नवीन रासायनिक खतांचा वापर आणि जास्तीत - जास्त उत्पादनास अनुकूल असणाऱ्या सरकारी धोरणांमुळे अन्नधान्याची उत्पादकता वाढली आहे. सध्या शाश्वत शेती हा जगातील बऱ्याच भागांमध्ये मोठ्या आवडीचा आणि वादविवादाचा विषय आहे. बहुतेक कृषितज्ञ हे मान्य करतात कि, शाश्वत अथवा चिरंतन शेती ही संकल्पना आपल्या जीवसृष्टीच्या शाश्वततेसाठी सर्वात महत्त्वपूर्ण आहे आणि वाढत्या लोकसंख्येचा वाढत्या अन्नधान्याच्या गरजा भागविण्यासाठी उपयुक्त आहे.

संशोधनातील कूट शब्द : चिरंतन शेती

प्रस्तावना : तसे पाहिले तर सध्या शाश्वत शेती हा विषय जगातील बऱ्याच विभागांमध्ये अत्यंत आवडीने अभ्यासला जाणारा एक जिवंत वादविवादाचा विषय आहे. शाश्वत शेती म्हणजे काय यासंबंधीचे वादविवाद आज वेगवेगळ्या दृष्टिकोनातून उभे राहिले आहेत. शाश्वत शेती ही अशी व्यवस्था आहे की, " शाश्वत शेती म्हणजे अशी शेती कि, जी दीर्घकाळपर्यंत पर्यावरणाची गुणवत्ता वाढविते. तसेच ज्यामुळे वाढत्या लोकसंख्येच्या अन्नधान्याच्या गरज पूर्णपणे भागविल्या जातात. तसेच जी शेती आर्थिकदृष्ट्या व्यवहार्य असून ज्यामुळे संपूर्ण समाज आणि शेतकरी यांच्या जीवनाची गुणवत्ता वाढविते." शाश्वत शेतीच्या वरील व्याख्येवरून असंख्य परिभाषा निर्माण झाल्या, परंतु शेती शाश्वततेची संकल्पना समान आहे. शाश्वत शेती ही अखिल मानवजातीची अन्नधान्याची गरज भागविण्यासाठी तसेच मानवी जीवन व शेतकरी यांचे जीवनमान उंचावण्यासाठी मदत करते. परिणामी शाश्वत शेतीची सार्वभौमिक स्वीकार्य परिभाषा अद्याप उदयास आली नाही. याचे कारण असे कि, शाश्वत शेतीकडे कार्यशील पद्धतीऐवजी व्यवस्थापन तत्वज्ञान म्हणून बऱ्याच वेळा पाहिले जाते.

शेती ही हवामानाची विविधता आणि त्याचे होणारे संभाव्य परिणाम याशी अतिशय संवेदनशील आहे. अन्नसुरक्षा आणि शाश्वत पर्यावरणीय समतोल यांची देखभाल करणे ही प्रमुख आव्हाने विचारवंत, संशोधक , संरक्षणवादी आणि धोरण निर्मात्यांसमोर आहेत. शाश्वत शेती ही एक परिस्थितिकी व्यवस्था म्हणून लक्षात घेता येईल, जेथे माती- पाणी- वनस्पती- पर्यावरण- सजीव सृष्टी या सर्व बाबी या अन्नसाखळीच्या व संबंधित ऊर्जा संतुलन स्वरूपात योग्य समतोल साधून सद्भावनेने एकत्र राहतात. जमीन आणि इतर स्रोतांच्या कार्यक्षमतेच्या माध्यमातून मोठ्या प्रमाणावर वाढ आणि व्यक्तींना चांगला आर्थिक परतावा प्रदान करण्यासाठी आणि वैयक्तिक व आर्थिक विकास प्रक्रियेत जीवनाची गुणवत्ता सुधारणे आणि आर्थिक विकास साधणे हा नैसर्गिक संसाधन व्यवस्थापनाच्या पर्यावरणीय समस्यांचे निराकरण करण्याचा हेतू आहे. आधुनिक सिंचन प्रणाली, सुधारित वाण, सुधारित मातीची गुणवत्ता आणि संसाधन संवर्धन तंत्रज्ञान वापरून कायमस्वरूपी पर्यावरणाचे संरक्षण करण्यासाठी, शेती आणि उत्पादकता सुनिश्चित करण्यासाठी नाविन्यपूर्ण तंत्रज्ञानाचा वापर करणे आवश्यक आहे. या बदलांमुळे अनेक सकारात्मक प्रभाव पडले आहेत. आणि शेतीमध्ये बऱ्याच प्रमाणात धोके कमी झाले आहेत .पण असे असले तरी कांही खर्चदेखील लक्षणीय आहेत. या खर्चात प्रामुख्याने भूपृष्ठावरील मातीचे प्रमाण कमी होणे, भूगर्भातील पाणी दूषित होणे, कुटुंबाच्या वाट्याला येणाऱ्या शेतीचे प्रमाण कमी होणे, शेतकरी व शेतमजूर यांच्या कामाच्या आणि राहण्याच्या स्थितीकडे सतत दुर्लक्ष होणे, वाढता उत्पादन खर्च, आणि समुदायामध्ये आर्थिक आणि सामाजिक परिस्थिती यांचे सातत्याने विघटन इ. चा समावेश होतो. आधुनिक शेती पद्धतीमुळे होणाऱ्या नकारात्मक पर्यावरणीय परिणामांना टाळण्यासाठी शाश्वत शेतीची संकल्पना उदयास आली. शाश्वत शेतीची संकल्पना अजूनही

नवीन आहे असे जरी वाटले तरी शाश्वत शेतीचा मुद्दा हा मुख्य प्रवाहातील शेतीमध्ये वाढते पाठबळ आणि स्वीकृती व मान्यता गोळा करित आहे. शाश्वत शेती केवळ अनेक पर्यावरणीय आणि सामाजिक समस्यांकडे लक्ष देत नाही तर शेतकरी, ग्राहक, धोरणकर्ते यांना नाविन्यपूर्ण आणि आर्थिकदृष्ट्या सक्षम अशा संधी उपलब्ध करून देते. हा संशोधन लेख म्हणजे शाश्वत शेतीची आपली संकल्पना साकारणाऱ्या कल्पना, पध्दती आणि धोरणे ओळखण्याचा एक प्रयत्न आहे. पर्यावरणीय कार्यक्षमता वाढवित असताना कृषी अभियंत्यांना नवीन कृषीविषयक तंत्रज्ञान विकसित करण्याची व त्याद्वारे शेती उत्पादन वाढविणे याविषयी आव्हानांना सामोरे जावे लागते.

पर्यावरणीय दृष्टिकोन : वाढत्या शाश्वत शेतीची कल्पना ही शेतीतील पर्यावरणीय गुणवत्तेच्या देखरेखीशी संबंधित आहे. आधुनिक शेती पद्धतीमध्ये आधुनिक व्यवसायिक कृषिप्रणाली, जमिनीची खोल नांगरणी, उच्च दर्जाचे कृषी तंत्रज्ञान तसेच रासायनिक आदानांचा वापर केला जातो. आणि या सर्वांमुळे जमिनीची धूप मोठ्या प्रमाणावर होऊन जमीन नापीक बनते. आशा प्रकारच्या कृषी प्रणाली या सतत निरुपयोगी मानल्या जातात. अशा परिस्थितीत शाश्वत शेतीची व्याख्या करताना असे म्हटले जाते कि, " शेतीशी संबंधित संसाधनांच्या उत्पादन क्षमतेचे संरक्षण करणे व त्यामध्ये वृद्धी करणे होय."

दुसऱ्या शब्दात पर्यावरण संबंधित शाश्वतता याचा अर्थ लावताना असे म्हटले जाते की, शाश्वतता ही शेतीचा नैसर्गिक पर्यावरणावर होणारा परिणाम हा शेतीच्या पलीकडे जाऊन आणि शेतीच्या उत्पादन क्षमतेव्यतिरिक्त विचारात घेतला जातो.

भूपृष्ठाचे आणि भूमीगत पाण्याच्या स्रोतांचे होणारे प्रदूषण हे प्रामुख्याने वाहतूक आणि रासायनिक खतांच्या वापरामुळे मोठ्या प्रमाणावर होते. आणि या दोन बाबी सामान्यपणे चिरंतन शेतीशी संबंधित आहेत. प्रजातींचे नुकसान, अधिवास आणि जैविक विविधतेत होणारी घट या बाबीसुद्धा शाश्वत विकासातील समस्या आहेत. शाश्वत शेती- विकासात हे सर्व दुष्परिणाम टाळणे अभिप्रेत आहे.

आर्थिक आणि सामाजिक दृष्टीकोन:-

दीर्घकालीन अन्न उत्पादन आणि पर्यावरणीय गुणवत्ता सुनिश्चित करण्याव्यतिरिक्त टिकाऊपणा ही संकल्पना उत्पादक आणि ग्रामीण समुदायानासुद्धा लागू केली जाते. बऱ्याच विश्लेषकांच्या मते शेतीच्या आर्थिक परताव्याचे मूल्यांकन करून शाश्वत शेतीचे वर्णन केले जाऊ शकते. व्यावसायिक अर्थव्यवस्थांमध्ये जी शेती शेतीवस्तुंच्या कमी किमतीमुळे, कमी उत्पादनामुळे, उत्पादन खर्च वाढल्याने किंवा इतर कारणांमुळे पुरेसा नफा मिळविण्यात असमर्थ असते, अशी शेती फायदेशीर ठरत नाही. परिणामी, शाश्वत शेतीची संकल्पना साकारण्यासाठी शाश्वत शेतीमध्ये शेती व्यवसाय टिकून राहण्याइतका नफा मिळाला पाहिजे आणि शेती व्यवसाय करणाऱ्यांना पुरेसा परतावा मिळाला पाहिजे. शाश्वत शेतीमुळे ग्रामीण समुदाय प्रणालीत

देखभाल करण्यासाठी कृषी क्षेत्रात कृषी व्यवहार्यता ही संकल्पना वाढविते. थोडक्यात शाश्वत शेती ही पर्यावरणपूरक असते तसेच ती उत्पादनाबाबत अतिशय कार्यक्षम असते. तसेच फायद्याच्या वाटपामध्ये जी शेती अतिशय कार्यक्षम असते. तसेच शाश्वत शेती ही ग्रामीण समुदायामध्ये असे भरीव कार्य करते कि, ज्यामुळे स्थानिक निर्णयप्रक्रिया आणि कारभारी मूल्ये यांना पाठिंबा मिळतो. बऱ्याच जणांसाठी उत्पादक क्षमता किंवा पर्यावरणीय अखंडता किंवा कौटुंबिक शेती या बाबी म्हणजे शाश्वत शेतीचे मूलभूत घटक आहेत. त्यामुळे " शाश्वत शेती म्हणजे आजच्या पिढीकडून कृषी क्षेत्रातील स्रोतांकडून जे फायदे मिळविले जातात ते मिळवित असताना भविष्यातील पिढ्यांचे अधिकार व त्यांच्या संधींच्या संरक्षणाची काळजी घेणे होय." ज्या शेती पद्धतीमुळे भूमीप्रदूषण होते, परिणामी भविष्यकाळात पर्याप्त कृषी उत्पादनाच्या संभाव्यता कमी होतात, पाण्याची गुणवत्ता किंवा इतर नैसर्गिक संसाधने कमी करतात याला शाश्वत शेती मानले जात नाही.

आव्हाने आणि संभाव्यता

या अभ्यासाने शाश्वत शेतीची अनेक तंत्रे शोधली आहेत. यामध्ये प्रामुख्याने शाश्वत शेतीच्या विविध व्याख्या, शाश्वत शेतीची पाठपुरावा करणाऱ्या पर्यायी पध्दती आणि कृषी उत्पादनाच्या कामगिरीचे मूल्यमापन करणाऱ्या अनेक वैकल्पिक पद्धतींचा समावेश आहे. शेतीसंबंधीत कार्यप्रणाली ही शाश्वत शेतीच्या मूलभूत तत्त्वांशी सुसंगत असली पाहिजे. आणि यामध्ये प्रामुख्याने जमीनीची उत्पादन क्षमता आणि पर्यावरणाचे होणारे नुकसान टाळणे याचा समावेश आहे. त्यामुळे सदर लेखाचा उद्देश असा आहे की, सर्वांनीच आज पर्यावरण पूरक शेती पध्दतीचा स्वीकार केला पाहिजे. तथापि शाश्वत शेतीचा फायदा केवळ शेतकरी आणि वर्तमान समाज यांच्यापुरता मर्यादित न राहता तो भविष्यकालीन पिढ्यांनादेखील मिळाला पाहिजे. त्यामुळे शाश्वत शेती म्हणजे केवळ एक विश्लेषणात्मक समस्या नाही, पर्यावरणीय गुणवत्ता, उत्पादनक्षमता इतकाच मर्यादित अर्थ नाही, तर हे एक शेतीसाठीचे नवीन तत्वज्ञानदेखील आहे. मुळात शाश्वत शेती ही संकल्पना अनेक ध्येयानी प्रेरित आणि अनेक मूल्यांवर आधारित आहे. तथापि शाश्वत शेतीशी संबंधित सर्व ध्येये आणि मूल्ये एकाच वेळी किंवा अगदी अनुक्रमाने प्राप्त होतील याचा संभव कमी आहे.

उदा. शेतकऱ्यांना आवश्यक असलेले किंवा अपेक्षित असलेले पर्यावरणीय फायदे हे आर्थिक व्यवहार्यतेवरील संभाव्य खर्चाने मिळतील का ? शाश्वत शेतीचा पाठपुरावा करण्यासाठी भविष्यातील वैयक्तिक आणि सामाजिक या दोन्ही आणि या दोन्हींच्या दरम्यान होणाऱ्या शाश्वत शेतीसंबंधातील शाश्वत आंतरक्रिया महत्वपूर्ण ठरतील. पुन्हा, शाश्वत शेतीच्या संदर्भात बरेचसे विचार हे अन्न उत्पादन समिकरणाच्या 'पुरवठा बाजूच्या 'संदर्भात केले गेले आहेत.

अन्न उत्पादनाची संभाव्यता मोजण्यासाठी शाश्वत शेती विश्लेषणाने जमीनीची उत्पादनक्षमता आणि विविध घटनांच्या परिणामांचे मूल्यांकन करण्याचा प्रयत्न केला आहे. मातीची धूप आणि जमीन रूपांतरण यासारख्या पुरवठा बाजू घटकांच्या परिणामांबद्दल आता बरेच काही माहित आहे, परंतु अधिक महत्वाचा आणि अव्यवहार्य प्रश्न हा शेतीच्या मागणीच्या बाजूने असू शकतो. उदा. जगातील लोकसंख्येची वाढ, किंवा उत्पन्नातील वाढीमुळे अन्नधान्याची वेगाने वाढणारी मागणी यामुळे अन्नधान्याची वाढती मागणी पूर्ण करण्यासाठी शेतीच्या क्षमतेवर अतिरिक्त ताण पडू शकतो. यामुळे शाश्वत शेती जागतिक होण्याच्या संभाव्यतेचे आकलन करण्यासाठी भविष्यातील प्रगतीचे भाकीत आवश्यक आहे. लोकसंख्या वाढीसंदर्भातील अनिश्चिततेमुळे आणि परदेशी बाजारपेठेतील प्रवेशावर परिणाम करणाऱ्या सरकारी धोरणे आणि विकसनशील जगात अन्नधान्य पुरवठा करण्यासाठी प्रादेशिक कृषी व्यवस्थेची भूमिका यामुळेही हे गुंतागुंतीचे आहे. अखेरीस भविष्यात होणाऱ्या विविध बदलांमुळे शेतीवर कसा परिणाम होईल याचा अंदाज बांधण्यासाठी सर्व प्रकारच्या विघटनांना कृषी यंत्रणेच्या प्रतिक्रियेचे स्वरूप चांगल्या प्रकारे समजण्याची गरज आहे. याव्यतिरिक्त कांही शक्तींचा परिणाम, जसे अन्नधान्य टिकविण्याच्या संभाव्यतेवर जागतिक तापमानवाढीसारख्या कांहीं शक्तींच्या परिणामांना सामान्य शेतकरी किंवा कृषी यंत्रणा कसा प्रतिसाद देईल याचाही अभ्यास होणे गरजेचे आहे. उदा. बऱ्याच वेळा असे मानले जाते की तांत्रिक नवकल्पनांमुळे शेतीला अन्नधान्य उत्पादनाचा उच्च दर मिळू शकेल, किंवा बदललेल्या हवामानात काम करणाऱ्या शेतकऱ्यांना अन्नधान्य उत्पादनासाठी नवीन संधींमध्ये कसे जुळवून घ्यावे हे नक्कीच ठाऊक असेल आणि ते तसे करतील. विशेषतः समग्र प्रमाणावर कृषिक्षेत्रात होणाऱ्या प्रतिसादाची व समायोजनाच्या प्रक्रियेविषयी फारसे माहित नाही. शेतीमधील या अनुकूल कार्यपध्दतीचे सुधारित ज्ञान हे शाश्वत शेतीचे मूल्यांकन वाढविते आणि ते साध्य करण्यासाठी एकूण कार्यप्रणाली सुधारते.

निष्कर्ष:-

विशेषतः दुसऱ्या महायुद्धानंतर चिरंतन शेतीची संकल्पना ही खऱ्या अर्थाने आकाराला आली. जागतिक लोकसंख्या वाढ, अन्नधान्याची वाढती मागणी आणि आधुनिक कृषी तंत्राचे भूमी व पाणी यावर होणारे अनिष्ट परिणाम यातून मार्ग काढून व या समस्यांवर मात करण्यासाठी खऱ्या अर्थाने चिरंतन शेतीची संकल्पना उदयाला आली. त्यासाठी नवीन तंत्रांचा व धोरणांचा अवलंब करण्यात आला. जर आपण पर्यावरणाची अखंडता किंवा

सार्वजनिक आरोग्याचा समावेश न करता उत्पादन सुधारण्याची मागणी केली तर शेतीची शाश्वतता सुनिश्चित करण्यासाठी नवीन धोरणे महत्वपूर्ण ठरतील. अन्नधान्याची वाढती मागणी आणि संसाधनांच्या अडचणी लक्षात घेता सर्व कृषी धोरणांना गरीबी हटाव, अन्नसुरक्षा, कृषी उत्पादन वाढ आणि पर्यावरणीय शाश्वतता या उद्देशाने परिपूर्ण होण्यास मदत करणे आवश्यक आहे.

संदर्भ साहित्य

- १) चिरंतन विकास दत्ता वानखेडे पी बी डी प्रकाशन पुणे
- २) पर्यावरणाचा चिरंतन विकास- प्रकाश सावंत फडके प्रकाशन कोल्हापूर
- 3) M. Dover and L. Talbot, "To feed the earth " Agro ecology for sustainable development 1987
- 4) USDA , " Report and Recommendations on organic farming "
- 5) D. R. Keeney, " Towards a sustainable agriculture: Need for clarifications of concept and Terminology

उस्मानाबाद जिल्ह्यातील उमरगा व तुळजापूर तालुक्यातील ग्रामीण वस्त्यांमधील अंतरण एक अभ्यास

प्रा. सतिश डी. गावित^१ प्रा. डॉ. मदन व्ही. सूर्यवंशी^२

सहाय्यक प्राध्यापक, बी एस एस कॉलेज माकणी

संशोधन मार्गदर्शक व विभाग प्रमुख, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विद्यापिठ, औरंगाबाद.

प्रस्तावना:

अन्नाइतकीच मानवास निवासाची गरज आहे. लहरी हवामानापासून स्वतःचे संरक्षण करण्यासाठी आणि सामाजिक जीवन उपभोगण्यासाठी मानव घरे बांधतो आणि वसाहती वसवितो. खरेतर प्राकृतिक पर्यावरण स्वीकारण्याचा मानवाचा हा पहिला टप्पा आहे. मानववंशशास्त्रज्ञ, समाजशास्त्रज्ञ, मानवनितीशास्त्रज्ञ, अर्थशास्त्रज्ञ आणि भूगोलतज्ञ ग्रामीण आणि शहरी वसाहतींचा दिवसेंदिवस अधिक खोलवर जावून अभ्यास करित आहेत. त्यांचा अभ्यासाचा दृष्टिकोन, उद्देश आणि पध्दती भिन्न स्वरूपाच्या असतात. समाजातील बहुतेक लोक विविध प्रकारच्या वसाहती, कायमस्वरूपी गृहसमूह, इमारती वा अन्य वास्तूत राहतात. फारच थोडे लोक समाजापासून अलग वगळे राहतात. या वसाहती भूपृष्ठाचा अल्प भाग व्यापत असले तरी जागतिक संस्कृतीवर त्यांचा अनन्यसाधारण पगडा असतो. या वसाहती मानवी संस्कृतीचा वारसा जपतात, तसेच ज्या नव्या आर्थिक, सामाजिक आणि राजकीय कल्पनांचा प्रसार करतात. वसाहतींचा अभ्यास भूगोलतज्ञ वरील उद्देशाने करतात. खरे म्हणजे या वसाहती त्या प्रदेशातील नैसर्गिक पर्यावरण आणि मानव यांच्यातील नाते स्पष्ट करतात. वस्ती म्हणजे मानवी संस्कृतीचा एक मूर्त अविष्कार होय.

डिकिन्सन याच्या मते “शेतवाड्या, गृहसमूह, नगरे इत्यादी मानवी समाजास आवश्यक असलेल्या सामाजिक, भौगोलिक गोष्टींची क्षेत्रीय व्यवस्था म्हणजे वस्त्या/वसाहती किंवा अधिवास होय”. प्रस्तूत संशोधना पत्रिकेसाठी उमरगा व तुळजापूर या तालुक्यातील ग्रामीण वसाहतींचा अंतर एक अभ्यास करण्यात आला आहे. अभ्यासक्षेत्रातील उमरगा व तुळजापूर तालुक्यातील इतिहास पहिला असता, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक धार्मीक दृष्टीने महत्त्वपूर्ण आहे. या तालुक्याचा इतिहास अतिशय वैभवशाली असल्याचे विविध पूरातत्वीय अवशेषावरून आणि ताम्रपट व वाडःमयावरून स्पष्ट होते. महाराष्ट्राच्या व मराठवाड्याचा संस्कृतीच्या जडणघडणीत या तालुक्यांचा अतिशय महत्त्वपूर्ण वाटा आहे. उमरगा तालुका हा कन्नड भाषीक कर्नाटक व मराठी भाषीक महाराष्ट्र राज्याचा सांस्कृतिकदृष्ट्या महत्त्वाचा दूवा आहे. तर तुळजापूर तालुका महाराष्ट्राच्या प्रादेशिकतेचा विचार करता पश्चिम महाराष्ट्र व मराठवाड्याचा सिमेवर असलेला मराठवाड्याचा ऐतिहासिकदृष्ट्या, सांस्कृतिकदृष्ट्या व धार्मीकदृष्टीने अत्यंत महत्त्वपूर्ण असा तालुका आहे. महाराष्ट्राची कुलस्वामिनी श्री तुळजाभवानी देवीच्या तुळजापूर येथील प्राचीन मंदिरामुळे या जिल्ह्यास धार्मीक संस्कृतीचा व भक्तीचा पवित्र वारसा लाभलेला आहे. पण या संशोधन पत्रिकेत उमरगा व तुळजापूर तालुक्यातील ग्रामीण वस्त्यांच्या अंतरण अभ्यासण्यात आले आहे.

बीजसंज्ञा: लहरी हवामान, अधिवास, पूरातत्वीय, महसूल मंडळ, वेलेन्टी बिनीड, अंतर, भौगोलिक सरासरी.

अभ्यासक्षेत्राचे स्थान व विस्तार:

उस्मानाबाद जिल्हा मराठवाड्याच्या अगदी पश्चिमेस असून व महाराष्ट्राच्या दक्षिणेत असलेला अत्यंत महत्त्वपूर्ण असा जिल्हा आहे. सदर संशोधन पत्रिकेत उमरगा तालुक्याचे स्थान उस्मानाबाद जिल्ह्याच्या आग्नेय दिशेस असलेले दिसून येते. उमरगा तालुक्याचे अक्षवृत्तीय विस्तार १७°३८'३२" उत्तर अक्षवृत्त ते १८°०२'१०" उत्तर अक्षवृत्त दरम्यान व रेखावृत्तीय विस्तार ७६°२४'३०" पूर्व रेखावृत्त ते ७६°४७'१७" पूर्व रेखावृत्त दरम्यान इतका विस्तार आहे. उमरगा तालुक्याचे क्षेत्रफळ ९९८.६३ चौ. कि.मी. इतके आहे. तर जिल्ह्याच्या एकूण क्षेत्रफळापैकी १३.१९ टक्के क्षेत्र व्यापले आहे. उमरगा तालुक्यात एकूण पाच महसूल मंडळे आहेत ते म्हणजे उमरगा, मुरुम, मुळज, नारंगवाडी व दाळिंब असे आहे. तर तुळजापूर तालुक्याचे स्थान उस्मानाबाद जिल्ह्याच्या दक्षिण दिशेत आढळून येते. या तालुक्याचे अक्षवृत्तीय विस्तार १७°३८'२७" उत्तर अक्षवृत्त ते १८°०५'४४" उत्तर अक्षवृत्त दरम्यान व रेखावृत्तीय विस्तार ७५°४८'१९" पूर्व रेखावृत्त ते ७६°२४'२६" पूर्व रेखावृत्त दरम्यान असा विस्तार आहे. तुळजापूर तालुक्याचे क्षेत्रफळ १५६८.८ चौ. कि.मी. असून जिल्ह्याच्या एकूण क्षेत्रफळापैकी सुमारे २०.७२ टक्के क्षेत्र व्यापलेले आहे. तालुक्यात एकूण महसूल मंडळे सात आहेत ते असे मंगरूळ, नळदुर्ग, तुळजापूर, सावरगाव, जळकोट, सलगरा दि., इटकळ अशी महसूल मंडळे तालुक्यात आहेत.

उद्देश:

सदर संशोधन पत्रिकेत खालील उद्देश डोळ्यापूढे ठेवून संशोधन कार्य करण्यात आले आहे.

- १) उमरगा व तुळजापूर तालुक्यातील इ.स. २००१ व २०११ च्या जनगणनेनुसार वसाहतीच्या संख्येचा अभ्यास करणे.
- २) उमरगा व तुळजापूर तालुक्यातील मंडळनिहाय ग्रामीण वसाहतींचा भौगोलिक सरासरी अंतरचा अभ्यास करणे.

माहिती संकलन स्रोत व संशोधन पध्दती:

प्रस्तूत संशोधन पत्रिकेच्या कार्यासाठी मिळवलेली माहिती प्राथमिक व दुय्यम स्वरूपातील आहे. तसेच वेलेन्टी बिनीड या भूगोल तज्ञाने ग्रामीण वस्त्या मधील अंतर काढण्यासाठी खालील सूत्राचा अवलंब केला आहे या सूत्राच्या आधारे उमरगा व तुळजापूर तालुक्यातील ग्रामीण वस्त्यांचे अंतरण काढले आहे.

$$\text{सुत्र - } D = \sqrt{\frac{A}{N}}$$

अर्थ

D = सरासरी अंतर

A = एकूण क्षेत्रफळ

N = वस्त्यांची संख्या

ग्रामीण वस्त्यांतील सरासरी अंतर:

प्रस्तुत संशोधन पत्रिकेत ग्रामीण वस्त्यांचा वितरणाचे विश्लेषण अंतराच्या सहाय्याने करण्याच्या सैध्दांतिक पध्दतीला अंतरण असे म्हणतात. वेलेन्टी बिनीड या भूगोल तज्ञाने ग्रामीण वस्त्या मधील अंतर काढण्यासाठी खालील सूत्राचा अवलंब केला आहे या सूत्राच्या आधारे उमरगा व तुळजापुर तालुक्यातील ग्रामीण वस्त्यांचे अंतरण काढले आहे. जनगणना वर्ष २००१ व २०११ या कालखंडात ग्रामीण वस्त्यांमधील असलेले अंतरण झालेला बदल यांचा अभ्यास केला आहे.

उमरगा तालुका ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर (सारणी क्र. अ)

मंडळ	२००१			२०११		
	क्षेत्रफळ	ग्रामीण वस्त्यांची संख्या	ग्रामीण वस्त्यांची सरासरी अंतर	ग्रामीण क्षेत्रफळ	ग्रामीण वस्त्यांची संख्या	ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर
उमरगा	३१४.१२	२८	३.३४	१८८.२५	१७	३.३२
मुरूम	१७७.५९	२७	२.५६	२०२.७१	१७	३.४५
मुळज	३१५.५५	२२	३.७	१७७.९९	२२	२.४४
नारंगवाडी	१९१.९२	१९	३.२२	१९०.९७	१९	३.१७
दाळींब	-	-	-	२३८.६८	२१	३.३६
एकुण तालुका	९९९.००	९६	३.२	९९९.००	९६	३.२२

स्त्रोत:- जनगणना अहवाल उस्मानाबाद जिल्हा २००१ व २०११ च्या आधारे.

तुळजापुर तालुका ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर (सारणी क्र. ब)

मंडळ	२००१			२०११		
	क्षेत्रफळ	ग्रामीण वस्त्यांची संख्या	ग्रामीण वस्त्यांची सरासरी अंतर	ग्रामीण क्षेत्रफळ	ग्रामीण वस्त्यांची संख्या	ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर
मंगरूळ	२८२.४१	२३	३.५०	१७८.७०	१७	३.२४
नळदुर्गा	४९२.१२	३८	३.५९	३१३.६२	२१	३.८६
तुळजापुर	३३६.५३	३१	३.२९	१६७.८६	१४	३.४६
सावरगाव	२७७.६०	१६	४.१६	२७८.०७	१६	४.१६
जळकोट	१८०.४०	१५	३.४६	१८०.१०	१५	३.४६
सतगरा दि.	-	-	-	२१८.८७	२०	३.३०
इटकळ	-	-	-	२३१.६०	२०	३.४०
एकुण	१५६९.००	१२३	३.५७	१५६९.८०	१२३	३.५७

स्त्रोत:- उस्मानाबाद जिल्हा जनगणना अहवाल २००१ व २०११ च्या आधारे

सारणी क्र.(अ) मध्ये उमरगा तालुका ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर दाखविण्यात आले आहेत. जनगणना वर्ष २००१ मध्ये उमरगा तालुक्याचे ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर ३.२ इतके होते. २००१ च्या मंडळानुसार नुसार आकडेवाडीचे अवलोकन केले असता उमरगा तालुक्यात एकूण चार महसूल मंडळे अस्तित्वात होती. सर्वात जास्त मुळज महसूल मंडळातील ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर ३.७ असल्याचे पाहावयास मिळते त्यानंतर महसूल मंडळाची ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर ३.३४ इतके आहेत. तर नारंगवाडी महसूल मंडळातील ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर ३.२२ आहे. तर सर्वात कमी मुरूम महसूल मंडळाची २.५६ ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर असल्याचे आढळून येते. तसेच उमरगा तालुका जनगणना अहवाल २०११ मधील आकडेवारीचा अभ्यास केला असता असे आढळून येते कि, उमरगा तालुक्याचे ग्रामीण वसाहतीचे सरासरी अंतर ३.२ इतकेच आहे. कारण ग्रामीण वसाहतीमधील कोणत्याही वस्तीत घट किंवा वाढ आढळून येत नाही. मंडळानुसार ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर पाहिले तर जनगणना वर्ष २०११ मध्ये महसूल मंडळे पाच अस्तित्वात आहे. यामध्ये सर्वात जास्त ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर मुरूम महसूल मंडळाची आहे ते म्हणजे ३.४५ इतके तर त्यानंतर दाळींब महसूल मंडळाची ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर ३.३६ असल्याचे पाहावयास मिळते तर उमरगा महसूल मंडळाची ३.३२ इतके ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर असल्याचे दिसून येते तर नारंगवाडी महसूल मंडळातील ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर ३.२२ असल्याचे जाणवते. तर मुळज मंडळाचे ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर २.४४ इतके असल्याचे जाणवते.

सारणी क्र.(ब) मध्ये तुळजापुर तालुका ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर दाखविण्यात आले आहे. उस्मानाबाद जिल्हा जनगणना अहवाल २००१ व २०११ दशकातील आकडेवारीचा आधार घेण्यात आलेला आहे. तुळजापुर तालुक्यात १२३ ग्रामीण वस्त्या आहेत. वस्त्यांमध्ये कोणताही बदल झालेला नाही म्हणून २००१ मध्ये व २०११ मधील ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर सारखीच आढळते ते म्हणजे ३.५७ इतके आहे. मंडळानुसार ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतराचे अवलोकन केले असता आपणास जनगणना वर्ष २००१ मध्ये तुळजापुर तालुक्यात एकूण पाच महसूल मंडळ होती या पाच महसूल मंडळांमध्ये सर्वात जास्त ग्रामीण अंतर सावरगाव मंडळाचा ४.१६ इतका आहे. त्यानंतर नळदुर्ग महसूल मंडळातील ३.५९ इतका आहे व मंगरूळ महसूल मंडळाचा ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर ३.४६ इतके आहेत व सर्वात कमी तुळजापुर तालुक्याचे दिसते तर जनगणना वर्ष २०११ मध्ये तुळजापुर तालुक्याचे ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी अंतर मंडळानुसार पाहिले असता तुळजापुर तालुक्यात एकूण सात महसूल मंडळे आहेत. म्हणजेच २००१ च्या तुलनेने दोन मंडळांमध्ये वाढ झालेली पाहावयास मिळते यात सर्वात जास्त ग्रामीण वसाहतीमधील सरासरी अंतर सावरगाव मंडळाची ४.१६ इतकी आहे त्यानंतर नळदुर्ग ३.८६, तुळजापुर ३.४६, जळकोट ३.४६, इटकळ ३.४०, सलगरा दि. ३.३० तर सर्वात कमी मंगरूळ महसूल मंडळाचे असल्याचे पाहावयास मिळते ते म्हणजे ३.२४ आहे.

निष्कर्ष :

एकंदरीत असे दिसून येते कि उमरगा तालुका व तुळजापुर तालुक्यातील ग्रामीण वस्त्यांमधील सरासरी अंतरात कोणत्याही प्रकारचा बदल झालेला नाही. मंडळाची संख्या जरी २०११ मध्ये वाढ झाली असली तरी ग्रामीण वस्त्यांच्या संख्येत बदल झालेला नाही.

संदर्भ साहित्य:

- १) Census of India (२००१) District Census Handbook, Osmanabad.
- २) Census of India (२०११) District Census Handbook, Osmanabad.
- ३) www.Googleearth.com
- ४) रामयज्ञ सिंह, अधिवास भूगोल (२०१२), रावत पब्लिकेशन, जयपूर
- ५) भारतीय भूस्थलदर्शक नकाशा
- ६) उस्मानाबाद जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालोचन(१९९५ ते २०२०),
- ७) सतिश गावित, उमरगा व तुळजापुर तालुक्यातील ग्रामीण वस्त्यांचे भौगोलिक तुलनात्मक अभ्यास (उस्मानाबाद जिल्हा) अप्रकाशित पीएच. डी. शोध प्रबंध.

कोरोना परिप्रेक्षात भारतीय समाज व अर्थव्यवस्थेवर झालेला परिणाम

प्रा. डॉ. झाकीरहुसेन हाकीम संदे

सहाय्यक प्राध्यापक, राज्यशास्त्र विभाग, क्रांतिअग्रणी जी. डी. बापू लाड महाविद्यालय, कुंडल. ता. पलूस जि. सांगली.

Email : zakirhusensande@yahoo.com

प्रस्तावना :

२०२० चे नवीन वर्ष उजाडता-उजाडता कोरोना ची बातमी प्रसारमाध्यमांमधून भारतीयांना हळूहळू समजली. नवीन वर्षात कोणकोणते नवीन उपक्रम राबवायचे आणि आपले जीवन अधिक सुंदर आणि सफल कसे करायचे याविषयी प्रत्येक भारतीय नवनवीन कल्पना करीत असतानाच, कोरोनाच्या बातमीने हा हादरा दिला आणि भारतीयांनी केलेल्या सुंदर आयुष्याच्या कल्पना हा स्वप्नविलासच ठरला. आणि बघता-बघता मार्च महिन्याच्या शेवटच्या आठवड्यापासून लॉकडाऊनला सुरुवात झाली आणि भारतीयांनी मनात उभे केलेले सर्व इमले पत्त्याच्या बंगल्याप्रमाणे जमीनदोस्त झाले. भारतासह संपूर्ण जग कोरोनांना आपल्या विळख्यात घेऊन मानवी जीवन आपल्या कराल दाढेत चावून चोथा केला. या भयंकर अशा कोरोना काळात भारतातील समाजव्यवस्था आणि अर्थव्यवस्था प्रचंड प्रभावीत झाली.

समाजव्यवस्थेवरील परिणाम :

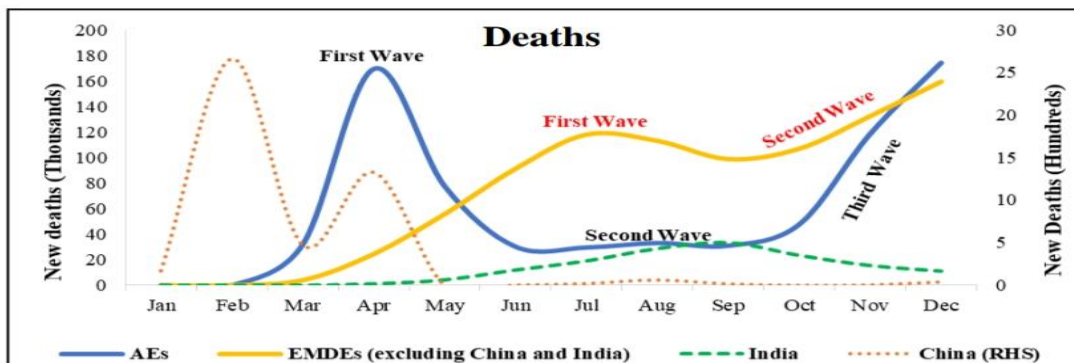
कोरोनाची साथ जगात आलेली पहिलीच साथ नव्हे. जगाने यापेक्षा भयानक साथी पाहिल्या आहेत. प्लेग, कॉलरा, फ्लू इन्फ्लेन्जा, सार्स, स्वाईन फ्लू, बर्ड फ्लू, विषमज्वर, देवी, महारोग, गोवर, एड्स, आणि इबोला इ. साथी मानवी जीवन उध्वस्त करणाऱ्या ठरल्या. भारतीय समाज व्यवस्था ही मुळातच अजून सुद्धा शेती आणि बलुतेदारीसारखी जुनाट अर्थव्यवस्था आणि त्या अनुषंगाने येणारी जातिव्यवस्थेवर आधारलेली उपजीविकेची व्यवस्था असलेली अर्थव्यवस्था. परंतु कोरोनामुळे त्यातून निर्माण झालेली सामाजिक घट्ट विण सैल होऊन अस्ताव्यस्त विखुरली. जातीव्यवस्थेने दिलेले पारंपारिक रोजगार, रोजंदारीवर काम करणारे मजूर, शेतमजूर, छोटे व्यावसायिक, कलाकार, तमासगीर, करमणुकीवर आणि श्रद्धेवर उपजीविका चालविणारे बहुरूपी, कुडमुडे, वासुदेव, कडकलक्ष्मी यासारखे सामाजिक घटक कोरोना महामारीपेक्षा जगण्याच्या आणि अस्तित्वाच्या लढाईतच देशोधडीला लागले. सामाजिक सलोखा, सामाजिक बांधिलकी, बंधुभाव, समाजऋण हे शब्द हद्दपार झाले. शिकली-सवरलेली तरुण पुण्या-मुंबईसारख्या शहरांमध्ये आयटी आणि औद्योगिक क्षेत्रात गलेलठ्ठ पगारावर रुजू झाली होती पण कंपन्या बंद पडल्यामुळे त्यांना मूळगावी परत यावे लागले. पगारावर तारण घेतलेली कर्जे तुंबल्यामुळे ही तरुण पिढी हाताश झाली आणि निराशेच्या गर्तेत बुडाली. काहींनी भीतीपोटी मृत्यूला कवटाळले. अशी भारतीय समाजातील विविधतेत एकता निर्माण करणारी समाजव्यवस्था उध्वस्त झाली. कोरोना रोगाचे गांभीर्य, व्याप्ती आणि परिणाम याचा अंदाज न आल्याने किंबहुना म्हणावे तेवढ्या गांभीर्याने न घेतल्यामुळे आणि कोरोना आपले हात-पाय वेगाने पसरत असताना त्यावरील औषधोपचार, लसी, व या रोगाने ग्रस्त रुग्णांसाठी दवाखाने आणि इतर सामग्रीचा रुग्णांच्या प्रमाणात पुरेशी उपलब्धता झाली नाही व परिणामतः हजारो लोकांना आपले जीव गमवावे लागले. याच काळात अनेक घटना-घडामोडी झाल्या. लसींची अनुपलब्धता, तुटवडा, खाजगी दवाखान्यांनी आकारलेली अवाजवी बिले, रोगनिदान चाचण्यांचा अभाव, रोगाच्या बाबतीत फैलावलेल्या अफवा, गैरसमज व या रोगावर मात करण्यासाठी अनेकांनी केलेले प्रयोग यासर्व वातावरणात भारतीय माणूस संभ्रमावस्थेत गेला. अनेकांनी आपापल्या ज्ञानावर आधारित उपाय आणि औषधोपचार शोधण्याचा प्रयत्न केला. ऍलोपॅथी, आयुर्वेदिक, होमियोपॅथी, निसर्गोपचार, मानसशास्त्रीय आणि आध्यात्मिक उपाय, व्यायाम, योगविद्या, प्राणायाम, आहारशास्त्र या सर्वांचा प्रसारमाध्यम आणि समाजमाध्यमांमधून महापूर आला. कोरोनाकाळात भारतीयांवर झालेल्या सर्व दुष्परिणामांचे आपण सर्वजणच दुष्परिणामग्रस्त आहोतच. आपण सर्वांनी समोर दिसणाऱ्या सर्व गोष्टी प्रत्यक्ष डोळ्यांनी पाहिल्या, अनुभवल्या, भोगल्या. प्रचंड खस्ता खाल्ल्या आणि आपल्या घरातील कोलमडलेल्या अर्थव्यवस्थेवरून, संपूर्ण भारताच्या अर्थव्यवस्थेवर कोणते परिणाम झाले असतील याचा आपापल्या ज्ञान, अनुभवाच्या आधारे अंदाज बांधला. "सरकारी धोरणामुळे मुळातच बेरोजगारी वाढत होती. त्यात कोविड - १९ ने आणखी मोठी भर घातली. करोडो लोक बेरोजगार झाले आहेत. काम करू शकणाऱ्या प्रत्येक चारपैकी एक माणूस आज भारतात बेरोजगार आहे. ही बेरोजगारी अत्यंत छोट्या दुकानापासून मल्टिनॅशनल कंपनीपर्यंत सर्वत्र आहे. 'वर्क फ्रॉम होम' यापासून आता 'नो वर्क' इथपर्यंत पोहोचत आहोत अशी भीतिदायक परिस्थिती आहे. ९ जून १९२० रोजी सर्वोच्च न्यायालयाने केंद्र आणि राज्य सरकारांना एक आदेश दिला आहे. त्यात म्हटले आहे लॉकडाऊनमध्ये स्थलांतरित मजूर आपलं सर्वस्व हरवून गेले आहेत त्यांना त्यांच्या गावी रोजगार उपलब्ध करून देणे ही राज्य व केंद्र सरकारची जबाबदारी आहे.

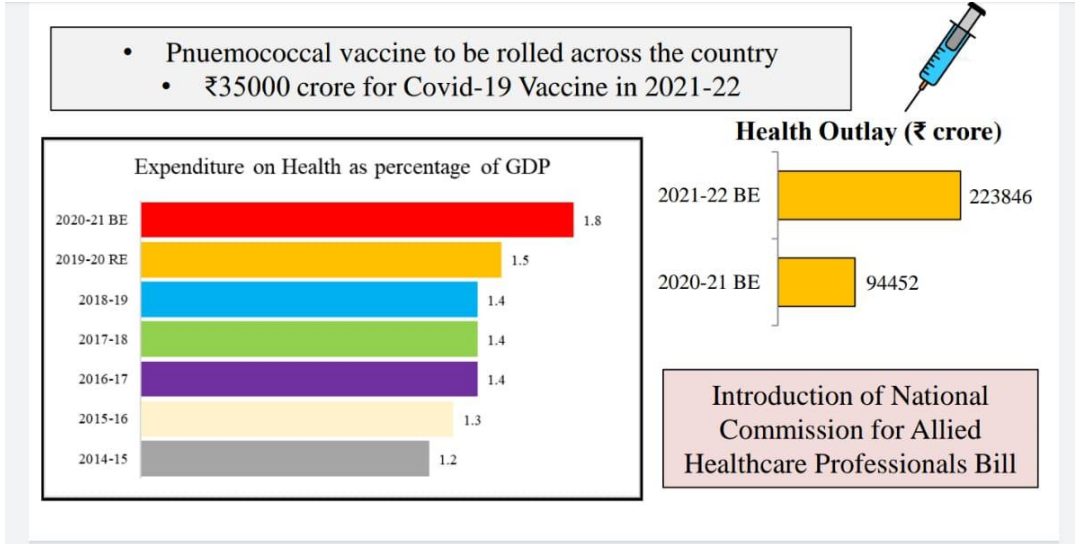
जेव्हा देशाचे सर्वोच्च न्यायालय रोजगारासारख्या मूलभूत प्रश्नावर भाष्य करते व सरकारला आठवण करून देते तेव्हा आपण किती गंभीर जगत आहोत, हे लक्षात येते आणि त्याच वेळा सरकार किती निष्क्रिय ठरत आहे हेही अधोरेखित होते. समाज माध्यमांच्या प्लॅटफॉर्मवर 'लोकल सर्कल' नावाची एक मान्यवर संस्था काम करते. ही संस्था आपले अहवाल केंद्र व राज्य शासनाला देत असते. या संस्थेने ८ जून, २०२० रोजी एक अहवाल प्रसिद्ध केला आहे. यात म्हटले आहे की, भारतात नैराश्याग्रस्त लोक तिपटीने वाढले आहेत. छप्पन्न टक्के लोक चिंतेने ग्रासलेले आहेत. ही आजची परिस्थिती आहे. उद्या ती आणखी भयावह होऊ शकते. हे गंभीर सामाजिक प्रश्न दुर्लक्षून चालणार नाही."१ कोरोनाचा हल्ला रोखण्यात केंद्रसरकार आणि राज्य सरकारांना म्हणावे तेवढे यश आले नाही. सरकारी यंत्रणा, साधनसामग्री आणि वैद्यकीय सुविधा अपुऱ्या पडायला लागल्या तेव्हा अनेक उद्योगपती, व्यापारी, सिनेतारे-तारका व दानशूर मंडळी पुढे आली. या संकटावर मात करण्यासाठी संघटित क्षेत्रातील कामगार, सनदी सेवकांनी मोठ्या प्रमाणात आपल्या मासिक वेतनातून सरकारला मदत निधी दिला. समाजात निरपेक्ष वृत्तीने काम करणाऱ्या अनेक नोंदणीकृत व अनोंदणीकृत समाजसेवी संस्था देखील मदतीला धावून आल्या व त्यांना जमेल तेवढी मदत त्यांनी देऊ केली आणि करोनाच्या संकटामध्ये दुःखात असलेल्या जनतेच्या जखमेवर फुंकर घालण्याचा प्रयत्न केला.

अर्थव्यवस्थेवरील परिणाम :

आधीच भारतीय अर्थव्यवस्था काय खूप चांगल्या अवस्थेत होती असे नव्हे. निश्चलनिकरण आणि जीएसटी च्या नवीन कायद्याच्या कचाट्यातून भारतीय अर्थव्यवस्था अजून पूर्वपदावर आलेली नव्हती. जीडीपीने तळ गाठलेला होता आणि आता येणाऱ्या काळात नवीन आर्थिक सुधारणा सरकारकडून होतील आणि आपली परिस्थिती सुधारेल या भोळ्या आशावादावर भारतीय लोक विसंबले असतानाच कोरोनाच्या आगमनाने भारतीयांच्या स्वप्नांचा चुराडा झाला आणि त्यांचे स्वप्न निव्वळ एक स्वप्नरंजनच राहिले. कोरोना महामारीचा परिणाम भारतीय समाजव्यवस्थेवर, राजकीय, शैक्षणिक, आरोग्य, पर्यावरणावर झालाच पण सर्वात मोठा आघात भारतीय अर्थव्यवस्थेवर झाला. आधीच नाजूक अवस्थेत असलेली अर्थव्यवस्था बघता-बघता डबघाईला आली. या सर्व परिप्रेक्ष्यामध्ये भारतीय अर्थव्यवस्थेवर झालेल्या प्रहार आणि त्यातून विस्कटलेली आर्थिक घडी पूर्वपदावर यायला पुढील अनेक वर्षे जातील. डॉ. ए. पी. जे. अब्दुलकलाम यांनी २०२० साली भारत एक महासत्ता असेल असा जो अभ्यास मांडला होता तो अभ्यास अस्तित्वात यायला आता अनेक वर्षे जातील.

भारतीय अर्थव्यवस्था हा आपल्या आणि जगाच्या दृष्टिकोनातून काळजीचा आणि कुतूहलाचा विषय तर जागतिकीकरणाच्या निमित्ताने भारतीय उद्योग, व्यापार क्षेत्रावर डोळा ठेवून असणाऱ्या बहुराष्ट्रीय कंपन्यांच्या तर अत्यंत जिव्हाळ्याचा विषय, कारण जगातील द्वितीय क्रमांकाची लोकसंख्या आणि तदनुषंगाने असणारी महाकाय बाजारपेठ होय. परंतु एवढी मोठी बाजार यंत्रणा असणारी भारतीय अर्थव्यवस्था देखील छिन्नविछिन्न होताना आपण पाहिली. जगातील आणि भारतीय आर्थतज्ञानी, भारतीय समकालीन अर्थव्यवस्थेविषयी केलेले भाष्य आणि मांडलेली अनुमाने भयचकित करणारे आहेत. "या संकटाच्या तीव्रतेसंबंधी संयुक्त राष्ट्रसंघाच्या विश्व अन्न योजनेचे प्रमुख डेव्हिड बेलसे यांनी असे म्हटले आहे की, 'जगात कोरोनापेक्षा कोरोनानंतर भूकबळीने जास्त लोक मरतील. सध्या जगात १३.५ कोटी लोक उपाशी आहेत तर, ८२ कोटी लोक अर्धपोटी राहतात.' तर ही साथ पसरू लागल्यापासून आपल्या देशातील १२ कोटी २० लाख लोकांचा रोजगार आणि जगण्याचे साधन बुडाले आहे. हे वास्तव काँ. सीताराम येचुरी यांनी पंतप्रधानांना लिहिलेल्या पत्रात नमूद केले आहे, तर अर्थतज्ञ प्रा. डॉ. जे. एफ. पाटील म्हणतात, 'लॉकडाऊनच्या काळात १५ लाख कोटींचे उत्पन्न बुडाले तर १४ कोटी लोकांचा रोजगार गेला आहे आणि बेरोजगारांचे प्रमाण देशात २७% पर्यंत वाढले आहे. साधारणपणे ८ कोटीच्या आसपास स्थलांतरित ग्रामीण भागाकडे वळले आहेत. त्यांच्या रोजगाराचा आणि पोटाचा प्रश्न गंभीर बनला आहे. बेरोजगारांचा व स्थलांतरितांचा प्रचंड ताण आता ग्रामीण व्यवस्थेवर पडला आहे.'२





भांडवलवादाचे परिणाम माहीत असलेली भारतीय बुद्धिजीवी, प्रसारमाध्यमे आणि समाजवादी मंडळीसुद्धा सरकारने जागतिकीकरणाच्या रेट्यामुळे घेतलेल्या भांडवलवादी धोरणाच्या मागे इच्छा नसतानाही फरपटत चालली आहेत. भांडवलवादाचा पराभव एखादा साधा रोगजंतू सुद्धा करू शकतो. हे वास्तव जगाला समजले आणि भांडवलशाहीचा विद्रूप आणि भेसूर चेहरा जगाने पाहिला. भारतीय अर्थव्यवस्थेला उभारी देणारी पारंपरिक शेतीव्यवसाय, शेती, शेतमजूर, शेतमाल आणि त्यावर प्रक्रिया उद्योगाच्या माध्यमातून विसंबून असणाऱ्या खाजगी, सहकारी संस्था डबघाईला आल्या. त्याचबरोबरीने, उद्योग, पर्यटन, शेअरबाजार, दळणवळण व्यवस्थांची चाके रुतली गेली. शेअर बाजारातील भारतातले नुकसान पन्नास लाख कोटींच्या वर गेले आहे. भारताचे दरडोई उत्पन्न आणि विकास दर कधी नव्हे इतका घसरला. कोट्यावधी कुटुंबे भीकेंगाल होऊन दारिद्र्यरेषेखाली पोहोचली. औद्योगिक क्षेत्राला उभारी मिळाली नाही तर कदाचित परागंदा झालेल्या कुशल कामगारांचा तुटवडा भासून भविष्यकाळात औद्योगिक उत्पादन क्षेत्रेदेखील अडचणीत येण्याची भीती वाटते. औद्योगिकरणातील पिढेहाटीबरोबरच शिक्षण, आरोग्यसेवा क्षेत्र, दळणवळण, आयात-निर्यात, विपणन क्षेत्र, संरक्षण इत्यादी क्षेत्रांवर प्रचंड मोठा दुष्परिणाम झालेला आपणास पाहायला मिळतो. आणि भारतीय अर्थव्यवस्था ही रसातळाला जाण्याच्या दिशेने वाटचाल करीत आहे.

समारोप :

कोरोनाच्या साथीने भारतीय समाजरचना, अर्थव्यवस्था, राजकारण, शिक्षण, सहकार, अशा सर्व घटकांवर प्रचंड मोठा प्रहार केला. रोगाची पूर्वकल्पना असताना देखील गाफील राहिलेल्या केंद्र आणि राज्य सरकारांची ढिसाळ पूर्वतयारी आणि उपाययोजनांचे पितळ उघडे पडले. मार्च, एप्रिल २०२१ मध्ये देशात निर्माण झालेली अभूतपूर्व अशी ऑक्सिजनची टंचाई आणि त्यामुळे झालेला अनेकांचा मृत्यू ही चिंतनाची आणि आत्मपरीक्षण करायला लावणारी गोष्ट आहे. अशा जिकिरीचा प्रसंगी केंद्र-राज्य, पक्षीय मतभेद बाजूला ठेवून केंद्र व राज्य सरकारांनी मानवी जीविताचे रक्षण करण्यासाठी सर्वतोपरी प्रयत्न करायला हवेत लोकांना धीर देऊन, सांत्वन करून त्यांना पुरेशी उपजीविकेची साधने आणि आरोग्याची यंत्रणा उभी करून लोकांचे जनजीवन तसेच आरोग्यमान उंचावण्यासाठी पराकोटीचे प्रयत्न करण्याची गरज आज कोरोनाने अधोरेखित केल्याचे दिसून येते.

संदर्भ

- १) कुलकर्णी प्र. मा. 'कोरोनानंतरचे जग' संपादक, प्राचार्य डॉ. कुंभार प्रकाश, कोविड- १९ चे सामाजिक परिणाम, तेजश्री प्रकाशन, कोल्हापूर, २०२१ ISBN 978-81-946572-9-3 P – 170
- २) पाटील व्ही.वाय. 'कोरोनानंतरचे जग' संपादक, प्राचार्य डॉ. कुंभार प्रकाश, कोविड- १९ चे सामाजिक परिणाम, तेजश्री प्रकाशन, कोल्हापूर, २०२१ ISBN 978-81-946572-9-3 P – 160
- ३) आलेख व नकाशे – Union Budget

www.indiabudget.gov.in

भारतीय लोकसंख्या आणि शाश्वत विकास

प्रा. शत्रुघ्न नामदेव लोहकरे

डॉ. सी. डी. देशमुख कॉमर्स व सौ. के. जी. ताम्हाणे कला महाविद्यालय, रोहा जि. रायगड.

snlohakare1112@rediffmail.com

गोषवारा:

जगातील सर्वच देशांनी विकासाच्या नावाखाली नैसर्गिक साधनसंपदेचा अतिरेकी वापर केला आहे. यावर नियंत्रण आणण्याच्या हेतूने शाश्वत विकास ही अलीकडील एक महत्वपूर्ण अशी संकल्पना आहे. देशाच्या विकासासाठी लागणाऱ्या संसाधनाची दुर्मिळता आणि पुढील पिढीसाठी या संसाधनाची जपणूकीची आवश्यकता यातून शाश्वत विकास या संकल्पनेस महत्व प्राप्त होते. त्यातही जास्त लोकसंख्या असलेल्या देशात यास विशेष महत्व आहे. जगातील कोणत्याही देशाचा अभ्यास केल्यास असे दिसते की, देशाची अर्थव्यवस्था आणि त्या देशाची लोकसंख्या याचा जवळचा संबंध आहे. भारतीय शेती, उद्योग आणि सेवाक्षेत्र तसेच राहणीमान, रोजगार, दरडोई उत्पन्न आणि किंमत पातळी अशा कितीतरी घटकांचा आणि देशाची लोकसंख्या याचा अगदी जवळचा संबंध आहे. भारतात शाश्वत विकास या संकल्पनेचा विचार करण्याचे मुख्य कारण म्हणजे देशाची असणारी जास्त लोकसंख्या त्यातून देशातील नैसर्गिक साधनसंपदेचा होणारा न्हास हे होय.

प्रस्तावना:

भारताची वाढती लोकसंख्या ही भारताच्या आर्थिक विकासातील मुख्य अडसर आहे. तसेच जास्त लोकसंख्येमुळे नैसर्गिक साधनसंपदेचा मोठ्या प्रमाणात वापर होत आहे. आज आपण जरी भारत ही जगातील एक महासत्ता होणार असे संबोधत असलो तरी कोरोना महामारीच्या काळात आपली लोकसंख्या ही कोरोना सारख्या महामारीवर नियंत्रण आणण्यात कसा अडसर ठरत आहे हे लक्षात येते. याशिवाय इतर अनेक आर्थिक आणि सामाजिक समस्या आहेतच. ज्या विकसित देशात मर्यादित लोकसंख्येमुळे निर्माण होत नाहीत किंवा कमी प्रमाणात आणि कमी परिणामकारक असतात. परंतु भारतासारख्या जास्त लोकसंख्या असलेल्या देशात दारिद्र्य, बेरोजगारी, कुपोषण, आर्थिक आणि सामाजिक समस्या प्रकर्षाने जाणवत आहेत.

बीज संज्ञा: पर्यावरण, आर्थिक वृद्धी, सर्वसमावेशक विकास, वृद्धी दर.

उद्देश: भारतीय लोकसंख्या आणि शाश्वत विकासाचा आढावा घेणे.

विषय विवेचन:

भारतीय लोकसंख्या आणि शाश्वत विकास संबंध: भारतीय लोकसंख्येचा तसेच लोकसंख्येच्या रचनात्मक बदलाचा भारताच्या शाश्वत विकासावर मोठ्या प्रमाणावर प्रतिकूल आणि कांही प्रमाणात अनुकूल परिणाम घडून येतात.

संशोधन पद्धती:

प्रस्तुत शोधनिबंध हा पूर्णतः द्वितीयक सामुग्रीवर अवलंबून आहे. यासाठी संदर्भ ग्रंथ, मासिके, इतर प्रकाशित साहित्य, सर्वेक्षण अहवाल आणि इंटरनेट इत्यादी माध्यमांचा आधार घेण्यात आला आहे.

भारतातील लोकसंख्या वाढ:

भारताची जगाशी तुलना करता एकूण जागतिक क्षेत्रफळापैकी 2.4 टक्के क्षेत्रफळ आणि एकूण जागतिक लोकसंख्येपैकी 18 टक्क्यांच्या जवळपास लोकसंख्या भारताच्या वाट्याला आहे. भारत हा लोकसंख्या संक्रमण सिद्धांताच्या दुसऱ्या टप्प्याच्या शेवटच्या स्थिती मध्ये आहे. जेथे जन्मदर आणि मृत्युदर कमी होण्यासारखी स्थिती निर्माण होते. परंतु इतर देशांच्या मानाने भारतात लोकसंख्येचा आकारमान मुळातच मोठे आहे. तर 31 मे 2021 रोजी भारताची लोकसंख्या 139,23,45,967 एवढी होती. भारताचे चालू किंमतीनुसार सन 2019-20 चे एकूण स्थूल राष्ट्रीय उत्पन्न 201,18,353 कोटी रु. एवढे व निव्वळ राष्ट्रीय उत्पन्न 179,99,754 कोटी रु. एवढे असले तरी दरडोई उत्पन्न 1,34,226 रु. इतकेच आहे.

भारतीय लोकसंख्या व वृद्धी दर

वर्ष	लोकसंख्या	वृद्धी दर (%)	वर्ष	लोकसंख्या	वृद्धी दर (%)
------	-----------	---------------	------	-----------	---------------

1950	37,63,25,200	0.00	1982	732,239,504	2.36
1951	38,23,76,948	1.61	1991	89,12,73,209	2.06
1961	45,96,42,165	2.02	2001	107,50,00,085	1.74
1971	56,78,68,018	2.28	2011	125,02,87,943	1.30
1981	71,53,84,993	2.35	2021	139,34,09,038	0.97

स्त्रोत. India - Historical Population Growth Rate Data -2021

वरील आकडेवारीवरून असे लक्षात येते की, भारतात 1950 मध्ये भारताची लोकसंख्या 37,63,25,200 ही मुळ लोकसंख्या आणि वृद्धी दर 0.00 % असे गृहीत धरल्यास नंतर लोकसंख्या कशी वाढत गेली हे लक्षात येते की, भारताची लोकसंख्या सतत वाढत आहे. 1951 मध्ये 38,23,76,948 लोकसंख्या आणि 1.61% वृद्धी दर आहे. परंतु या वाढीची प्रवृत्ती पाहता 1982 मध्ये 732,239,504 लोकसंख्या आणि 2.36 % वृद्धी दर आहे जो सर्वात जास्त आहे. या कालावधी नंतर लोकसंख्या वाढत असली तरी वाढीचा वेग कमी होत गेला आहे. 2021 मध्ये लोकसंख्या 139,34,09,038 एवढी आहे आणि वृद्धी दर हा 0.97% आहे.

तसेच भारतीय लोकसंख्येची अनेक वैशिष्ट्ये पाहता अलीकडील काळात सकारात्मक बदल घडून आले आहेत उदा. जगात भारत हा तरूणांचा देश बनला आहे. असे असले तरी देशाच्या जास्त व वाढत्या लोकसंख्येचे होणारे परिणाम हे देशाच्या शाश्वत विकासासाठी अनुकूल नाहीत. जगातील लोकसंख्येच्या सातवा हिस्सा भारतात राहतो. लोकसंख्येचा विचार केल्यास जगात चीनचा प्रथम तर भारताचा द्वितीय क्रमांक लागतो. आपल्या मानाने जास्त क्षेत्रफळ असणाऱ्या चीनशी लोकसंख्येबाबत चर्चा करता असे दिसते की, आजमितीस चीनची लोकसंख्या 140 कोटीच्या घरात आहे. परंतु त्यांचा वृद्धी दर .50 % ते 0.50 % च्या दरम्यान आहे. आतच चीनने हम दो हमारे तीन चा कायद्यास मंजूरी दिली. परंतु चीनी जनतेच्या मते या महागाईच्या काळात शहरी भागात एकाच मुलाचे पालनपोषण करणे कठीण आहे. तेथे तीन मुलांना कोण जन्माला घालेल. तेव्हा भारतात तर यापेक्षा मुलांचे पालनपोषण करणे कठीण जात आहे. शाश्वत विकास आणि भारतीय लोकसंख्या याचा विचार होणे गरजेचे आहे.

शाश्वत विकासाचा अर्थ, व्याख्या आणि संकल्पना:

जगात सर्वत्र विकासाच्या नावाखाली नैसर्गिक साधनसंपदेचा अतिरेकी वापर केला आहे. यातून झालेला विकास हा एका अर्थाने एकांगी होऊन आज जग हे विनाशाच्या उंबरठ्यावर पोहचले आहे. यातून बाहेर पडण्यासाठी संयुक्त राष्ट्रांची स्थापना झाल्यावर सगळ्यांना एकत्र आणून जगाला पर्यावरणाबाबत एकत्रित विचार करायचे प्रयत्न झाले . पण त्यांना वेगवेगळ्या कारणांनी मर्यादा राहिल्या खऱ्या अर्थाने विकासासाठी पण पर्यावरण रक्षणासाठी आणि मानवी स्वातंत्र्य अबाधित राखण्यासाठी जगाने एकत्रित प्रयत्नांची सुरुवात 20 व्या शतकाच्या उत्तरार्धात झाली . 1992 साली ब्राझिलमधील रिओ शहरात भरलेल्या पर्यावरणविषयक जागतिक परिषदेनंतर याला गती मिळाली . प्रश्नासंबंधी जगभरात एकत्रित प्रयत्न सुरू झाले यामुळे अनेक, त्यांना गती मिळाली . यानंतर मात्र सध्याची बदलणारी परिस्थिती व मानवी जीवनावर आपत्तीचा होणारा परिणाम विचारात घेऊन संयुक्त राष्ट्रसंघाने 2020 साली सहस्रक विकासाची आठ उद्दिष्टे ठरविली. सर्वांगीण विकासाच्या उद्दिष्टात गरीबी निर्मूलन, अन्नसुरक्षा, सर्वांना शिक्षण, लिंगनिरपेक्षता, बालमृत्यू व मातामृत्यू रोखणे, एड्स-मलेरिया आदिशी लढाई, पर्यावरण आणि शाश्वत विकासासाठी जागतिक भागीदारी यांचा समावेश आहे. 2015 पर्यंत प्रत्येक देशाने या सर्व बाबतीत एका विशिष्ट स्तरापर्यंत पोहचणे अपेक्षित होते. यासाठी ठरविलेल्या काही निर्देशांकापर्यंत भारत पोहचला आहे.

शाश्वत विकासाची व्याख्या:

अशा विकासाला जो विकास चालू पिढीच्या गरजा पुढील पिढ्यांच्या गरजा धोक्यात न आणता पूर्ण करतो“ चिरंतन विकास(Sustainable Development) असे म्हणतातम्हणजेच जो विकास मानवाच्या सध्याच्या व ” .भाविष्यातील गरजांची संतुलित पूर्तता करतो तोच चिरंतन विकास होय
ब्रूटलंड अहवालगरजा पूर्ण करणे भावी काळातील पिढ्यांच्या गरजांची तडजोड न करता वर्तमान पिढ्याच्या“ - म्हणजे चिरंतन विकास होय”

चिरंतन विकास याचा साधा अर्थ आहे टिकाऊ विकासतापुरत्या लाभाचा केवळ भौतिक सुविधा वाढवून . पैशाच्या लोभाच्या हव्यासापोटी केला जाणारा व नैसर्गिक संसाधनांना ओरबाडणारा आणि त्यांचे कायमचे नुकसान करणारा विकास हा चिरंतन विकास नसतो. थोडक्यात सध्याच्या पिढ्यांच्या गरजा भागविताना पुढच्या पिढ्यांना त्यांच्या गरजा भागविण्यासाठी संसाधने (जल), जंगल, जमीन, पर्यावरणशिल्लक राहतील (, अशा पद्धतीने विकास आराखडा तयार करणे म्हणजे चिरंतन विकास होय.

चिरंतन विकास ही संकल्पना सर्वप्रथम संयुक्त राष्ट्र संघ, जागतिक पर्यावरण आणि विकास आयोगाने 1987 मध्ये प्रकाशित केलेल्या आपल्या सामान्य भविष्याविषयीच्या अहवालात व्यक्त केली होतीया अहवालात असे म्हटले आहे . की भविष्यातील पिढ्यांच्या गरजा भागविण्यासाठी निसर्गाची क्षमता धोक्यात न घालता लोक दैनंदिन गरजा भागवू शकतात आणि याप्रकारे विकास चिरंतन करू शकतात. तसेच 1987 मध्ये पर्यावरण व विकास यावरील जागतिक समितीने प्रथमच चिरंतन विकास ही संकल्पना वापरली सन (ब्रूटलंड)1999 - 2000 मधील जागतिक विकास अहवालात यावर अधिक भर देण्यात आला. चिरंतन विकास ही संकल्पना दीर्घकालीन, भविष्याभिमुख, बळकट व फलदायी विकास अशी असून ज्याचा संबंध चालू व भावी पिढ्याशी जोडला आहे .

भारतीय लोकसंख्या आणि शाश्वत विकास संबंध:

देशाच्या भविष्याचा दूरगामी विचार केल्यास देशापुढे सध्या तीन प्रमुख आर्थिक समस्या आहेत. लोकसंख्या नियंत्रण, पर्यावरण रक्षणासह आर्थिक विकास आणि दारिद्र्य निवारण या समस्या सोडविण्यासाठी देशाची लोकसंख्या कमी करणे गरजेचे आहे. देशातील वाढत्या लोकसंख्येमुळे अन्नधान्याचा प्रश्न निर्माण होतो. वाढत्या लोकसंख्येस शेतीक्षेत्र सामावून घेवू शकत नाही आणि उद्योग व सेवा क्षेत्राचा त्यामानाने विकास झाला नाही. यातून रोजगारनिर्मितीचा प्रश्न निर्माण होतो. तसेच वाढत्या शहरीकरणातून जागा, पाणी, शुद्ध हवा, रहदारीचे, आरोग्याचे प्रश्न निर्माण झाले आहेत.

अलीकडे भारतात विकासाची आवश्यकता आणि पर्यावरणाचे रक्षण या संदर्भात शाश्वत विकास ही संकल्पना पुढे आली. या बाबतीत आर्थिक सर्व्हेक्षण (2010 -11) म्हणते की, विकासाच्या हरित मार्गाचे पर्यवसान मंदगती विकासामध्ये होऊ नये. आणि रिओ जाहीरनामा म्हणतो की, शाश्वत विकासाचा केंद्रबिंदू मनुष्य हाच असला पाहिजे. (मनुष्याला) निसर्गासह आरोग्यपूर्ण आणि उत्पादक (म्हणजे संपन्न) जीवनाचा अधिकार आहे. तसेच आर्थिक सर्व्हेक्षण (2012 -13) म्हणते की, "12 व्या पंचवार्षिक योजनेचा झोत शाश्वत पर्यावरणावर आहे. (पर्यावरण टिकले पाहिजे) तथापि भारतामध्ये आर्थिक विकासाचे कारक (म्हणजे पायाभूत सोयी, वाहतूक, घरबांधणी इ.) गोष्टींची वाढ झाली पाहिजे." तेव्हा पर्यावरण आणि विकास याचा समतोल साधण्याची आवश्यकता आहे हे लक्षात येते. म्हणजेच भारतात विकास शाश्वत पर्यावरण आणि विकासास महत्व दिले पाहिजे .

सन 2001-11 आणि 2011-21 या दोन दशकात भारताच्या लोकसंख्येतील एकूण वाढ थोडीशी कमी झाली आहे. पण ती कधी स्थिरावेल हे निश्चित सांगता येत नाही. जागतिक लोकसंख्येमध्ये भारताचा वाटा 18 टक्क्यांच्या जवळपास आहे तर चीनचा वाटा 19 जवळपास आहे. परंतु चीनने गेल्या काही वर्षांमध्ये प्रभावी आणि कडक उपाययोजना करून लोकसंख्या नियंत्रणामध्ये उल्लेखनीय यश मिळविले आहे. भारताला मात्र असे जमले नाही. तत्कालीन श्रीमती पंतप्रधान इंदिरा गांधी यांनी लोकसंख्या नियंत्रणात आणण्यासाठी नसबंदी सारख्या साधनाचा वापर केला. काही ठिकाणी त्याचा अतिरेक झाल्याने त्यांना जनता नाराज झाली आणि सरकार गमवावे लागले.

सध्या आपल्याकडे 'सर्वसमावेशक विकासासंबंधी बरेच बोलले जाते. परंतु दारिद्र्याचे पूर्ण निवारण आणि पुरेशी रोजगारनिर्मिती घडून आल्याशिवाय कोणताही विकास समावेशक होणार नाही. तेव्हा सरकारने जलद आर्थिक विकास, दारिद्र्य निवारण आणि रोजगार निर्मिती यांना सर्वोच्च प्राधान्य द्यावे लागणार आहे. हे लोकसंख्या वाढ आणि विकासासंबंधी आहे. परंतु गोळ्या बऱ्याच वर्षात आर्थिक विकास साधताना पर्यावरण रक्षणाचा प्रश्न प्रकर्षाने पुढे येतो. भारत जरी खेड्याचा देश असला तरी वाढते शहरीकरण हे भारताच्या लोकसंख्येचे एक महत्वाचे लक्षण आहे. साहजिकच वाढती लोकसंख्या आणि शहरीकरण यामुळे देशाच्या नैसर्गिक साधनसंपदावर मोठ्या प्रमाणावर ताण पडत आहे. वाढत्या लोकसंख्येसाठी पुरेशी घरबांधणी, उद्योगधंदे, रस्ते, महामार्ग, लोहमार्ग, विमानतळे यासाठी प्रचंड प्रमाणात जमिनीची आवश्यकता आहे. उदा. सन 2000 ते 2010 याकाळात महाराष्ट्रात जवळजवळ 10 लाख हेक्टर इतकी जमीन बिगरशेती झाली आहे. आपल्या देशाला जंगल संरक्षण केवळ साधारण 20 टक्के एवढेच उरले. आहे. आणि 1947 मध्ये पाण्याची उपलब्धता दरवर्षी दरडोई 6000 घनमीटर होती ती 1999 मध्ये 1250 घनमीटर इतकी झाली. थोडक्यात वाढत्या लोकसंख्येमुळे देशाच्या नैसर्गिक साधनसामग्रीचा मोठ्या प्रमाणात ऱ्हास होत आहे.

हे असेच चालू राहिले तर ही संपत्ती लवकरच नष्ट होईल आणि पुढील पिढ्यांना या नैसर्गिक साधनसामग्रीचा उपयोग घेता येणार नाही तेव्हा याचा विचार करून देशाचा शाश्वत विकास करणे गरजेचे आहे.

निष्कर्ष:

भारताच्या वाढत्या लोकसंख्येमुळे व त्यांच्या उपक्रमांमुळे वेगाने पर्यावरणाचा ऱ्हास होत आहे. देशातील नैसर्गिक साधनसंपदा मोठ्या प्रमाणात वापरली जाते. यातून पर्यावरणीय असमतोल निर्माण झाला आहे. तेव्हा लोकसंख्या नियंत्रणाचे विविध उपाय अवलंबूनच देशाच्या पर्यावरणाचे संरक्षण केले जावू शकते. सद्यस्थितीत भारतात शाश्वत विकासाची गती वाढविणे गरजेचे आहे. वर्तमान पिढीच्या गरजा अमर्याद वाढल्या आहेत. या गरजा पूर्ण करताना भविष्यकाळात देशाची नैसर्गिक साधनसंपदा टिकून राहिल काय हा मोठा प्रश्न आहे. म्हणूनच वर्तमान पिढीचा विचार करताना भावी पिढ्यांचा आणि त्यांच्या कल्याणाचा विचार करणे गरजेचे आहे. त्यादृष्टीकोनातून विकास झाला पाहिजे यासाठी लोकसंख्या नियंत्रण महत्वाचे आहे.

संदर्भ:

1. भारतीय अर्थव्यवस्था(2012) – प्रा. डॉ. राजेंद्र रसाळ, सक्सेस पब्लिकेशन्स, पुणे.
2. योजना मासिक (जून-2013), पर्यावरण आणि पर्यावरणाची सुरक्षा.
3. भारताचा आर्थिक सर्व्हे - 2020 - 21.
4. ई लेख – ओझे लोकसंख्येचे; आव्हान विकासाचे, डॉ. अंजली राडकर, लोकसंख्याशास्त्राच्या अभ्यासक.
5. website - India - Historical Population Growth Rate Data.
6. बातमी (3 जून 2021), साम मराठी.

लातूर जिल्ह्यातील यात्रा केंद्राच्या अभिक्षेत्रीय वितरणावर परिणाम करणाऱ्या घटकांचा भौगोलिक अभ्यास

डॉ.केरबा कांबळे

उदगीर जि.लातूर

प्रस्तावना

महाराष्ट्राच्या आर्थिक वाढीचा भाग म्हणून यात्रांचे महत्त्व अनन्यसाधारण आहे.ही भूमी संस्कृती, परंपरा आणि सणांनीसमृद्ध आहे.दरवर्षी जगभरातूनहजारो पर्यटकांना आकर्षित करणारे भारताचे एक प्रमुख व्यापारी व पर्यटनकेंद्र म्हणून महाराष्ट्राकडे पाहिले जाते.

महाराष्ट्राची भाषा मराठी असून महाराष्ट्रावासियांना त्यांची भाषा, इतिहास विशेषतः मराठा साम्राज्याबद्दल खूप अभिमान आहे. मराठा साम्राज्याचेसंस्थापक छत्रपती शिवाजी महाराज भारतातील एक लोकनायकसमजले जातात. महाराष्ट्रात अनेक देवदेवतांची मंदिरे आहेत.त्यांच्यापैकी काही शोकडो वर्षे जुनी आहेत व ती अतिशय भव्य स्वरूपात बांधलेली आहेत.या मंदिरामध्येहिंदू, बौद्ध व जैनसंस्कृतीच्या विचारांचा मिलाफ झालेला दिसून येतो. विठ्ठल मंदिर, शिर्डी साईबाबा मंदिर, अष्टविनायक मंदिर, महाराष्ट्रातील ज्योतिर्लिंगे, औरंगाबाद जिल्ह्यातील अजिंठा व वेरुळच्या गुंफा आणि महाराष्ट्राला लाभलेला समुद्रकिनाराही सर्व महाराष्ट्र राज्याची महानसांस्कृतिक वारसास्थळे आहेत म्हणून महाराष्ट्रात धार्मिक पर्यटन उद्योग मोठ्या प्रमाणावर विकसित करण्याचीसंधी आहे.

धार्मिक पर्यटनाचे सामाजिक व सांस्कृतिकसंक्रमण बहुविध आहे.मानव व त्याचे समाज हीतहे वेगवेगळ्या पद्धतीनेस्पष्ट झालेले आहे.मानवी जीवनाच्या अनेक तथ्यांमध्ये धार्मिक पर्यटनाचा सामाजिक व सांस्कृतिक प्रभाव लक्षवेधी असू शकतो.धार्मिक पर्यटनासाठी धार्मिक व सांस्कृतिक कृती एक सशक्त प्रोत्साहन पुरवतात.संस्कृती व धार्मिक पर्यटनामधील दुवा फार महत्त्वाचा आहे.

अभ्यासक्षेत्र :

लातूरजिल्ह्यातील यात्राकेंद्र व पर्यटन स्थळांचा अभ्यास करण्यासाठी लातूर जिल्हा हे अभ्यासक्षेत्रम्हणून निवडलेला आहे. लातूर जिल्ह्याचा अक्षवृत्तीयविस्तार $17^{\circ}52'$ उत्तरते $18^{\circ}52'$ उत्तर अक्षवृत्त्याच्यादरम्यानतर रेखावृत्तीयविस्तार $76^{\circ}12'$ पूर्व ते $79^{\circ}52'$ पूर्व रेखावृत्त्याच्यादरम्यान आहे. या जिल्ह्याचे क्षेत्रफळ 7157 चौ.कि.मी. असून हा जिल्हा महाराष्ट्र-कर्नाटक सीमाभागात वसलेला आहे. सन २०११ च्या जनगणनेनुसार जिल्ह्याची लोकसंख्या 2848196 इतकी असूनत्यात 1273180 पुरुष तरस्त्रियांची संख्या 1121106 इतकी आहे.

उद्दिष्टे

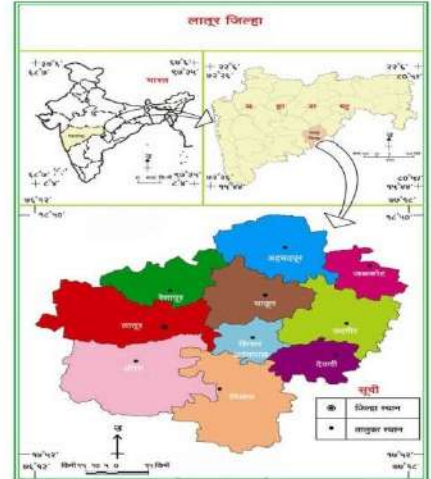
लातूर जिल्ह्यातीलयात्रा केंद्राच्या अभिक्षेत्रीय वितरणावर परिणाम करणारे घटक अभ्यासणेहे प्रमुख उद्दिष्टसमोर ठेवून प्रस्तुत शोधनिबंध तयार करण्यात आला आहे.

संशोधन पद्धती :

प्रस्तुत शोधनिबंध हाद्वितीय स्वरूपाच्या आकडेवारीवर आधारित आहे.सदर अभ्यासासाठी लातूर जिल्हा सामाजिक व आर्थिकसमालोचन, भारतीय जनगणना अहवाल, संदर्भ ग्रंथ आणि विविध संकेतस्थळे याद्वारे माहितीसंकलित करूनतयार करण्यात आला आहे.

विषय विश्लेषण

अभ्यासक्षेत्रातीलयात्रा केंद्राच्या वितरणावर विविध प्राकृतिक, सांस्कृतिक व धार्मिक घटकांचा परिणामझालेला दिसून येतो.त्यापैकी प्राकृतिक घटकात कृषी विकास, नागरीकरण, रस्ते सुविधा, वस्त्यांची घनता यांचा समावेश होत असून सामाजिक घटकात लोकसंख्येची घनता हा घटक अतिशय परिणामकारक असलेला दिसून येतात.



प्राकृतिक घटक

अभ्यासक्षेत्रातील यात्राकेंद्राचे वितरण हे असमान स्वरूपाचे आहे. कारण या यात्रा केंद्राच्या वितरणावर त्या प्रदेशातील प्राकृतिक व धार्मिक घटकांचा परिणाम झालेला दिसून येतो. त्यात भूपृष्ठरचना, कृषी विकास आणि नागरीकरणहेतीन प्रमुख घटक आहेत.

यात्रा केंद्राच्या वितरणावर परिणाम करणाऱ्या प्राकृतिक घटकात भू उठाव, नदीप्रणाली, मृदा, भूमि उपयोजन, जलसिंचन, कृषी उत्पादकता इत्यादी घटकांचा समावेश होतो. अभ्यास क्षेत्रातील यात्रा केंद्राचे वितरण अभ्यासले असता सपाट भूप्रदेश असलेल्या भागात यात्रा केंद्राची संख्या अधिक आहेत अधिक उंचीच्या प्रदेशात यात्रा केंद्राची संख्या कमी असलेली दिसून येते. अभ्यासक्षेत्राच्या मध्य आणि दक्षिण पश्चिम भागात (लातूर, औसा, निलंगा आणि चाकूरतहसील) सपाट भूप्रदेश अधिक असल्यामुळे आणि तो भाग मांजरा नदीच्या खोऱ्यात येत असल्यामुळे या प्रदेशात यात्रा केंद्राची संख्या अधिक असल्याचे दिसून येते. मांजरा नदीच्या खोऱ्याच्या प्रदेशात काळी कसदार जमीन असल्यामुळे या प्रदेशात कृषी विकास आणि जलसिंचन सुविधांमुळे तेथील कृषी उत्पादकतेमध्ये वाढ झालेली आहे. या प्रदेशात लोकसंख्येची घनता अधिक असून अभ्यास क्षेत्रातील एकूण यात्रा केंद्रापैकीसुमारे ५४ टक्के यात्रा केंद्रहे याच विभागात आढळून येतात. उर्वरीत ४६ टक्के यात्रा केंद्रहे रेणापूर, अहमदपूर, जळकोट, शि. अनंतपाळ, देवणी आणि उदगीर या सहातहसीलमध्ये आढळून येतात.

कृषी विकास : अभ्यास क्षेत्रातील यात्राकेंद्राच्या वितरणाचा अभ्यास केला असता ज्या प्रदेशात कृषी विकास अधिक झालेला आहे त्या प्रदेशात यात्रा केंद्राची संख्या अधिक असलेली आढळून येते. कृषी विकासात एकूण लागवडी खालील क्षेत्र, एकूण भौगोलिक क्षेत्र, एकूण लागवडीखालील क्षेत्रापैकी जलसिंचन क्षेत्र, एकूण पिकांखालील क्षेत्र, आणि त्या प्रदेशात घेतली जाणारी प्रमुख पिकेहे घटक महत्त्वाची भूमिका बजावतात. लातूर, रेणापूर आणि निलंगा या तहसीलमधून वाहणाऱ्या मांजरा आणि तेरणा या नद्यांमुळे या तहसीलमधील कृषी विकास अधिक झालेला असून या तहसीलमधील यात्रा केंद्राची संख्याही अधिक आहे. अभ्यासक्षेत्रातील एकूण यात्रा केंद्रापैकीसुमारे ३३ टक्के यात्राकेंद्र या तीनतहसीलमध्ये आढळून येतात. औसा, चाकूर आणि अहमदपूर या तीनतहसीलमध्ये कृषी विकास मध्यम स्वरूपाचा झाला असल्यामुळेतेथील यात्राकेंद्राची संख्या ही मध्यम (४३ टक्के) स्वरूपाची आहे. तर उदगीर, शि. अनंतपाळ, देवणी आणि जळकोट या चारतहसीलमध्ये कृषी विकास कमी प्रमाणात झाला असल्यामुळे या तहसीलमध्ये यात्रा केंद्राची संख्या ही कमी (२४ टक्के) असल्याचे दिसून येते.

नागरीकरण : यात्रा केंद्राच्या वितरणावर प्रत्यक्ष अप्रत्यक्षपणे नागरीकरणाचाही परिणाम झालेला दिसून येतो. नागरीकरण आणि औद्योगिकीकरण यांचा परस्परंशी संबंध असल्यामुळे ज्या प्रदेशाचा औद्योगिक विकास अधिक झालेला आहे. त्या प्रदेशात नागरीकरणात मोठ्या प्रमाणात वाढ झालेली दिसून येते. अभ्यासक्षेत्रातील एकूण दहातहसीलपैकी पाच तहसीलही नागरी केंद्र आहेत आणि याच पाच नागरी केंद्राचा औद्योगिक विकास अधिक प्रमाणात झालेला दिसून येतो. लातूर, उदगीर, अहमदपूर, औसा आणि निलंगा या पाच तहसीलमध्ये नागरीकरणाची प्रक्रिया अधिक झाली असल्यामुळे या विभागातील यात्रा केंद्राची संख्याही अधिक (६८ टक्के) आहे. उर्वरीत चाकूर, शि. अनंतपाळ, देवणी, रेणापूर आणि जळकोट या पाच तहसीलमध्ये फारसे नागरीकरण झालेले दिसून येत नाही. म्हणून या तहसीलमध्ये यात्रा केंद्राची संख्या ही कमी (३२ टक्के) असल्याचे दिसून येते.

रस्ते सुविधा : यात्रा केंद्राच्या वितरणावर परिणाम करणाऱ्या घटकामध्ये वाहतूक सुविधांची उपलब्धता हा एक महत्त्वपूर्ण घटक आहे. ही वाहतूक सुलभता त्या प्रदेशात असलेल्या रस्ते आणि रेल्वेमार्गाच्या विकासावर अवलंबून असते. रस्ते व रेल्वे वाहतूक विकास आणि आर्थिक विकास हे एकमेकांवर अवलंबून आहेत. कोणत्याही प्रदेशात आर्थिक विकासात वाढ झाली असता तेथील लोकांची क्रयशक्तीसुद्धा वाढते आणि त्या प्रदेशात विविध प्रकारच्या वस्तू आणि सेवांची मागणीही वाढलेली दिसून येते.

अभ्यासक्षेत्रातील यात्रा केंद्राचे वितरण आणि त्या प्रदेशातील वाहतूक सुलभता यांचा परस्परसंबंध असलेला दिसून येतो. ज्या तहसीलमध्ये रस्त्यांची घनता अधिक आहे. त्या तहसीलमध्ये यात्रा केंद्राची घनता अधिक असल्याचे दिसून येते. अभ्यासक्षेत्रातील पक्के रस्ते असलेल्या वाहतूक मार्गावर यात्रा केंद्राचे अधिक केंद्रीकरण झालेले दिसून येते. वाहतूक मार्गाची घनता आणि यात्रा केंद्राची घनता यांचा सहसंबंध अभ्यासला असता ज्या प्रदेशात वाहतूकीचे जाळे विकसित झालेले आहे त्या प्रदेशात यात्रा केंद्राची संख्या ही अधिक असल्याचे आढळून येते.

तहसीलनिहाय पक्का रस्ता असलेल्या ग्रामीण वस्त्यांची टक्केवारी आणि यात्रा केंद्राची टक्केवारी सारणी क्र.१ मध्ये दर्शविली असून जिल्ह्याचे पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या ग्रामीण वस्त्यांचे सरासरी प्रमाण हे ८३.५५ टक्के एवढे असून सर्वाधिक औसातहसीलमध्ये पक्क्या रस्त्यांनी जोडलेल्या ग्रामीण वस्त्यांचे प्रमाण ९२.२ टक्के एवढे आहेत सर्वात कमी पक्क्या रस्त्यांची जोडलेल्या ग्रामीण वस्त्यांचे प्रमाण शि. अनंतपाळतहसीलमध्ये ६२.७ टक्के एवढे असलेले दिसून येते.

सारणी क्र.१

पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या वस्त्यांची व एकूण वस्त्यांपैकी यात्रा केंद्राची टक्केवारी

अ.क्र.	तहसील	पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या गावांची टक्केवारी	एकूण वस्त्यांपैकी यात्राकेंद्राची टक्केवारी
१	लातूर	९०.६	८.२०
२	रेणापूर	८३.५	७.७०
३	अहमदपूर	८२.८	९.७६
४	जळकोट	८७.२	८.७०
५	चाकूर	८१.९	१२.२०
६	शि.अनंतपाळ	६२.७	४.२६
७	औसा	९२.२	९.५२
८	निलंगा	८२.७	६.५४
९	देवणी	८७.५	५.७७
१०	उदगीर	८४.४	९.०९
	एकूण	८३.५५	८.६०

स्त्रोत :संशोधकानेसंकलित केलेल्या आकडेवारीवर आधारित

अभ्यासक्षेत्रातील पक्क्या रस्त्यांनी जोडलेल्या वस्त्यांच्या टक्केवारीच्या तहसीलनिहाय वितरणाचा अभ्यास करण्यासाठी त्याचे तीन गट पाडण्यात आले असून त्यात पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या जास्त वस्त्यांचा गट (९० टक्केपेक्षा जास्त), पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या मध्यम वस्त्यांचा गट (८५ ते ९० टक्के) आणि पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या कमी वस्त्यांचा गट (८५ टक्केपेक्षा कमी) या तीन गटांचा समावेश होतो.

पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या जास्त वस्त्यांच्या गटात (९० टक्केपेक्षा जास्त) औसा (९२.२० टक्के) आणि लातूर (९०.६० टक्के) या दोन तहसीलचा समावेश होतो. पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या मध्यम वस्त्यांच्या गटात (८५ ते ९० टक्के) देवणी (८७.५ टक्के) आणि जळकोट (८७.२ टक्के) या दोन तहसीलचा समावेश होतो. आणि पक्क्या रस्त्याने जोडलेल्या कमी वस्त्यांच्या गटात (८५ टक्केपेक्षा कमी) उदगीर (८४.४ टक्के), रेणापूर (८३.५), अहमदपूर (८२.८ टक्के), निलंगा (८२.७), चाकूर (८१.९) आणि शिरूर अनंतपाळ (६.२७ टक्के) या सहा तहसीलचा समावेश होतो.

अभ्यासक्षेत्रातील एकूण ग्रामीण वस्त्यांपैकी यात्रा केंद्राची सरासरी टक्केवारी ही ८.६० टक्के एवढी असून एकूण ग्रामीण वस्त्यांच्या प्रमाणात यात्रा केंद्राचे सर्वाधिक प्रमाण चाकूरतहसीलमध्ये १२.२० टक्के एवढे आहेत हेच प्रमाण सर्वात कमी शिरूर अनंतपाळतहसीलमध्ये ४.२६ टक्के एवढे आहे.

अभ्यासक्षेत्रातील एकूण ग्रामीण वस्त्यांपैकी यात्रा केंद्राच्या सरासरी टक्केवारीच्या तहसीलनिहाय वितरणाचा अभ्यास करण्यासाठी त्याचे ०३ गट पाडण्यात आले असून त्यात एकूण वस्त्यांपैकी यात्रा केंद्राची जास्त टक्केवारी असलेला गट (१० टक्केपेक्षा जास्त), एकूण वस्त्यांपैकी यात्रा केंद्राची मध्यम टक्केवारी असलेला गट (८ ते १० टक्के) आणि एकूण वस्त्यांपैकी यात्रा केंद्राची कमी टक्केवारी असलेला गट (८ टक्केपेक्षा कमी) या तीन गटांचा समावेश होतो.

अभ्यासक्षेत्रातील एकूण वस्त्यापैकी यात्रा केंद्राची जास्त टक्केवारी असलेल्या गटात (१० टक्केपेक्षा जास्त) चाकूर (१२.२० टक्के) या एकाचतहसीलचा समावेश होतो. एकूण ग्रामीण वस्त्यापैकी यात्रा केंद्राची मध्यम टक्केवारी असलेल्या गटात (८ ते १० टक्के) अहमदपूर (९.७६ टक्के), औसा (९.५२ टक्के), उदगीर (९.०९ टक्के), जळकोट (८.७० टक्के) आणि लातूर (८.२० टक्के) या पाच तहसीलचा समावेश होत असलेला दिसून येतो. तर एकूण वस्त्यापैकी यात्रा केंद्राची कमी टक्केवारी असलेल्या गटात (८ टक्केपेक्षा कमी) रेणापूर (७.७० टक्के), निलंगा (६.५४ टक्के), देवणी (५.७७ टक्के) आणि शिरूर अनंतपाळ, (४.२६ टक्के) या ०४ तहसीलचा समावेश होत असलेला दिसून येतो.

अभ्यासक्षेत्रातील मोठी यात्राकेंद्रे ज्या प्रदेशात पक्क्या रस्त्यांनी जोडलेल्या वस्त्यांची टक्केवारी अधिक आहे त्याच प्रदेशात अधिक यात्राकेंद्र अस्तित्वात असलेली दिसून येतात.

निष्कर्ष

- १) लातूर, निलंगा, रेणापूर आणि निलंगा या तहसीलमधून मांजरा आणि तेरणा या नद्या वाहतात त्यामुळे या तहसीलमध्ये कृषीचा विकास अधिक प्रमाणात झालेला असून येतो. तसेच या तहसीलमध्ये यात्रा केंद्राची संख्याही अधिक आहे.
- २) औसा, चाकूर आणि अहमदपूर या तीन तहसीलमध्ये कृषी विकास मध्यम स्वरूपाचा झाला असल्यामुळे येथील यात्रा केंद्राची संख्या मध्यम आहे. तर उदगीर, शिरूर अनंतपाळ, जळकोट या चार तहसीलमध्ये कृषी विकास कमी प्रमाणात झाल्यामुळे या तहसीलमध्ये यात्रा केंद्राची संख्या कमी आहे.
- ३) लातूर, उदगीर, अहमदपूर, औसा आणि निलंगा या पाच तहसीलमध्ये नागरीकरणाची प्रक्रिया अधिक आहे. म्हणून या तहसीलमधील यात्राकेंद्राची संख्या अधिक आहे. उर्वरित तहसीलमध्ये नागरीकरणाचे प्रमाण कमी असल्यामुळे तेथे यात्राकेंद्राची संख्या कमी आहे.
- ४) ज्या तहसीलमध्ये रस्त्यांची घनता अधिक आहे त्या तहसीलमध्ये यात्रा केंद्राची घनता अधिक असल्याचे दिसून येते.
- ५) पक्क्या रस्त्यांनी जोडलेल्या ग्रामीण वस्त्यांचे सर्वाधिक प्रमाण औसा तहसीलमध्ये ९२.२ टक्के तर सर्वात कमी पक्क्या रस्त्यांनी जोडलेल्या ग्रामीण वस्त्यांचे सर्वाधिक प्रमाण शिरूर अनंतपाळ तहसीलमध्ये ६२.७ टक्के एवढे आढळून आले.

संदर्भ

- १) लातूर जिल्हा सामाजिक व आर्थिक समालोचन १९९१ ते २०११
- २) भारतीय जनगणना अहवाल १९९१ ते २०११
- ३) लातूर जिल्हा गॅझेटिअर
- ४) www.maharashtra.gov.in
- ५) www.laturdistrict.in

Chief Editor

Dr. R. V. Bhole

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23,
Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102

Guest Editor

Dr. Prof. H. B. Rathod

Principal

Gramin (ACS) Mahavidyalaya, Vasantnagar (Kotgyal), Tal. Mukhed

Executive Editors

Dr. V. T. Naik

Mr. B. C. Rathod

Co- Editors

Dr. D. K. Kendre

Mr. S. A. Jewale

Dr. U. D. Padamwar

Editorial Board

Mr. Thorve A. B.	Prof. Zamapalwad S. S.	Prof. Kalyan G. S.	Dr. Kshirsagar S. G.
Shri. Dethé S. K.	Shri. Kalimath S. K.	Shri. Babarao S.	Mr. Kankute S R.
Prof. Shinde P. A.	Prof. Pawar S. K.	Sow. Itkapalle A. P.	Dr. Gore S. Y.
Shri. Mathpati G. H.	Shri. Patil S. S.	Mr. Naik N. U	

Address

'Ravichandram' Survey No-101/1, Plot, No-23,
Mundada Nagar, Jalgaon (M.S.) 425102
